आदि तुर्क कालीन भारत

(१२०६–१२९० ई०)

(HISTORY OF EARLY TURKISH RULE IN INDIA)

समकालीन तथा निकट समकालीन इतिहासकारों द्वारा

[मिनहाज सिराज, ज़ियाउद्दीन बरनी, फ़ख़रे मुदब्बिर, सद्रे निज़ामी, अमीर ख़ुसरो, एसामी तथा इब्ने बतूता]

अनुवादक
सैयिद अतहर अब्बास रिज़वी
एम० ए०, पी एच० डी०



प्रकाशक
हिस्ट्री डिपार्टमेण्ट, अलीगढ मुस्लिम यूनीवर्सिटी
अलीगढ
१९५६

Publication of the Department of History, Aligarh Muslim University, No 10

Source Book of Medieval Indian History in Hindi

Vol II

History of Early Turkish Rule in India
(1206-1290)

by Saiyid Athar Abbas Rizvi, M A , Ph D

FIRST EDITION
1956

PRINTED BY BADRI PRASAD SHARMA AT THE ADARSH PRESS ALIGARH
FOR THE DEPTT OF HISTORY ALIGARH MUSLIM UNIVERSITY

डाक्टर ज़ाकिर हुसेन ख़ाँ

उपकुलपति

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय

के

चरणों में

सादर समर्पित

भूमिका

आदि तुर्क वंश के इस इतिहास में १२०६ ई० से १२६० ई० तक के समस्त प्रमुख फारसी तथा अर्बी इतिहास ग्रन्थो का हिन्दी अनुवाद है। इसमें मिनहाज सिराज की तबकाते नासिरी तथा ज़ियाउद्दीन बरनी की तारीखे फीरोज़शाही को मुख्य आधार माना गया है। मिनहाज सिराज तो समकालीन इतिहासकार है किन्तु ज़ियाउद्दीन बरनी कुछ बाद था। फिर भी बरनी का बडा ही महत्त्व है। तारीखे फीरोज़शाही के अतिरिक्त किसी स्थान पर बल्बन तथा कैकुबाद का इतना विस्तृत उल्लेख नही मिलता।

दूसरे भाग में समकालीन इतिहासकारों की कृतियो का अनुवाद है। इनमें फखरे मुदब्बिर की तारीखे फखरुद्दीन मुबारकशाह, आदाबुल हब वश्शुजाअत, सद्रे निज़ामी की ताजुल मआसिर, अमीर खुसरो के दीवान वस्तुल हयात एव केरानुस्सादैन के सक्षिप्त तथा परमावश्यक अशो का अनुवाद भी सम्मिलित है। बाद के केवल दो प्रमुख इतिहासकारों की रचनाओ के अनुवाद किये गये हैं एसामी की फुतूहुस्सलातीन का और अर्बी में लिखी हुई इब्ने बतूता की यात्रा के वर्णन का। इतिहासकारो तथा उनकी कृतियो का परिचय अनुवाद के प्रारम्भ में दिया गया है। अनुवाद करते समय फारसी से अँग्रेज़ी अनुवाद के सभी अच्छे प्रचलित नियमो को, जिनका पालन प्रसिद्ध इतिहासकार करते हैं, ध्यान में रखा गया है। भावार्थ के साथ शब्दार्थ को भी विशेष महत्त्व दिया गया है।

ज़ियाउद्दीन बरनी ने अपना इतिहास-ग्रथ एक विशेष वातावरण में विशेष उद्देश्य से लिखा। एक एक वस्तु के गुण का उल्लेख चार-चार, छ-छ, समानार्थक शब्दो द्वारा किया गया है। इन शब्दो में किसी एक को छोड देने से मूल जैसा वातावरण न रह पाता। अत प्रत्येक शब्द का अनुवाद किया गया है। तबकाते नासिरी के अनुवाद में अनावश्यक सम्मान-सूचक शब्द ही छोडे गये हैं। ग्रन्थो के सक्षिप्त अनुवाद में मध्यकालीन भारतीय सस्कृति से सम्बध रखने वाले आवश्यक उद्धरणो का विशेष ध्यान रखा गया है। केरानुस्सादैन तथा फुतूहुस्सलातीन की पृष्ठ सख्या वाक्य के अन्त में कोष्ठ-बद्ध है। अन्य ग्रन्थो की पृष्ठ-सख्या अनुच्छेद के आरम्भ में ही कोष्ठ में लिख दी गई है। ताजुल मआसिर के अनुवाद में पृष्ठ सख्या इस लिये नही दी गई है कि इसका अनुवाद किसी सार्वजनिक पुस्तकालय की हस्तलिखित पोथी से नही किया गया है। दीवाने वस्तुल हयात की कविताओ का प्रकरण दिया है, पृष्ठ सख्या नही।

अङ्ग्रेज़ी अनुवाद के ग्रन्थो में पारिभाषिक शब्दों के अङ्ग्रेज़ी अनुवादो में दोष रह गये हैं। इस कारण मध्यकालीन भारतीय इतिहास में अनेक भ्रम-पूर्ण रूढियो को आश्रय मिल गया है। इस प्रकार की त्रुटियों से बचने के उद्देश्य से पारिभाषिक और मध्यकालीन वातावरण के परिचायक शब्दो को मूल रूप में ही ग्रहण किया गया है। ऐसे शब्दो की व्याख्या पाद टिप्पणियो में कर दी गई है। मिथ्या प्रवादो का विवेचन भी, समकालीन तथा उत्तरवर्ती इतिहासो के आधार पर, पाद टिप्पणियो में ही किया गया है। नगरों के नाम प्राय मध्यकालीन फारसी रूप में ही रहने दिये गये हैं। मुझे खेद है कि कुछ अत्यावश्यक व्याख्यायें इस लिए न की जा सकी कि मैं विश्वविद्यालय से दूर रहा और मुझे अभीष्ट ज्ञापक ग्रथ न मिल सके। यदि सभव हुआ तो बाद के सस्करण में इस न्यूनता को दूर कर दिया जायगा।

मेरी यह पुस्तक, खलजी कालीन भारत के प्रकाशित होने के पश्चात् एक वर्ष से अधिक समय बीत जाने पर, प्रकाशित हो रही है। तुगलक कालीन भारत के इतिहास से सम्बन्धित मूल ग्रन्थो का अनुवाद दो भागों में तैयार है। इनमें इब्ने बतूता की महत्वपूर्ण भारतीय यात्रा का विशद वर्णन भी सम्मिलित है। जहाँगीर के इतिहास से सम्बन्धित मूल ग्रन्थो का अनुवाद भी तैयार हो चुका है। इस अनुवाद में तुजुके जहांगीरी के पूरे अनुवाद का भी समावेश है। मध्यकालीन भारतीय इतिहास के आधारभूत, फारसी तथा अर्बी के समकालीन इतिहासो का हिन्दी अनुवाद इस ग्रन्थ माला की बीस पुस्तकों में छापने का विचार है। इस योजना की रूप-रेखा मैंने बना ली है पर समझ में नही आता कि इन ग्रन्थों का प्रकाशन किस प्रकार हो सकेगा, होगा भी या नही।

प्रस्तुत इतिहास को प्रकाशित करने की स्वीकृति अलीगढ विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग ने आज से ढाई वर्ष पहले दी थी। स्वीकृति के पश्चात् कई बार कुछ पृष्ठ छपे भी किन्तु कार्य आगे न बढ सका। बाधाएँ पडती गई, अडचनें आती गई और मैं इसके प्रकाशन के सम्बन्ध में हताश सा हो गया। किन्तु अलीगढ विश्वविद्यालय के उपकुलपति डाक्टर जाकिर हुसेन की असीम कृपा से प्रकाशन का कार्य फरवरी १९५६ के आते ही प्रारम्भ हो गया और लगभग डेढ मास में ही सम्पन्न हो गया। अलीगढ विश्वविद्यालय द्वारा खलजी कालीन भारत का प्रकाशन भी डाक्टर साहब की महती कृपा से ही सम्भव हुआ। डाक्टर साहब को राष्ट्र तथा राष्ट्र भाषा से विशेष प्रेम है। उनकी हार्दिक इच्छा है कि इस ग्रन्थ माला की सारी पुस्तकें अलीगढ विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग द्वारा ही प्रकाशित हो किन्तु प्रशासिक तथा अन्य कठिनाइयो का समाधान तो ईश्वर के ही हाथ है। डाक्टर साहब की सुलभ कृपा के लिए मैं जितनी कृतज्ञता प्रकट करूँ, थोडी है।

इस माला की तैयारी में अलीगढ विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के प्रोफेसर डा० नूरुल हसन एम० ए०, डी० फिल (आक्सन) द्वारा मुझे विशेष प्रेरणा मिली है। उन्होंने मेरी कठिनाइयो को दूर किया और अपने सत्परामर्श एव मृदु आलोचना द्वारा मेरे कार्य को सुचारु बनाने की कृपा की। बहुमूल्य सुझावो और सामयिक प्रोत्साहन के लिए मैं उनका विशेष आभारी हूँ। पुस्तको के मिलने की समस्त कठिनाइयाँ विश्वविद्यालय के पुस्तकालयाध्यक्ष प्रोफेसर बशीरुद्दीन की उदार कृपा से दूर होती रही, या यो कहिए कि उनकी कृपा से मुझे पुस्तको के मिलने में कठिनाई का अनुभव ही नही हुआ। उनको धन्यवाद देना मेरा परम कर्तव्य है। राजनीति विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर मुहम्मद हबीब मेरी निरन्तर सहायता करते रहे हैं। इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर एस० ए० रशीद की मेरे ऊपर सर्वदा ही कृपा रही है। मैं उनका तथा रिसर्च और पब्लीकेशन कमेटी का भी आभारी हू।

देहली विश्वविद्यालय के डाक्टर परमात्मा सरन ने तबकाते नासिरी के अनुवाद को पढ कर जो प्रशसनीय सुझाव दिये उनके लिए मैं उनका परम कृतज्ञ हू। आदर्श प्रेस के स्वामी श्री बद्री प्रसाद शर्मा ने अपने कर्मचारियों के सहयोग से इस पुस्तक की छपाई में जिस परिश्रम और उत्साह को प्रदर्शित किया है उसके लिये मे उनका आभारी हूँ। पुस्तक के छपने के समय में दो मास के लिए एक परिचर्चा (सेमीनार) में भूपाल चला गया था और समयाभाव के कारण अन्तिम प्रूफ भी मुझे न भेजे जा सकते थे। प्रूफ और छपाई की सारी देख भाल मेरे मित्र श्री श्रवणकुमार श्रीवास्तव एम० ए०, एल० टी०, राजकीय हायर से० स्कूल, अलीगढ द्वारा बडी सलग्नता से होती रही। पुस्तक की नामानुक्रमणिका भी उन्ही के द्वारा तैयार हुई। इसके

लिए मै उन्हें विशेष धन्यवाद देता हूँ। मूल-लिपि कहीं-कहीं अस्पष्ट थी इस कारण यदाकदा छपाई मे कुछ भूलें रह गई हैं। यदि मैं अन्तिम प्रूफ देख पाता तो यह भूलें अवश्य दूर हो जातीं। वैसे तो यह भूल ऐसी हैं जिनका पुस्तक पर कोई विशेष प्रभाव नही पड़ा है।

इस अवसर पर मैं खलजी कालीन भारत के समालोचकों के प्रति भी अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हू। प्रत्येक ने मुझे बड़ा ही प्रोत्साहन दिया है। स्वर्गीय डाक्टर अमरनाथ झा ने रुग्णावस्था में भी पुस्तक की उपयोगिता के सम्बन्ध में मुझे पत्र लिखने की कृपा की। सागर विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा० रामप्रसाद त्रिपाठी ने लिखा है—'मुस्लिम इतिहास के अन्य कालो पर भी यदि इस प्रकार की पुस्तकें प्रकाशित हो जाएँ तो मैं आशा करता हू कि इलियट व डाउसन की प्रसिद्ध कृतियो की आवश्यकता ही न रहेगी।' मैं अपनी पुस्तक के सभी समालोचकों का कृतज्ञ हू।

अपने इस कार्य में मुझे अपने सभी मित्रों से हर प्रकार की सहायता मिलती रही है। जिस किसी कालिज में मैं रहा उसी के हिन्दी तथा सस्कृत के आचार्यों ने मेरा हाथ बँटाया। स्थानाभाव के कारण मैं उनके नाम नहीं लिख सका हू किन्तु मुझे विश्वास है कि वे अपने प्रति मेरे भावो से परिचित हैं।

राजकीय इण्टर कालिज,
बुलन्दशहर,
मार्च, १९५९

सैयिद अतहर अब्बास रिजवी
एम० ए०, पी-एच० डी०
यू० पी० एजूकेशनल सर्विस

विषय-सूची

भाग 'अ'

भाग 'ब'

भाग 'स'

———

भाग अ

मुख्य समकालीन तथा निकट समकालीन इतिहासकार

मिनहाज सिराज

(क) तबकाते नासिरी

ज़ियाउद्दीन बरनी

(ख) तारीखे फीरोज़शाही

तवक़ाते नासिरी

मिनहाज सिराज

(१)

तवकाते नासिरी का लेखक अबू उमर मिनहाजुद्दीन उस्मान बिन (पुत्र) सिराजुद्दीन मुहम्मद जूज़जानी का जन्म ५८९ हि० (११९३ ई०) में हुआ होगा, इस लिये कि ६०७ हि० (१२१०-११ ई०) में जब उसने फ़ीरोजकोह में मलिक रुक्नुद्दीन महमूद से भेंट की, तब उसकी अवस्था १८ वर्ष की थी। उसके पिता को मुइज्जुद्दीन मुहम्मद बिन (पुत्र) साम ने ५८२ हि० (११८६-८७ ई०) में हिन्दुस्तान की सेना का क़ाज़ी[1] नियुक्त किया था। मिनहाजुद्दीन का पालन-पोषण गयासुद्दीन मुहम्मद बिन साम (गोर का सुल्तान ११६२-१२०२ ई०) की पुत्री शाहज़ादी माहे मुल्क, ने किया था। ६२२ हि० (१२२५ ई०) तथा ६२३ हि० (१२२६ ई०) में वह गोर से सुल्तान ताजुद्दीन नियाल्तिगीन के पास नीमरोज में दूत बनाकर भेजा गया।

६२३ हि० (१२२६ ई०) में वह हिन्दुस्तान की ओर रवाना हो गया। गजनी तथा बामियान के मार्ग से मंगलवार २६ जमादी-उल अव्वल ६२४ हि० (१४ मई १२२७ ई०) को वह उच्च पहुँचा और जिलहिज्जा ६२४ हि० (नवम्बर १२२७ ई०) में मदरसये फ़ीरोज़ी[2] उसको सौंप दिया गया।[3] पहली रबी उल अव्वल ६२५ हि० (९ फरवरी १२२८ ई०) को वह सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश की सेवा में उपस्थित हुआ। सुल्तान शम्सुद्दीन उस समय नासिरुद्दीन कुबाचा से युद्ध करने के लिये वहाँ गया था। सुल्तान के देहली वापस लौटने के समय वह भी उसके साथ देहली की ओर चल पड़ा और रमजान ६२५ हि० (अगस्त सितम्बर १२२८ ई०) में वह देहली पहुँच गया।[4] ६२९ हि० (१२३१-३२ ई०) में सुल्तान शम्सुद्दीन ने ग्वालियर पर आक्रमण किया। मिनहाज भी उसी वर्ष रमजान मास (जून-जुलाई) में ग्वालियर पहुँचा। उसे सुल्तानी शिविर में रमज़ान तथा ज़िलहिज्जा और मुहर्रम मास के प्रथम दस दिनों में प्रत्येक दिन तज़्कीर[5] करने के लिये नियुक्त किया गया। अन्य महीनों में वह सप्ताह में तीन बार तज़्कीर किया करता था। इस समय उसने पिचानवे तज़्कीरें कीं। ग्वालियर की विजय

---

१ देहली के सुल्तानों के राज्य में धर्म सम्बन्धी सभी प्रबन्ध सद्रुस्सुदूर के अधीन होते थे। वह राज्य का क़ाज़िय ममालिक अथवा मुख्य न्यायाधीश भी होता था। उसका विभाग 'दीवाने क़ज़ा' कहलाता था। उसकी सहायता के लिए क़ाज़ी नियुक्त होते थे। दुराचार तथा कुकर्मों को रोकने के लिये मुहतसिब नियुक्त किये जाते थे।

२ फ़ीरोज़ी विद्यालय।

३ तबक़ाते नासिरी (कलकत्ता संस्करण १८६४ ई०) पृष्ठ १४४, १७०

४ तबक़ाते नासिरी पृष्ठ १७२, १७४।

५ तज़्कीर—एक प्रकार का धर्मोपदेश। युद्ध आदि संकट के समय इसका विशेष महत्व समझा जाता था। इसमें इस्लामी इतिहास से ऐसी बातें प्रस्तुत की जाती थीं जिन्हें सुनकर लोग ईश्वर पर विश्वास करके प्रत्येक कठिनाई का सामना करने को तैयार हो जाते थे।

के उपरान्त मिनहाज सिराज को ग्वालियर की कज़ा, खितावत, इमामत[1], एहतिसाब[2] तथा समस्त शरई[3] कार्यों की देखभाल सौंपी गई[4]।

शाबान ६३५ हि० (मार्च-अप्रैल १२३८ ई०) में मिनहाज ग्वालियर से देहली पहुँचा। सुल्तान रज़िया ने जो उस समय राज-सिंहासन पर विराजमान थी, मदरसये नासिरिया का प्रबन्ध उसको सौंप दिया। ग्वालियर का कज़ा विभाग भी उसी के अधीन रहा।[5] ऐसा ज्ञात होता है, कि वह ग्वालियर की कज़ा का प्रबन्ध अपने नायबों द्वारा कराता होगा। सुल्तान रज़िया के कैद हो जाने और मुइज्ज़ुद्दीन बहरामशाह के सिंहासन पर विराजमान होने के पश्चात् मिनहाज ने सुल्तान मुइज्ज़ुद्दीन बहराम को बधाई देते हुये एक कविता पढ़ी।[6] ६३६ हि० (१२४१-४२ ई०) में मुग़लों के उत्पात के बढ़ जाने के कारण सुल्तान मुइज्ज़ुद्दीन बहरामशाह ने देहली के निवासियों को सफेद राजभवन में एकत्र किया। सुल्तान के आदेशानुसार इस अवसर पर मिनहाज सिराज ने सर्वसाधारण की शान्ति के लिये तज़्कीर की।[7] जब अमीरों ने सुल्तान मुइज्ज़ुद्दीन के विरुद्ध षड्यन्त्र प्रारम्भ कर दिया तब भी मिनहाज ने अमीरों को शान्त करने का विशेष प्रबन्ध किया।[8] ७ ज़ीकाद ६३९ हि० (९ मई १२४२ ई०) को मिनहाज पर भी आक्रमण हुआ किन्तु वह बच गया।[9] ८ ज़ीकाद ६३९ हि० (१० मई १२४२ ई०) को जब सुल्तान अलाउद्दीन मसऊदशाह बिन (पुत्र) फ़ीरोज़शाह राजसिंहासन पर आरूढ़ हुआ तो मिनहाज ने काज़ी के पद से त्याग-पत्र दे दिया और ९ रजब ६४० हि० (२ जनवरी १२४३ ई०) को वह देहली से लखनौती की ओर चल दिया। बदायूँ में ताजुद्दीन कुतलुग़ ने और अवध में कमरुद्दीन कीरान ने उसे विशेष प्रोत्साहन दिया। उसी समय तुग़ान ख़ाँ इज्ज़ुद्दीन बिन (पुत्र) तुग़रिल लखनौती का मलिक (शासक) कड़ा पहुँच चुका था। मिनहाज उसकी सेवा में उपस्थित हुआ और उसके साथ ७ ज़िलहिज्जा ६४० हि० (२८ मई १२४३ ई०) को लखनौती पहुँच गया।[10] २ वर्ष पश्चात् जब तुग़ान ख़ाँ को लखनौती छोड़ना पड़ा तो वह भी उसके साथ १४ सफ़र ६४३ हि० (११ जूलाई १२४५ ई०) को देहली लौट आया। १७ सफ़र ६४३ हि० (१४ जूलाई १२४५ ई०) को उलुग़ ख़ाँ की सिफ़ारिश से मदरसये नासिरिया का प्रबन्ध तथा उससे सम्बन्धित वक्फ़ की देखभाल भी उसके सिपुर्द करदी गई। इसके साथ-साथ उसे घोड़ा तथा खिलअत[11] भी प्राप्त हुए। इससे पूर्व यह वस्तुयें उसकी श्रेणी के किसी पदाधिकारी को कभी न मिली थीं।[12] जब

१ इमाम के कर्तव्य :—इमाम नमाज़ तथा मस्जिदों का प्रबन्ध करता था। खतीब सुल्तान के नाम का खुत्बा पढ़ता था। काज़ी का विभाग कज़ा कहलाता था। खतीब का कार्य खितावत कहलाता था।

२ मुहतसिब के कर्तव्यों से सम्बन्धित कार्य। एक ही व्यक्ति को इतने भिन्न भिन्न पद, केवल तुर्कों के राज्य के प्रारम्भ ही में प्रदान किये जाते थे।

३ इस्लामी नियमों को शरा कहते हैं। शरा से सम्बन्धित कार्य शरई कार्य कहलाते हैं। इसके मुख्य आधार क़ुरान तथा हदीस हैं।

४ तबक़ाते नासिरी पृष्ठ १७३-१७५।

५ ,, ,, पृष्ठ १८८।

६ ,, ,, पृष्ठ १९१।

७ ,, ,, पृष्ठ १९५।

८ ,, ,, पृष्ठ १९६।

९ ,, ,, पृष्ठ १९७।

१० ,, ,, पृष्ठ १९८।

११ वह वस्त्र जो सुल्तानों की ओर से इनाम में दिया जाता था। यह प्रायः बड़ा बहुमूल्य होता था।

१२ तबक़ाते नासिरी पृष्ठ २००।

सुल्तान नासिरुद्दीन राजसिंहासन पर आरूढ हुआ तो मिनहाज के भाग्य का सितारा चरम सीमा पर पहुँच गया। उलुग़ ख़ाँ को, जो उसका विशेष आश्रयदाता था, राजकाज के समस्त अधिकार प्राप्त हो गये थे। वह मिनहाज सिराज को विशेष प्रोत्साहन देता था। उसने अपने इतिहास में प्रत्येक स्थान पर ख़ान की भूरि भूरि प्रशंसा की है।[1] ६४७ हि० (१२४६-५० ई०) में उसे अपनी बहिन के, जो कि ख़ुरासान में थी, कष्टों की सूचना मिली। उसने उलुग़ ख़ाँ की सेवा में उसके कष्टों का वृत्तांत दिया। ख़ान ने उसे एक घोडा और ख़िलअत तथा गाँव प्रदान किये। उलुग़ ख़ाँ ने सुल्तान से भी उसकी सिफारिश की। सुल्तान ने उसे ४० ग़ुलाम तथा १०० ख़च्चर प्रदान किये। मिनहाज ने यह सब सामान ख़ुरासान भेजने हेतु २६ ज़िलहिज्जा ६४७ हि० (४ अप्रैल १२५० ई०) को देहली से मुल्तान की ओर प्रस्थान किया। ६ रबी-उल-अव्वल ६४८ हि० (८ जून १२५० ई०) को वह मुल्तान पहुँचा और वहाँ से सब सामान ख़ुरासान भिजवाया। २२ जमादी-उल-आख़िर ६४८ हि० (२२ सितम्बर १२५० ई०) को वह देहली वापस आया। १० जमादी-उल-अव्वल ६४६ हि० (३१ जूलाई १२५१ ई०) को उसे काज़ियें-ममालिक का पद प्रदान हुआ,[2] किन्तु इसी बीच में एमादुद्दीन रैहान के षड्यन्त्र के फलस्वरूप उलुग़ ख़ाँ को समस्त अधिकारों से वंचित कर दिया गया। रजब ६५१ हि० (अगस्त-सितम्बर १२५३ ई०) में मिनहाज सिराज से भी उसका पद लेकर क़ाज़ी शम्सुद्दीन बहराइची को दे दिया गया,[3] किन्तु ६ ज़िलहिज्जा ६५२ हि० (२० जनवरी १२५५ ई०) को उलुग़ ख़ाँ को फिर से पहले की भाँति अधिकार प्राप्त हो गये[4]। मिनहाज ने इस बीच में उलुग़ ख़ाँ के अन्य सहायकों के समान बहुत कष्ट भोगे। ७ रबी उल-अव्वल ६५३ हि० (१६ अप्रैल १२५५ ई०) को वह तीसरी बार राज्य के क़ाज़ी के पद पर नियुक्त हुआ।[5]

उसने शव्वाल ६५८ हि० (सितम्बर-अक्तूबर १२६० ई०) तक का हाल अपने इतिहास में लिखा है, यद्यपि वह इसके उपरान्त भी जीवित रहा, किन्तु उसने अपने इतिहास में इस तिथि के बाद का कोई हाल नहीं लिखा। बरनी ने उसका नाम बल्बन के राज्य-काल के उन आलिमों की सूची में लिखा है, जो शम्सी काल में भी विद्यमान थे[6]।

मिनहाज अपने समय का बहुत बड़ा विद्वान था। जब वह ग्वालियर से देहली की ओर जाने लगा, तो ताजुद्दीन सजर ने उसकी पुस्तकों के दो बक्स ग्वालियर से महावन पहुँचाये[7]। इससे ज्ञात होता है कि वह अपने साथ पुस्तकों की बहुत बड़ी संख्या हिन्दुस्तान लाया था। अधिकतर तुर्क अमीर उसके मित्र थे। इसी कारण सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् जो उथल पुथल हुई और जल्दी-जल्दी सुल्तान बदले, उससे उसे कोई विशेष हानि नहीं पहुँची। उलुग़ख़ाँ की कृपा से वह राज्य का सर्वोच्च पदाधिकारी बन गया था।

तबक़ाते नासिरी, जो सुल्तान नासिरुद्दीन महमूदशाह को समर्पित की गई, निम्नांकित २३ तबक़ों (अध्याय) में विभाजित है (१) आदम से मुहम्मद साहब तक का हाल (२) प्रथम चार ख़लीफा (३) बनी उमय्या (४) बनी अब्बास (५) प्रारम्भ के ईरानी बादशाह (६) तुब्बा तथा यमन के बादशाह (७) ताहिरी वंश (८) सफ्फारी वंश (९) सामानी वंश

१ तबक़ाते नासिरी पृष्ठ २८६।
२ " " पृष्ठ २९६।
३ " " पृष्ठ २९८ २९९।
४ " " पृष्ठ ३०३।
५

(१०) दैलिमी वंश (११) सुबक्तिगीन का वंश (१२) सल्जूक वंश (१३) नजर वंश (१४) नीमरोज़ तथा सीस्तान के बादशाह (१५) कुर्द वंश (१६) ख्वारज़म शाहों का हाल (१७) शसबानी तथा गोर (१८) तुखारिस्तान के शसबानी (१९) गजनी के शसबानी (२०) हिन्दुस्तान के मुइज़्ज़ी सुल्तान (२१) हिन्दुस्तान के शम्सी सुल्तान (२२) शम्सी मलिक (२३) इस्लाम पर सकट तथा मुगलों के आक्रमण।

इस प्रकार इस इतिहास में आदम से लेकर लेखक के समय तक के ससार के प्रत्येक उन भागों के सुल्तानों का हाल है जिनके विषय में उस समय के विद्वानों को ज्ञान था। मिनहाज ने सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश के राज्यकाल से लेकर सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्यकाल के पन्द्रहवें वर्ष तक का हाल अपनी जानकारी के आधार पर लिखा है। ग्वालियर से देहली पहुँचने के उपरान्त वह केवल ९ रजब ६४० हि० से १४ सफर ६४३ हि० तक दरबार से पृथक् रहा, किन्तु इस समय उसने देहली से लखनौती तक की यात्रा की। इस प्रकार उसे उत्तरी भारत की पश्चिमी सीमा से पूर्वी सीमा तक के सभी स्थानों के विषय में पूरी जानकारी हो गई थी। उसने बगाल के इतिहास के विषय में जो कुछ लिखा है वह उसे स्थानीय लोगों से ज्ञात हुआ था। उसने उन समस्त लोगों के नाम लिखे हैं जिनके द्वारा उसे बगाल का हाल ज्ञात हुआ। कई चढ़ाइयों के समय वह सेना के साथ गया था। उसने इनका हाल अपनी जानकारी के आधार पर लिखा है। काज़िये ममालिक तथा देहली के मुख्य मदरसे का अध्यक्ष होने के कारण उसे राज्य की लगभग सभी घटनाओं का हाल ज्ञात होता रहता था।

मलिकों से घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण उसने अपने इतिहास में सुल्तानों के साथ-साथ मलिकों तथा अमीरों का हाल भी लिखा है। बहुत सी घटनाएँ उसे भिन्न-भिन्न अमीरों के वृत्तान्त में कई-कई बार लिखनी पड़ीं किन्तु इससे हमें उस समय के अमीरों के चरित्र, षडयत्र, विद्या तथा धर्म से प्रेम और अनेक ऐसी बातों का ज्ञान प्राप्त होता है जो हिन्दुस्तान के अन्य मध्यकालीन इतिहासों में बहुत कम मिलती हैं। उसने एक प्रकार से इस क्षेत्र के बाद के लेखकों का पथ-प्रदर्शन किया। बरनी ने अमीरों तथा सुल्तानों के अतिरिक्त अन्य लोगों का वृत्तान्त सम्भवतः उसी से प्रभावित हो कर दिया है।

मिनहाज सिराज कज़ा तथा हिस्बा का अध्यक्ष था। वह एक धर्मनिष्ठ मुसलमान था, किन्तु उसके इतिहास से किसी स्थान पर भी उस धार्मिक कट्टरपन का पता नहीं चलता, जो ज़ियाउद्दीन बरनी के प्रत्येक ग्रन्थ में प्रतीत होता है। उसने विद्रोही हिन्दू राजाओं की निन्दा की है, किन्तु विद्रोही मुसलमान अमीरों की भी किसी स्थान पर प्रशसा नहीं की। उसका विचार था कि समस्त अधिकार उच्च वंश के तुर्कों तथा ताजीकों को प्राप्त होने चाहिये। एमादुद्दीन रैहान के अधिकार-सम्पन्न हो जाने से उसे विशेष कष्ट भोगने पड़े। रैहान के कारण उसके स्वामी उलुग ख़ाँ का ह्रास हुआ था अतः एमादुद्दीन रैहान की निन्दा करना उसके लिये स्वाभाविक था। उसने इस बात पर विशेष बल दिया है कि एमादुद्दीन रैहान में जो अवगुण थे उनका विशेष कारण यह था कि वह तुर्क-वंशीय न था वरन् एक हिन्दुस्तानी था। अतः इसे मिनहाज सिराज का नहीं, अपितु उसके समय की विशेष परिस्थिति का कारण समझना चाहिये।

मिनहाज सिराज ने अपने इतिहास में बड़ी सरल भाषा का प्रयोग किया है। समस्त घटनाओं का क्रमानुसार उल्लेख किया है। तबकाते नासिरी के पढ़ने से पता चलता है कि मिनहाज सिराज में ऐतिहासिक घटनाओं को समझने तथा उनका उल्लेख करने की बड़ी योग्यता थी। समकालीन राजनीति के विषय में भी उसने कहीं-कहीं अपने विचार प्रकट किये हैं। रुक्नुद्दीन की हत्या के उल्लेख के उपरान्त वह लिखता है, "बादशाहों में सभी बात

विद्यमान होनी चाहिये, जिससे प्रजा तथा लाव लश्कर सन्तुष्ट रह सके। भोग विलास तथा दुष्टों एव दुराचारियों से मेल के कारण राज्य का पतन हो जाता है।" रज़िया के विषय में वह लिखता है, "उसमें बादशाहों के योग्य सचित सभी गुण थे किन्तु भाग्य ने उसे पुरुष न बनाया था, अत उसके समस्त गुण उसके लिये कुछ भी लाभप्रद न हो सकते थे।"[१]

वह कवि भी था। सुल्तान मुइज्ज़ुद्दीन बहरामशाह के सिंहासनारोहण की बधाई[२] तथा सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्याभिषेक[३] के समय जिन कविताओं की उसने रचना की, उन्हें उसने तबकाते नासिरी में नक़ल भी कर दिया है। उसने "नासिरी नामा"[४] नामक एक अन्य कविता की भी रचना की जो अब अप्राप्य है। इसमें तिलसदा नामक किले पर शाही सेना के प्रस्थान, उलुग खाने मुअज़्ज़म के पौरुष्य एव वीरता तथा दलकीओ मलकी की पराजय का उल्लेख है। इस कविता की चर्चा मिनहाज सिराज ने अपने इतिहास में अन्य स्थानों पर भी की है। सम्भव है कि इस कविता के प्राप्त हो जाने पर दलकीओ मलकी के विषय में निश्चित रूप से कोई प्रकाश डाला जा सके।

तबकाते नासिरी की हस्तलिखित प्रतियाँ योरप तथा भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न पुस्तकालयों में पाई जाती हैं। भारतवर्ष से सम्बन्धित तथा मंगोलों का इतिहास कलकत्ते से (बिबलियोथिका इण्डिका) १८६३—६४ ई० में प्रकाशित हो चुका है। सातवें तबके से अन्त तक का अँगरेज़ी अनुवाद एच० जी० रैवर्टी ने किया था, जो कलकत्ते से (बिबलियोथिका इण्डिका) १८७३—८१ ई० में प्रकाशित हुआ। ईलियट और डाउसन के इतिहास की दूसरी पुस्तक में पृष्ठ २५९—३८३ में तबकाते नासिरी के भारतवर्ष से सम्बन्धित वृत्तान्त का सक्षिप्त अँगरेज़ी अनुवाद वर्त्तमान है। कलकत्ते में छपी हुई पुस्तक के पृष्ठ १३७-३२४ (तबका २०-२२ तक) का हिन्दी अनुवाद आगे के पृष्ठों में दिया जा रहा है।[५]

१ तबकाते नासिरी पृष्ठ १८४, १८८।

२ तबकाते नासिरी पृष्ठ १९१, १९२।

३ तबकाते नासिरी पृष्ठ २०२-२०५।

४ तबकाते नासिरी पृष्ठ २१० ११।

५ छपाई तथा संकलन की अनेक अशुद्धियाँ कलकत्ते की छपी हुई पुस्तक में विद्यमान हैं। रैवर्टी ने अंगरेज़ी अनुवाद में इन अशुद्धियों को ठीक किया है, किन्तु फिर भी बहुत सी अशुद्धियाँ रह गई हैं। इस अनुवाद में स्थानों तथा व्यक्तियों के शुद्ध नाम लिखने का प्रयत्न किया गया है और विशेष अशुद्धियों के विषय में टिप्पणियाँ भी दी गई हैं।

को पराजित करके सुल्तान का बदला उन लोगो से ले लिया। इस प्रकार उसने हिन्दुस्तान के अन्य प्रदेशो पर भी विजय प्राप्त की, और उज्जैन तक के प्रदेश अपने अधिकार में कर लिये। पूरब में मलिक इज्जुद्दीन मुहम्मद बख्तियार खलजी ने बिहार तथा नदिया पर अधिकार जमा लिया। इसका उल्लेख आगे किया जायगा। यह सब-स्थान उसी के राज्यकाल म जीते गये।

जब सुल्तान गाजी मुहम्मद साम की मृत्यु हो गई तो सुल्तान मुइज्जुद्दीन के भतीजे सुल्तान गयासुद्दीन महमूद मुहम्मद साम ने उसे चत्र[1] प्रदान कर सुल्तान बना दिया। उसने ६०२ हि० (१२०५-६ ई०) में देहली से लाहौर की ओर प्रस्थान किया और मगलवार १८ जीकाद ६०२ हि० (२६ जून, १२०६ ई०) में लाहौर के सिहासन पर आरूढ होगया।

कुछ समय उपरान्त उसमें तथा ताजुद्दीन यलदुज मे लाहौर के अधिकार के प्रश्न पर विरोध प्रारम्भ हो गया और अन्त में युद्ध छिड गया। इसमे सुल्तान कुतुबुद्दीन की विजय हुई। ताजुद्दीन हार कर भाग निकला। सुल्तान कुतुबुद्दीन ने गजनी तक उसका पीछा किया और गजनी पर अधिकार जमा लिया। वह ४० दिन तक गजनी के राजसिंहासन पर विराजमान रहने के उपरान्त हिन्दुस्तान लौट आया। इसका उल्लेख पहले हो चुका है।

अब उसकी मृत्यु का समय भी निकट आ गया था। ६०७ हि० (१२१० ई०) में वह गेंद खेलते समय घोडे से गिर पडा। घोडा भी उस पर गिर पडा। काठी का सामने का भाग उसके सीने मे लग गया और उसकी मृत्यु हो गई।

(१४१) देहली की प्रथम विजय से अपनी मृत्यु के समय तक उसने बीस वर्ष राज्य किया। चत्र प्राप्त करने तथा अपना खुत्बा[2] और सिक्का चलाने के उपरान्त उसने चार वर्ष और कुछ महीने राज्य किया।

(२) सुल्तान कुतुबुद्दीन का पुत्र आरामशाह

जब सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐबक की मृत्यु हो गई तो हिन्दुस्तान के अमीरो तथा मलिको ने यह उचित समझा कि उपद्रव को शान्त करने और प्रजा के आराम एव सैनिकों के सतोष के लिए आरामशाह को सिंहासनारूढ किया जाय। सुल्तान कुतुबुद्दीन की तीन पुत्रियाँ थी। इनमें से दो मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा को (एक की मृत्यु के बाद दूसरी) ब्याही गई। एक पुत्री सुल्तान शम्सुद्दीन को विवाहित थी। जब कुतुबुद्दीन की मृत्यु हो गई और आरामशाह को सिंहासनारूढ कर दिया गया तो मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा उच्च तथा मुल्तान की ओर चला गया। कुतुबुद्दीन सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश को बादशाह बनाना चाहता था और उस अपना पुत्र कहा करता था। उसे बदायूँ की अक्ता प्रदान करदी थी। मलिको ने सर्व सम्मति से उसे बदायूँ से बुलवा कर देहली के राजसिंहासन पर बैठा दिया। सुल्तान कुतुबुद्दीन की पुत्री उसको ब्याही थी। आरामशाह की मृत्यु हो गई। हिन्दुस्तान का राज्य चार भागों म विभाजित हो गया। सिन्ध प्रदेश नासिरुद्दीन कुबाचा के हाथ में आ गया। देहली का राज्य

१ चत्र — अमीर खुसरो तथा अन्य लेखकों के वर्णन से यह पता चलता है कि चत्र अथवा छत्र भिन्न भिन्न रगों के होते थे। इसका प्रयोग केवल सुल्तान कर सकता था। कभी-कभी सुल्तान अपने शाहजादों तथा बड़े-बड़े अमीरों को भी चत्र प्रदान कर देता था। सुल्तान नासिरुद्दीन ने उलुग खाँ को भी चत्र प्रदान कर दिया था।

२ खुत्बा तथा सिक्का, बादशाही के विशेष चिह्न समझे जाते थे। एक राज्य में किसी अन्य बादशाह का खुत्बा तथा सिक्का न चल सकता था। खुत्बा उस व्याख्यान को कहते है जो दोनों ईदों तथा जुमे की नमाज के समय पढा जाता है। इसमें भगवान् की स्तुति तथा मुहम्मद साहब की प्रशसा के उपरान्त समकालीन बादशाह का वर्णन होता है। यदि राज्य के किसी प्रदेश में कोई अन्य व्यक्ति अपने नाम का खुत्बा पढ़वा देता था तो वह विद्रोही समझा जाता था। अत खुत्बा तथा सिक्का स्वतन्त्र राज्याधिकार के चिह्न थे।

सुल्तान सईद शम्सुद्दीन को प्राप्त हो गया। लखनौती का राज्य खलजी सुल्तानो तथा मलिको के अधिकार में रहा। लाहौर का राज्य कभी मलिक ताजुद्दीन, कभी मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा और कभी सुल्तान शम्सुद्दीन के अधिकार में आ जाता था। इसका उल्लेख यदि ईश्वर ने चाहा तो आगे किया जायगा।

(१४२) (३) मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा मुइज्जी

मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा एक बहुत बडा बादशाह और सुल्तान गाजी मुइज्जुद्दीन का दास था। वह बडा ही बुद्धिमान, समझदार अनुभवी तथा योग्य व्यक्ति था। वह सुल्तान गाजी मुइज्जुद्दीन मुहम्मद साम की सेवा मे भिन्न-भिन्न छोटे और बडे पदो पर नियुक्त रह चुका था। उसे सेना तथा राज्य व्यवस्था के समस्त कार्यों का विशेष अनुभव था। जब मलिक नासिरुद्दीन एतिमुर उच्च तथा मुल्तान का मुक्ता,[1] अन्दखुद के युद्ध मे मारा गया और सुल्तान गाजी इस युद्ध के उपरान्त गजनी लौटा तो उसने मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा को उच्च प्रदान कर दिया। यह युद्ध सुल्तान गाजी मुइज्जुद्दीन तथा 'खता' की सेना और तुर्किस्तान के मलिको के बीच मे हुआ था। उसने सुल्तान गाजी की अधीनता में भीषण युद्ध किया। अनेको काफिरो का सहार करके उन्हे नरक भेज दिया। 'खता' के सैनिको ने युद्ध मे व्याकुल होकर एक बार आक्रमण कर दिया। वह शहीद[2] हुआ। कुबाचा को सुल्तान कुतुबुद्दीन की दो पुत्रियाँ ब्याही थी। बडी पुत्री से उसके एक पुत्र का जन्म हुआ था जिसका नाम मलिक अलाउद्दीन बहरामशाह था। वह बडा ही रूपवान परन्तु विलासी युवक था। युवावस्था के अनेक दोष भी उसमें पाये जाते थे।

सक्षेप मे, सुल्तान कुतुबुद्दीन की मृत्यु के उपरान्त मलिक नासिरुद्दीन ने उच्च पहुँच कर मुल्तान पर अधिकार जमा लिया। सिन्धुस्तान[3] तथा देवल एव समुद्र तट तक के प्रदेश तथा सिन्ध प्रदेश के किले, शहर और कस्बे अपने अधिकार में कर लिये और 'चत्र' धारण कर लिया। उसने तबरहिन्दा, कोहराम, तथा सरसुती पर अधिकार जमा लिया।

(१४३) उसने लाहौर को कई बार अपने कब्जे में किया। गजनी की सेना से, जोकि सुल्तान ताजुद्दीन यलदुज की ओर से भेजी गई थी, युद्ध किया किन्तु ख्वाजा मुईदुल मुल्क सजरी ने, जो कि गजनी का वजीर था, उसे पराजित किया। जब सिन्ध का राज्य उसके अधिकार मे आ गया तो चीन के काफिरो (मुगलो) के उत्पात के कारण खुरासान, गोर तथा गजनी के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति उसकी सेवा में पहुचे। उसने इन सब का बडा आदर सम्मान किया और उन्हे बहुत इनाम इकराम दिया। वह सुल्तान शम्सुद्दीन का बहुत बडा विरोधी था। दोनो का सिन्ध नदी के युद्ध तक बडा विरोध रहा। यह युद्ध सुल्तान जलालुद्दीन ख्वारज्म शाह तथा चंगेज खाँ के बीच में हुआ। इसके उपरान्त जलालुद्दीन ख्वारज्म शाह सिन्ध प्रदेश के अन्दर होता हुआ देवल और मकरान की ओर रवाना हो गया।

मुगलो ने नन्दना की विजय के उपरान्त तूर्ती नवीन मुगल[4] की अधीनता में एक बहुत बडी सेना लेकर चढाई कर दी। चालीस दिन तक उस दृढ किले को घेरे रहे। मलिक

१ बड़ी अक्ता के स्वामी मुक्ता कहलाते थे।

२ युद्ध में मुसलमानों के मारे जाने को लेखक ने शहीद होना लिखा है तथा हिन्दुओं की मृत्यु को नरक में जाना लिखा है। यह केवल उस समय की रचना का एक ढग था। इससे किसी धार्मिक कट्टरपन को सिद्ध करना कठिन है।

३ पुस्तक में हिन्दुस्तान लिखा है किन्तु यह सिन्ध होना चाहिये।

४ यह नाम स्पष्ट नही है। पुस्तक में तूली तथा रैवर्टी के अनुवाद में तूली लिखा है।

नासिरुद्दीन ने इस युद्ध में खज़ाने का मुँह खोल दिया और लोगों को बहुत कुछ दान दिया। उसने इस युद्ध में इतनी वीरता, बुद्धिमत्ता तथा योग्यता दिखाई कि जिसे लोग क़यामत तक याद रक्खेंगे। यह युद्ध ६२१ हि० (१२२४ ई०) में हुआ। इसके डेढ़ साल उपरान्त गोर के मलिक, काफ़िरों के विद्रोह के कारण, नासिरुद्दीन की सेवा में उपस्थित हुये। ६२३ हि० (१२२६ ई०) के अन्त में ख्वारज़्मियों की सेना में से ख़लजियों की सेना ने सिविस्तान के अधीन मसूरा पर अधिकार जमा लिया। उनका नेता मलिक ख़ाँ खलज था। मलिक नासिरुद्दीन ने उनको वहाँ से भगाने के लिये, उन पर चढ़ाई की। दोनों में युद्ध हुआ। ख़लजी लश्कर पराजित हुआ और उनका ख़ान मारा गया। मलिक नासिरुद्दीन मुल्तान तथा उच्च को पुनः वापस आ गया।

(१४४) इसी वर्ष इस इतिहास का लेखक मिनहाज सिराज ख़ुरासान से ग़ज़नी और बामियान[१] के मार्ग द्वारा नाव पर बैठ कर मंगलवार २६ जमादी उल अव्वल सन् ६२४ हि० (१४ मई १२२७ ई०) में उच्च पहुँचा। उसी वर्ष ज़िलहिज्जा (नवम्बर-दिसम्बर) के महीने में उच्च का मदरसये फ़ीरोज़ी उसको सौंप दिया गया। उसे अलाउद्दीन बहरामशाह की सेना का क़ाज़ी भी नियुक्त किया गया।

उसी ६२४ हि० के रबी उल-अव्वल मास (फरवरी-मार्च १२२७ ई०) में सुल्तान शम्सुद्दीन ने उच्च पर चढ़ाई करदी। मलिक नासिरुद्दीन पराजित होकर एक नाव पर बैठकर भक्कर की ओर भागा। सुल्तान की सेना ने वज़ीरे मुम्लिकत (राज्य के वजीर) निज़ामुलमुल्क की अधीनता में उसका पीछा किया और उसे भक्कर के किले में घेर लिया। सुल्तान उच्च के किले के द्वार पर दो महीने २७ दिन तक डेरे डाले रहा। शनिवार २७ जमादी-उल अव्वल (१५ मई १२२७ ई०) को उच्च के किले पर विजय प्राप्त हो गई[२]। जब उच्च विजय की सूचना मलिक नासिरुद्दीन को मिली तो उसने अपने पुत्र अलाउद्दीन बहरामशाह को सुल्तान की सेवा में भेजा। जब वह सुल्तान के शिविर में पहुँचा तो २२ जमादी उल आख़िर (१० जून १२२७ ई०) को भक्कर की विजय तथा मलिक नासिरुद्दीन के अपने आप को सिन्ध नदी में डुबा देने की सूचना भी प्राप्त हो गई। उसके जीवन का अन्त हो गया। उसने २२ वर्ष तक सिन्ध, उच्च तथा मुल्तान पर राज्य किया।

(४) मलिक बहाउद्दीन तुग़रिल मुइज़्ज़ी

(१४५) मलिक बहाउद्दीन तुग़रिल बड़े उत्कृष्ट स्वभाव का व्यक्ति था। वह बड़ा ही न्यायी और दीन दुखियों का आश्रय-दाता था। वह सुल्तान गाज़ी मुइज़्ज़ुद्दीन का बहुत पुराना दास था, और उसने उसी की सेवा में इतनी उन्नति प्राप्त की थी। जब बियाना की विलायत[३] का थनकिर[४] नामक किला वहाँ के राय से युद्ध करके उसने अधिकृत किया, तो वह उसी को दे दिया। उसने उस प्रदेश को सुव्यवस्थित किया। हिन्दुस्तान तथा ख़ुरासान से व्यापारी तथा प्रसिद्ध व्यक्ति उसकी सेवा में आते रहते थे। इन सब को वह रहन सहन तथा भोजन की सामग्री देता था। क्योंकि थनकिर के किले में उसे और उसकी सेना को

१ फ़ारसी की पुस्तक में मथान है किन्तु रेवर्टी ने बामियान लिखा है। यही उचित ज्ञात होता है।

२ होदीवाला ने मिनहाज की लिखी हुई तारीखों पर समीक्षा करके क़ुबाचा की मृत्यु १९ जमादी उस्सानी ६२५ हि० (२६ मई १२२८ ई०) तथा उच्च के पतन की तिथि शनिवार २९ जमादी उल अव्वल ६२५ हि० (६ मई १२२८ ई०) लिखा है (पृ० २०५)। तबकाते नासिरी (पृ० १७३)

३ प्रत्येक राज्य भिन्न भिन्न भागों में विभाजित था। राज्य का सब से बड़ा भाग अथवा प्रान्त या प्रदेश विलायत कहलाता था।

४ भरतपुर नगर से २८ मील दक्षिण पश्चिम में।

कोई आराम न मिलता था, अत उसने भियाना की विलायत में सुल्तानकोट नामक नगर बसाया और वहीं रहने लगा। वहाँ से बराबर ग्वालियर[1] की ओर सेना भेजा करता था। जब सुल्तान गाज़ी ग्वालियर की ओर से लौटा तो उसने बहाउद्दीन से कहा कि "यह किला तुझे अपने अधिकार में कर लेना चाहिये।" इस सकेत पर बहाउद्दीन तुग़रिल ने एक सेना ग्वालियर के किले के निकट नियुक्त कर दी। क़िले से दो फरसग[2] पर मुसलमान सवारो के लिये एक किला बनवाया। मुसलमान सवार रात को वहीं निवास करते थे। रोज़ किले पर आक्रमण करते थे। एक वर्ष तक इसी प्रकार आक्रमण करते रहे। जब ग्वालियर के लोग बहुत परेशान हो गये तो उन्होंने सुल्तान क़ुतुबुद्दीन के पास अपने दूत भेजकर किला सुल्तान कुतुबुद्दीन को समर्पित कर दिया। सुल्तान कुतुबुद्दीन और मलिक बहाउद्दीन में कुछ मतभेद था। मलिक बहाउद्दीन बडा ही सदाचारी था। भियाना में उसके गुणो के अनेक चिह्न पाये जाते हैं। इसके उपरान्त उसकी मृत्यु हो गई।

(१४६) इसके पश्चात् इस तबके में उन खलजी मलिकों का उल्लेख किया जायगा जोकि सुल्तान कुतुबुद्दीन के राज्य में विद्यमान थे और मुइज्ज़ुद्दीन मुहम्मद साम के दासों में सम्मिलित थे, जिससे पढने वालो को हिन्दुस्तान के सभी मलिको तथा अमीरो का हाल ज्ञात हो जाय और वे लेखक के प्रति भगवान् से प्रार्थना करें और साथ ही साथ यह भी प्रार्थना करें कि अमीरुल मोमनीन सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद अपने राज्य पर क़यामत तक विद्यमान रहे।

(५) गाज़ी मुहम्मद बख्तियार ख़लजी
लखनौती प्रदेश में

विश्वसनीय लोगों का कथन है कि मुहम्मद बख्तियार गोर तथा गर्मसीर के राज्य के ख़लजी कबीले से था। वह बडा ही वीर, साहसी तथा अनुभवी व्यक्ति था। वह अपने कबीले से पृथक् होकर गज़नी में सुल्तान मुइज्ज़ुद्दीन के दरबार में पहुँचा। उसे दीवाने अर्ज़[3] में एक साधारण पद दिया गया इस लिये कि दीवाने अर्ज़ के अधिकारी को वह एक साधारण व्यक्ति ही प्रतीत हुआ किन्तु उसने उसे स्वीकार न किया।

(१४७) जब वह देहली पहुँचा तो वहाँ भी इसी कारण से कि देखने में उसमें कोई विशेषता न थी उसे कोई पद न मिला। मुहम्मद बख्तियार देहली से बदायूँ की ओर गया। वहाँ सिपहसालार हिज़बरुद्दीन, हसन अदीब, बदायूँ के मुक्ता ने उसके लिये वेतन नियत कर दिया। कुछ समय उपरान्त वह अवध की ओर चला गया। उसने मलिक हुसामुद्दीन उगुलबक की सेवा में कई अवसरो पर बडी वीरता तथा साहस का प्रदर्शन किया। उसके पास एक बहुत अच्छा घोडा तथा बडे ही उत्तम अस्त्र-शस्त्र थे। उसकी वीरता के कारण उसे भगवत तथा भीवली[4] की अक्ता प्राप्त हो गई। क्योंकि वह बडा वीर तथा पराक्रमी था, अत वह मुनेर[5] और बिहार में धावे मारता था और वहाँ से बहुत सा धन लूट लाता था। इस प्रकार उसके पास बहुत से घोडे, अस्त्र-शस्त्र, सैनिक तथा धन सम्पत्ति जमा

१ पुस्तक में ग्वालियर को कालेवर अथवा ग्वालिओर लिखा गया है।

२ बारह हजार हाथ का एक फरसग होता था।

३ युद्ध का प्रबन्ध जिस विभाग मे होता था वह दीवाने अर्ज़ कहलाता था। इसका सबसे बडा अधिकारी आरिज़े ममालिक होता था। वह तथा उसके नीचे वाले अफसर सेना की भर्ती तथा निरीक्षण करते थे।

४ पुस्तक में मिहिलत तथा मिहिली है किन्तु रैवर्टी ने भगवत तथा भीवली लिखा है। भगवत, भीवली, अहरौरा, चुनार तथा करियात सिकर मिर्ज़ापुर की चुनार तहसील में हैं। (होदीवाला २०६)

५ पटना के २० मील पश्चिम मे है।

हो गये। उसकी वीरता तथा लूटमार से धन इत्यादि इकट्ठा करने का हाल बडा प्रसिद्ध हो गया। हिन्दुस्तान के चारो ओर से खलजियो के कबीले उसके पास एकत्र हो गये। इसकी सूचना सुल्तान कुतुबुद्दीन को भी प्राप्त हो गई। उसने उसे खिलअत भेजी और उसको अत्यन्त सम्मानित किया। इस प्रकार सम्मान तथा प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेने के उपरान्त उसने बिहार पर चढाई करके वह विलायत विध्वस करदी।

एक दो वर्ष तक वह बिहार के आसपास के स्थानो पर आक्रमण करता रहा। इसके उपरान्त उसने बिहार पर आक्रमण कर दिया। विश्वस्त सूत्रो से इस प्रकार ज्ञात हुआ है कि उसने दो सौ सवारो को लेकर बिहार के किले के द्वार पर पहुँच कर धावा बोल दिया। मुहम्मद बख्तियार की सेवा म फरगाना के दो बुद्धिमान भाई निजामुद्दीन तथा समसामुद्दीन नामक थे। इस पुस्तक का लेखक भी समसामुद्दीन से लखनौती में ६४१ हि० (१२४३ ४४ ई०) मे मिल चुका है। उसने इस युद्ध का वर्णन इस प्रकार किया है।

(१४८) *जब आक्रमणकारी किले के द्वार पर पहुँचे और युद्ध प्रारम्भ हो गया, तो* इन दोनो बुद्धिमान भाइयो ने बडी वीरता दिखलाई। जब मुहम्मद बख्तियार अपनी वीरता द्वारा किले के पीछे के फाटक पर पहुँच गया और किले पर अधिकार जमा लिया तो उन्हे अत्यधिक धन-सम्पत्ति प्राप्त हुई। उस स्थान के निवासियो में बहुत बडी सख्या ब्राह्मणो की थी। वे लोग अपने सिरो को मुडाये रहते थे। वे सब के सब मारे गये। वहाँ उनको बहुत बडी सख्या में पुस्तकें प्राप्त हुईं। जब यह पुस्तके मुसलमानो ने देखी तो उन्होने कुछ हिन्दुओ को बुलवा कर उन पुस्तकों को पढवाना चाहा, किन्तु सभी विद्वान् मारे जा चुके थे। पुस्तको द्वारा यह ज्ञात हुआ कि वह पूरा किला और नगर एक मदरसा[1] था। हिन्दवी[2] में बिहार विद्यालय (मदरसे) को कहते हैं।[3] विजय प्राप्त करके तथा अत्यधिक धन-सम्पत्ति लेकर वह सुल्तान कुतुबुद्दीन की सेवा मे उपस्थित हुआ। सुल्तान ने उसका बडा आदर-सम्मान किया। जब दरबार के अमीरो ने सुल्तान कुतुबुद्दीन द्वारा उसका आदर सम्मान तथा उसको धन-सम्पत्ति पाते देखा, तो वे उससे ईर्ष्या करने लगे। एक समारोह में उन लोगो ने मुहम्मद बख्तियार पर व्यग एव उसकी निन्दा करनी प्रारम्भ करदी, यहाँ तक कि उसे सफेद राज भवन में एक हाथी से युद्ध करने पर विवश कर दिया। उसने हाथी की सूँड पर इतने जोर से गदा मारी कि वह भाग निकला। मुहम्मद बख्तियार ने हाथी का पीछा किया।

सुल्तान कुतुबुद्दीन ने उसकी सफलता पर उसे स्वय इनाम दिया तथा अमीरो को भी आज्ञा दी कि वे उसे इनाम दें। उसे इतने इनाम मिले कि उसका उल्लेख सम्भव नही। मुहम्मद बख्तियार ने उसी महफिल में सब इनाम लोगो को बाँट दिये। सुल्तान द्वारा खिलअत प्राप्त करके वह बिहार की ओर लौट गया।

उसका भय लखनौती, बिहार, बग तथा कामरुद[4] के प्रदेशो में फैल गया। विश्वस्त सूत्रो द्वारा ज्ञात हुआ है कि उसकी वीरता तथा साहस की ख्याति राय लखमनिया तक भी उसकी राजधानी नोदिया (यह नदिया अर्थात् नवद्वीप का अपभ्रश है) में पहुँच गई। राय लखमनिया बहुत बडा राजा था और वहाँ अस्सी वर्ष से राज्य कर रहा था।

(१४९) इस स्थान पर एक कहानी का उल्लेख किया जाता है जो कि उस राय के विषय में

१ विद्यालय। वास्तव में यह एक बुद्धमत का बहुत बड़ा विहार तथा विद्यालय था।
२ हिन्दुस्तान में बोली जाने वाली भाषाओं के लिए सामान्य रूप से हिंदवी शब्द का प्रयोग किया गया है।
३ बौद्धकाल में भिक्षुओं के मठों एवं विद्यालयों को भी विहार कहा जाने लगा था।
४ यह शब्द कामरूप है जो तत्कालीन आसाम प्रदेश का नाम था।

प्रसिद्ध थी। वह इस प्रकार है कि जब उसके पिता की मृत्यु हो गई तो राय लखमनिया अपनी माता के गर्भ में था। राज मुकुट उसकी माता के पेट पर रख दिया गया और सभी उसकी माता की आज्ञाओं का पालन करने लगे। हिन्द के राजा उसके वंश को अत्यन्त सम्मानित समझते हैं और वह हिन्द का खलीफा[1] समझा जाता है। जब उसके जन्म का समय निकट आया तो ज्योतिषियों तथा ब्राह्मणों को एकत्रित करके उसकी जन्म कुण्डली के विषय में प्रश्न किया गया। उन लोगों ने सहमत होकर यह कहा कि यदि इस समय इस पुत्र का जन्म हो जायगा तो यह उसके लिये बड़ा अशुभ होगा और वह राज्य प्राप्त न कर सकेगा। यदि उसका जन्म दो घड़ी पश्चात् होगा तो वह अस्सी वर्ष तक राज्य करेगा। जब उसकी माता ने ज्योतिषियों के यह शब्द सुने तो उसने आज्ञा दी कि उसके दोनों पैर बाँध कर और उसका सिर नीचे करके लटका दिया जाय। ज्योतिषियों को वहीं बैठा दिया गया, जिससे वे सितारों की चाल देखते रहें। जब जन्म की शुभ घड़ी आगई तो आज्ञा दी गई कि उसे लिटा दिया जाय। तुरन्त लखमनिया का जन्म हो गया। उसके जन्म के उपरान्त अत्यन्त पीड़ा के कारण उसकी माता की मृत्यु हो गई। लखमनिया को राजगद्दी पर बैठाया गया। उसने अस्सी वर्ष तक राज्य किया। विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि उसने छोटे बड़े किसी व्यक्ति पर कोई अत्याचार नहीं किया। जो कोई भी उससे कुछ माँगता तो वह दानी सुल्तान कुतुबुद्दीन के समान (जो अपने समय का हातिम था) एक लाख दान कर देता था। उस प्रदेश में जीतल[2] के स्थान पर कौड़ी का प्रयोग होता था। वह कम से कम एक लाख कौड़ी प्रदान करता था।

(१५०)जब मुहम्मद बख्तियार सुल्तान कुतुबुद्दीन के पास से लौटा तो उसने बिहार पर पूर्ण रूप से अधिकार जमा लिया। यह हाल राय लखमनिया तथा उसके राज्य के आसपास के स्थानों पर प्रकाशित होगया। ज्योतिषियों, ब्राह्मणों तथा दार्शनिकों ने उसके पास उपस्थित होकर उसके समक्ष निवेदन किया कि प्राचीन काल के ब्राह्मण हमारी पुस्तकों में लिख गये हैं कि यह राज्य तुर्कों को प्राप्त हो जायगा। इस बात के पूरा होने का समय आ गया है। तुर्कों ने बिहार पर अधिकार जमा लिया है। दूसरे वर्ष वह इस राज्य पर अवश्य अधिकार जमा लेंगे, अतः यह उचित होगा कि राय स्वयं तथा प्रजा को लेकर यह राज्य छोड़ देने का आदेश दे, जिससे हम लोग तुर्कों के उत्पात से सुरक्षित रह सकें। राय ने उत्तर दिया कि क्या तुम्हारी पुस्तकों में उस व्यक्ति के विषय में कुछ लिखा है जोकि हमारे राज्य पर अधिकार जमाने वाला है। उन्होंने उत्तर दिया कि उस व्यक्ति के विषय में यह लिखा है कि जब वह अपने दोनों पैरों पर सीधा खड़ा होगा और अपने दोनों हाथों को नीचे छोड़ देगा, तो उसके हाथ उसके घुटनों तक पहुँच जायगे और उसकी अँगुलियाँ उसकी पिंडलियों को छू लेंगी। राय ने कहा कि यह उचित होगा कि विश्वासपात्रों को भेज कर इसकी पूछ-ताछ कराई जाय। राय के आदेशानुसार विश्वसनीय लोग भेजे गये। जब उन्होंने पूछ-ताछ की तो उन्होंने वे चिह्न मुहम्मद बख्तियार में पाये। जब इन चिह्नों का प्रमाण मिल गया तो बहुत से ब्राह्मण तथा धनिक लोग सकनात,[3] कामरूद तथा बंग प्रदेश की ओर चले गये। राय लखमनिया ने अपने राज्य को त्यागना उचित न समझा।

१ मुहम्मद साहब के उत्तराधिकारी खलीफा कहलाते थे। उमय्या तथा अब्बासी वंश के सम्राट् भी खलीफा कहे जाते थे। चूंकि राय हिन्दू राजाओं में सर्वश्रेष्ठ समझा जाता था, अतः उसे मिनहाज ने खलीफा लिखा है।

२ छपी हुई पुस्तक में चीतल है। अन्य स्थानों पर जीतल है।

३ होदीवाला का विचार है कि यह स्थान सुनार गाँव अथवा सतगाँव है (पृष्ठ २०७)।

(१५१) दूसरे वर्ष मुहम्मद बख्तियार एक सेना लेकर बिहार से प्रस्थान करके नोदिया नगर के द्वार पर एकाएक पहुँच गया। उसके पास उस समय १८ सवारों से अधिक न थे। शेष सेना उसके पीछे आरही थी। जब मुहम्मद बख्तियार नगर के द्वार पर पहुँच गया, तो उसने किसी की हत्या न की। बड़ी सावधानी और शान से आगे बढ़ता चला गया। वे यह न समझे कि मुहम्मद बख्तियार यही है। लोगों ने यह समझा कि वे लोग व्यापारी हैं और घोड़े बेचने आये हैं। राय लखमनिया के महल के द्वार पर पहुँच कर उसने अपनी तलवार खींच ली और युद्ध प्रारम्भ कर दिया।

उस समय राय लखमनिया भोजन करने के लिये बैठा हुआ था। भोजन के सोने चाँदी के थाल उसके समक्ष रखे हुये थे। इतने में राज भवन तथा नगर में हा हा कार मच गया। उसे विश्वास हो गया कि आपत्ति का समय आगया। मुहम्मद बख्तियार महल के भीतर घुस गया और बहुत से मनुष्यों को तलवार के घाट उतार दिया। राय नंगे पैर अपने महल के पीछे से भाग निकला। उसके खज़ाने, स्त्रियों, लाव लश्कर तथा विश्वास पात्रों पर बख्तियार ने अधिकार जमा लिया। उसके हाथी भी मुसलमानों के हाथ पड़े। मुसलमानों को इतना धन प्राप्त हुआ कि उसका उल्लेख असम्भव है। जब उसकी सेना पहुंच गई और समस्त नगर पर अधिकार जमा लिया गया, तो उसने वहीं निवास करना प्रारम्भ कर दिया। राय लखमनिया, सकनात तथा बंग की ओर भाग गया। उसके कुछ दिन पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई। उसके वंशज अभी तक बंग प्रदेश पर राज्य कर रहे हैं।

मुहम्मद बख्तियार ने नोदिया पर अधिकार जमा लिया और उसका विनाश करके उसे छोड़ दिया और उस स्थान पर, जो अब लखनौती के नाम से प्रसिद्ध है, अपनी राजधानी बनाई। फिर आसपास के प्रदेशों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। प्रत्येक स्थान पर अपने नाम का सिक्का और खुत्बा चालू कर दिया। उसके तथा उसके अमीरों के प्रयास से उस प्रदेश में मस्जिदें मदरसे और खानकाहें बन गईं। उसने लूटी हुई धन-सम्पत्ति में से बहुत कुछ सुल्तान कुतुबुद्दीन के पास भी भेजा।

(१५२) कुछ वर्ष उपरान्त उसने तुर्किस्तान तथा तिब्बत एवं लखनौती के पूरब के स्थानों के विषय में पूर्णतः जानकारी प्राप्त कराई। उसके सिर पर तिब्बत तथा तुर्किस्तान को विजित करने का भूत सवार होने लगा। उसने एक बहुत बड़ी सेना तैयार कराई जिसमें लगभग दस हजार सवार थे। तिब्बत तथा लखनौती के बीच के पर्वतीय प्रदेशों में तीन जातियों के लोग पाये जाते हैं। प्रथम कूच, द्वितीय मीच, तृतीय तहारू। इन लोगों का रूप रंग तुर्कों के समान होता है किन्तु इनकी भाषा हिन्द तथा तुर्कों की भाषा से पृथक् है। कूच और मीच जाति के एक नेता ने, जो कि अली मीच के नाम से प्रसिद्ध था, मुहम्मद बख्तियार के कहने पर इस्लाम स्वीकार कर लिया था। उसने पहाड़ों में मार्ग प्रदर्शित करने का वचन दे दिया था। वह मुहम्मद को लेकर बुरधन कोट नामक नगर तक पहुँच गया। कहा जाता है कि प्राचीन काल में गरशास्प[1] शाह ने चीन से वापस होते समय वह नगर आबाद किया था। उस शहर के सामने से एक बहुत बड़ी नदी बहती है जिसको बगमती[2]

१ सीस्तान का प्राचीन काल का एक बादशाह। गरशास्प-नामा फ़िरदौसी के शाहनामे से पहले की कविता है। कहा जाता है कि इसकी रचना फ़िरदौसी के गुरु असदी ने की थी। (ईथे, इंडिया आफ़िस की फ़ारसी हस्तलिखित पुस्तकों की सूची न० ८८३।

२ डाउसन का कथन है कि यह ब्रह्मपुत्र नदी का वर्णन है। रैवर्टी का विचार है कि यह तिस्ता नदी है, किन्तु होदीवाला का विचार है कि इस नदी के विषय में कुछ कहना बड़ा कठिन है, क्योंकि नदियाँ बराबर मार्ग बदलती रहती हैं। (होदीवाला पृष्ठ २०८-२०९)।

कहते हैं। वह हिन्दुस्तान की एक नदी से समुद्र के स्थान पर मिलती है। हिन्दवी भाषा में उसे समुन्दर कहते है। वह गगा नदी से तीन गुनी बडी और गहरी है।

मुहम्मद बख्तियार उस नदी तट पर पहुँच गया। अली मीच इस्लामी सेना को उस नदी के चढाव की ओर ले गया और दस दिन में पहाड के बीच में एक ऐसे स्थान पर पहुँच गया, जहाँ कटे हुए पत्थरो का एक बहुत पुराना पुल बना हुआ था, जिसमें बीस से अधिक मोरियाँ थीं। जब सेना उस स्थान पर पहुँच गई तो दो सरदारों को, जिनमें एक तुर्क और एक खलजी था, इस्लामी सेना की वापसी तक उस पुल की रक्षा करने के लिये छोड दिया गया।

(१५३) मुहम्मद बख्तियार ने समस्त सेना लेकर पुल पार किया। जब कामरूद के राजा को इस्लामी सेना के पार करने की सूचना मिली तो उसने अपने विश्वासपात्रों को भेज कर यह कहलाया कि 'इस समय तिब्बत पर आक्रमण करना उचित नहीं। इस समय लौट जायें और यथेष्ट तैयारी करें। मैं कामरूद का राय इस बात का वचन देता हू कि दूसरे वर्ष अपनी सेना तैयार करके मुसलमानो की सेना से आगे बढकर उस प्रदेश को विजित करा दूँगा।' मुहम्मद बख्तियार ने यह परामर्श स्वीकार न किया और तिब्बत के पर्वत की ओर चल पडा।

६४२ हि० (१२४४-४५ ई०) में लेखक मुहम्मद बख्तियार के एक विश्वास पात्र के साथ, जिसने लखनौती में निवास ग्रहण कर लिया था, देवकोट[1] तथा बगावन के बीच में एक स्थान पर ठहरा था। उसने उससे सुना है कि नदी पार करने के उपरान्त पन्द्रह दिन तक सेना पर्वतीय असमतल स्थानों को पार करती हुई, सोलहवें दिन तिब्बत पहुँची। वहाँ सब जगह खेती होती थी और वहां के गाँव तथा अन्य स्थान पूर्णत आबाद थे। वे एक ऐसे स्थान पर पहुचे, जहाँ एक बहुत ही दृढ क़िला बना हुआ था। इस्लामी सेना ने वहाँ पहुँच कर लूटमार प्रारम्भ करदी। उस क़िले तथा आसपास के निवासी अपनी रक्षा के लिये एकत्रित हो गये और युद्ध प्रारम्भ हो गया। प्रातःकाल से सायंकाल की नमाज तक भीषण युद्ध होता रहा। इस्लामी सेना की बहुत बडी सख्या मारी गई और बहुत से लोग घायल हुये। शत्रुओं की समस्त सेना के पास बाँस के टुकडों के बने भाले थे। उनके अस्त्र-शस्त्र जौशन[2], ढालें और खोद कच्चे रेशम के टुकडो को बाँध कर बनाये गये थे। वे लोग सबके सब बडे धनुर्धारी थे और उनके पास बडी-बडी कमानें थीं।

(१५४) रात्रि में बहुत से लोगों को, जिन्हें मुसलमानो ने बन्दी बना लिया था, पेश किया गया। उन्होने बतलाया कि वहाँ से पाँच फरसग पर एक नगर आबाद है जो करमपट्टन कहलाता है। वहाँ ३५० हजार वीर धनुर्धारी तुर्क विद्यमान हैं। मुसलमानो के पहुँचने की सूचना उन्हें भेजी जा चुकी है। प्रातःकाल वे सवार उपस्थित हो जायेंगे

लेखक ने लखनौती में उस नगर के विषय में पूछताछ की थी। वह एक बहुत बडा नगर है। उसकी समस्त दीवारें तराशे हुये पत्थरो की बनी हुई हैं। वहाँ के निवासी ब्राह्मण तथा तुर्ईनान[3] हैं। वह नगर उनके नेता के अधीन हैं। वे लोग अग्नि पूजक हैं। उस शहर के पशुओं के बजार में प्रतिदिन १½ हजार घोडे बिकते हैं। लखनौती में अधिक तर घोडे वहीं से आते हैं। वे दर्रों के मार्ग से यात्रा करते हैं। वे दर्रे उस देश में बडे प्रसिद्ध हैं। कामरूद से तिब्बत तक ३५ दर्रे हैं। उस मार्ग से घोडे लखनौती आते हैं।

१ देवकोट २५°-११ उत्तरी अक्षांश तथा २८°-३१ पूर्वी देशान्तर (दमदमा के क़िले के निकट)। बगावन भी देवकोट के निकट है।

२ युद्ध में रक्षा के लिये शरीर पर पहनने का एक वस्त्र।

३ यहाँ बूनियान, तूनियान तथा तुर्रनान शब्दों का प्रयोग किया गया है, किन्तु ठीक शब्द तुर्रन ही है। तुर्रन बुद्ध लामा होते थे।

जब मुहम्मद बख्तियार को उस प्रदेश का हाल ज्ञात हुआ, तो उसने इस्लामी सेना के थकने, व्याकुल होने एवं एक बहुत बड़ी संख्या में मारे जाने तथा घायल होने के कारण अपने अमीरों से परामर्श किया। उन्होंने सर्व सम्मति से यह राय दी कि इस समय लौट जाना चाहिये और दूसरे वर्ष तैयारी करके इस प्रदेश पर आक्रमण करना चाहिये। जब वे वापस हुये तो समस्त मार्ग में उन्हें घास का एक तिनका तथा लकड़ी की एक टहनी तक न दिखाई दी क्यों कि सबकी सब जला दी गई थी। उन मार्गों तथा दर्रों के निवासी अपना स्थान छोड़ कर वहाँ से चल दिये थे। १५ दिन में एक सेर अनाज और घास का एक तिनका भी पशुओं और घोड़ों को प्राप्त न हुआ। लोग घोड़ों को मार-मार कर खाते जाते थे। जब पर्वतीय प्रदेशों को पार करके कामरूद में पुल के निकट पहुँचे तो समस्त पुल नष्ट कर दिया गया था। दोनों अमीर एक दूसरे के विरोधी हो गये थे और दोनों एक दूसरे के विरोध में पुल की रक्षा छोड़कर अपने-अपने मार्ग पर चल दिये थे। कामरूद के हिन्दुओं ने पहुँच कर पुल को नष्ट कर दिया।

(१५५) जब मुहम्मद बख्तियार सेना लेकर उस स्थान पर पहुँचा तो उसे उस पार जाने का कोई साधन प्राप्त होता दिखाई न दिया। नावें उपलब्ध न थी। वह स्तब्ध रह गया। सब लोगों ने यह निर्णय किया कि वहीं रह कर नौकाओं का प्रबन्ध करना चाहिये जिससे नदी पार की जा सके। उस स्थान पर एक मन्दिर का पता लगा, जोकि बहुत ही ऊँचा और सुन्दर बना हुआ था। वहाँ बहुत बड़ी संख्या में सोने चाँदी की मूर्तियाँ रखी थी। वहाँ एक बहुत बड़ी मूर्ति भी थी जोकि दो तीन हजार मिसकाल[1] सोने के पत्तर की बनी थी। मुहम्मद बख्तियार तथा समस्त सेना उसी मन्दिर में चली गई और नौकायें बनाने के लिये लकड़ी तथा रस्सी की खोज होने लगी, जिससे वे लोग नदी पार कर सकें। राय कामरूद को भी इस्लामी सेना के कष्टों का पता चल गया। उसने अपने राज्य के समस्त हिन्दुओं को आज्ञा दे दी, कि वे मन्दिर के निकट एकत्रित हो जायें। उन्होंने मन्दिर के चारों ओर, अपने बाँस के भालों को गाड़ कर उन्हें एक दूसरे से इस प्रकार मिला दिया कि वे दीवार जैसे प्रतीत होने लगे। जब इस्लामी सेना ने यह हाल देखा तो उन्होंने मुहम्मद बख्तियार से कहा कि 'यदि हम इसी तरह बैठे रहेंगे तो हम सबको काफिर बन्दी बना लेंगे। हमें किसी न किसी प्रकार मुक्ति प्राप्त करने का उपाय सोचना चाहिये।' सबने एक साथ मन्दिर से निकल कर आक्रमण कर दिया और एक स्थान पर अपने लिये मार्ग बना लिया। वहाँ से निकल कर वे खुले मैदान में पहुँचे। हिन्दू उनका पीछा करते हुये नदी तक पहुँचे। मुसलमान नदी पर रुक गये। प्रत्येक व्यक्ति ने यथाशक्ति नदी पार करने का प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया। कुछ सवारों ने अपने घोड़े नदी में डाल दिये।

(१५६) थोड़ी दूर पर नदी का पानी कम था। समस्त सेना में शोर मच गया कि पार करने का मार्ग मिल गया। सब लोग नदी में कूद पड़े। हिन्दुओं ने नदी में उनका पीछा किया। बीच धारा में पानी गहरा था। सभी डूब कर मर गये। मुहम्मद बख्तियार ने लगभग १०० सवारों के साथ किसी न किसी युक्ति से नदी पार कर ली। शेष सभी डूब गये।

जब मुहम्मद बख्तियार ने नदी पार कर ली तो कूच और मीच जाति को उसके आने की सूचना मिली। अली मीच अपने सम्बन्धियों को लेकर उसके स्वागत के लिये पहुँचा और उसकी बड़ी सेवा की।

जब वह देवकोट पहुँचा तो शोक के कारण बीमार पड़ गया। वह लज्जा

---

१ एक मिसकाल = एक माशा ८ रत्ती।

तथा अनाथो के समक्ष जिनके स्वामियो का विनाश हो गया था, लज्जावश घोडे पर सवार भी न हो सकता था। जब कभी वह सवार होकर निकलता ता स्त्रियाँ तथा बालक कोठो पर और गलियो में रोना चिल्लाना प्रारम्भ कर देते थे और उसको गालियाँ देते थे। वह दुखी हो हो कर कहा करता था कि ऐसा ज्ञात होता है कि 'मेरे स्वामी सुल्तान गाजी मुइज्जुद्दुनियाँ वद्दीन पर कोई दुर्घटना हो गई है। इसी कारण मेरा भाग्य फिर गया है।' वास्तव में सुल्तान गाजी शहीद हो चुका था। मुहम्मद बख्तियार इसी दुख मे बीमार हो कर मर गया।

कहा जाता है कि उसका एक बडा वीर तथा पराक्रमी अमीर अली मर्दान खलजी नामक था। कूनी[1] (नारनकूई) की अक्ता का वह स्वामी था। इस दुर्घटना के विषय में सुनकर वह देवकोट पहुँचा। मुहम्मद बख्तियार बीमार था। तीन दिन से कोई उसके पास न पहुँच सका था। अली मर्दान ने किसी युक्ति से उसके पास पहुँच कर उसे चद्दर उढाकर कटार द्वारा उसकी हत्या करदी। यह दुर्घटना ६०२ हि० (१२०५-६ ई०) मे हुई।

(६) मलिक इज्जुद्दीन मुहम्मद शीरान खलजी
(लखनौती में)

(१५७) कहा जाता है कि मुहम्मद शीरान तथा अहमद[2] शीरान दो भाई खलजी अमीरो में से मुहम्मद बख्तियार की सेवा में थे। जब मुहम्मद बख्तियार ने कामरूद तथा तिब्बत पर चढाई की थी तो उसने मुहम्मद शीरान और उसके भाई को एक कार्य सौंप कर लखनौती से जाजनगर की ओर भेज दिया था। जब उन्हे उपर्युक्त दुर्घटना का समाचार मिला तो वे देवकोट पहुँचे और वहाँ उन्हाने उसकी अन्त्यष्ठि क्रिया को पूरा किया। वहाँ से वे नारकूती की ओर, जो कि अली मर्दान की अक्ता थी, गये। वहाँ अली मर्दान को बन्दी बना लिया। उसे वे उस स्थान के कोतवाल बाबा कोतवाल अस्फहानी को सौंप करके देवकोट लौट आये। यहाँ अमीरो को जमा किया।

मुहम्मद शीरान बडा ही वीर तथा चरित्रवान व्यक्ति था। उस समय, जबकि मुहम्मद बख्तियार ने नोदिया को नष्ट कर दिया था और राय लखमनिया को भगा कर उसके लाव लश्कर और हाथिया आदि को छिन्न भिन्न करके अपार धन सम्पत्ति प्राप्त करली थी, यह मुहम्मद शीरान तीन दिन तक लापता रहा। सभी अमीर उसके लिये चिन्तित थे। तीन दिन उपरान्त यह समाचार मिला कि मुहम्मद शीरान ने अमुक जगल में १८ से अधिक हाथिया को उनके महावतो सहित पकड लिया है और इस समय अकेला है।

(१५८) सवारों को भेजकर हाथियो को मुहम्मद बख्तियार के सामने पेश किया गया। वास्तव में मुहम्मद शीरान बडा ही पराक्रमी तथा वीर पुरुष था। जब वह अली मर्दान को बन्दी बना कर लौटा तो समस्त खलजी अमीरों ने अपना नेता के कारण उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। प्रत्येक अमीर अपनी अपनी अक्ता का अधिकारी रहा। अली मर्दान किसी युक्ति से कोतवाल द्वारा मुक्त होकर देहली पहुँचा और सुल्तान कुतुबुद्दीन से प्रार्थना की कि कायमाज रूमी को आज्ञा दी जाय कि वह अवध से लखनौती चला जाय और उसकी आज्ञा के अनुसार खलजी अमीरो के ठहरने की उचित व्यवस्था कर दे।

हुसामुद्दीन एवज खलजी को मुहम्मद बख्तियार ने ककतूरी का मुक्ता बना दिया था। उसने कायमाज रूमी का स्वागत किया और उसके साथ देवकोट पहुँचा। कायमाज रूमी की

---

१ भिन्न भिन्न पोथियों में यह नारनकूई, नारकूनी, दयारकूनी, नारकूती, बारकूती है।

२ छपी हुई पुस्तक में शरान है।

आज्ञा से वह देवकोट का मुक्ता हो गया। तत्पश्चात् कायमाज रूमी वापस हो गया। मुहम्मद शीरान तथा अन्य खलजी अमीरों ने एकत्र होकर देवकोट पर चढ़ाई करदी। कायमाज रूमी मार्ग में ही लौट पडा। उसने युद्ध करके मुहम्मद शीरान तथा खलजी अमीरों को पराजित कर दिया। इसके पश्चात् मकसदा और सन्तूस की ओर खलजी अमीर आपस में ही लड़ने लगे। इसमें मुहम्मद शीरान मारा गया और उसकी कब्र वहीं है।

(७) मलिक अलाउद्दीन अली मर्दान खलजी

अली मर्दान खलजी बडा ही वीर पराक्रमी योद्धा था। नारकूती की कैद से छूटकर वह सुल्तान कुतुबुद्दीन की सेवा में उपस्थित हुआ और सुल्तान कुतुबुद्दीन के साथ गजनी चला गया। गजनी के तुर्कों ने उसे गिरफ्तार कर लिया।

(१५६) उसने एक दिन सुल्तान ताजुद्दीन यलदुज के साथ शिकारगाह में सालार जफर नामक एक खलजी अमीर से कहा कि 'यदि कहो तो मैं इस ताजुद्दीन यलदुज को एक तीर से ही *मार दूँ और तुझे उसके स्थान पर बादशाह बना दूँ।'* वह खलजी अमीर बडा ही बुद्धिमान था। उसने उसे इस बात से रोका। जब अली मर्दान लौटा तो जफर ने उसे दो घोड़े देकर वहाँ से चले जाने के लिये कहा। हिन्दुस्तान लौटकर वह सुल्तान कुतुबुद्दीन की सेवा में उपस्थित हुआ। सुल्तान ने उसे खिलअत देकर सम्मानित किया और लखनौती का शासन उसे सौंप दिया। उसने लखनौती की ओर प्रस्थान किया। जब उसने कूस नदी पार करली, तो हुसामुद्दीन एवज खलजी देवकोट से उसके स्वागतार्थ वहाँ पहुँचा। अली मर्दान ने देवकोट पहुँच कर राज्य सभाल लिया और लखनौती के शासन को सुव्यवस्थित किया।

जब सुल्तान कुतुबुद्दीन की मृत्यु हो गई तो अली मर्दान ने चत्र धारण कर लिया और अपने नाम का खुत्बा चालू कर दिया। उसकी उपाधि सुल्तान अलाउद्दीन हो गई। वह बडा ही अत्याचारी और जालिम था। उसने चारों ओर सेनायें भेजकर अनेक खलजी अमीरों की हत्या करवा दी। चारों ओर के राज्य उससे भयभीत रहने लगे, उसे धन सम्पत्ति तथा भूमिकर भेजने लगे। उसने हिन्दुस्तान के चारों ओर के राज्यों के विषय में आज्ञा-पत्र लोगों को प्रदान करने प्रारम्भ कर दिये और बढ-बढ कर व्यर्थ की बातें करने लगा। दरबार तथा सभा में खुरासान, गजनी, गोर पर अधिकार करने के विषय में तथा अन्य व्यर्थ की बातें किया करता था। यहाँ तक कि वह लोगों को गजनी, खुरासान तथा इराक के राज्य पर अधिकार जमाने के विषय में आज्ञापत्र देने लगा।

कहा जाता है कि उसके राज्य में एक व्यापारी बडा ही निर्धन हो गया। उसकी सम्पत्ति नष्ट हो गई। उसने अली मर्दान के पास जाकर याचना की कि मुझे कुछ दीजिये। उसने पुछवाया कि वह कहाँ का निवासी है। लोगों ने बताया कि वह इस्फहान का निवासी है। उसने आदेश दिया कि इस्फान के राज्य और अक्ता पर उसे अधिकार प्राप्त करने का आज्ञा-पत्र प्रदान कर दिया जाय। किसी को उसके अत्याचार के कारण यह निवेदन करने का साहस न हो सकता था कि इस्फहान हमारे अधीन नहीं है।

(१६०) जिस किसी को भी इस प्रकार के आज्ञा-पत्र मिलते और यदि वह निवेदन करता कि 'अमुक राज्य हमारे (उसके) अधिकार में नहीं है' तो वह इसका यह उत्तर देता कि "मैं उसे अपने अधिकार में कर लूँगा।" उस व्यापारी को इस्फहान के विषय में आज्ञा-पत्र प्रदान किया गया। उसके पास भोजन तथा वस्त्र का भी साधन न था। जो गण्यमान्य व्यक्ति तथा बुद्धिमान लोग वहाँ उपस्थित थे, उन्होने उस बेचारे के लाभ के लिये निवेदन किया कि इस्फहान के मुक्ता को मार्ग का व्यय तथा सेना के लिये धन सम्पत्ति प्रदान की जाय जिससे

वह उस स्थान पर अपना अधिकार जमा सके। इस पर उसने उसे यात्रा व्यय के लिये अत्यधिक धन प्रदान किया। अली मर्दान का अभिमान, अत्याचार तथा उसकी दुष्टता चर्म सीमा तक पहुँच चुकी थी। इसके साथ-साथ वह भीषण रक्तपात तथा अत्याचार करता था। प्रजा, निर्धन लोग तथा सैनिक उसके अत्याचार एवं रक्तपात से बड़े परेशान थे। उससे मुक्त होने के लिये विद्रोह करने के अतिरिक्त और कोई उपाय उनकी समझ में नहीं आया। सभी खलजी अमीरों ने इस बात में सहमत होकर अली मर्दान की हत्या कर दी और हुसामुद्दीन एवज़ खलजी को सिंहासनारूढ़ कर दिया। उसने लगभग दो वर्ष तक राज्य किया।

(८) मलिक हुसामुद्दीन एवज़ हुसैन खलजी

हुसामुद्दीन एवज़ बड़ा ही चरित्रवान व्यक्ति था। वह गोर के गर्मसीर प्रदेश के खलजियों के कबीले से सम्बन्धित था। कहा जाता है कि एक समय वह कोहपाया[1] गोर की सीमा की ओर एक गधे पर कुछ सामान लादकर एक स्थान को ले जा रहा था। जब वह ज़ाबुलिस्तान की ओर से पुश्तये अफरोज़ की ओर पहुँचा तो उसे खिरका[2] पहने हुये दो दरवेश[3] मिले। उन्होंने उससे प्रश्न किया 'तेरे गधे पर कुछ भोजन भी है।" एवज खलजी ने उत्तर दिया 'हाँ है।" उसके पास खाने के लिये कुछ रोटियाँ और मांस था। उसने वह भोजन गधे से उतार कर एक कपड़ा बिछा कर दरवेशों के समक्ष रख दिया।

(१६१) जब वे खाना खा चुके तो वह उनके सम्मुख पानी पेश करके हाथ बाँध कर खड़ा हो गया। जब दरवेश खा पी चुके तो उन्होंने आपस में कहा कि 'इस साहसी पुरुष ने हमारी सेवा की है, अवश्य ही इसकी सेवा व्यर्थ नहीं जानी चाहिये'। उन्होंने एवज़ खलजी की ओर मुख करके कहा कि "ऐ सालार! हिन्दुस्तान प्रस्थान कर। वह प्रदेश, जो मुसलमानों के राज्य का सबसे अन्तिम भाग है, तुझे प्रदान कर दिया"। दरवेशों के आदेशानुसार वह वहीं से लौट पड़ा और अपनी स्त्री को उस गधे पर बैठा कर हिन्दुस्तान की ओर चल दिया और मुहम्मद बख्तियार की सेवा में उपस्थित हो गया। लखनौती का खुत्बा और सिक्का उसी के नाम से चालू हो गया। उसकी उपाधि सुल्तान गयासुद्दीन निश्चित हुई और लखनौती उसकी राजधानी बन गया।

उसने बसनकोट नामक क़िला बनवाया। चारों ओर से आकर लोग वहाँ बस गये। वह बड़ा ही चरित्रवान, सदाचारी, साहसी, उत्कृष्ट स्वभाव वाला, न्यायकारी तथा दानशील था। उसके राज्य-काल में प्रजा को बड़ी सुख-शान्ति प्राप्त थी। सभी उसके दान पुण्य से विशेष लाभ उठाते थे। उसके दान पुण्य के वहाँ अनेक अवशेष वर्तमान हैं। मसजिदें और विद्यालय निर्मित कराये। अहले[4] खैर में से आलिमों, सूफियों तथा सैयदों के लिये वज़ीफे (वृत्तियाँ) नियत किये। अन्य लोगों को भी उसके दान पुण्य तथा इद्रार[5] प्रदान करने से विशेष लाभ हुआ। फीरोज़कोह नामक स्थान में एक इमामज़ादा[6] रहता था। वह जमालुद्दीन गज़नवी का पुत्र जलालुद्दीन था। वह अपनी मातृभूमि से धन के लोभ में हिन्दुस्तान आ गया था। ६०८ हि० (१२११-१२ ई०) में वह कुछ वर्ष पश्चात् फीरोज़कोह वापस लौट गया।

---

१ पहाड़ के पहाड़ के किनारे के भाग।

२ वह लबादा जो मुसलमान सन्त पहनते हैं। चीवर।

३ मुसलमान सन्त, सूफी।

४ वे लोग जो कि धार्मिक कार्य में लगे रहते हैं।

५ धार्मिक कार्यों में लगे हुये लोगों को दी जाने वाली भूमि।

६ इमाम का पुत्र। इस्लामी धार्मिक नेता इमाम कहलाते थे।

उसके पास अत्यधिक धन सम्पत्ति थी। उससे उस धन सम्पत्ति के विषय में प्रश्न किया गया तो उसने उत्तर दिया कि वह हिन्दुस्तान पहुँच कर देहली से लखनौती गया।

(१६२) वहाँ पहुँचने पर ईश्वर की कृपा से उसे गयासुद्दीन के दरबार में तजकीर[1] करने का अवसर मिल गया। उस चरित्रवान बादशाह ने उसे अपने खज़ाने से सोने चाँदी के तकों से भरा हुआ एक बहुत बड़ा थाल प्रदान किया। उसने अपने मलिकों, अमीरों तथा विश्वास-पात्रों को भी आदेश दिया कि वे दस हज़ार चाँदी के तके उसे दें। तीन हज़ार चाँदी के तके इसके अतिरिक्त और प्राप्त हुये। लौटने के समय उसे पाँच हज़ार तके और प्रदान किये गये। इस प्रकार लखनौती के बादशाह ग़यासुद्दीन खलजी की धर्मनिष्ठता के कारण १८ हज़ार तके उस इमामज़ादे को प्राप्त हो गये।

जब लेखक ६४१ हि० (१२४३-४४ ई०) में लखनौती पहुँचा तो लखनौती के आस-पास के समस्त स्थानों पर उस बादशाह के दान पुण्य के चिह्न उसे दृष्टिगोचर हुए। लखनौती गंगा नदी के दोनों तटों पर दो बाज़ुओं में बसा हुआ है। पश्चिम ओर का स्थान राल[2] के नाम से प्रसिद्ध है। लखनौती नगर उसी ओर है। पूर्व की ओर का स्थान बरबन्दा कहलाता है। देवकोट नगर उसी ओर स्थित है। लखनौती से लखनौर के द्वार तक और दूसरी ओर देवकोट तक पुल बना हुआ है, और दस दिन की यात्रा है। इस के पूर्व वर्षा के कारण समस्त भूमि में जल भर जाता था और भवनों तक पहुँचना सम्भव न था। केवल नौकाओं द्वारा लोग जल को पार करते थे। अब पुल द्वारा समस्त लोगों के लिए मार्ग सरल हो गया है।

(१६३) कहा जाता है कि जब सुल्तान शम्सुद्दीन, मलिक नासिरुद्दीन महमूद की मृत्यु के उपरान्त मलिक इख्तियारुद्दीन बल्का के विद्रोह को दबाने के लिए पहुँचा और उसने ग़यासुद्दीन खलजी के दान पुण्य के स्थानों को देखा तो वह इतना प्रभावित हुआ कि जब कभी भी गयासुद्दीन की चर्चा होने लगती तो वह उसे सुल्तान ग़यासुद्दीन खलजी की उपाधि से पुकारता। वह कहा करता कि ऐसे दानी व्यक्ति के विषय में सुल्तान गयासुद्दीन खलजी की पदवी का प्रयोग करने से सकोच न करना चाहिये।

गयासुद्दीन खलजी बड़ा ही सदाचारी, न्यायी तथा चरित्रवान बादशाह था। लखनौती के आसपास के प्रदेश अर्थात् जाजनगर, बंग प्रदेश, कामरूद तथा तिरहुत उसे कर भेजा करते थे। लखनौर प्रदेश भी उसके अधीन हो गया था। अत्यधिक धन सम्पत्ति, राज कोष और हाथी उसे प्राप्त हो गये थे। उसने अपने अमीरों को वहाँ नियुक्त कर दिया था। सुल्तान शम्सुद्दीन ने देहली से लखनौती की ओर कई बार सेनायें भेजीं और बिहार पर अधिकार जमा कर अपने अमीर वहाँ नियुक्त कर दिए। ६२२ हि० (१२२५ ई०) में उसने लखनौती पर आक्रमण किया। सुल्तान गयासुद्दीन अपनी नौकायें लेकर नदी के चढ़ाव की ओर बढ़ा। दोनों में सन्धि हो गई। उसने ३८ हाथी तथा ८० लाख की धन सम्पत्ति देकर सुल्तान के नाम का ख़ुत्बा पढ़वाना स्वीकार कर लिया। सुल्तान ने लौटने समय अलाउद्दीन जानी को बिहार सौंप दिया। गयासुद्दीन एवज़ लखनौती से बिहार पहुँचा और उसे अपने अधिकार में कर लिया। वहाँ उसने बड़ा अत्याचार किया, यहाँ तक कि ६२४ हि० (१२२६-२७ ई०)

---

१ इस्लाम के इतिहास तथा धार्मिक नियमों पर आधारित भाषण।

२ हैमिल्टन का कथन है कि बंगाल प्राचीन काल में पाँच ज़िलों में विभाजित था: (१) राढ़ अथवा राढ़, हुगली तथा गंगा के दक्षिण का प्रदेश, (२) बागड़ी, गंगा का डेल्टा (३) बंग डेल्टा के पूर्व का प्रदेश (४) बरिंद अथवा बरेन्द्र पद्मा के उत्तर का प्रदेश और करातोया तथा महानन्दा नदी के बीच का प्रदेश, (५) मिथिला महानन्दा नदी के पश्चिम का भाग। बरेन्द्र, गौड़ को कहते हैं। (होबीदम्मा पृ० ११२)

में मलिक शहीद नासिरुद्दीन महमूद बिन (पुत्र) सुल्तान शम्सुद्दीन ने अवध से इज़्ज़ुलमुल्क जानी तथा हिन्दुस्तान[1] की सेना को लेकर लखनौती की ओर प्रस्थान किया। इस वर्ष गयासुद्दीन एवज़ खलजी लखनौती से बंग तथा कामरूद की ओर सेना लेकर गया हुआ था।

(१६४) लखनौती नगर खाली था। मलिक नासिरुद्दीन महमूद ने लखनौती पर अधिकार जमा लिया। गयासुद्दीन खलजी ने अपनी सेना लेकर लौटते हुए मलिक नासिरुद्दीन से युद्ध किया। गयासुद्दीन तथा उसके समस्त अमीर बन्दी बना लिए गये। सुल्तान गयासुद्दीन शहीद कर दिया गया। उसने बारह वर्ष तक राज्य किया[2]।



१ देहली से पूरब का भाग हिन्दुस्तान कहलाता था।

२ पृ० १६४, १६५ में अधिकतर सुल्तान शम्सुद्दीन के लिए ईश्वर से प्रार्थना एवं उसकी प्रशंसा की गई है अतः उस भाग का अनुवाद नहीं किया गया।

उसके पास अत्यधिक धन सम्पत्ति थी। उससे उस धन सम्पत्ति के विषय में प्रश्न किया गया तो उसने उत्तर दिया कि वह हिन्दुस्तान पहुँच कर देहली से लखनौती गया।

(१६२) वहाँ पहुँचने पर ईश्वर की कृपा से उसे गयासुद्दीन के दरबार में तजकीर[1] करने का अवसर मिल गया। उस चरित्रवान बादशाह ने उसे अपने खजाने से सोने चाँदी के तकों से भरा हुआ एक बहुत बडा थाल प्रदान किया। उसने अपने मलिकों, अमीरों तथा विश्वासपात्रों को भी आदेश दिया कि वे दस हजार चाँदी के तके उसे दें। तीन हजार चाँदी के तके इसके अतिरिक्त और प्राप्त हुये। लौटने के समय उसे पाँच हजार तके और प्रदान किये गये। इस प्रकार लखनौती के बादशाह गयासुद्दीन खलजी की धर्मनिष्ठता के कारण १८ हजार तके उस इमामजादे को प्राप्त हो गये।

जब लेखक ६४१ हि० (१२४३-४४ ई०) में लखनौती पहुँचा तो लखनौती के आसपास के समस्त स्थानों पर उस बादशाह के दान पुण्य के चिह्न उसे दृष्टिगोचर हुए। लखनौती गंगा नदी के दोनों तटों पर दो बाजुओं में बसा हुआ है। पश्चिम ओर का स्थान राल[2] के नाम से प्रसिद्ध है। लखनौती नगर उसी ओर है। पूर्व की ओर का स्थान बरबन्दा कहलाता है। देवकोट नगर उसी ओर स्थित है। लखनौती से लखनौर के द्वार तक और दूसरी ओर देवकोट तक पुल बना हुआ है, और दस दिन की यात्रा है। इस के पूर्व वर्षा के कारण समस्त भूमि में जल भर जाता था और भवनों तक पहुँचना सम्भव न था। केवल नौकाओं द्वारा लोग जल को पार करते थे। अब पुल द्वारा समस्त लोगों के लिए मार्ग सरल हो गया है।

(१६३) कहा जाता है कि जब सुल्तान शम्सुद्दीन, मलिक नासिरुद्दीन महमूद की मृत्यु के उपरान्त मलिक इख्तियारुद्दीन बल्का के विद्रोह को दबाने के लिए पहुँचा और उसने गयासुद्दीन खलजी के दान पुण्य के स्थानों को देखा तो वह इतना प्रभावित हुआ कि जब कभी भी गयासुद्दीन की चर्चा होने लगती तो वह उसे सुल्तान गयासुद्दीन खलजी की उपाधि से पुकारता। वह कहा करता कि ऐसे दानी व्यक्ति के विषय में सुल्तान गयासुद्दीन खलजी की पदवी का प्रयोग करने से सकोच न करना चाहिये।

गयासुद्दीन खलजी बडा ही सदाचारी, न्यायी तथा चरित्रवान बादशाह था। लखनौती के आसपास के प्रदेश अर्थात् जाजनगर, बंग प्रदेश, कामरूद तथा तिरहुत उसे कर भेजा करते थे। लखनौर प्रदेश भी उसके अधीन हो गया था। अत्यधिक धन सम्पत्ति, राज कोष और हाथी उसे प्राप्त हो गये थे। उसने अपने अमीरों को वहाँ नियुक्त कर दिया था। सुल्तान शम्सुद्दीन ने देहली से लखनौती की ओर कई बार सेनायें भेजी और बिहार पर अधिकार जमा कर अपने अमीर वहाँ नियुक्त कर दिए। ६२२ हि० (१२२५ ई०) में उसने लखनौती पर आक्रमण किया। सुल्तान गयासुद्दीन अपनी नौकायें लेकर नदी के चढाव की ओर बढा। दोनों में सन्धि हो गई। उसने ३८ हाथी तथा ८० लाख की धन सम्पत्ति देकर सुल्तान के नाम का खुत्बा चलाना स्वीकार कर लिया। सुल्तान ने लौटते समय अलाउद्दीन जानी को बिहार सौंप दिया। गयासुद्दीन एवज़ लखनौती से बिहार पहुँचा और उसे अपने अधिकार में कर लिया। वहाँ उसने बडा अत्याचार किया, यहाँ तक कि ६२४ हि० (१२२६-२७ ई०)

१ इस्लाम के इतिहास तथा धार्मिक नियमों पर आधारित भाषण।

२ हैमिल्टन का कथन है कि बंगाल प्राचीन काल में पाँच जिलों में विभाजित था (१) राढ अथवा राढा, हुगली तथा गंगा के दक्षिण का प्रदेश, (२) बगदी, गंगा का डेल्टा (३) बंग डेल्टा के पूर्व का प्रदेश (४) बरिंद अथवा बरेन्द्रा पदमा के उत्तर का प्रदेश और करातोया तथा महानन्दा नदी के बीच का प्रदेश, (५) मिथिला महानन्दा नदी के पश्चिम का भाग। बरेन्द्र, पौन्ड्र को कहते हैं। (होदीवाला पृ० २१२)

में मलिक शहीद नासिरुद्दीन महमूद बिन (पुत्र) सुल्तान शम्सुद्दीन ने अवध से इज्जुलमुल्क जानी तथा हिन्दुस्तान[1] की सेना को लेकर लखनौती की ओर प्रस्थान किया। इस वर्ष गयासुद्दीन एवज़ खलजी लखनौती से बंग तथा कामरूद की ओर सेना लेकर गया हुआ था।

(१६४) लखनौती नगर खाली था। मलिक नासिरुद्दीन महमूद ने लखनौती पर अधिकार जमा लिया। गयासुद्दीन खलजी ने अपनी सेना लेकर लौटते हुए मलिक नासिरुद्दीन से युद्ध किया। गयासुद्दीन तथा उसके समस्त अमीर बन्दी बना लिए गये। सुल्तान गयासुद्दीन शहीद कर दिया गया। उसने बारह वर्ष तक राज्य किया[2]।

---

१ देहली से पूरब का भाग हिन्दुस्तान कहलाता था।

२ पृ० १६४, १६५ में अधिकतर सुल्तान शम्सुद्दीन के लिए ईश्वर से प्रार्थना एवं उसकी प्रशंसा की गई है अत: उस भाग का अनुवाद नहीं किया गया।

(इक्कीसवाँ तबक़ा)

सुल्तानुल मुअ़ज़्ज़म शम्सुद्दुनियाँ वद्दीन

अबुलमुज़फ़्फ़र इल्तुतमिश[1] सुल्तान

(१६५) क्योकि भगवान् ने मनुष्यों का भाग्य निश्चित करते समय यह निर्णय कर दिया था, कि हिन्दुस्तान का राज्य सुल्ताने मुअज्जम, शहरयारे आजम, शम्सुद्दुनिया वद्दीन, अबुलमुजफ्फर इल्तुतमिश अस्सुल्तान यमीने खलीफ्तुल्लाह, नासिरे अमीरुलमोमिनीन तथा उसके पुत्रो की छाया में उन्नति करे और कयामत तक नाना प्रकार की दुर्घटनाओ से सुरक्षित रहे, अत उसने उस न्यायी, दानशील, वीर तथा साहसी बादशाह को तुर्किस्तान के अल्बरी कबीले[2] से पृथक् कराने के पश्चात् यूसुफ[3] की भाँति व्यापारियो को दिलवा दिया और धीरे-धीरे उसे राज सिंहासन तक पहुँचा दिया। उसके द्वारा मुहम्मद के धर्म की रक्षा कराई और उसे उन्नति प्रदान की।

(१६६) वह वीरता में दूसरा अली कर्रार[4] तथा दान में दूसरा हातिम[5] था। यद्यपि सुल्तान कुतुबुद्दीन अपने समय में लाखो की धन सम्पत्ति दान करता था किन्तु सुल्तान शम्सुद्दीन एक लाख के स्थान पर सौ सौ लाख का दान देता था। वह आलिमो, काजियो, किसानो, व्यापारियो तथा परदेशियो को आश्रय प्रदान करता था[6]।

अपने राज्य के प्रारम्भ ही से वह आलिमो, सैयदो, मलिको[7], अमीरो[8] तथा सद्रो[9] को हजार लाख से अधिक धन देता था। ससार के भिन्न-भिन्न भागो से लोग हिन्दुस्तान की राजधानी दिल्ली में जोकि इस्लाम की रक्षा तथा शरियत[10] का केन्द्र थी, पहुँचा करते थे।

---

१ बदायूनी ने लिखा है कि सुल्तान का नाम अल्तमिश अथवा इल्तमिश इस कारण पडा कि उसका जन्म एक ऐसी रात्रि में हुआ था जबकि चन्द्रग्रहण पड़ा था। (मुन्तखबुत्तवारीख, कलकत्ता, पृष्ठ ६२) होदीवाला का विचार है कि अल्तमश भी ऐनक के समान एक साधारण नाम है। (होदीवाला २१३, २१४) सुल्तान के सिक्कों पर अल्तमश, इल्तुमिश, अल्तुनमिश तथा इल्तुतमिश चारों शब्दों का प्रयोग किया गया है।

२ सर० ई० डेनीसन रौस का विचार है कि यह शब्द अल्परी है। अल्पर का अर्थ वीर मनुष्य होता है।

३ कुरान के अनुसार यूसुफ को उनके भाइयों ने उनके पिता याकूब से ईर्ष्या के कारण पृथक् करके एक कुएँ में डाल दिया था। वहाँ से वे व्यापारियों के हाथ लगे और व्यापारियों ने उन्हें मिस्र में बेच दिया।

४ मुसलमानों के चौथे खलीफा का नाम अली था। वे अपनी विद्वत्ता तथा वीरता के लिये बड़े प्रसिद्ध थे। वे जून २४, ६५६ ई० से जनवरी २४, ६६१ ई० तक खलीफा रहे।

५ इस्लाम से पूर्व तय नामक कबीले का सरदार हातिम अपने दान के लिये बडा प्रसिद्ध था।

६ सुल्तान के नाम के साथ उसके सम्मान के लिये जिन शब्दों का प्रयोग किया गया उनका अनुवाद नहीं किया गया।

७ खान के नीचे मलिक की श्रेणी होती थी।

८ अमीर, मलिक के अधीन होता था।

९ धार्मिक कार्यों का प्रबन्ध करने वाले।

१० मुहम्मद साहब के बताये हुये नियम एवं इस्लामी सिद्धान्त इस्लामी शरिअत के नाम से प्रसिद्ध है। इस्लामी नियमों एवं सिद्धान्तों के लिये शरा के शब्द का प्रयोग होता है।

उस बादशाह की दान शीलता के कारण इस शहर में भिन्न भिन्न भागो से लोग एकत्र होते थे। ईरान के प्रदेशों की कठिनाइयो तथा मुगलो के उत्पात के भय से लोग भाग-भाग कर हिन्दुस्तान पहुँचते थे। उसके बनाये हुये शान्ति के नियम अभी तक उसी प्रकार चालू हैं।

विश्वस्त सूत्रो से ज्ञात हुआ है, कि जब सुल्तान शम्सुद्दीन अल्प अवस्था में भगवान् की ओर से इस्लाम के राज्य तथा हिन्दुस्तान की हुकूमत के लिए नियुक्त हुआ तो तुर्किस्तान और अल्वरी क़बीला उससे छूट गया। उसके पिता का नाम ईल खाँ था।

(१६७) उसके सहायक, विश्वास पात्र तथा सम्बन्धी बहुत बड़ी सख्या में थे। प्रारम्भ में वह बड़ा ही रूपवान था। इस कारण उसके भाई उससे ईर्ष्या करते थे। उसके भाइयो ने उसके माता पिता से घोडो के गल्ले का तमाशा दिखाने के बहाने लेजाकर उसे एक व्यापारी के हाथ बेच दिया। कहा जाता है कि बेचने वाले उसके चचेरे भाई थे। व्यापारी उसे बुखारा की ओर ले गये और उसे बुखारा के सद्रे जहाँ के एक सम्बन्धी के हाथ बेच दिया। उस वश के लोग बड़ा ही पवित्र जीवन व्यतीत करते थे। उन लोगो ने उस पर दया की और उदारता से अपने पुत्रों के समान पालन-पोषण किया।

एक विश्वसनीय पुरुष से ज्ञात हुआ है कि उसने यह कहानी बादशाह के मुँह से सुनी थी। एक बार उस वश के किसी व्यक्ति ने उसे बाज़ार से कुछ अगूर लाने के लिए एक सिक्का दिया, मार्ग म वह सिक्का उससे खो गया। अल्प अवस्था के कारण वह डर के कारण रोन लगा। जिस समय वह रो रहा था तो एक दरवेश उसके पास आया। उसके हाथ पकड कर अगूर मोल ले कर उसे दे दिए और उस से वचन ले लिया कि राज्य प्राप्त करने के उपरान्त वह सदा फकीरो तथा नेक लोगो का आदर सम्मान[1] करता रहेगा और उनके अधिकारो का ध्यान रक्खेगा। उसे राज्य पाट उस दरवेश की कृपा के कारण प्राप्त हुआ है। इसी कारण वह आलिमो तथा सूफियो[2] का जितना आदर सम्मान करता था उतना ससार के प्रारम्भ से इस समय तक किसी न भी नही किया।

(१६८) उन इमामो तथा भद्रो के वश से उसे हाजी बुखारी नामक एक व्यापारी ने खरीद लिया। इसके उपरान्त उसे एक दूसरे व्यापारी जमालुद्दीन चुस्त क़बा नामक ने खरीदा और वह उसे गजनी लाया। उस समय तक इतना रूपवान, समझदार तथा चरित्रवान कोई दूसरा तुर्क गजनी न आया था। उसका हाल सुल्तान मुइज्जुद्दीन मुहम्मद साम को ज्ञात हुआ। उसने आदेश दिया कि उसका मूल्य निश्चित किया जाय। उसका तथा एक अन्य तुर्क का, जिसको लोग ऐबक कहा करते थे, मूल्य एक हज़ार खालिस रुकनी सोने के दीनार निश्चित किया गया। जमालुद्दीन चुस्त क़बा ने उस मूल्य पर उन्हें बेचना स्वीकार न किया। सुल्तान ने आदेश दे दिया कि कोई भी उन्हे न खरीदे। जमालुद्दीन चुस्त क़बा गजनी में एक वर्ष रहने के पश्चात् बुखारा की ओर चला गया, और तीन वर्ष वहा रह कर उनको गजनी वापस ले आया। किन्तु सुल्तान के आदेशानुसार इल्तुतमिश को किसी ने न खरीदा। एक साल और गजनी में उसने निवास किया। यहाँ तक कि सुल्तान कुतुबुद्दीन नहरवाले के युद्ध तथा गुजरात की विजय के उपरान्त मलिक नसीरुद्दीन हुसैन के साथ गजनी पहुँचा। वहाँ उसे उसका (शम्सुद्दीन इल्तुतमिश का) हाल ज्ञात हुआ। उसने सुल्तान मुइज्जुद्दीन से उसे खरीदने की आज्ञा माँगी। सुल्तान ने उत्तर दिया कि उसने आदेश दे दिया है कि उसे गजनी में कोई न खरीदे। अतः उसे देहली ले जा कर खरीद लिया जाय। सुल्तान कुतुबुद्दीन ने अपने कार्यो

१ इसामी ने यह कहानी दूसरे ढग से लिखी है।
२ मुसलमान सन्त सूफी कहलाते है।

को पूरा कराने के लिए निज़ामुद्दीन मुहम्मद को ग़ज़नी में छोड़ दिया और आदेश दिया कि जमालुद्दीन चुस्त क़बा हिन्दुस्तान जाय जिससे सुल्तान शम्सुद्दीन उसको वहाँ ख़रीद सके। उसके आदेशानुसार निज़ामुद्दीन उसे लौटते समय देहली लाया। सुल्तान कुतुबुद्दीन ने दोनों को एक लाख जीतल[1] देकर ख़रीद लिया। ऐबक नामक तुर्क का नाम तम्गाज रखा और उसे तबरहिन्दा का अमीर नियुक्त कर दिया गया। ताजुद्दीन यलदुज़ तथा कुतुबुद्दीन के युद्ध में वह मारा गया।

(१६६) सुल्तान इल्तुतमिश सरजानदार[2] नियुक्त हो गया। सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐबक उसे अपना पुत्र कहता था और अपना बड़ा विश्वास पात्र समझता था। दिन प्रतिदिन उसका सम्मान बढ़ने लगा। उसकी समझ बूझ तथा योग्यता को देखकर उसे अमीर शिकार[3] नियुक्त कर दिया गया।

ग्वालियर की विजय के उपरान्त उसे वहाँ का अमीर नियुक्त कर दिया गया। इसके उपरान्त बरन तथा उसके आसपास की अक्ता उसे दी गई। तत्पश्चात् उसकी वीरता, साहस, तथा योग्यता को देखकर सुल्तान ने उसे बदायूँ का शासन सौंप दिया।

जब सुल्तान मुइज्जुद्दीन मुहम्मद साम ख्वारज़्म से लौटते समय अन्दख़ुद के युद्ध में पराजित हुआ तो खोखरों ने विद्रोह प्रारम्भ कर दिया।

उसने ग़ज़नी से उनके विरुद्ध युद्ध करने के लिये प्रस्थान किया। सुल्तान कुतुबुद्दीन को आदेश भेजा कि हिन्दुस्तान की सेना लेकर वहाँ पहुँचे। सुल्तान शम्सुद्दीन भी बदायूँ की सेना लेकर उसके साथ चल पड़ा। युद्ध में सुल्तान शम्सुद्दीन बड़ी वीरता से अपने साज़ व सामान सहित झेलम नदी के बीच में, जहाँ उन दुष्टों ने शरण प्राप्त करली थी, प्रविष्ट हो गया। बड़ा घोर युद्ध हुआ। उसने अपने बाणों की वर्षा से उन्हे पराजित कर दिया। उसने जल में इतना भीषण युद्ध किया कि काफ़िर[4] जल से नरक की अग्नि में पहुँच गये।

उस वीरता तथा पराक्रम का दृश्य सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने भी देखा और उसे अपने सामने बुलवाकर खिलअत प्रदान की और सुल्तान कुतुबुद्दीन को आदेश दिया कि इल्तुतमिश से अच्छा व्यवहार करें, क्यों कि वह बड़े उत्तम कार्य करेगा।

---

१ यहाँ जीतल के स्थान पर तन्का (चाँदी का) होना अधिक सम्भाव्य है।

२ सुल्तानों के अंग रक्षक खानदार कहलाते थे। केवल राजभक्त तथा वीर सैनिक ही इस पद पर नियुक्त हो सकते थे। सुल्तान अपने किसी विश्वास पात्र को उनका अधिकारी नियुक्त करता था। वह सरजानदार कहलाता था।

३ अमीर शिकार सुल्तान के शिकार का प्रबन्ध करता था। वह भी राज्य का एक मुख्य अधिकारी समझा जाता था।

४ इस इतिहास तथा अन्य मध्य कालीन इतिहासों में उन लोगों को जो सुल्तान का विरोध अथवा विद्रोह करते थे, काफ़िर लिखा गया है। इस प्रकार हिन्दुओं, मुग़लों तथा सुन्नियों के अतिरिक्त सभी धर्मवालों के लिये काफ़िर शब्द का प्रयोग किया गया है। विद्रोहियों की हत्या को नरक में भेजना लिखा है। सुल्तान के सहायकों की हत्या को शहादत लिखा गया है और यह बताया गया है कि वे अपनी मृत्यु के उपरान्त स्वर्गवास हो जाते थे। मध्य कालीन हिन्दू इतिहासकारों ने भी हिन्दुओं को काफ़िर तथा उनकी हत्या करना उनको नरक में पहुँचाना लिखा है। मुसलमानों की मृत्यु के विषय में उन्होंने भी स्वर्गवास होना लिखा है। इस प्रकार यह दोनों शब्द उस समय के साहित्य की शैली का एक अंग बन गये थे। इन शब्दों के प्रयोग द्वारा किसी धार्मिक कट्टरपन का विशेष पता नहीं चलता। अमीर ख़ुसरो, जो अपने समय के उदार व्यक्तियों में बड़े महत्वपूर्ण समझे जाते हैं, अपने ऐतिहासिक ग्रन्थों में इसी प्रकार के शब्दों का प्रयोग करते हैं।

(१७०) इसके अतिरिक्त यह भी आदेश दिया कि उसे स्वतन्त्रता का पत्र दे दिया जाय और उसे राजसी कृपा दृष्टि से सम्मानित किया जाय।

जब लाहौर में सुल्तान कुतुबुद्दीन की मृत्यु हो गई तो सिपहसालार अली इस्माईल ने, जोकि देहली का अमीरदाद[1] था, तथा अन्य अमीरों और सद्रों ने, सुल्तान शम्सुद्दीन की सेवा में पत्र लिखकर प्रेषित किये। वह उनकी प्रार्थना पर ६०७ हिजरी (१२१०-११ ई०) में देहली पहुँच कर राज सिंहासन पर विराजमान हो गया। जब तुर्क तथा अन्य मुइज्ज़ी अमीर देहली के चारों ओर से एकत्रित हुये तो कुछ तुर्कों तथा मुइज्ज़ी अमीरों ने उसका साथ न दिया और विरोध प्रारम्भ कर दिया। देहली के बाहर निकल कर हवाली[2] में एकत्र हो गये।

विद्रोह तथा षड्यन्त्र प्रारम्भ कर दिया। सुल्तान शम्सुद्दीन क़ल्ब[3] की सेना तथा अपनी व्यक्तिगत सेना लेकर देहली के बाहर निकला और जूद[4] के मैदान में उन्हें पराजित करके उनके बहुत से सवारों को तलवार के घाट उतार दिया।

इसके उपरान्त सुल्तान ताजुद्दीन यलदुज़ ने लाहौर और ग़ज़नी के विषय में उससे सन्धि करली और छत्र तथा दूरबाश[5] प्रदान किया। उसके तथा मलिक नासिरुद्दीन क़ुबाचा के बीच में लाहौर, तबरहिन्दा एवं कुहराम के अधिकार के प्रश्न पर बराबर विरोध होता रहा। उसने ६१४ हि० (१२१७-१८) में नासिरुद्दीन कुबाचा को पराजित किया।

हिन्दुस्तान के भिन्न-भिन्न भागों में भी अमीर तथा तुर्क उसका विरोध करते रहे, किन्तु भगवान् की दया से उसे सर्वदा विजय प्राप्त होती रही। जो भी उस पर चढ़ाई करता अथवा विद्रोह करता वह पराजित हो जाता।

(१७१) उसको भगवान् की सहायता प्राप्त हो जाने के कारण देहली के आसपास के प्रदेश बदायूँ, अवध, बनारस तथा सिवालिक अपने अधीन कर लिये।

सुल्तान ताजुद्दीन यलदुज़ ख्वारज़्म की सेना से पराजित होकर लाहौर पहुँचा। उसमें तथा सुल्तान शम्सुद्दीन में एक दूसरे के राज्य की सीमा के प्रश्न पर विरोध प्रारम्भ हो गया। दोनों सेनाओं का तराइन के स्थान पर सामना हो गया। ६१२ हि० (१२१५-१६) में सुल्तान शम्सुद्दीन को विजय प्राप्त हो गई। ताजुद्दीन यलदुज़ बन्दी बना लिया गया और उसे देहली भेज दिया गया। वहाँ से उसे बदायूँ भेजा गया और वहीं उसकी मृत्यु हो गई।

इसके उपरान्त ६१४ हि० (१२१७-१८ ई०) में शम्सुद्दीन तथा मलिक नासिरुद्दीन क़ुबाचा का युद्ध हुआ। नासिरुद्दीन कुबाचा पराजित हुआ। ६१८ हिजरी (१२२१-२२ ई०) में चंगेज़ ख़ाँ मुग़ल की ख़ुरासान पर चढ़ाई के कारण जलालुद्दीन ख्वारज़्मशाह काफ़िरों की सेना के भय से भाग कर हिन्दुस्तान पहुँचा। लाहौर की सीमा पर ख्वारज़्मशाहियों का

---

1 अमीरदाद न्याय विभाग का एक उच्च पदाधिकारी होता था।

2 देहली के आसपास के स्थान हवाली कहलाते थे, इनके लिये हवालिये देहली शब्द भी प्रयोग होता था।

3 देहली की सेना को इसमें क़ल्ब, अफ़वाजे क़ल्ब अथवा क़ल्बे आला कहते थे। इनका सम्बन्ध सीधे बादशाह से हुआ करता था। सेना का मध्य भाग भी क़ल्ब कहलाता था।

4 छपी हुई पुस्तक में जून लिखा है।

5 दूरबाश का अर्थ है दूर रहो अथवा पृथक् रहो। बादशाहों तक सर्व साधारण को पहुँचने से रोकने के लिए कुछ लोग एक दुशाखा भाला लिये रहते थे। इसकी शाखाओं में मोती और जवाहर जड़े होते थे। यह सर्वदा सवारी के समय बादशाह की सवारी के आगे रखे जाते थे। इनका प्रयोग बादशाह के अतिरिक्त कोई अन्य न कर सकता था। इस प्रकार इसे भी वही महत्व प्राप्त था जो छत्र को। कभी कभी बादशाह बहुत बड़े-बड़े मलिकों को दूरबाश रखने की आज्ञा प्रदान कर देता था। जिसे छत्र तथा दूरबाश प्राप्त हो जाता था वह एक प्रकार से अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र समझा जाता था।

उत्पात प्रारम्भ हो गया। सुल्तान शम्सुद्दीन देहली से सेना लेकर लाहौर की ओर गया। जलालुद्दीन ख्वारज़मशाह हिन्दुस्तान की सेना का मुकाबला न करके सिन्धु तथा सिविस्तान की ओर चला गया।

सुल्तान शम्सुद्दीन ने उसके उपरान्त ६२२ हि० (१२२५ ई०) में सेना लेकर लखनौती पर चढ़ाई की। गयासुद्दीन एवज़ खलजी ने अधीनता का जूआ अपनी सेवा की गर्दन में डलवा लिया। तीस हाथी तथा ८० लाख की सम्पत्ति प्रदान की। खुत्बा और सिक्का सुल्तान शम्सुद्दीन के नाम का चालू करा दिया। फिर उसने ६२३ हि० (१२२६ ई०) में रणथम्भोर[1] पर चढ़ाई करने का सकल्प कर लिया।

(१७२) उस किले के विषय में समस्त हिन्दुस्तान में यह प्रसिद्ध था कि वह बड़ा ही दृढ़ है, और उस पर कोई भी विजय प्राप्त नही कर सकता। हिन्दुस्तानियो के इतिहास में लिखा है कि लगभग ७० बादशाहो ने इस किले पर आक्रमण किया किन्तु कोई भी सफल न हुआ। ६२३ हि० (१२२६ ई०) में सुल्तान के सैनिको ने भगवान् की कृपा से इस पर अधिकार जमा लिया। उसके एक वर्ष उपरान्त ६२४ हि० (१२२६-२७ ई०) में मन्दावर के किले पर जोकि सिवालिक के निकट है भगवान् की कृपा से अधिकार प्राप्त हो गया। उसके सेवको (सैनिको) को अत्यधिक धन सम्पत्ति तथा लूट का माल प्राप्त हुआ। इसके एक वर्ष उपरान्त ६२५ हि० (१२२७-२८ ई०) में सुल्तान ने देहली की सेना लेकर उच्च तथा मुल्तान पर चढ़ाई की। लेखक मिनहाज सिराज रजब ६२४ हि० (जून १२२७ ई०) में गोर तथा खुरासान से सिन्धु प्रदेश में उच्च तथा मुल्तान मे पहुँच गया था। पहली रबी-उल-अव्वल ६२५ हि० (६ फरवरी, १२२८ ई०) में सुल्तान शम्सुद्दीन उच्च के किले के निकट पहुँच गया। सुल्तान नासिरुद्दीन कबाचा ने अपने डेरे एहरावट[2] के किले के द्वार के निकट लगा रखे थे और उसका सब सामान नौकाओ के ऊपर लदा हुआ था। इसी समय जुमे (शुक्रवार) के दिन नमाज के उपरान्त मुलतान से दूतो ने पहुँच कर सूचना दी कि मलिक नासिरुद्दीन एतिमुर लाहौर का मुक्ता मुल्तान के किले के निकट पहुँच चुका है। सुल्तान शम्सुद्दीन 'तबरहिन्दा' के मार्ग से उच्च की ओर बढ़ता चला आ रहा है। मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा अपनी समस्त सेना को नौकाओ पर बैठा कर भक्खर की ओर चल दिया, और अपने वजीर ऐनुलमुल्क हुसैन अशअरी को आदेश दे दिया कि वह उच्च के किले का समस्त खजाना भक्खर मे पहुँचा दे।

(१७३) सुल्तान शम्सुद्दीन ने अपनी मुकद्दमे की सेना को दो बड़े बड़े मलिको की अधीनता में उच्च की ओर भेज दिया। इनमें से एक मलिक इज्जुद्दीन मुहम्मद सालारी अमीर हाजिब तथा दूसरा कज़लकखाँ सजर सुल्तानी मलिक तबरहिन्दा था। चार दिन के उपरान्त सुल्तान शेष लश्कर हाथी तथा साज व सामान लेकर उच्च पहुँच गया और वही डेरे डाल दिये। अपने राज्य के वजीर निजामुलमुल्क मुहम्मद जुनैदी तथा अन्य मलिको को मलिक नासिरुद्दीन का पीछा करने के लिये भक्खर की ओर भेज दिया।

तीन मास[3] तक उच्च के किले के निकट युद्ध होता रहा। मगलवार २८ जमादी-उल-अव्वल ६२५ हि० (५ मई, १२२८ ई०) को उच्च के किले पर अधिकार प्राप्त हो गया। उसी मास में मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा ने भक्खर के किले की दीवार से सिन्धु नदी में डूबकर आत्म हत्या करली। इसके कुछ दिन पूर्व उसने अपने पुत्र मलिक अलाउद्दीन बहरामशाह को सुल्तान शम्सुद्दीन की सेवा में भेज दिया था। इसके कुछ दिन पश्चात् नासिरुद्दीन (कुबाचा) की शेष

१ छपी पुस्तक में रतनपुर है।
२ छपी हुई पुस्तक में अमरौत है।
३ *छपी हुई पुस्तक में एक मास है।*

सेना तथा खजाना भी सुल्तान की सेवा में पहुँच गया, और वह प्रदेश समुद्र तट तक विजित कर लिया गया। मलिक सिनानुद्दीन चतीसर ने, जोकि देवल तथा सिन्ध का वाली था, शाही दरबार में उपस्थित होकर अपनी बैग्रत अर्पण[1] करदी। जब उस बादशाह का शुद्ध हृदय उन प्रदेशों को विजित कर निश्चिन्त हो गया तो वह अपनी राजधानी देहली की ओर लौट गया।

इस पुस्तक का लेखक उस धर्मनिष्ठ बादशाह की सेवा में पहले ही दिन जब कि उसने उच्च के किले के निकट अपने शिविर लगाये थे उपस्थित हो गया था। सुल्तान ने उसका बड़ा आदर सम्मान किया था।

(१७४) जब कि शाही सेना ने उच्च से प्रस्थान किया तो वह भी उनके साथ रमजान ६२५ हि० (अगस्त, १२२८ ई०) में देहली पहुँच गया। उस समय खलीफा के दरबार के दूत बहुत सी खिलग्रतें तथा उपहार लेकर नागौर पहुँच चुके थे। सोमवार २२ रबी-उल-अव्वल ६२६ हि० (१८ फरवरी, १२२९ ई०) को वे लोग राजधानी में पहुँच गये। शहर सजाया गया। बादशाह, मलिक, उसके पुत्र तथा उसके सेवकों के लिये खलीफा के दरबार से खिलग्रतें भेजी गई थी।

इस समारोह तथा आनन्दमङ्गल के उपरान्त ही जमादी-उल-अव्वल ६२६ हि० (मार्च, १२२९ ई०) में मलिक नासिरुद्दीन महमूद की मृत्यु का समाचार मिला। बल्का मलिक हुसामुद्दीन एवज खलजी[2] ने भी लखनौती में विद्रोह कर दिया। सुल्तान शम्सुद्दीन ने हिन्दुस्तान की सेना लेकर लखनौती पर चढ़ाई की। ६२७ हि० (१२२९-३० ई०) में उस विद्रोही को बन्दी बना लिया गया, और लखनौती का राज सिंहासन मलिक अलाउद्दीन जानी को प्रदान कर दिया गया। उसी वर्ष वह देहली लौट आया।

६२९ हि० (१२३१-३२ ई०) में उसने ग्वालियार के किले पर अधिकार जमाने का दृढ संकल्प कर लिया। जब उस किले के निकट उसके शिविर लगे तो दुष्ट बसील (बासिल) के पुत्र दुष्ट मलिक देव (मिहलक देव) ने युद्ध प्रारम्भ कर दिया। सुल्तान ग्यारह मास तक उस किले के निकट ठहरा रहा। यह लेखक उसी वर्ष शाबान के महीने (मई-जून) में देहली से चलकर उसकी सेवा में उपस्थित हुआ। इस तुच्छ को शिविर में तज्कीर के लिये नियुक्त किया गया।

(१७५) प्रत्येक सप्ताह में वह तीन बार तज्कीर किया करता था। रमजान के महीने में वह रोज तज्कीर करने लगा। मुहर्रम[3] के पहले दस दिन तथा जिलहिज्जा[4] के प्रथम दस दिनों में रोजाना तज्कीर हुआ करती थी। अन्य महीनों में उसी प्रकार प्रत्येक सप्ताह में तीन बार तज्कीर होती थी। इस प्रकार शिविर में ९५ तज्कीरें हुईं। ईदुल्फित्र तथा ईदुज्जुहा के अवसर पर तीन भिन्न भिन्न स्थानों पर नमाजें हुईं। इनमें से ईदुज्जुहा के दिन ग्वालियर के किले के सामने उत्तर की ओर मिनहाज सिराज ने नमाज पढ़ाई और खुत्बा पढ़ा। उसे बहुमूल्य खिलअत मिली।

सेना ग्वालियर के किले को २६ सफर ६३० हि० (१२ दिसम्बर, १२३२ ई०) तक घेरे रही, तब उस पर विजय प्राप्त हो गई। मगलदेव रात्रि में किले से निकल कर भाग गया। आठ सौ आदमियों को पड़ाव के सामने कत्ल कर दिया गया। इसके उपरान्त उसने

१ अधीनता स्वीकार करना। अधीनता की शपथ लेना।

२ उसका पूरा नाम इख्तियारुद्दीन ईरामशाह खलजी था। (नासिरी १७८) एक सिक्के में उसका नाम इस प्रकार है। शाहंशाह अलाउद्दीन अब्दुल मआली दौलतशाह बिन (पुत्र) मौदूद। टोडीवाला पृ०२४५

३ इस्लामी कलेन्डर का पहला महीना।

४ इस्लामी कलेन्डर का बारहवां महीना।

अमीरों तथा गण्यमान्य व्यक्तियों में से मज्दलमुल्क जियाउद्दीन मुहम्मद जुनैदी को अमीरदाद तथा सिपहसालार रशीदुद्दीन को कोतवाल नियुक्त किया। मिनहाज सिराज को कजा, खिताबत एहतिसाब तथा शरई कार्यों की देखभाल एवं खिलअत और बहुत से इनाम प्रदान किये गये। भगवान् उस दानी बादशाह की आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

उसी वर्ष दूसरी रबी-उल-आखिर (१६ जनवरी, १२३३ ई०) को सुल्तान ने किले से वापस होकर वहाँ से एक फरसंग की दूरी पर अपने शिविर लगा दिये, और उस स्थान पर दिन में पाँच बार नौबत[1] बजा करती थी। जब वह देहली वापस हुआ तो उसने ६३२ हि० (१२३४-३५ ई०) में इस्लामी सेना लेकर मालवा पर चढ़ाई की और भेल्सा के किले तथा नगर पर अपना अधिकार जमा लिया।

(१७६) वहाँ एक मन्दिर को, जो ३०० वर्षों में बन कर तैयार हुआ था और जो १०५ गज ऊँचा था, विध्वंस कर दिया। वहाँ से वह उज्जैन नगरी की ओर गया, और वहाँ महाकाल देव (महाकाली) के मन्दिर को नष्ट-भ्रष्ट किया। उज्जैन नगरी के राजा विक्रमाजीत (विक्रमादित्य) की मूर्ति, जिसके राज्य को आज १३१६ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, और हिन्दवी सन् जिसके राज्य से प्रारम्भ होता है, तथा अन्य पीतल की मूर्तियाँ और महाकाल देव की पत्थर की मूर्ति देहली ले आया।

६३३ हि० (१२३५-३६ ई०) में सुल्तान ने हिन्दुस्तान की सेना लेकर बानियान[2] की ओर प्रस्थान किया। इस यात्रा में सुल्तान ने अपने में निर्बलता का अनुभव किया, और रोगी होकर वहाँ से वापस हुआ। बुधवार पहली शाबान (१० अप्रैल) को ज्योतिषियों द्वारा निश्चित किये हुये समय पर पालकिया में बैठ कर देहली पहुँच गया। १६ दिन के उपरान्त रोग के बहुत बढ़ जाने के फलस्वरूप सोमवार २० शाबान ६३३ हि० (२९ अप्रैल १२३६ ई०) को उसकी मृत्यु हो गई। उसने २६ वर्ष तक राज्य किया। ईश्वर इस राज्य के उत्तराधिकारी नासिरुद्दीन महमूद को सर्वदा जीवित रखे।

---

१ नौबत में नक्कारा, तुरही, बिगुल, झाँझ, बांसुरी आदि बाजे सम्मिलित थे। नौबत केवल बादशाह की उपस्थिति ही में अथवा राजधानी में बज सकती थी। नौबत प्रायः ५ बार बजती थी। चार बार दिन में और एक बार रात में। पंज नौबत शब्द का मध्यकालीन फ़ारसी साहित्य में अनेक स्थलों पर प्रयोग हुआ है। चचनामे के अध्ययन से पता चलता है कि यह प्राचीन भारतीय प्रथा थी।

२ होडीवाला का विचार है कि यह स्थान बनूँ हो सकता है (पृ० २४८)

सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश

उसके समय के काजी

(१७७) क़ाज़ी सईदुद्दीन गरदेज़ी[1], काज़ी नसीरुद्दीन कासली, क़ाज़ी जलालुद्दीन, क़ाज़ी कबीरुद्दीन, क़ाज़िये लश्कर।

उसके मलिक तथा सम्बन्धी

मलिक फीरोज़शाह इल्तुमिश ख्वारज़म का शाहज़ादा मलिक जानी तुर्किस्तान का शाहज़ादा मलिक कुतुबुद्दीन, मलिक गोर, मलिक इज़्ज़ुद्दीन मुहम्मद सालार हरवी महदी, मलिक इज़्ज़ुद्दीन हमज़ा अब्दुल जलील, मलिक इज़्ज़ुद्दीन कबीर ख़ाँ अयाज़, मलिक ताजुद्दीन सन्जर, मलिक कज़ल खाँ दौलतशाह खलजी, मलिक लखनौती, मलिक इख्तियारुद्दीन मुहम्मद भतीजा मलिकुल उमरा इफ्तिख़ारुद्दीन अमीर कोह, मलिक इज़्ज़ुद्दीन अली स्यालकोटी, मलिक तुग़ान, मलिक गिरवान, मलिक नसीरुद्दीन मीरानशाह मुहम्मद चाऊश, खलजी का पुत्र, मलिक इज़्ज़ुद्दीन बख्तियार, मलिक नसीरुद्दीन मुहम्मद बेदार, मुहम्मद कौलान तुर्क नासिरी, मलिक इज़्ज़ुद्दीन तुग़रिल बहाई, मलिकुल उमरा दहसुनकर नाज़िरी, मलिक नासिरुद्दीन एतिमुर, मलिक नासिरुद्दीन मादीनी, मलिक गोर, मलिक नासिरुद्दीन महमूद, सुल्तान रुकुनुद्दीन फीरोज़शाह, सुल्तान ग़यासुद्दीन मुहम्मद शाह, सुल्तान नासिरुद्दीन बह्नियाँ महमूद, सुल्तान नासिरुद्दीन बह्नियाँ, सुल्तान मुइज्ज़ुद्दुनियाँ वद्दीन, सुल्तान कुतुबुद्दीन मुहम्मद, सुल्तान जलालुद्दीन मसऊद, मलिक बहाउद्दीन मुहम्मद।

(१७८) एक अन्य हस्त लिखित पुस्तक में इन नामों के स्थान पर निम्नांकित अन्य नाम हैं

नासिरुद्दीन मुहम्मद मर्दानशाह, मुहम्मद हारिम, मलिक नसीरुद्दीन तुग़ान मुक्ता बदायूँ, मलिक इज़्ज़ुद्दीन तुग़रिल क़ुतुबी, मलिक इज़्ज़ुद्दीन बख्तियार गोरी, मलिकुल उमरा क़ुरासुंकर) नासिरी, मलिक नसीरुद्दीन एतिमुर बहाई, मलिक नसीरुद्दीन एतिमुर कुतुबी, मलिक हुसामुद्दीन अगलबक, मलिक इज़्ज़ुद्दीन अली नागौरी, मलिक फीरोज़ शम्म सालारी शाहज़ादा ख्वारज़म, मलिक अलाउद्दीन जानी अर्थात् शाहज़ादा तुर्किस्तान, मलिक क़ुतुबुद्दीन ग़ोर तथा जिबाल का मलिक, मलिक इज़्ज़ुद्दीन, मलिक इख्तियारुद्दीन हुसैन, मलिक ताजुद्दीन सन्जर, कज़लक़ ख़ाँ, मलिक इख्तियारुद्दीन ईरानशाह बल्का खलजी, मलिकुल उमरा इफ्तिख़ारुद्दीन अमीर कोह, मलिक रुकुनुद्दीन हमज़ा अब्दुल जलील, मलिक बहाउद्दीन नासिरी।

उसके वंशज

सुल्तान नासिरुद्दीन, सुल्तान रज़ीउद्दीन, सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन बहरामशाह, सुल्तान कुतुबुद्दीन मुहम्मद, मलिक जलालुद्दीन मसऊद, मलिक शिहाबुद्दीन मुहम्मद, सुल्तान अलाउद्दीन मसऊदशाह, सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद, सुल्तान गयासुद्दीन मुहम्मदशाह, सुल्तान रुकुनुद्दीन फीरोजशाह, सुल्तान नासिरुद्दीन महमूदशाह।

(१७९) वज़ीर

निज़ामुलमुल्क कमालुद्दीन जुनैदी।

---

१ इसी हुई पुस्तक में करोरी लिखा है।

अमीरो तथा गण्यमान्य व्यक्तियों में से मज्दनमुल्क जियाउद्दीन मुहम्मद जुनैदी को अमीरदाद तथा सिपहसालार रशीदुद्दीन को कोतवाल नियुक्त किया। मिनहाज सिराज को क़ज़ा, खिताबत एहतिसाब तथा शरई कार्यों की देखभाल एवं खिलअत और बहुत से इनाम प्रदान किये गये। भगवान् उस दानी बादशाह की आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

उसी वर्ष दूसरी रबी-उल आख़िर (१६ जनवरी, १२३३ ई०) को सुल्तान ने क़िले से वापस होकर वहाँ से एक फरसंग की दूरी पर अपने शिविर लगा दिये, और उस स्थान पर दिन में पाँच बार नौबत[1] बजा करती थी। जब वह देहली वापस हुआ तो उसने ६३२ हि० (१२३४-३५ ई०) में इस्लामी सेना लेकर मालवा पर चढ़ाई की और भेल्सा के क़िले तथा नगर पर अपना अधिकार जमा लिया।

(१७६) वहाँ एक मन्दिर को, जो ३०० वर्षों में बन कर तैयार हुआ था और जो १०५ गज़ ऊँचा था, विध्वंस कर दिया। वहाँ से वह उज्जैन नगरी की ओर गया, और वहाँ महाकाल देव (महाकाली) के मन्दिर को नष्ट-भ्रष्ट किया। उज्जैन नगरी के राजा विक्रमाजीत (विक्रमादित्य) की मूर्ति, जिसके राज्य को आज १३१६ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, और हिन्दवी सन् जिसके राज्य से प्रारम्भ होता है, तथा अन्य पीतल की मूर्त्तियाँ और महाकाल देव की पत्थर की मूर्ति देहली ले आया।

६३३ हि० (१२३५-३६ ई०) में सुल्तान ने हिन्दुस्तान की सेना लेकर बानियान[2] की ओर प्रस्थान किया। इस यात्रा में सुल्तान ने अपने में निर्बलता का अनुभव किया, और रोगी होकर वहाँ से वापस हुआ। बुधवार पहली शाबान (१० अप्रैल) को ज्योतिषियों द्वारा निश्चित किये हुये समय पर पालकियों में बैठ कर देहली पहुँच गया। १६ दिन के उपरान्त रोग के बहुत बढ़ जाने के फलस्वरूप सोमवार २० शाबान ६३३ हि० (२६ अप्रैल १२३६ ई०) को उसकी मृत्यु हो गई। उसने २६ वर्ष तक राज्य किया। ईश्वर इस राज्य के उत्तराधिकारी नासिरुद्दीन महमूद को सर्वदा जीवित रखे।

---

१ नौबत में नक्क़ाड़ा, तुरही, बिगुल, झाँझ, बाँसुरी आदि बाजे सम्मिलित थे। नौबत केवल बादशाह की उपस्थिति ही में अथवा राजधानी में बज सकती थी। नौबत प्रायः ५ बार बजती थी। चार बार दिन में और एक बार रात में। पंज नौबत शब्द का मध्यकालीन फारसी साहित्य में अनेक स्थानों पर प्रयोग हुआ है। चचनामे के अध्ययन से पता चलता है कि यह प्राचीन भारतीय प्रथा थी।

२ होदीवाला का विचार है कि यह स्थान बन्नू हो सकता है (पृ० २४८)

सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश

उसके समय के काजी

(१७७) काजी सईदुद्दीन गरदेजी[1], काजी नसीरुद्दीन कासली, काजी जलालुद्दीन, काजी कबीरुद्दीन, काजिये लश्कर।

उसके मलिक तथा सम्बन्धी

मलिक फीरोजशाह इल्तुमिश ख्वारज्म का शाहजादा मलिक जानी तुर्किस्तान का शाहजादा मलिक कुतुबुद्दीन, मलिक गोर, मलिक इज्जुद्दीन मुहम्मद सालार हरबी महदी, मलिक इज्जुद्दीन हमजा अब्दुल जलील, मलिक इज्जुद्दीन कबीर खाँ अयाज, मलिक ताजुद्दीन सन्जर, मलिक कजल खाँ दौलतशाह खलजी, मलिक लखनौती, मलिक इख्तियारुद्दीन मुहम्मद भतीजा मलिकुल उमरा इफ्तिखारुद्दीन अमीर कोह, मलिक इज्जुद्दीन अली स्यालकोटी, मलिक तुगान, मलिक शिरखान, मलिक नसीरुद्दीन मीरानशाह मुहम्मद चाऊश, खलजी का पुत्र, मलिक इज्जुद्दीन बख्तियार, मलिक नसीरुद्दीन मुहम्मद बेदार, मुहम्मद कौलान तुर्क नासिरी, मलिक इज्जुद्दीन तुगरिल बहाई, मलिकुल उमरा दहसुनकर नाजिरी, मलिक नासिरुद्दीन एतिमुर, मलिक नासिरुद्दीन मादीनी, मलिक गोर, मलिक नासिरुद्दीन महमूद, सुल्तान रुकुनुद्दीन फीरोजशाह, सुल्तान गयासुद्दीन मुहम्मद शाह, सुल्तान नासिरुद्दीन बहू नियाँ महमूद, सुल्तान नासिरुद्दीन बहू नियाँ, सुल्तान मुइज्जुद्दू नियाँ वद्दीन, सुल्तान कुतुबुद्दीन मुहम्मद, सुल्तान जलालुद्दीन मसऊद, मलिक बहाउद्दीन मुहम्मद।

(१७८) एक अन्य हस्त लिखित पुस्तक में इन नामों के स्थान पर निम्नांकित अन्य नाम हैं

नासिरुद्दीन मुहम्मद मर्दानशाह, मुहम्मद हारिम, मलिक नसीरुद्दीन तुगान मुक्ता बदायूँ, मलिक इज्जुद्दीन तुगरिल कुतुबी, मलिक इज्जुद्दीन बख्तियार गोरी, मलिकुल उमरा कुरासुंकर) नासिरी, मलिक नसीरुद्दीन एतिमुर बहाई, मलिक नसीरुद्दीन एतिमुर कुतुबी, मलिक हुसामुद्दीन अगलबक, मलिक इज्जुद्दीन अली नागौरी, मलिक फीरोज शम्स सालारी शाहजादा ख्वारज्म, मलिक अलाउद्दीन जानी अर्थात् शाहजादा तुर्किस्तान, मलिक कुतुबुद्दीन गोर तथा जिबालका मलिक, मलिक इज्जुद्दीन, मलिक इख्तियारुद्दीन हुसैन, मलिक ताजुद्दीन सन्जर, कजलक खाँ, मलिक इख्तियारुद्दीन ईरानशाह बल्का खलजी, मलिकुल उमरा इफ्तिखारुद्दीन अमीर कोह, मलिक रुकुनुद्दीन हमजा अब्दुल जलील, मलिक बहाउद्दीन नासिरी।

उसके वंशज

सुल्तान नासिरुद्दीन, सुल्तान रजीउद्दीन, सुल्तान मुइज्जुद्दीन बहरामशाह, सुल्तान कुतुबुद्दीन मुहम्मद, मलिक जलालुद्दीन मसऊद, मलिक शिहाबुद्दीन मुहम्मद, सुल्तान अलाउद्दीन मसऊदशाह, सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद, सुल्तान गयासुद्दीन मुहम्मदशाह, सुल्तान रुकुनुद्दीन फीरोजशाह, सुल्तान नासिरुद्दीन महमूदशाह।

(१७९) **वजीर**

निजामुलमुल्क कमालुद्दीन जुनैदी।

---

[1] दूसरी हुई पुस्तक में गरोरी लिखा है।

उसकी राजधानी

शहर देह्ली

पताकाएँ

दाहिनी ओर काले, बाईं ओर लाल

राजकीय मुद्रा का आदर्श वाक्य :

"ऐश्वर्य केवल भगवान् के लिये है"

राज्य की अवधि

छब्बीस वर्ष

विजय

बदायूँ की विजय तथा रायमान को हराना, जालौर तथा सिन्ध की विजय, ताजुद्दीन पर विजय तथा उसका बन्दी बनाया जाना। रणथम्भोर की विजय, मन्दोदर के किले की विजय, लखनौती की दूसरी बार विजय, बिहार की विजय, मुल्तान तथा उच्च की विजय, दरभगा की विजय, थनकिर के किले की विजय, उज्जैन नगरी की विजय, जाजनगर की विजय, लाहौर तथा विरोधी अमीरो पर विजय, तबरहिन्दा की विजय, सरसुती की विजय, कुहराम की विजय, नासिरुद्दीन कुबाचा पर विजय, लखनौती की विजय, त्रिहुट की विजय, भिल्सा की विजय, बनारस की विजय, काफिरो पर विजय तथा उनसे खिराज प्राप्त होना, सिविस्तान की विजय, देवल की विजय, कन्नौज की विजय, ग्वालियर की विजय, अलहेर की विजय, नन्दना की विजय, कूखा तथा स्यालकोट की विजय, झज्झर की विजय, मालवा की विजय।

(२) मलिकुस्सईद नासिरुद्दीन महमूदशाह

(१८०) मलिक नासिरुद्दीन महमूद सुल्तान शम्सुद्दीन का ज्येष्ठ पुत्र था। वह बड़ा ही योग्य, विद्वान्, बुद्धिमान, वीर, पराक्रमी तथा दानी बादशाह शाहज़ादा था। सुल्तान ने सर्व प्रथम उसे हाँसी की अक्ता प्रदान की थी। इसके उपरान्त ६२३ हि० (१२२६ ई०) में उसे अवध प्रदेश दे दिया गया। उस शाहज़ादे ने उस स्थान पर बड़े ही प्रशसनीय कार्य किये और धर्म के नियमानुसार युद्ध करता रहा। उसकी वीरता तथा साहस की कथायें समस्त हिन्दुस्तान में प्रसिद्ध हो गई थी।

दुष्ट बरतूह[१] ने अपनी तलवार से लगभग १ लाख २० हज़ार मुसलमानों को शहीद कर दिया था, किन्तु महमूद ने उसे पराजित करके नरक में भेज दिया। अवध के आसपास के विद्रोही काफ़िरों को पराजित कर दिया और एक बहुत बड़ी सख्या अपने अधीन बना ली। उसने अवध से लखनौती की ओर प्रस्थान किया और हिन्दुस्तान की सेनायें सुल्तान की आज्ञा से उसके अधीन कर दी गई। इस प्रकार गण्यमान्य मलिक अर्थात् पूलान एव मलिक अलाउद्दीन जानी सभी उसके साथ लखनौती की ओर रवाना हुए। सुल्तान गयासुद्दीन एवज़ खलजी ने बग प्रदेश के ऊपर अधिकार जमाने के लिये लखनौती से प्रस्थान कर दिया था और राजधानी बिल्कुल खाली थी। जब मलिक सईद नासिरुद्दीन सेनाएँ लेकर उस ओर पहुँचा तो बसानकोट के किले तथा लखनौती नगर पर उसका अधिकार स्थापित हो गया। जब सुल्तान गयासुद्दीन एवज़ खलजी को यह समाचार मिला तो वह जिस स्थान पर था वही से लखनौती की ओर लौट पड़ा। मलिक नासिरुद्दीन सेना लेकर आगे बढ़ा और उसे पराजित कर दिया। गयासुद्दीन के सभी सम्बन्धी खलजी अमीर तथा राज-कोष एव हाथी उसे प्राप्त हो गये। गयासुद्दीन की हत्या करवा दी गई। उसके खज़ाने पर अधिकार जमा लिया गया।

(१८१) वहाँ से उसने देहली तथा अन्य नगरों के समस्त आलिमों, सैयदों, धर्मनिष्ठ लोगों के लिये उपहार तथा इनाम भेजे। जब सुल्तान शम्सुद्दीन को इस्लामी राजधानी (बगदाद) से खिलअत प्राप्त हुई तो उसने एक बहुमूल्य खिलअत तथा लाल चत्र उसके पास लखनौती भेजा। इस प्रकार मलिक नासिरुद्दीन चत्र, खिलअत तथा अनुकम्पाओं द्वारा सम्मानित किया गया। हिन्दुस्तान के मलिक तथा गण्यमान्य व्यक्ति यही समझते थे कि शम्सी राज्य का उत्तराधिकारी वही होगा, किन्तु भगवान् द्वारा निश्चित भाग्य के अनुसार (जिसमें प्राय मनुष्य कुछ योजनायें बनाता है किन्तु भगवान् की आज्ञा से वह कुछ की कुछ हो जाती हैं) डेढ वर्ष पश्चात् वह बीमार पड़ा और उसकी मृत्यु हो गई। जब उसकी मृत्यु के समाचार देहली पहुँचे तो सभी को बड़ा दुख हुआ।

(३) सुल्तान रुकुनुद्दीन फ़ीरोज़शाह

सुल्तान रुकुनुद्दीन फ़ीरोज़शाह बड़ा ही दानी और रूपवान था। उसमें अनेक उत्कृष्ट गुण पाये जाते थे और दान तथा बख्शिश में वह हातिम द्वितीय था।। उसकी माता खुदावन्दये जहाँशाह तुर्कान एक तुर्क दासी थी और रनवास की पटरानी थी। वह मलिकों, आलिमों, सैयदों तथा धर्मनिष्ठ लोगों को अनेक उपहार, दान आदि भेंट किया करती थी। सुल्तान

१ होदीवाला का विचार है कि यह नाम प्रिथू हो सकता है। रगपुर की स्थानीय कहानियों के अनुसार जलपाईगुड़ी में भितरागढ नामक स्थान पर तेरहवीं शताब्दी ईसवी में प्रिथू नामक एक राजा था। उसने मुसलमानों के सम्पर्क से बचने के लिये अपनी राजधानी के एक ताल में डूब कर आत्महत्या करली थी। मुसलमानों ने उत्तर में उस पर आक्रमण किया था। (होदीवाला २१८)।

रुक्नुद्दीन को ६२५ हि० (१२२७-२८ ई०) में बदायूँ की मुक्ता तथा हरा चत्र प्राप्त हो गया था।

(१८२) मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा का वजीर ऐनुलमुल्क हुसैन अशअरी सुल्तान रुक्नुद्दीन का वजीर नियुक्त हो गया था। सुल्तान शम्सुद्दीन ने ग्वालियर के किले की विजय के उपरान्त देहली वापस होकर लाहौर, जोकि खुसरो मलिक की राजधानी थी, सुल्तान रुक्नुद्दीन को प्रदान कर दिया। जब सुल्तान सिन्ध तथा बानियान से, जोकि उसका अन्तिम युद्ध था, वापस हुआ तो वह अपने पुत्र रुक्नुद्दीन को भी अपने साथ देहली लेता आया, जिससे लोगों की दृष्टि उस पर पड़ती रहे क्यों कि नासिरुद्दीन महमूद के उपरान्त सुल्तान का सबसे बड़ा पुत्र वही था।

जब सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु हो गई तो राज्य के मलिकों तथा गण्यमान्य व्यक्तियों ने सर्व सम्मति से उसे सिंहासनारूढ़ किया। मंगलवार २६ रमजान ६३३ हि० (६ जून, १२३६ ई०) में सिंहासन तथा राज मुकुट उसके द्वारा शोभा को प्राप्त हुआ। सभी लोग उसके राज्याभिषेक से प्रसन्न थे। सभी को खिलअतें प्रदान की गई। जब भिन्न-भिन्न मलिक देहली से चले गये तो सुल्तान रुक्नुद्दीन ने राज कोष के द्वार खोल दिये और भोग विलास में पड़ गया। बैतुलमाल का धन व्यर्थ लुटाना शुरू कर दिया। उसके भोग विलास तथा ऐश व इशरत के कारण राज्य के कार्य में विघ्न पड़ गया, उसकी माता शाह तुर्कान ने राज्य व्यवस्था तथा शासन प्रबन्ध में हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया। वह स्वयं आज्ञा पत्र चालू करने लगी। वह सुल्तान शम्सुद्दीन के जीवन में ही सुल्तान की अन्य स्त्रियों से ईर्ष्या व द्वेष करती थी। उनमें से कई स्त्रियों पर बड़ा अत्याचार किया और उन्हें मरवा डाला। राज्य के अधिकारियों के हृदय में सुल्तान और उसकी माँ के प्रति गहरा विरोध उत्पन्न हो गया।

(१८३) उन्होंने सुल्तान के पुत्र कुत्बुद्दीन की आँखों में सलाई गड़वादी, यद्यपि वह बड़ा ही योग्य था। तत्पश्चात् उसकी हत्या करवा दी। इसी कारण से राज्य के भिन्न भिन्न भागों के मलिक उसके विरोधी बन गये। सुल्तान के दूसरे पुत्र मलिक गयासुद्दीन मुहम्मद ने, जो रुक्नुद्दीन से छोटा था, अवध में विद्रोह कर दिया और लखनौती के खजाने पर जो देहली भेजा जा रहा था, अधिकार जमा लिया। हिन्दुस्तान के कुछ कस्बों को विध्वंस कर दिया। मलिक इज्जुद्दीन मुहम्मद सालारी ने भी, जो कि बदायूँ का मुक्ता था, विद्रोह कर दिया। दूसरी ओर से मुलतान का मुक्ता मलिक इज्जुद्दीन कबीर खाँ, हाँसी का मुक्ता मलिक सैफुद्दीन कूची और लाहौर का मुक्ता मलिक अलाउद्दीन (इन सब) ने एकत्र होकर विद्रोह कर दिया। सुल्तान रुक्नुद्दीन उन लोगों का विद्रोह दमन करने के लिये देहली से सेना लेकर बाहर निकला। वजीरे मुमलिकत (राज्य के वजीर) निजामुलमुल्क भयभीत होकर किलोखड़ी से कोल की ओर चल दिया और इज्जुद्दीन मुहम्मद सालारी से मिल गया। इसके उपरान्त वह दोनों मलिक जानी तथा कूची से मिल गये। सुल्तान सेना लेकर कोहराम की ओर चला।

तुर्क अमीरों तथा क़ल्ब की सेना के विश्वासपात्रों ने विद्रोहियों का अनुसरण करते हुये मन्सूरपूर तथा तराएन के बीच में ताजुलमुल्क महमूद दबीर[१] तथा मुशरिफे[२] ममालिक,

१ दबीर पत्र व्यवहार करते थे। इनका अफसर दबीरे खास होता था। वह सुल्तान की ओर से पत्र आदि लिखता था।

२ मुशरिफे ममालिक राज्य का गणनाध्यक्ष होता था। वह राज्य की आय का नियन्त्रण करता था। उसकी सहायता के लिये एक नाजिर होता था, जो अपने सहायक कर्मचारियों द्वारा समस्त राज्य की आमदनी के हिसाब की देखभाल करता था।

बहाउलमुल्क हुसैन अशअरी, करीमुद्दीन जाहिद, निजामुलमुल्क जुनैदी के पुत्र जियाउलमुल्क, निजामुद्दीन शरकानी, ख्वाजा रशीदुद्दीन मालिकानी, अमीर फखरुद्दीन तथा अन्य ताजीक अधिकारियो की हत्या करदी।

रबी-उल अव्वल ६३४ हि० (नवम्बर, १२३६ ई०) में सुल्तान की बडी लडकी सुल्तान रजिया ने सुल्तान रुक्नुद्दीन की माता का विरोध प्रारम्भ कर दिया। सुल्तान रुक्नुद्दीन को विवश होकर देहली वापस होना पडा।

(१८४) रुक्नुद्दीन की माता ने सुल्तान रजिया को बन्दी बना लेने तथा उसका वध करवा देने का षड्यन्त्र रचना प्रारम्भ कर दिया। इस पर शहर के निवासियो ने राज भवन पर आक्रमण करके रुक्नुद्दीन की माता को बन्दी बना लिया। रुक्नुद्दीन जब किलोखडी पहुँचा तो शहर[1] (देहली) में विद्रोह प्रारम्भ हो चुका था और उसकी माता को बन्दी बना लिया गया था। कल्ब की सेना तथा तुर्क अमीर शहर में एकत्र हो कर सुल्तान रजिया से मिल गये और उसकी बैअत कर ली तथा सिंहासनारूढ कर दिया। सिंहासनारूढ होने के उपरान्त उसने तुर्क अमीरों तथा दासो को इस आशय से किलोखडी भेजा कि वह सुल्तान रुक्नुद्दीन को बन्दी बना कर शहर (देहली) ले आयें। इस प्रकार उसे पकडवा कर कैद कर लिया गया और उसी बन्दीवस्था में उसकी मृत्यु हो गई। यह घटना तथा कैद, रविवार १८ रबी-उल अव्वल ६३४ हि० (१६ नवम्बर, १२३६ ई०) में हुई। उसने छ माम २८ दिन राज्य किया।

सुल्तान रुक्नुद्दीन दान में हातिम द्वितीय था। जिस प्रकार उसने लोगो को इनाम तथा दान दिये उस प्रकार किसी अन्य बादशाह ने कभी दान न किया था; किन्तु उसका सबसे बडा दोष यह था कि वह अधिकतर भोग विलास में ग्रस्त रहता था। दुराचार तथा व्यभिचार ने उसे पूर्णतया अपने वश में कर लिया था। वह अधिकाश इनाम तथा खिलअत गायको, विदूषको एव नपुन्सको को बाँटा करता था। वह नशे की अवस्था में हाथी की पीठ से शहर (देहली) के बाजार में सोना लुटाया करता था, सोने के तके फेंकता जाता था और लोग उठाते जाते थे। उसे हाथी की सवारी से बडी रुचि थी। महावतो को वह अत्यधिक दान तथा इनाम प्रदान किया करता था। वह किसी को भी किसी प्रकार का कोई दुख तथा कष्ट न पहुँचाना चाहता था। यही उसके राज्य के पतन का कारण हुआ।

(१८५) बादशाहो में सभी बातें विद्यमान होनी चाहिये, जिससे प्रजा तथा लावलश्कर सन्तुष्ट रह सकें। भोग विलास तथा दुष्टो एव दुराचारियो से मेल जोल के कारण राज्य का पतन हो जाता है।

(४) सुल्तान रजियतुद्दुनियाँ वद्दीन बिन्त (बेटी) सुल्तान इल्तुतमिश

सुल्तान रजिया बडी बुद्धिमान, न्यायकारी तथा दानी थी। वह आलिमो का आदर सम्मान करती, न्याय करती, तथा स्वय युद्ध करती। उसमें बादशाह के योग सचित सभी गुण थे, किन्तु भाग्य ने उसे पुरुष न बनाया था, अत उसके समस्त गुण उसके लिये कुछ भी लाभप्रद न हो सकते थे। वह अपने पिता सुल्तान के समय में भी राज्य व्यवस्था में बडे वैभव से भाग लिया करती थी। उसकी माता सुल्तान की स्त्रियो में सर्वश्रेष्ठ थी और वह राज भवन में, जिसका नाम कूश्के फीरोजी था, राज्य करती थी। यद्यपि वह पुत्री थी और परदे म रहती थी, फिर भी सुल्तान ने उसकी योग्यता तथा साहस को देखकर ग्वालियर की विजय से लौटने के उपरान्त ताजुलमुल्क महमूद दबीर को, जो कि मुशरिफे ममालिक था, यह आदेश दे दिया था, कि वह रजिया को उत्तराधिकारी नियुक्त किये जाने के विषय में फरमान (आज्ञा पत्र) लिख दे।

१ देहली के लिए केवल शहर शब्द का भी प्रयोग होता था।

जिस समय यह फरमान लिखा जा रहा था, सुल्तान के विश्वासपात्रो ने उससे कहा कि 'बादशाहे इस्लाम बडे-बडे पुत्रो की उपस्थिति में, जो कि राज्य के योग्य हैं, किस कारण और क्या देखकर पुत्री को बादशाह बना रहे हैं। इस समस्या का समाधान किया जाय तो उचित है, क्योकि सेवको की समझ में यह बात नही आती'। सुल्तान ने कहा कि मेरे पुत्र भोग विलास में ग्रस्त हैं और कोई भी राज्य व्यवस्था के योग्य नही है।

(१८६) वे इस राज्य का शासन नही कर सकते। मेरी मृत्यु के उपरान्त तुम्हें ज्ञात हो जायगा कि उसके मुकाबले में राज्य व्यवस्था कोई भी न कर सकेगा। वास्तव में जो उस बुद्धिमान बादशाह ने कहा था सत्य था। जब सुल्तान रज़िया राज सिंहासन पर विराजमान हुई तो सभी कार्य पहले की भाँति नियमानुसार होने लगे, किन्तु वज़ीरे मुम्लिकत निज़ामुलमुल्क जुनैदी उसका विरोध करता रहा। मलिक जानी, मलिक कूची, मलिक कबीर खाँ, मलिक इज्ज़ुद्दीन मुहम्मद सालारी तथा निज़ामुलमुल्क चारो ओर से शहर (देहली) के द्वार के सामने एकत्र हो गये और सुल्तान रज़िया का विरोध प्रारम्भ कर दिया। यह विरोध बढता ही गया। उस समय मलिक नुसरतुद्दीन[१] तायसी, मुइज्जी अवध का मुक्ता था। वह अपनी सेना लेकर सुल्तान रज़िया की आज्ञानुसार उसकी सहायता करने के लिये देहली पहुँचा। जब उसने गङ्गा नदी पार करली तो विद्रोही मलिको ने, जोकि देहली के द्वार के सामने थे, आगे बढकर उसे बन्दी बना लिया। वह बीमार होकर मर गया। विरोधी मलिक शहर के द्वार पर काफी समय तक रुके रहे किन्तु सुल्तान रज़िया के भाग्य का सितारा उन्नति पर था, अत उसने शहर (देहली) से निकल कर यमुना-तट पर एक स्थान पर डेरे डाल दिये। उसके सहायक तुर्क अमीरो तथा विद्रोही मलिकों के बीच में कई बार युद्ध हुआ किन्तु अन्त में सन्धि हो गई।

(१८७) मलिक इज्ज़ुद्दीन मुहम्मद सालारी तथा मलिक इज्ज़ुद्दीन कबीर खाँ अयाज़, जो कि गुप्त रूप से सुल्तान से मिल गये थे, एक रात्रि में शाही शिविर के सामने एकत्र हुये और यह निश्चय हुआ कि मलिक जानी, मलिक कूची, तथा निज़ामुलमुल्क जुनैदी को बुलवा कर बन्दी बना लिया जाय जिससे विद्रोह शान्त हो जाय। उन मलिको को जब यह ज्ञात हुआ तब वे अपने शिविर को छोड कर भाग गये। सुल्तान के सवारो ने उनका पीछा किया। मलिक कूची तथा उसका भाई फखरुद्दीन गिरफ्तार हो गये, और बन्दीगृह में उनको मार डाला गया। मलिक जानी की नकवान के निकट पायल[२] नामक ग्राम में हत्या करदी गई, और उसका कटा हुआ शीश राजधानी में भेज दिया गया। निज़ामुलमुल्क जुनैदी सिरमूर[३] बरदार की ओर भाग गया और कुछ समय पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई।

इस प्रकार जब सुल्तान रज़िया के राज्य-सम्बन्धी सभी कार्य ठीक हो गये तो उसने निज़ामुलमुल्क के नायब[४] ख्वाजा मुहज़्ज़ब को अपना वज़ीर नियुक्त किया और उसको भी निज़ामुलमुल्क की पदवी प्रदान की। उसने मलिक सैफुद्दीन ऐबक बहतू को सेना में अपना

१ पुस्तक में नसीरुद्दीन ताबशी है।

२ पटियाला नगर से ३४ मील उत्तर पश्चिम की ओर।

३ सिरमूर पर्वत।

४ नायब शब्द का अर्थ 'उप' है। बादशाह राजधानी छोड़ने से पूर्व अपना नायब नियुक्त कर दिया करते थे। लखनौती पर आक्रमण करने से पूर्व बल्बन ने देहली का नायब फखरुद्दीन कोतवाल को नियुक्त कर दिया था। लखनौती से तुग़रिल का पीछा करते समय बल्बन ने सिपहसालार हुसामुद्दीन को लखनौती में अपना नायब नियुक्त कर दिया था। नायब की पूरी पदवी नायबुलमुल्क अथवा मलिक नायब भी हुआ करती थी। बड़े-बड़े अमीर नायबुलमुल्क बनने का प्रयास किया करते थे। निर्बल बादशाहों तथा उनकी अल्पावस्था के पुत्रों के समय में उन्हें सुल्तान के पूरे अधिकार प्राप्त होते थे।

नायब नियुक्त किया और उसे कुतलुग खाँ की पदवी प्रदान की। मलिक कबीर खाँ को लाहौर की अक्ता प्रदान की। इस प्रकार राज्य-व्यवस्था तथा शासन सम्बन्धी सभी कार्य ठीक हो गये। लखनौती से देवल तक के सभी मलिक तथा अमीर उसके आज्ञाकारी बन गये। मलिक ऐबक बहतू की अचानक मृत्यु हो गई। अत मलिक कुतुबुद्दीन हसन गोरी को नायब बनाया गया। उसे रणथम्भोर के किले पर चढाई करने के लिये भेजा गया क्योकि सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के उपरान्त हिन्दुओ ने उस किले को घेर लिया था। मलिक कुतुबुद्दीन ने सेना लेकर चढाई की और मुसलमान अमीरो को किले से बाहर निकाल कर किले को विध्वस कर दिया और देहली लौट आया।

इसी समय मलिक इख्तियारुद्दीन एतगीन अमीर हाजिब[1] नियुक्त हो गया और अमीर आखुर अमीर जमालुद्दीन याकूत सुल्तान का विश्वासपात्र बन गया।

(१८८) इस प्रकार तुर्क अमीर तथा मलिक उससे ईर्ष्या करने लगे। इस बीच में ऐसा हुआ कि सुल्तान रजिया ने स्त्रियो के वस्त्र तथा पर्दा त्याग दिया। वह कबा[2] पहिनने और कुलाह[3] धारण करने लगी तथा प्रजा के सामने आने लगी। हाथी पर सवार होते समय प्रजा उसके दर्शन करने लगी। इसी समय उसने अपनी सेना को अत्यधिक इनाम प्रदान करके ग्वालियर की ओर भेजा। चूँकि सेना का मुकाबला न हो सकता था, विजयी राज्य का सेवक मिनहाज सिराज, मजिदुलउमरा जियाउद्दीन जुनैदी अमीरदादे ग्वालियर, तथा अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति पहली शाबान ६३५ हि० (१९ मार्च, १२३८ ई०) को ग्वालियर के किले से निकल कर देहली की सेना से मिल गये। इसी वर्ष शाबान के महीने में सुल्तान रजिया ने उसे ग्वालियर के काजी के पद के साथ-साथ मदरसये-नासिरिया का प्रबन्ध भी सौंप दिया।

६३७ हि० (१२३९-४० ई०) में मलिक इज्जुद्दीन कबीर खाँ ने, जो कि लाहौर का मुक्ता था, विद्रोह प्रारम्भ कर दिया। सुल्तान रजिया ने देहली से सेना लेकर उस पर चढाई की और उसका पीछा किया। अन्त मे सन्धि हो गई और उसने अधीनता स्वीकार कर ली। मुल्तान प्रदेश, जोकि मलिक कुराकुश के अधीन था, मलिक इज्जुद्दीन कबीर खाँ को प्रदान कर दिया गया और सुल्तान रजिया बृहस्पतिवार १९ शाबान, ६३७ हि० (१५ मार्च १२४० ई०) में देहली वापस आई। अब मलिक अल्तूनियाँ ने, जो कि तबरहिन्दा का मुक्ता था, विरोध प्रारम्भ कर दिया और देहली के कुछ अमीर गुप्त रूप से उसके सहायक बन गये। सुल्तान रजिया ने उसी वर्ष बुधवार ९ रमजान (३ अप्रैल) को देहली से कल्ब की सेना लेकर अल्तूनियाँ का मुकाबला करने के लिये तबरहिन्दा पर चढाई की। जब वह उस स्थान पर पहुँची तो तुर्क अमीरो ने विद्रोह करके अमीर जमालुद्दीन याकूत हब्शी की हत्या कर दी और सुल्तान रजिया को बन्दी बना करके तबरहिन्दा के किले में कैद कर दिया।

(१८९) सुल्तान रजिया के राज्य के प्रारम्भ मे सबसे बडी दुर्घटना यह हुई थी कि

१ अमीर हाजिब तथा बारबक दरबार के नियमों तथा रीति रिवाजों के पालन कराने के उत्तरदायी होते थे। अमीरों तथा अन्य अधिकारियों को उनके उचित स्थानों पर खडे होने का प्रबन्ध करते थे। उसके अधीन कर्मचारी हाजिब कहलाते थे। वे दरबारे आम में बादशाह तथा सर्वसाधारण के बीच में खडे होते थे जिससे सर्वसाधारण बादशाह तक सीधे न पहुँच सकते थे। हाजिब बादशाह की सवारी के साथ भी रहते थे। अमीरे हाजिब तथा बारबक का पद केवल बडे-बडे प्रतिष्ठित व्यक्तियों तथा सैनिकों को मिल सकता था।

२ कबा सब वस्त्रों के ऊपर पहनी जाती थी। यह लबादे के समान होती थी।

३ पगडी के साथ पहनने वाली टोपी।

करामेता[1] और हिन्दुस्तान के मुलहिदो[2] ने एक विद्वान नूर तुर्क के कहने पर हिन्दुस्तान के भिन्न भिन्न प्रदेशो अर्थात् गुजरात, सिन्ध, देहली के आसपास के प्रदेशो तथा यमुना एव गगा-तट के स्थानो से आकर देहली में एकत्र होकर, एक दूसरे की सहायता का दृढ सकल्प करके, मुसलमानो के विनाश के षड्यन्त्र प्रारम्भ कर दिये। वह नूर तुर्क तक्फीर किया करता था, और सभी कमीने उसके पास एकत्र हुआ करते थ। वह सुन्नी आलिमो को नासिबी[3] तथा मुरजी कहा करते थे और लोगो को अबूहनीफा तथा शाफई[4] धर्म के उलमा के विरुद्ध उत्तेजित करते थे। इस प्रकार एक समय निश्चित करके सभी मुलाहिदा तथा करामिता शुक्रवार ६ रजब ६३४ हि० (५ मार्च, १२३७ ई०) को *एक हजार की सख्या में अस्त्र-शस्त्र*, तलवार, ढाल लगा कर देहली की जामा मस्जिद में घुस आये और एक सेना नये किले की ओर से जामा मस्जिद के उत्तरी द्वार पर पहुँच गई। दूसरी सेना बजाजो के बाजार से मुइज्जी मदरसे के द्वार पर उसको जामा मस्जिद समझ कर एकत्र हो गई। इन सैनिको ने दोनो ओर से मुसलमानो पर तलवारें चलानी आरम्भ कर दी। बहुत से लोग काट डाले गये और बहुत से लोग पैरो के नीचे दब कर मर गये। हा हा कार सुन कर कुछ पराक्रमी, जैसे नसीरुद्दीन एतिमुर बलआरामी, अमीर इमाम नासिर शायर तथा अन्य वीर एव सवार अस्त्र शस्त्र लगा कर, भाला ढाल आदि लिए हुए घुस कर मुलाहिदा तथा करामिता से युद्ध करने लगे। जो मुसलमान जामा मस्जिद के कोठे पर एकत्र हो गये थे उन्होने पत्थर और ईंटें फेंकनी आरम्भ कर दी। इस प्रकार समस्त मुलहिद तथा करामिता को नरक भेज दिया गया और उपद्रव शान्त हो गया।

(१६०) जब सुल्तान रजिया को तबरहिन्दा के किले में बन्द कर दिया गया तो मलिक इख्तियारुद्दीन अल्तूनियाँ ने उससे विवाह कर लिया और देहली पर पुन चढाई कर दी। अधिकार जमाने के लिए मलिक इज्जुद्दीन मुहम्मद सालारी तथा मलिक कुराकुश देहली में विद्रोह करके उन लोगो से मिल गये। सुल्तान मुइज्जुद्दीन को सिंहासनारूढ कर दिया गया था, और इख्तियारुद्दीन एतगीन अमीर हाजिब की हत्या कर दी गई। बद्रुद्दीन सुकर रूमी अमीर हाजिब हो गया था। रबी-उल अव्वल ६३८ हि० (सितम्बर अक्तूबर १२४० ई०) में सुल्तान मुइज्जुद्दीन देहली की सेना लेकर उनका मुकाबला करने के लिए निकला। सुल्तान रजिया और अल्तूनियाँ पराजित हुये। जब वे कैथल पहुँचे, तो वह सेना भी, जो उनके साथ थी, उनकी विरोधी हो गई। सुल्तान रजिया तथा अल्तूनियाँ को हिन्दुओ ने बन्दी बना लिया और दोनो को मार डाला। वे २४ रबी-उल अव्वल (१३ अक्तूबर १२४० ई०) को पराजित हुये। सुल्तान रजिया की हत्या मगलवार २५ रबी उल आखिर ६३८ हि० (१३ नवम्बर, १२४० ई०) को

१ *यह इस्लाम के इस्माईली फिरके की एक शाखा है। इसका प्रचार अब्दुल्ला तथा उसके शिष्य, कर्मत* ने किया। ८७४ ई० में अब्दुल्ला की मृत्यु हो गई। इस फिरके के मानने वालों ने एक गुप्त समाज बनाया था। इसके सभी सदस्यों को बराबर के अधिकार प्राप्त थे। वे अपने विरोधियों का रक्त बहाना तथा गुप्त रूप से उनकी हत्या कर देना बुरा न समझते थे। वे समस्त इस्लामी ससार में सुन्नी मुसलमानों के लिये एक बहुत बड़ा खतरा बन गये थे। हिन्दुस्तान में मुल्तान भी इनका एक बहुत बड़ा केन्द्र था।

२ अधर्मियों।

३ नासिबी और मुरजी दोनों का यहाँ अभिप्राय अधर्मी है।

४ मुहम्मद इब्ने इदरीस शाफई का जन्म ७६७ ई० मे हुआ। इनके बताये हुये नियमों का पालन करने वाले सुन्नी धर्म के शाफई सम्प्रदाय मे सम्मिलित हैं। इनकी सख्या भारतवर्ष में बहुत कम है किन्तु अरब में इनकी बहुत बड़ी सख्या पाई जाती है।

हुई[1]। उसने ३ वर्ष ६ महीने ६ दिन तक राज्य किया[2]। ईश्वर मुसलमानो के बादशाह को कयामत तक जीवित रखे।

(५) मुइज़्ज़ुद्दीन बहरामशाह

(१६१) सुल्तान मुइज्जुद्दीन बहरामशाह बडा ही बलवान, निर्भीक, वीर, परन्तु निर्दयी तथा हत्यारा था। किन्तु उसमें कुछ अच्छे गुण तथा नैतिकतापूर्ण बातें भी पाई जाती थी। वह बडे ही सरल स्वभाव का मनुष्य था और बादशाहो की भाँति आभूषण तथा बहुमूल्य वस्त्र धारण करने की उसे रुचि न थी। उसने कभी भी ठाट-बाट के प्रदर्शन, रेशमी वस्त्र, सजावट के कार्यों, झण्डे आदि को महत्व नही दिया।

सुल्तान रजिया को तबरहिन्दा में कैद कर देने के उपरान्त मलिको तथा अमीरो ने सर्व सम्मति से देहली में पत्र भेज कर मुइज्जुद्दीन बहरामशाह को सोमवार २७ रमजान ६३७ हि० (२१ अप्रैल, १२४० ई०) में सिहासनारूढ कर दिया। मलिको, अमीरो तथा समस्त लावलश्कर ने देहली वापस होने के उपरान्त सोमवार ११ शव्वाल (५ मई, १२४० ई०) को उसी वर्ष राज भवन में सुल्तान से बैअत कर ली। इख्तियारुद्दीन एतगीन नायब नियुक्त हुआ। उसी दिन लेखक ने बैअत के उपरान्त सुल्तान को बधाई देते हुये यह छन्द पढे

छन्द

क्या कहना तेरे कारण राज्य के चिह्नो को सम्मान प्राप्त होता है।
देखिये किस प्रकार शाही पताकाओं के द्वारा राज्य के चिह्न स्पष्ट होते हैं।
मुइज्जुद्दीन वद्दुनियाँ मुगीसुल खल्क
तू सुलेमान की भाँति है और जिन्नात तथा मनुष्य तेरे अधीन हैं।
हिन्द का राज्य शम्सी वंश की परम्परा है।
प्रशसा के योग्य भगवान् है कि उसके पुत्रो में तू इल्तुतमिश द्वितीय है।
जब तुझे समस्त संसार देखेगा कि तेरा राज्य के ऊपर अधिकार उचित है,
तो सभी लोग तेरे द्वार के सामने झुकेंगे, चाहे वे विद्वान हों चाहे अधिकार सम्पन्न।
मिनहाज सिराज की भाँति लोगो की प्रार्थना तेरे लिये यह है,
(१६२) कि ऐ भगवान्! तू राज्य के सिंहासन पर कयामत तक आरूढ रहे,
तेरे राज्य काल में समस्त संसार भाले की भाँति सीधा रहे,
और झण्डे की लहरो के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान पर कोई व्याकुलता दिखाई न दे।

इख्तियारुद्दीन एतगीन ने नायब नियुक्त हो जाने के उपरान्त राज्य के सभी कार्यों को सुव्यवस्थित किया और वजीर निजामुलमुल्क मुहज्जबुद्दीन तथा मुहम्मद एवज मुस्तौफी[3] की सहायता से सभी कार्यों को अपने हाथ में लेकर उचित रीति से सम्पन्न किया।

---

१ उसका शव देहली में दफन किया गया होगा। इब्ने बतूता के समय उसका मक़बरा यमुनान्तट पर स्थित था और लोग वहा दर्शनार्थ आया करते थे। (डेफरेमरी संस्करण भाग ३ पृ० १६७ ६८) शम्स सेराज अफ़ीफ़ के अनुसार वह नवीन नगर फ़ीरोजाबाद में सम्मिलित था।

२ रैवर्टी की एक हस्तलिखित तबक़ाते नासिरी में ३ साल ६ महीने ६ दिन है। अन्य पुस्तकों में ३ साल ६ दिन हैं। वास्तव में ३ साल ६ महीने ६ दिन ही शुद्ध है। वह राज सिंहासन पर ८ रबी-उल-अव्वल ६३४ हि० को आरूढ हुई थी। तबक़ाते अकबरी, मुन्तख़बुत्तवारीख़ तथा तारीखे फरिश्ता में भी ३ वर्ष ६ मास ६ दिन हैं।

३ आडीटर को मुस्तौफी कहते थे। मुख्य आडीटर मुस्तौफ़िये ममालिक कहलाता था। वह राज्य के व्यय की देखभाल करता था।

एक दो महीने के बाद सुल्तान को यह बात बुरी मालूम होने लगी। नायब ने सुल्तान की एक बहिन से विवाह कर लिया। उसकी बहिन का विवाह इससे पूर्व क़ाजी नसीरुद्दीन के पुत्र से हुआ था, किन्तु यह सम्बन्ध टूट गया था। उसने तेहरी नौबतें बजवानी प्रारम्भ करदी और अपने महल के द्वार पर एक हाथी रखने लगा[१]। उसका अधिकार मुहर्रम ६३८ हि० (जुलाई १२४० ई०) तक चलता रहा। इसी समय सोमवार ८ मुहर्रम (३० जुलाई, १२४०ई०) को सफेद राज भवन के कोठे पर तज़कीर का आयोजन किया गया था। तज़कीर के बाद सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने दो बदमस्त तुर्कों को सफेद राज भवन से दरबार के मंच के सामने भेजा। उन लोगों ने फिदाइयों[२] की भाँति इख्तियारुद्दीन एतगीन की हत्या चाकू मार मार कर करदी। वज़ीर निज़ामुलमुल्क मुहज्ज़बुद्दीन की कोख में भी दो चाकू लगे, किन्तु उसकी मौत न आई थी अतः वह बच गया। मलिक बद्रुद्दीन सुन्क़र, अमीर हाजिब नियुक्त हो गया, और राज्य सुव्यवस्थित कर लिया गया।

इसी समय सुल्तान रज़िया तथा मलिक इख्तियारुद्दीन अल्तूनियाँ ने तबरहिन्दा से देहली पर चढ़ाई करदी किन्तु वे पराजित हुये और सुल्तान रज़िया तथा अल्तूनियाँ की, जैसा कि उल्लेख हो चुका है, हिन्दुओं ने हत्या करदी। बद्रुद्दीन सुन्क़र को पूर्ण रूप से अधिकार प्राप्त हो गया। चूंकि वह राज्य-व्यवस्था तथा शासन प्रबन्ध में सुल्तान की आज्ञा प्राप्त न करता था और वज़ीर निज़ामुलमुल्क मुहज्ज़बुद्दीन से बढ़ जाने का प्रयत्न किया करता था तथा मनमाने आदेश दे दिया करता था, अतः वज़ीर, सुल्तान को बद्रुद्दीन सुन्क़र के विरुद्ध उकसाने लगा। यहाँ तक कि सुल्तान उसका विरोधी हो गया।

(१९३) बद्रुद्दीन सुन्क़र को जब यह बात ज्ञात हुई तो वह शंकित रहने लगा और इस बात का प्रयत्न करने लगा कि किसी प्रकार उससे राज सिंहासन छीनकर उसके किसी भाई को दे दे। सोमवार १७ सफर, ६३९ हि० (२७ अगस्त, १२४१ ई०) को बद्रुद्दीन सुन्क़र ने सद्रुलमुल्क ताजुद्दीन अली मूसवी मुशरिफे ममालिक के निवास स्थान पर सद्रों तथा शहर के गण्यमान्य व्यक्तियों को एकत्र किया। इस प्रकार काजिये ममालिक, जलालुद्दीन काशानी, काजी कबीरुद्दीन, शैख मुहम्मद शामी, तथा अन्य अमीर एकत्र हुये और राज्य में क्रान्ति करने का विचार करने लगे। सद्रुलमुल्क को वज़ीर निज़ामुलमुल्क, मुहज्ज़बुद्दीन के बुलाने के लिये इस आशय से भेजा गया, कि उसके परामर्श से कोई निर्णय किया जा सके। सुल्तान का एक विश्वास पात्र वज़ीर के पास उपस्थित था। उसी समय सद्रुलमुल्क वज़ीर के निवास स्थान पर पहुँचा। वज़ीर ने सद्रुलमुल्क के आने का हाल सुनकर सुल्तान के विश्वास-पात्र को एक ऐसे स्थान पर छिपा दिया जहाँ से वह उन लोगों की वार्ता सुन सके। सद्रुलमुल्क ने उपस्थित होकर राज्य की क्रान्ति के विषय में मुहज्ज़ब वज़ीर को सूचित किया। ख्वाजा ने उत्तर दिया कि तुम लौट जाओ और मैं शीघ्र वज़ू[३] करके तुम्हारे पीछे आता हूँ। जब सद्रुलमुल्क लौट गया तो वज़ीर ने सुल्तान के विश्वासपात्र को

१ हाथी रखना भी सुल्तान का विशेष अधिकार था। लेखक का अभिप्राय यह है कि वह अपने आप को स्वतन्त्र समझने लगा था।

२ क़रामतियों के समान फिदाई भी एक गुप्त समूह था जिसका प्रसिद्ध नेता हसन बिन सब्बाह हुआ है। मार्कोपोलो ने इन लोगों का सविस्तार उल्लेख अपनी यात्रा के वर्णन में किया है। यह लोग ग्यारहवीं से तेरहवीं शताब्दी ई० तक सुन्नियों के राज्य के लिये बहुत बड़ा ख़तरा बन गये थे। अपने नेता के आदेश पर बड़े बड़े सुन्नी अमीरों, वज़ीरों, बादशाहों आदि की हत्या कर देना इनके बाँये हाथ का खेल हुआ करता था।

३ नमाज़ के लिये क्रमानुसार हाथ मुँह धोना। इस्लामी नियमों के अनुसार प्रत्येक पवित्र जीवन व्यतीत करने वाले से यह आशा की जाती है कि वह सदैव वज़ू किये रहे।

बाहर निकाल कर सद्रुलमुल्क की वार्ता पूर्णतया सुना कर कहा कि शीघ्रातिशीघ्र सुल्तान के पास जाकर निवेदन करो कि इस समय यह उचित होगा कि सुल्तान सवार हो कर उन लोगो के पास पहुँच जाय, जिससे वह इधर उधर न हो जायें। जब उस विश्वासपात्र ने सुल्तान की सेवा मे उपस्थित होकर सब हाल बताया तो वह तुरन्त सवार होकर चल दिया।

(१६४) वे लोग इधर उधर हो गये। बद्रुद्दीन सुन्कर सुल्तान की सेवा में उपस्थित हो गया। सुल्तान ने लौट कर दरबार किया और बद्रुद्दीन सुन्कर को आदेश दिया कि वह तुरन्त बदायूँ की ओर चला जाय। वह प्रदेश उसे उसकी अक्ता में दे दिया गया। काजी जलालुद्दीन पदच्युत कर दिया गया। काजी कबीरुद्दीन तथा शेख मुहम्मद शामी भय के कारण शहर से भाग गये। तत्पश्चात् बद्रुद्दीन सुन्कर चार महीने के बाद देहली पुन लौटा। क्योंकि सुल्तान उससे रुष्ट था, अत उसने उसे बन्दी बना दिया। जलालुद्दीन मूसवी को भी कैद कर दिया गया और दोनो शहीद कर दिये गये।

इस घटना से सभी अमीर घबडा गये और सुल्तान से शकित रहने लगे। किसी को भी सुल्तान पर विश्वास न रहा। वजीर अपने घाव का बदला लेने के लिये यह चाहता था कि समस्त अमीर, मलिक तथा तुर्क, सुल्तान के विरुद्ध विद्रोह कर दें। सुल्तान को भी अमीरो तथा तुर्कों से डराया करता था। अन्त में वज़ीर की यह बात इतनी फैली कि इसी के कारण सुल्तान का ह्रास हुआ और प्रजा ने विद्रोह कर दिया।

मुइज्जुद्दीन के राज्यकाल में काफिर मुगलो की सेना खुरासान तथा गज़नी से लाहौर पहुँच गई थी, बहुत दिनो तक युद्ध होता रहा। मलिक कराकुश लाहौर का मुक्ता था। वह स्वय बडा ही वीर, साहसी तथा पराक्रमी था, किन्तु लाहौर के लोगो ने उचित रूप से उसका साथ न दिया। वे रात्रि में पहरा देने तथा युद्ध करने मे जी चुराते थे। जब मलिक कराकुश को यह हाल ज्ञात हुआ तो वह रातो रात अपनी सेना लेकर देहली की ओर चल दिया। काफिरो ने उसका पीछा किया, किन्तु भगवान् ने उसकी रक्षा की और वह उन लोगो के बीच से साफ निकल गया। क्योंकि लाहौर में कोई भी अधिकारी न रह गया था, अत सोमवार १६ जमादी-उल-आखिर ६३६ हि० (२२ दिसम्बर, १२४१ ई०) को मुगल काफिरों ने उस नगर पर अपना अधिकार जमा लिया। मुसलमानो को शहीद कर दिया और उनके सहायकों को बन्दी बना लिया।

(१६५) जब इस दुर्घटना के समाचार देहली पहुँचे तो सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने देहली के निवासियो को सफेद राज भवन में एकत्र किया। लेखक (मिनहाज) को तज्कीर के लिये कहा। लोगों ने अपनी बैअत सुल्तान की सेवा में पुन अर्पण की। एक तुर्क दरवेश अय्यूब नामक जो कि केवल कम्बल ओढता था, एक समय मे हौजे[1] सुल्तान के निकट के महल में भगवान् की उपासना

१ इस हौज का उल्लेख अमीर खुसरो, इब्ने बतूता तथा फीरोजशाह ने किया है। यह सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश ने बनवाया था। यह हौज लाल पत्थर का बना था। इब्ने बतूता ने लिखा है कि, "यह हौज शहर देहली के बाहर है। शहर वाले इसी का जल पीते हैं। शहर की ईदगाह भी इसी के निकट है। इसमें वर्षा का जल एकत्र होता है। यह दो मील लम्बा और एक मील चौड़ा है। पश्चिम दिशा में ईदगाह के सामने की ओर पत्थर के घाट बने हुये हैं और जीने के समान एक चबूतरा दूसरे चबूतरे के ऊपर बना हुआ है। चबूतरों से पानी तक सीढ़ियाँ है। प्रत्येक चबूतरे के कोने पर गुम्बद बने हुये हैं जहाँ से दर्शक सैर करते है। हौज के बीच में भी नक्काशी पत्थरों का गुम्बद बना हुआ है। यह गुम्बद दो मंजिला है। जब हौज में पानी बहुत भर जाता है तो नौकाओं में बैठ कर इस गुम्बद तक पहुँच सकते हैं। जब पानी कम हो जाता है तो प्राय लोग वैसे ही चले जाते है। इसमें एक मस्जिद है। धार्मिक तथा

किया करता था[१]। वह सुल्तान मुइज्जुद्दीन का विश्वासपात्र हो गया।

सुल्तान उस पर बडा विश्वास करने लगा। उस दरवेश ने राज्य के कार्य में हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया। इससे पूर्व वह दरवेश मिहरपुरी नामक कस्बे में रहता था। वहाँ काजी शम्सुद्दीन मिहर निवासी ने उसे दण्ड दिया था। सुल्तान का विश्वासपात्र हो जाने के उपरान्त उसने काजी शम्सुद्दीन मिहर को हाथी के पैर के नीचे कुचलवाने का प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया। जब लोगो को यह समाचार मिले तो वे सुल्तान से पूर्णतया भयभीत रहने लगे। सुल्तान ने दुष्ट मुगलो से जोकि लाहौर नगर के द्वार पर थे युद्ध करने के लिये मलिक कुतुबुद्दीन हुसैन को वजीर, अमीरो, मलिको और सेना के साथ उस ओर राज्य की सीमा की रक्षा करने के लिये नियुक्त किया। उस समय सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने देहली तथा समस्त राज्य की कजा[२] का पद शनिवार १० जमादी-उल-अव्वल ६३९ हि०(१६ नवम्बर, १२४१ ई०) को लेखक (मिनहाज सिराज) को दिया और बहुत-सा इनाम तथा खिलअत प्रदान किय। इसके उपरान्त उसने सेनाओ को प्रस्थान करने का आदेश दिया।

जब सेनायें ब्याह नदी के तट पर पहुँची तो ख्वाजा मुहज्जबुद्दीन निजामुलमुल्क ने, जो कि सुल्तान से बदला लेने तथा किसी न किसी प्रकार उसे गद्दी से उतारने का प्रयत्न कर रहा था, सेना के पडाव से सुल्तान की सेवा में गुप्त रूप से एक प्रार्थना पत्र भेजा कि अमीर तथा तुर्क कदापि अधीनता स्वीकार नही कर सकते, अत यह उचित होगा कि अन्नदाता इस आशय का आदेश भेज द कि मै और कुतुबुद्दीन हुसैन दोनो मिलकर समस्त तुर्क अमीरो को जिस प्रकार हो सके मार डालें ताकि राज्य को इन लोगो से छुटकारा मिल जाये।

(१९६) इस प्रार्थना पत्र के पहुँचने पर उस अनुभवहीन सुल्तान ने जल्दी मे बिना सोचे समझे फरमान लिखवा कर भिजवा दिया। जब वह फरमान सेना के शिविर में पहुँचा तो उसने उसे अमीरो तथा तुर्कों को दिखा दिया कि बादशाह ने तुम्हारे विषय मे इस प्रकार का फरमान भेजा है। सभी सुल्तान के विरोधी बन गये और ख्वाजा मुहज्जब के कहने पर सुल्तान को निकालने तथा राज सिंहासन से वंचित करने पर सहमत हो गये।

जिस समय अमीरो तथा सेना के समाचार देहली पहुँचे तो सुल्तान ने शेखुल इस्लाम सैयद कुतुबुद्दीन को उस विद्रोह को शान्त करने के लिए मलिको के पास भेजा। उसने वहाँ पहुँच कर उस विद्रोह को और भी बढा दिया और वहाँ से लौट गया। सेना भी उसके पीछे-पीछे शहर देहली के द्वार पर पहुँची और युद्ध प्रारम्भ हो गया। मिनहाज सिराज तथा शहर के बडे-बडे इमामो ने विद्रोह को शान्त करने का विशेष प्रयत्न किया किन्तु वे सफल न हो सके। सेनायें शहर देहली के द्वार पर शनिवार १९ शाबान ६३९ हि०(२२ फरवरी, १२४२ई०) को पहुँच गई और जीकाद मास (मई) तक युद्ध होता रहा। दोनो ओर से बहुत से लोग मारे गये और शहर के आस पास के स्थानो को विशेष क्षति पहुँची। इस विद्रोह के बढने का

त्यागी मुसलमान वहाँ जाकर रहते है। जब हौज के किनारे सूख जाते हैं तब उसमें गन्ना, ककड़ी तरबूज़ा और खरबूज़ा बो दिये जाते है। वहाँ का खरबूजा छोटा होता है, किन्तु वह बड़ा मीठा होता है। अमीर खुसरो के वर्णन से पता चलता है कि इस हौज में पानी पहुँचाने के लिये नहरें भी निकाली गई थीं। अलाउद्दीन तथा फीरोजशाह तुगलक ने भी इस हौज की मरम्मत कराई थी। इल्तुतमिश से अलाउद्दीन के समय तक अधिकतर देहली के लोग इसी हौज का जल पीते थे। बरनी के इतिहास मे पता चलता है कि सुल्तान बलबन के समय में यह हौज देहली की चहार दीवारी के अन्दर ही था।

१ एतेकाफ में बैठा था।

काजी से सम्बन्धित (न्याय विभाग)

विशेष कारण यह था कि मेहतर फर्राश जो फखरुद्दीन मुबारकशाह कहलाता था, सुल्तान का बडा विश्वासपात्र था। सुल्तान उसकी बात बहुत मानता था और वह जो कुछ कहता था सुल्तान वही करता था। यह फर्राश समझौता न होने देता था।

(१९७) शुक्रवार ७ ज़ीकाद (९ मई) को ख्वाजा मुहज्जब ने अपने सेवकों को तीन हज़ार जीतल प्रदान किये। लेखक के वर्ग के भी कुछ लोग विद्रोहियों के सहायक हो गये। लोगों ने नमाज़ के बाद जामा मस्जिद में विद्रोह कर दिया। लेखक पर तलवार का वार किया। भगवान् की कृपा से लेखक के हाथ में एक डंडा और एक कटार थी। उसने कटार निकाल ली। उसके साथ कुछ सशस्त्र दास भी थे। उनकी सहायता से वह उन बलवाइयों के बीच से निकल गया। तुर्क अमीरों ने किले पर अधिकार जमा लिया। दूसरे दिन शनिवार ८ ज़ीकाद ६३९ हि० (१० मई, १२४२ ई०) को नगर पर भी उनका अधिकार स्थापित हो गया। सुल्तान बन्दी बना लिया गया। मुबारकशाह फर्राश को, जो विद्रोह को बढा रहा था, कठोर दंड देकर हत्या करवादी गई। मंगलवार १८ ज़ीकाद (२० मई) को सुल्तान मुइज्ज़ुद्दीन बहरामशाह भी शहीद कर दिया गया। उसने दो वर्ष और डेढ महीना राज्य किया।

(६) सुल्तान अलाउद्दीन मसऊदशाह बिन (पुत्र) (रुक्नुद्दीन) फ़ीरोजशाह

सुल्तान अलाउद्दीन मसऊदशाह, रुक्नुद्दीन फीरोजशाह का पुत्र था। वह बडा ही दानी तथा चरित्रवान बादशाह था। उसमें अनेक प्रकार के गुण पाये जाते थे। शनिवार ८ ज़ीकाद ६३९ हि० (१० मई, १२४२ ई०) में शहर देहली मुइज्ज़ुद्दीन के हाथ से निकल गया। मलिकों और अमीरों ने सहमत होकर तीनों शहज़ादों अर्थात् सुल्तान नासिरुद्दीन, मलिक जलालुद्दीन तथा सुल्तान अलाउद्दीन को कैद के बाहर निकाला। उनको सफेद राज भवन से सुल्तान के महल कसरे फीरोज में ले गये। सभी लोग अलाउद्दीन को राज्य सौंपने पर सहमत थे। इसी बीच में मलिक इज्ज़ुद्दीन बल्बन सुल्तान के राज भवन में राज सिंहासन पर विराजमान हो गया था। महल के बाहर शहर में उसके राज्य की घोषणा भी करा दी गई थी, किन्तु अमीर लोग इससे सहमत न थे।

(१९८) अत सुल्तान अलाउद्दीन को सिंहासनारूढ किया गया और सभी ने उसकी बैअत की। मलिक कुतुबुद्दीन हुसैन गोरी नायब मुल्क नियुक्त हुआ। निज़ामुलमुल्क मुहज्जब, वज़ीर नियुक्त हुआ। मलिक कुराकुश अमीर हाजिब नियुक्त किया गया। नागौर मन्दावर तथा अजमेर प्रदेश मलिक इज्ज़ुद्दीन बल्बन को प्रदान किये गये। बदायूँ प्रदेश मलिक ताजुद्दीन सजर कुतलुक को प्रदान किया गया। देहली की विजय के ४ दिन उपरान्त लेखक ने काज़ी के पद से त्याग-पत्र दे दिया। २६ दिन तक कजा का पद किसी को न मिला। चार ज़िलहिज्जा (५ जून, १२४२ ई०) को काज़ी का पद इमादुद्दीन मुहम्मद शफूरकानी को प्रदान किया गया।

निज़ामुलमुल्क मुहज्ज़बुद्दीन ने राज्य पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया और कोल की अक्ता प्राप्त कर ली। अपने महल के द्वार पर हाथी रखने लगा और नौबत बजवाने लगा। तुर्क अमीरों को सभी अधिकारों से वंचित कर दिया। इस कारण तुर्क अमीरों के हृदय में मैल आ गया। अमीर सहमत होकर सेना के शिविर में शहर के सामने हौज़े रानी के मैदान में एकत्र हुये और बुधवार २ जमादी-उल-अव्वल ६४० हि० (२८ अक्तूबर, १२४२ ई०) को उसकी हत्या कर दी गई।

शुक्रवार ९ रजब ६४० हि० (२ जनवरी, १२४३ ई०) को लेखक देहली छोड कर लखनौती की यात्रा को रवाना हो गया। बदायूँ में ताजुद्दीन कुतलुक तथा अवध में क़मरुद्दीन

वीरों ने उस पर विशेष कृपा दिखाई। (भगवान् दोनों की आत्मा को सुख प्रदान करे) उस समय तुर्गा खान इज्जुद्दीन तुगरिल लखनौती का मलिक, सेना तथा नावें लेकर कड़ा पहुँच चुका था। लेखक अवध से उसके पास जाकर मिल गया और उस के साथ लखनौती को प्रस्थान करके रविवार, जिलहिज्जा ६४० हि० (२८ मई, १२४३ ई०) में लखनौती पहुँच गया।

(१९९) वह अपने पुत्रों तथा सम्बन्धियों को अवध ही में छोड़ गया था और लखनौती पहुँच कर विश्वसनीय लोगों को भेज कर उन्हें अपने पास बुलवा लिया। तुर्गा खान उस पर बड़ी कृपा-दृष्टि रखता था और उसे अपार धन सम्पत्ति प्रदान करता था। वह उस स्थान पर दो वर्ष तक रहा।

इन दो वर्षों में सुल्तान अलाउद्दीन ने देश के विभिन्न भागों को विजित कर लिया। ख्वाजा मुअज्जम मुहज्जब की हत्या के उपरान्त विजारत का पद सद्रुलमुल्क नजमुद्दीन अबूबक्र को दिया गया, उलुग खाँ मुअज्जम राज्य का अमीर हाजिब नियुक्त हुआ और हाँसी की अक्ता उसे मिली। इस बीच में उसने अनेक धर्म-युद्ध किये।

इज्जुद्दीन तुर्गा खाँ ने कड़े से लखनौती पहुँच कर, शर्फुलमुल्क अशअरी को सुल्तान अलाउद्दीन की सेवा में भेजा। सुल्तान ने अवध के काजी जलालुद्दीन काशानी को अपनी ओर से खिलअत तथा लाल चत्र देकर लखनौती भेजा। रविवार ११ रबी-उल-आखिर ६४१ हि० (२८ सितम्बर, १२४३ ई०) को राजदूत लखनौती पहुँचे। मलिक तुर्गा खाँ को खिलअत द्वारा सम्मानित किया गया।

सुल्तान अलाउद्दीन ने सबसे अधिक प्रशसनीय कार्य यह किया कि उसने मलिकों तथा अमीरों के परामर्श से अपने दोनों चाचाओं को बन्दीगृह से ईदुज्जुहा के दिन मुक्त कर दिया। मलिक जलालुद्दीन को कन्नौज प्रदेश प्रदान किया। सुल्तान नासिरुद्दीन को बहराइच प्रदेश प्रदान किया। इनमें से प्रत्येक ने धर्म-युद्ध तथा नाना प्रकार के उत्कृष्ट कार्य किये।

(२००) शव्वाल ६४२ हि० (मार्च १२४५ ई०) में जाजनगर के काफिरों ने लखनौती के द्वार पर चढ़ाई की। जीकाद की पहली तारीख (३१ मार्च) को तिमुर खाँ कीरान सेना तथा अमीरों के साथ सुल्तान अलाउद्दीन के आदेशानुसार लखनौती पहुँचा, किन्तु उसमें तथा तुर्गा खाँ में मत-भेद हो गया। उसी वर्ष बुधवार ३ जीकाद (२ अप्रैल) को सन्धि हो गई। लखनौती मलिक कीरान को प्राप्त हो गई। तुर्गा खाँ ने देहली की ओर प्रस्थान किया।

लेखक सोमवार १४ सफर, ६४३ हि० (११ जुलाई, १२४५ ई०) में देहली पहुँचा और दरबार में उपस्थित हुआ। बृहस्पतिवार १७ सफर (१४ जुलाई) को उलुग खानें मुअज्जम की सिफारिश से नासिरिया मदरसे तथा उससे सम्बन्धित वक्फ[1] का प्रबन्ध, ग्वालियर की कजा तथा जामे मस्जिद में तज्कीर करने का पद उसे प्रदान हुआ और उसे घोड़ा तथा खिलअत भी मिले। इससे पूर्व उसकी श्रेणी के लोगों को यह चीजें कभी न मिली थी।

रजब मास (नवम्बर-दिसम्बर) में ऊपर (उत्तर) की ओर से यह सूचना मिली कि दुष्ट मुगलों ने आक्रमण कर दिया है और उच्च की ओर पहुँच गये हैं। उनका नेता दुष्ट मगूता[2] था। सुल्तान अलाउद्दीन ने मुगलों की सेना को भगाने के लिये इस्लामी सेनायें चारों ओर से एकत्रित की। जब वह ब्याह नदी के तट पर पहुँचा तो काफिर उच्च से भाग गये और सुल्तान की विजय हो गई। लेखक मुल्तान के साथ था। उस यात्रा में सभी बुद्धिमान तथा समझदार लोग यह कहते थे, कि इस प्रकार की सेना पिछले वर्षों में कभी एकत्रित न हुई थी। जब इस्लामी सेना की अधिकता तथा तैयारी की सूचना काफिरों को प्राप्त हुई, तो वे घबरा कर खुरासान की ओर लौट गये।

१—धार्मिक कार्यों के लिये जो धन सम्पत्ति अथवा भूमि पृथक् कर दी जाती है, उसे वक्फ़ कहते हैं।
२—यह मगूता नहीं, मंगूता चंगेज के पुत्र तूली का पुत्र था। मँगूता चंगेज का एक विश्वासपात्र था।

(२०१) सेना के कुछ अयोग्य लोग गुप्त रूप से सुल्तान अलाउद्दीन के विश्वासपात्र हो गये थे और उससे अनुचित कार्य कराया करते थे। उसने मलिकों की हत्या तथा बन्दी बनाने के विषय में सोचना प्रारम्भ कर दिया और कुछ इसका पक्का इरादा कर लिया। उसके स्वाभाविक गुण उत्कृष्ट मार्ग से हट गये। वह खुल्लम खुल्ला भोग विलास तथा शिकार में तल्लीन रहने लगा, यहाँ तक कि उसके राज्य में उपद्रव होने लगा, राज्य व्यवस्था में विघ्न पड़ने लगा। मलिकों तथा अमीरों ने सहमत हो कर सुल्तान नासिरुद्दीन की सेवा में गुप्त रूप से पत्र भेजे और अपने शुभ लश्कर के साथ दर्शन देने की प्रार्थना की। इसका उल्लेख बाद में होगा। रविवार २३ मुहर्रम ६४४ हि० (१० जून, १२४६ ई०) में सुल्तान अलाउद्दीन बन्दी बना लिया गया और उसी कैद में उसकी मृत्यु हो गई। उसने ४ साल और १ महीने राज्य किया। ईश्वर बादशाह (सुल्तान नासिरुद्दीन) को वर्षों तक राज सिंहासन पर आरूढ रखे।

---

(७) अस्सुल्तानुल मुअ़ज्ज़म नासिरुद्दुनियाँ वद्दीन महमूद बिन (पुत्र) अस्सुल्तान

(२०२) सुल्ताने मुअज्ज़म नासिरुद्दुनियाँ वद्दीन महमूद बिन अस्सुल्तान कसीमे अमीरुल मोमिनीन का जन्म, मलिक नासिरुद्दुनियाँ वद्दीन महमूद की मृत्यु के उपरान्त, सुल्तान शहीद शम्सुद्दुनियाँ की राजधानी में हुआ। सुल्तान ने उसे अपने ज्येष्ठ पुत्र का नाम तथा पदवी प्रदान की। उसने उसकी माता को लूनी कस्बे के महल में भेज दिया, जिससे उसका पालन-पोषण वहीं हो। उसके दूध पिलाने वालियों ने उसका पालन-पोषण इस प्रकार किया कि उसमें अनेक उत्कृष्ट गुण उत्पन्न हो गये थे। उसके कार्य तथा गुणों द्वारा राज्य को सम्मान तथा दृढ़ता प्राप्त हुई। जो बातें बड़े-बड़े बादशाहों को वृद्धावस्था एवं बड़े अनुभव के पश्चात् प्राप्त होती हैं, वे भाग्यवश प्रारम्भ ही से, अपितु उससे अधिक उसमें वर्त्तमान थीं। इस तुच्छ शुभ-चिन्तक ने उसके विषय में कुछ गद्य तथा पद्य की रचनायें की हैं जिनका उल्लेख निम्नांकित है.[1]

---

१ पृष्ठ २०२ से २०५ तक मिनहाज ने सुल्तान नासिरुद्दीन की प्रशंसा में एक कविता लिखी है। इसमें कोई विशेष बात नहीं है अतः उसे छोड़ दिया गया।

सुल्तानुल मुअज़्ज़म नासिरुद्दुनियाँ वद्दीन महमूद बिन (पुत्र) अस्सुल्तान यमीने ख़लीफ़तुल्लाह नासिरे अमीरुल मोमिनीन

मलिक तथा सम्बन्धी

(२०६) मलिक रुक्नुद्दीन फीरोजशाह, मलिक शिहाबुद्दीन महमूदशाह, मलिक ताजुद्दीन, मलिक मुइज्जुद्दीन बहरामशाह।

अल मलिकुल कबीरुल मुअज्जम कुतुबुद्दीन हुसैन बिन अली गोरी, मलिकुल कबीर इज्जुद्दीन तुगरा तुगान खाँ मलिक लखनौती, मलिकुल कबीर इज्जुद्दीन मुहम्मद सालारी महली, मलिकुल कबीर तमर खाँ कीरान मलिक अवध तथा लखनौती, मलिकुल कबीर इज्जुद्दीन किशलू खाँ मलिकुस्सिन्ध बलहिन्द, मलिकुल कबीर बालिश खाँ मलिक लाहौर, मलिकुल कबीर अलखानुल मुअज्जम बहाउलहक वद्दीन बलबन उलुग खाँ, मलिकुल कबीर सैफुद्दीन ऐबक मुबारक बारबक किशलू खाँ, मलिकुल कबीर ताजुद्दीन सन्जर शेर खा मलिक अवध, अलमलिकुल कबीर जलालुद्दीन खल्ज खाँ मलिक खानी मलिक लखनौती व कडा, मलिक नुसरतुद्दीन शेर खाँ मलिकुस्सिन्ध वलहिन्द, मलिकुल कबीर सन्जान ऐबक ख़िताई मलिक कुहराम, मलिक इख्तियारुद्दीन दुखान तुकतिरमु, मलिकुल कबीर नुसरतुद्दीन अरसलान खाँ सन्जर चुस्त, मलिकुल कबीर सैफुद्दीन बल्का खाँ साकी, मलिकुल कबीर तमर खाँ सुन्कर अजमी मलिक कुहराम, अलमलिकुल कबीर नसीरुद्दीन मुहम्मद तुगरा अलप खाँ।

पताकायें

(२०७) दाहिनी ओर काले बाईं ओर लाल

राजकीय मुद्रा का आदर्श वाक्य

ऐश्वर्य केवल भगवान् के लिए है।

राज्य की अवधि

२२ वर्ष

भगवान् ने उसे अनेक गुण प्रदान किये थे। वह बडा ही दानी था और आलिमो तथा सूफियो का भक्त था। उसमें दान पुण्य, वीरता, योग्यता न्याय तथा अन्य गुण जो बादशाह के लिए आवश्यक हैं वर्तमान[1] थे।

(२०८) वह ६४४ हि० (१२४६ ई०) के प्रारम्भ म राज सिंहासन पर आरूढ हुआ। उसे राज्य करते हुये १५ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। प्रत्येक वर्ष का हाल पृथक्-पृथक् लिखा जाता है जिससे पाठक-गणो को सुविधा हो।

पहला वर्ष ६४४ हिजरी (१२४६-४७ ई०)

सुल्ताने मुअज्जम नासिरुद्दुनियाँ वद्दीन महमूदशाह एक शुभ नक्षत्र में रविवार २३

१ पृ० २०७ में सुल्तान के सम्बन्ध में सम्मान-सूचक शब्दों का प्रयोग है। इन शब्दों का अनुवाद नहीं किया गया है।

मुहर्रम ६४४ हि० (१० जून, १२४६ ई०) को देहली में कसरे सब्ज में राज सिंहासन पर विराजमान हुआ। मलिको, अमीरों, सद्रो, गण्यमान्य व्यक्तियो, सैयिदो तथा आलिमो ने दरबार में पहुँच कर दस्तबोस[1] करते हुये इस शहशाह को बधाई दी। प्रत्येक ने बधाई के दरबार मे अपनी श्रेणी के अनुसार उपहार भेंट किये। मगलवार २५ मुहर्रम (१२ जून) को सुल्तान के राज-भवन तथा कूशके फीरोजी मे दरबारे आम हुआ। राज्य की समस्त प्रजा ने इस गुणवान तथा दानी बादशाह की बैअत की। सभी लोग इस वश की उन्नति से प्रसन्न थे। हिन्दुस्तान के विभिन्न प्रदेशो के लोग भी इसी प्रकार प्रसन्न थे। भगवान् उसके राज्य को बहुत दिनो तक स्थापित रखे।

जब सुल्तान नासिरुद्दीन देहली से बहराइच की ओर चला गया था तो उसकी माता मलिकये जहाँ जलालुद्दुनिया वद्दीन भी उसके साथ चली गई थी। उसने उन प्रदेशो तथा पर्वतो में अनेक धर्म-युद्ध किये और बहराइच प्रदेश को उसके शुभ चरणो द्वारा विशेष सम्मान प्राप्त हुआ।

(२०९) जब उन धर्म-युद्धो तथा उन्नति की सूचना हिन्दुस्तान के विभिन्न भागो में फैल गई तो राज्य के जो मलिक तथा अमीर सुल्तान अलाउद्दीन से भयभीत रहते थे उन्होंने गुप्त रूप से उसके पास प्रार्थना पत्र भेजे कि वह देहली को अपने पवित्र चरणो द्वारा सम्मानित करे। उसकी माता मलिकये जहाँ ने उसके प्रस्थान करने के समय यह प्रसिद्ध कर दिया कि उसका पुत्र अपने रोगो की चिकित्सा के लिये देहली जा रहा है। उसने सुल्तान को पालकी मे बैठा कर सवारो, प्यादो की एक बहुत बड़ी सख्या के साथ देहली की ओर कूच किया। रात्रि में वे सुल्तान का शुभ मुख परदे में छिपाकर घोड़े पर सवार करके यात्रा करते थे। इस प्रकार वे शीघ्रातिशीघ्र देहली के निकट पहुँच गये। इस बादशाह की शुभ सवारी के पहुँचने की सूचना उस समय तक, जब तक कि वह राज सिंहासन पर विराजमान न हुआ, किसी को न थी।

रजब ६४४ हि० (नवम्बर १२४६ ई०) में वह अपनी मगल-सूचक पताकाओ के साथ सेना लेकर सिन्ध नदी तथा मुल्तान की ओर एवं चीन के काफिरो[2] के विनाश के लिये रवाना हुआ। रविवार पहली जीकाद ६४४ हि० (१० मार्च, १२४७ ई०) को उसने लाहौर नदी (रावी नदी) पार की और इस्लामी सेना को आदेश दिया कि जूद पर्वत के प्रदेशो तथा नन्दना को विध्वस करदें। उलुग खाँने आजम उस समय अमीर हाजिब था। वह सेना लेकर उस ओर भेजा गया। सुल्तान सामान तथा हाथियो के साथ सुधारा (चिनाब) नदी के तट पर ठहरा रहा। उलुग खाँने आजम ने भगवान् की कृपा से जूद पर्वत को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया, और झेलम के खुक्खरो तथा विद्रोही काफिरो को नरक भेजा। वहाँ के निवासियो को सिन्धु नदी की ओर भगा कर उस प्रदेश का विनाश किया।

(२१०) तत्पश्चात् वह वहाँ से वापस हुआ क्योंकि सेना की आवश्यकता की सामग्री तथा घोडो के लिये चारे, दाने की कमी हो गई थी। इस प्रकार विजय प्राप्त करके वह सुल्तान के शिविर को वापस लौटा। उसी वर्ष बृहस्पतिवार ५ जीकाद (१४ मार्च) को सूधारा (चिनाब) नदी से शुभ पताकायें देहली की ओर वापस हो गईं। ईदुज्जुहा की नमाज जालन्धर में पढी गई। वहाँ से वे देहली की ओर चल खड़े हुये। ईदुज्जुहा के दिन लेखक मिनहाज सिराज का जुब्बा, पगड़ी तथा घोडा (बादशाहो के योग्य जीन तथा लगाम के साथ) प्रदान किया गया।

दूसरा वर्ष ६४५ हि० (१२४७–४८ ई०)

बृहस्पतिवार दूसरी मुहर्रम ६४५ हि० (१९ मई, १२४७ ई०) को सुल्तान देहली

१ हाथ चूमना।
२ मुग़ला।

पहुँचा। ६ मास तक वर्षा की अधिकता के कारण किसी ओर प्रस्थान न किया। जमादी-उल-आख़िर मास (अक्तूबर) में शाही डेरे पानीपत में लगाये गये। शाबान (दिसम्बर) में वापस होकर शाही पताकायें हिन्दुस्तान की ओर रवाना हुई। कन्नौज की हद में तिलसन्दा[1] नामक एक मज़बूत क़िला था, जोकि सिकन्दर की दीवार की भाँति दृढ था। काफ़िर हिन्दू उसी क़िले में रक्षा के लिये चले गये और उन्होंने अपने प्राणों से हाथ धो लिये। दो दिन तक इस्लामी सेना ने उसी स्थान पर युद्ध किया, और अन्त में उन विरोधियों को नरक भेज दिया तथा उस स्थान को जीत लिया।

(२११) इस युद्ध के विषय में लेखक ने ५ या ६ पन्नों में एक कविता लिखी और इस यात्रा में जिस प्रकार धर्म-युद्ध हुए और उलुग ख़ाने मुअज़्ज़म को विद्रोही काफ़िरो के विरुद्ध तथा किलो पर विजय प्राप्त करने एवं धन सम्पत्ति पर अधिकार जमाने और दलकीओ मलकी[2] को पराजित करने में जो सफलता प्राप्त हुई उसका उल्लेख पूर्णतया उसी कविता में किया गया है।

उसका नाम सुल्तान के शुभ नाम पर नासिरी-नामा रखा है। सुल्तान ने इसके बदले में स्थायी रूप से कुछ भूमि प्रदान की जिसका लाभ प्रत्येक वर्ष मुझे प्राप्त होता रहेगा। उलुग ख़ाने आज़म ने भी हाँसी प्रदेश में मुझे इसके बदले में एक गाँव इनाम[3] में दिया। भगवान् दोनो को सुल्तानी तथा नायबी के सिंहासन पर विराजमान रखे।

बृहस्पतिवार २४ शव्वाल सन् ६४५ हि० (२१ फरवरी, १२४८ ई०) को वह किला भीषण युद्ध के उपरान्त अधिकृत हुआ। तत्पश्चात् सोमवार १२ ज़ीक़ाद ६४५ हि० (६ मार्च, १२४८ ई०) में सुल्तान कड़ा पहुँचा। इससे तीन दिन पूर्व उलुग ख़ाने आज़म की अधीनता में समस्त मलिको, अमीरो तथा सेना को युद्ध करने के लिए भेजा जा चुका था। उस शेर दिल ख़ान ने, जोकि युद्ध में रुस्तम तथा सुहराब की भाँति था और जिसका शरीर हाथी के समान था, ऐसी वीरता दिखाई कि उसकी प्रशंसा सम्भव नहीं। उसके द्वारा किलो पर अधिकार जमाने, जंगलो को काटकर मार्ग बनाने, विरोधी काफ़िरो का वध करने, रायो तथा राणाओ के बन्दी बनाये जाने का समस्त वर्णन लेख-बद्ध करना सम्भव नहीं। इसमें से कुछ नासिरी-नामे में कविता के रूप में लिख दिया गया है।

(२१२) उस प्रदेश तथा पर्वत में एक राना दलकीओ मलकी नाम का था। उसके पास युद्ध करने वालो की बहुत बड़ी संख्या थी। उसकी धन सम्पत्ति की कोई सीमा न थी, अनेक दृढ स्थान तथा दर्रे आदि उसके राज्य में थे। उलुग ख़ाँ ने सब को विध्वंस कर दिया और उस

१ होदीवाला का विचार है कि यह कानपुर के निकट एक ग्राम है। (पृ० २२२)

२ इस नाम का अभी तक निश्चय रूप से कोई पता नहीं चल सका है। टामस का विचार है कि यह त्रलोक्यमल्ला का बिगड़ा हुआ रूप है। इस नाम का एक चन्देल राजा परमर्दी अथवा परिमल था जिससे ऐबक ने कालिंजर प्राप्त किया था। वह उसका उत्तराधिकारी था। (Chronicles of the Pathan Kings of Delhi, Edward Thomas पृ० ६५-६६)। विंसेंट स्मिथ ने इसके विरुद्ध यह लिखा है कि दलकी तथा मलकी मार राजा दल व बल थे। जो निलोकी बिलोकी कहलाये हैं। (Journal Asiatic Society Bengal 1881, P. P. 35, 38) सर वूल्ज़ले हेग का विचार है कि वह महलकी का राना धलकी था। (Cambridge History of India, III PP.67) इतना तो निश्चय ही है कि दलकीओ मलकी एक ही राजा का नाम है जिसने उस क्षेत्र में दृढ राज्य स्थापित कर लिया था। (देखो होदीवाला पृ० २२२-२३) इस राजा का स्थान इलाहाबाद के पास का फ़तहपुर ज़िला भी कहा जा सकता है।

३ जो भूमि विद्वानों तथा धार्मिक लोगों को दी जाती थी, उसे इनाम तथा मिल्क कहते थे। इसका अक़्ता से कोई सम्बन्ध नहीं। वह पाने वाले के अधिकार में वंशानुगत रहती थी।

दुष्ट के सहायकों तथा उसके परिवार को बन्दी बना लिया। अनन्त धन उसे प्राप्त हुआ। केवल १५ सौ घोड़े ही इस्लामी सेना के हाथ पड़े। इससे शेष धन सम्पत्ति का अनुमान किया जा सकता है।

(२१२) जब वह दरबार में उपस्थित हुआ तो सभी ने इस विजय की खुशियाँ मनाईं। शाही झण्डे बृहस्पतिवार ११ जीकाद ६४५ हि० (८ मार्च १२४८ ई०) को वहाँ से वापस हुए।

इस यात्रा में मलिक जलालुद्दीन मसूदशाह, जोकि कन्नौज का मुक्ता तथा सुलतान का भाई था, दरबार में उपस्थित हुआ। सुल्तान ने उसे दस्तबोस[1] करने की आज्ञा देकर सम्मानित किया। तत्पश्चात् वह वापस हो गया और इस्लामी सेना देहली पहुँच गई।

तीसरा साल ६४६ हिजरी (१२४८-४९ ई०)

बुधवार २४ मुहर्रम ६४६ हि० (१९ मई, १२४८ ई०) को सुल्तान इस यात्रा मे लौट कर देहली पहुँचा। शहर सजाया गया और सुल्तान ने राज सिंहासन को बड़े वैभव से सम्मानित किया। मलिक जलालुद्दीन को, जोकि मार्ग में सुल्तान की सेवा मे उपस्थित हुआ था, सम्भल तथा बदायूं की अक्ता प्रदान की गई। इसी बीच में वह भयभीत होकर सम्भल तथा बदायूं से देहली पहुँचा। सुल्तान ७ मास तक देहली रुका। ६ शाबान (२४ नवम्बर, १२४८ ई०) को शाही पताकायें देहली के बाहर निकली और आसपास के स्थानों, पहाड़ों तथा मैदानों में धर्म-युद्ध का आदेश प्रदान हुआ। अमीरों को भिन्न भिन्न प्रदेशों म भेज कर वह स्वय देहली लौट आया। इस यात्रा मे सुल्तान अधिक दूर न गया और बुधवार ९ जीकाद (२३ फरवरी) को देहली पहुँच गया।

(२१३) इस्लामी सेनायें रणथम्भोर के राना की पहाड़ी की ओर रवाना हुई। इस युद्ध के अवसर पर दो घटनायें घटीं। प्रथम यह कि काजी एमादुद्दीन शकूर कानी पर आरोप लगाया गया और शुक्रवार ९ जिलहिज्जा (२५ मार्च) को कसरे सफेद म उसे काजा के पद से पृथक् कर दिया गया और शहर से बदायूँ की ओर भेज दिया गया। सोमवार १२ जिलहिज्जा (२८ मार्च) को एमादुद्दीन रैहान के प्रयास से उसकी हत्या करदी गई। दूसरे यह कि मलिक बहाउद्दीन ऐबक ख्वाजा की रणथम्भोर के किले के निकट रविवार ११ जिलहिज्जा (२७ मार्च) को काफिर हिन्दुओं द्वारा शहादत हो गई।

चौथा वर्ष ६४७ हि० (१२४९-५० ई०)

सोमवार ३ सफर ६४७ हि० (१८ अप्रैल, १२४९ ई०) को उलुग खाने आजम इस्लामी सेना तथा शाही झंडों के साथ शुभ घड़ी मे लौटा। क्योकि वह राज्य का सहायक था, अत समस्त मलिकों तथा गण्यमान्य व्यक्तियों के परामर्श से उसकी पुत्री मलिकये जहाँ बनाई गई।[2] यह विवाह सोमवार २० रबी-उल आखिर ६४७ हि० (२ अगस्त, १२४९ ई०) में हुआ। भगवान् मुहम्मद साहब के धर्म के इन तीनों सहायकों का राज्य एव अधिकार सुरक्षित रखे।

इसी वर्ष सोमवार १० जमादी उल-आखिर (२० सितम्बर, १२४९ ई०) में काजी जलालुद्दीन काशानी अवध से देहली आया और काजिये ममालिक (राज्य का काजी) नियुक्त किया गया। इसी वर्ष सोमवार २२ शाबान (३० नवम्बर) को शाही झंडे देहली से रवाना हुये और रविवार ४ शव्वाल (१० जनवरी, १२५० ई०) को हिन्दुओं से धर्म-युद्ध करने के लिये रवाना हुये।

---

१ दरबार में साधारणतया उपस्थित होने वाले लोग धर्ती चुम्बन (जमीनबोस) करते थे। किन्तु धार्मिक लोगों अथवा बहुत ही प्रतिष्ठित अमीरों एव शाहजादों आदि को हाथ चूमने (दस्तबोस) की आज्ञा मिल जाती थी।

२ उलग खाँ की पुत्री का विवाह सुल्तान से हुआ।

(२१४) खुरासान से इस तुच्छ की बहिन के पत्र प्राप्त हुये। उन पत्रों को सुल्तान की सेवा में (प्रस्तुत) किया गया। सुल्तान ने उलुग खाने मुअज्जम की सिफारिश से १०० दास तथा १०० खरवार[१] इनाम में प्रदान किये। शुभ पताकायें बुधवार २४ जिलहिज्जा (३० मार्च, १२५० ई०) को देहली वापस आई। सोमवार २६ जिलहिज्जा (४ अप्रैल) को इस सेवक ने गुलामों को देहली से खुरासान भेजने के लिये मुल्तान की ओर प्रस्थान किया। हाँसी पहुँचने पर खाने मुअज्जम तथा खाकाने आजम के प्रदान किये हुये गाँव पर अधिकार प्राप्त किया और उसके उपरान्त अबूहर के मार्ग से मुल्तान की ओर रवाना हुआ।

पाँचवां वर्ष ६४८ हि० (१२५०-५१ ई०)

सिन्धु नदी के तट पर रविवार ११ सफर ६४८ हि० (१५ मई, १२५० ई०) को लेखक की शेर खाँ से भेंट हुई। वहाँ से वह मुल्तान की ओर आया। बुधवार ६ रबी-उल-अव्वल ६४८ हि० (८ जून, १२५० ई०) को वह मुल्तान पहुँचा। मलिक इज्जुद्दीन बल्बने किशलू खाँ उसी दिन उच्च से मुल्तान पर अधिकार जमाने के लिये पहुँचा। लेखक की उससे भेंट हुई। वह २६ रबी-उल-आखिर (२८ जुलाई) तक वहीं रहा। मुल्तान पर, जोकि शेर खाँ के एक दास के अधीन था, विजय प्राप्त न हो सकी। लेखक देहली लौट आया। मलिक इज्जुद्दीन बल्बने (किशलू) उच्च की ओर वापस हो गया। लेखक महत[२] तथा सरसुती और हाँसी होता हुआ २२ जमादी-उल अव्वल ६४८ हि० (२२ अगस्त, १२५० ई०) को देहली पहुँच गया।

(२१५) उसी वर्ष शव्वाल (दिसम्बर-जनवरी) में कुत्लियारुद्दीन गुरदेज[३] ने अनेक काफिर मुगलों को बन्दी बना कर देहली भेज दिया। शहर देहली नासिरी विजय के फलस्वरूप सजाया गया। इसी वर्ष शुक्रवार १७ जीकाद (१० फरवरी, १२५१ ई०) को काजी जलालुद्दीन काशानी की मृत्यु हो गई।

छठा वर्ष ६४९ हि० (१२५१-५२ ई०)

मलिक इज्जुद्दीन बल्बने किशलू खाँ के नागौर में विद्रोह कर देने के फलस्वरूप इस वर्ष शाही पताकाओं को नागौर की ओर जाना पड़ा, किन्तु इज्जुद्दीन सुल्तान की सेवा में उपस्थित हो गया और शाही पताकायें वापस आ गई। इसके उपरान्त शेर खाँ ने मुल्तान से उच्च पर चढ़ाई की। मलिक इज्जुद्दीन बल्बन नागौर से उच्च पहुँचा और शेर खाँ की सेवा में उपस्थित हुआ। उसे उच्च शेर खाँ को प्रदान कर देना पड़ा। वहाँ से वह सुल्तान के दरबार की ओर रवाना हो गया। रविवार १७ रबी-उल-आखिर ६४९ हि० (१० जुलाई, १२५१ ई०) को वह दरबार में आया, और बदायूँ की अक्ता उसे दे दी गई।

इसी वर्ष रविवार १० जमादी-उल-अव्वल ६४९ हि० (३१ जुलाई, १२५१ ई०) को राज्य तथा देहली की कज़ा का पद मिनहाज सिराज को मिला। मंगलवार २५ शाबान ६४९ हि० (१२ नवम्बर, १२५१ ई०) को शाही पताकायें ग्वालियर, चन्देरी, नुरूल[४] तथा मालवा की ओर रवाना हुई, वे मालवा तक पहुँच गई। जाहरा आजार[५] उस प्रदेश का सबसे बड़ा राजा था।

---

१ गधों पर लदा हुआ सामान।

२ भावलपुर नगर के ६० मील पूर्व।

३ पुस्तक में गुरेज है।

४ पुस्तक में नुरवाल है।

५ तबकात नासिरी में राय जाहर अजार है (पृ० ७१६)। राजा का नाम चाहड़ था। मिनहाज ने पृ० २६६ में 'जाहिर अजारी' लिखा है। एक स्थान पर राना अजारी और फिर अजारी का हिन्दू लिखा है (पृ० २६७) इस प्रकार अजार स्थान का नाम था। अरजार, झाँसी के दक्षिण-पूर्व एक स्थान है। (देखो होदीवाला पृ० २२४ २५)।

(२१६) उसके पास ५ हजार सवार तथा २ लाख प्यादे थे। वह पराजित हुआ। जो बड़े-बड़े किले उसने बनवाये थे वे जीत लिये गये और विध्वंस कर दिये गये। उलुग खाँने मुअज्जम ने इस यात्रा में बड़ी वीरता का प्रदर्शन किया। इस्लामी सेना को अत्यधिक धन सम्पत्ति प्राप्त हुई।

सातवाँ वर्ष ६५० हि० (१२५२-५३ ई०)

शाही पताकायें सोमवार २३ रबी-उल अव्वल ६५० हि० (३ जून, १२५२ ई०) को देहली पहुँची। इसके उपरान्त सुल्तान सात मास तक बड़े वैभव से राज्य करता रहा। इस काल में उसने अनेक उत्कृष्ट गुणों तथा न्याय का प्रदर्शन किया।

सोमवार २२ शव्वाल (२६ दिसम्बर, १२५२ ई०) को शाही पताकायें लाहौर की ओर उच्च तथा मुल्तान पर आक्रमण करने के लिये रवाना हुई। लेखक सुल्तान को विदा करने के लिये कैथल तक गया। उसे खिलअत एवं जीन तथा लगाम सहित घोड़ा प्राप्त हुए। इस आक्रमण में समस्त आसपास के खान, मलिक तथा अमीर शाही झंडे के नीचे एकत्र हुए। ब्याने से कुतलुग खाँ और बदायूँ से इज्जुद्दीन किशलू खाँ शुभ पताकाओं के साथ ब्याह नदी के तट पर पहुँचे। एमादुद्दीन रैहान ने छल से सुल्तान और उलुग खाने आजम में परस्पर विरोधी भावनायें उत्पन्न करवा दीं।

आठवाँ वर्ष ६५१ हि० (१२५३-५४ ई०)

(२१७) नये वर्ष में मंगलवार पहली मुहर्रम ६५१ हि० (३ मार्च, १२५३ ई०) को उलुग खाँ को आदेश प्राप्त हुआ कि वह अपनी अक्ता की ओर सिवालिक तथा हाँसी चला जाय। रोहतक से खाने मुअज्जम आदेशानुसार हाँसी की ओर चला गया। इसी वर्ष रबी उल-अव्वल (मई) के प्रारम्भ में शाही झंडे देहली पहुँचे। प्रतिष्ठित व्यक्तियों के स्वभाव तथा पदों में बड़ा परिवर्तन हुआ। जमादी-उल-अव्वल (जून-जुलाई) को विजारत का पद ऐनुलमुल्क मुहम्मद निजाम जुनैदी को दिया गया। खाने मुअज्जम के भाई मलिक किशली खाँ अमीर हाजिब उलुगे बारबक को कड़े की अक्ता प्रदान की गई और उसे उस ओर भेज दिया गया। उसी वर्ष जमादी-उल-अव्वल (जून-जुलाई) में एमादुद्दीन रैहान वकीलदर[1] नियुक्त हुआ। शाही झण्डे खाने मुअज्जम उलुग खाँ को पदच्युत करने के लिये देहली से हाँसी की ओर रवाना हुये। एमादुद्दीन रैहान ने काजी शम्सुद्दीन बहराइची को राजधानी में बुलवाया और २७ रजब ६५१ हि० (२२ सितम्बर, १२५३ ई०) में उसे राज्य का काजी बना दिया गया। खाने मुअज्जम हाँसी से नागौर की ओर चला गया और हाँसी की अक्ता और अमीर हाजिबी का पद शाहजादा रुक्नुद्दीन को दे दिया गया। शाही पताकायें शाबान मास (सितम्बर-अक्तूबर) में देहली वापस हो गई और शव्वाल के आरम्भ में उसी वर्ष उच्च, मुल्तान तथा तबरहिन्दा की विजय के लिये रवाना हुई। जब वे ब्याह नदी के निकट पहुँची तो एक सेना तबरहिन्दा की ओर भेजी गई। इसके पूर्व शेर खाँ सिन्धु नदी के तट पर काफिरों से युद्ध करने में असमर्थ रहा था और तुर्किस्तान की ओर चला गया था।

(२१८) उच्च मुल्तान, तथा तबरहिन्दा उसके सम्बन्धियों के अधिकार में आ गये थे। सोमवार २६ जिलहिज्जा ६५१ हि० (१६ फरवरी, १२५४ ई०) को इन स्थानों पर सुल्तान का

१ सुल्तान की व्यक्तिगत सेवा से सम्बन्धित कर्मचारियों का अधिकारी वकीलदर होता था। वह बड़ा ही अधिकार-सम्पन्न होता था। वह राज भवन के समस्त कर्मचारियों की देखभाल करता था। सुल्तान के चत्र भी उसी की देखरेख में रहते थे।

अधिकार स्थापित हो गया और इन्हें इरसलान खाँ सन्जर चुस्त को प्रदान कर दिया गया। शाही पताकायें ब्याह् नदी से लौट आई।

नवाँ वर्ष ६५२ हि० (१२५४-५५)

नये वर्ष में ६५२ हि० (१२५४ ई०) में हरिद्वार तथा बिजनौर[1] के पर्वतों के दामन (आचल) में विशेष विजय तथा धन सम्पत्ति प्राप्त हुई। सेना ने प्रस्थान करने के लिए यमुना नदी पार की थी। बृहस्पतिवार १३ मुहर्रम ६५२ हि० (५ मार्च, १२५४ ई०) को सुल्तान ने मयापुर[2] के स्थान पर गगा नदी पार की और इसी प्रकार पर्वतों के दामन में होते हुये सेना रहब नदी के तट पर पहुँच गई। उन युद्धों के समय रविवार १५ सफर (६ अप्रैल, १२५४ ई०) को मलिक रजीउलमुल्क इज्जुद्दीन दुर्मशी तवरनाबानी के स्थान पर मारा गया। सोमवार १६ सफर (७ अप्रैल) को सुल्तान ने इस दुष्कर्म का बदला लेने के लिये कटिहर[3] के काफिरों को ऐसे कठोर दड दिए कि वे उसे आजीवन याद रखेंगे। वहाँ से वह बदायू की ओर गया। १६ सफर (१० अप्रैल) को बडे वैभव से बदायू शाही चत्र तथा झडों से सुशोभित हुआ। वहाँ ६ दिन तक ठहरा। इसके पश्चात् राजधानी को लौटने का निश्चय किया। रविवार ६ रबी-उल-अव्वल (२६ अप्रैल, १२५४ ई०) को राज्य की विजारत का पद सद्रुलमुल्क नज्मुद्दीन अबूबक्र को दुबारा प्राप्त हुआ। रविवार २० रबी-उल-अव्वल ६५२ हि० (१६ मई,१२५४ ई०) को कोल (अलीगढ़) के मुकाम पर सुल्तान ने लेखक को सद्रे जहाँ की पदवी तथा खिलअत से सुशोभित किया।

(२१६) मगलवार २६ रबी-उल-अव्वल (१६ मई) को सुल्तान देहली पहुचा और पाँच मास तक शहर देहली में ठहरा। इस बीच में यह सूचना मिली कि बहुत से मलिक जलालुद्दीन से मिल गये हैं और वे एक जगह एकत्र हो गये हैं अर्थात् विद्रोह करना चाहते हैं। शाही झण्डे शाबान (सितम्बर अक्तूबर) में सुनाम तथा तबरहिन्दा की ओर रवाना हुये। ईदुलफित्र सुनाम में हुई। इरसलान खाँ तबरहिन्दा सजान ऐबक, खताई उलुग खाने आजम तथा अन्य मलिक, जलालुद्दीन के साथ नागौर से तबरहिन्दा के निकट पहुँच गये थे। शाही झण्डे सुनाम से हाँसी लौट आये। जब सब मलिक, कुहराम तथा कैथल की ओर रवाना हुये तो सुल्तान हाँसी स उसी ओर चल पडा। अमीरों ने दोनो के बीच सन्धि के विषय में वार्ता करनी प्रारम्भ करदी। एमादुद्दीन रैहान दोनो ही ओर से झगडे की जड बना हुआ था। बृहस्पतिवार २२ शव्वाल (५ दिसम्बर, १२५४ ई०) को उसी वर्ष सुल्तान ने एमादुद्दीन रैहान को बदायू की ओर चले जाने का आदेश दिया। वह विलायत (प्रदेश) उसको अक्ता के रूप मे प्रदान की गई और इस प्रकार सन्धि हो गई। मगलवार १७ जीकाद (२६ दिसम्बर, १२५४ ई०) को अमीर और मलिक राजभक्ति के विषय में वचन देने तथा शपथ लेने के उपरान्त सुल्तान की सेवा मे उपस्थित हुये। मलिक जलालुद्दीन को लाहौर की अक्ता प्रदान करदी गई। मगलवार ६ जिलहिज्जा (१० जनवरी, १२५५ ई०) को एक शुभ नक्षत्र मे सुल्तान तथा सेना देहली पहुँचे।

दसवाँ वर्ष ६५३ हि० (१२५५-५६ ई०)

(२२०) नये वर्ष अर्थात् ६५३ हि० (१२५५ ई०) मे एक विचित्र घटना घटी। वह इस प्रकार थी कि भाग्यचक्र के कारण सुल्तान का हृदय अपनी माता मलिकये जहाँ से फिर गया था। उसका विवाह कुतलुग खाँ से हो गया था। दोनो को अवध की अक्ता

१ पुस्तक में करदार तथा बनोर है। किन्तु हरिद्वार अथवा हरद्वार और बिजनौर उचित है।
२ हरिद्वार के निकट प्राचीनकाल का एक प्रसिद्ध ग्राम।
३ आधुनिक रुहेलखन्ड।

प्रदान कर दी गई और आदेश दिया गया कि वे अपनी अक्ता को चले जायें। आज्ञा के अनुसार वे अपनी अक्ता को चले गये। यह घटना मंगलवार ६ मुहर्रम ६५३ हि० (१५ फरवरी, १२५५ ई०) को हुई। सुल्तान ने रविवार २३ रबी-उल-अव्वल (२ मई, १२५५ ई०) को राज्य तथा देहली की कज़ा का पद लेखक को पहले की भाँति प्रदान किया। रबी-उल-आखिर में मलिक कुतुबुद्दीन हुसैन अली के विषय में कुछ अनुचित बातें सुल्तान के कानों तक पहुँची। वह राज्य का नायब था। मंगलवार २३ रबी उल-आखिर (१ जून, १२५५ ई०) को मलिक कुतुबुद्दीन को पकडवा कर कैद कर लिया गया और वहीं उसका बध कर दिया गया। सोमवार ७ जमादी-उल अव्वल (१४ जून, १२५५ ई०) को मेरठ की अक्ता मलिक किशली खाँ उलुगे आजम बारबक सुल्तानी को प्रदान की गई। वह उस समय कड़े से सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ था। मंगलवार १३ रजब ६५३ हि० (१८ अगस्त १२५५ ई०) को राजधानी की शेखुल[१] इस्लामी का पद शेखुल इस्लाम जमालुद्दीन बिस्तामी को प्रदान किया गया। इसी मास में मलिक ताजुद्दीन सन्जर सिविस्तानी ने अवध से चलकर एमादुद्दीन रैहान को बहराइच से निकाल दिया। इसी बीच मे उसकी मृत्यु भी हो गई। इसी समय शव्वाल मास (नवम्बर) में शाही झण्डे राजधानी से हिन्दुस्तान की ओर रवाना हुये। इसी वर्ष रविवार १७ ज़ीकाद (१८ दिसम्बर) को उलुग खाने मुअज्जम सिवालिक के लावलश्कर के प्रबन्ध के लिये हाँसी की ओर रवाना हुआ। सेना सुव्यवस्थित हो गई। वह राजधानी लौट आया और बुधवार १६ जिलहिज्जा (१६ जनवरी, १२५६ ई०) को शाही सेना के शिविर में पहुँच गया।

(२२१) इससे पूर्व यह आदेश प्रदान किया जा चुका था कि मलिक कुतलुग खाँ अवध से बहराइच की अक्ता में चला जाय। उसने इस आदेश का पालन न किया। मलिक बक्तमूर[२] रुकनी राजधानी से आज्ञा का पालन कराने के लिये नियुक्त हुआ, दोनों सेनाओं का बदायूँ में युद्ध हुआ। बक्तमूर युद्ध में मारा गया। सुल्तान ने स्वयं युद्ध करने के लिये अवध की ओर प्रस्थान किया। जब वह अवध की हद में पहुँचा तो कुतलुग खाँ भाग गया और शाही झण्डे कालियर[३] की ओर रवाना हुये। उलुग खान मुअज्जम ने कुतलुग खाँ का पीछा किया किन्तु उसे पकड न सका। वह बहुत-सा लूट का माल लेकर सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ।

ग्यारहवाँ वर्ष ६५४ हि० (१२५६ ई०)

मुहर्रम ६५४ हि० (फरवरी १२५६ ई०) में भगवान् की दया से विजय पाकर सुल्तान देहली की ओर रवाना हुआ, और मंगलवार ४ रबी-उल आखिर ६५४ हि० (२ मई, १२५६ ई०) को देहली पहुच गया। जब कुतलुग खाँ को यह ज्ञात हुआ कि शाही झण्डे देहली की ओर लौट गये, तो उसने कडा मानिकपुर पर अधिकार जमाना प्रारम्भ कर दिया। उसके तथा इरसलान खाँ सन्जर चुस्त के बीच युद्ध हुआ। इरसलान खाँ को विजय प्राप्त हुई। जब मलिक कुतलुग खाँ को हिन्दुस्तान में कोई आश्रय न मिला तो उसने ऊपर (उत्तर) के मवास[४]

१ शेखुलइस्लाम राज्य के धर्म सम्बन्धी कार्यों की देखरेख रखना था।

२ पुस्तक में केवल बक्तम है।

३ कालियर रुड़की के निकट। कालिंजर जो छपी पोथी में है ठीक नहीं प्रतीत होता।

४ संस्कृत में 'मवास' शरण अथवा रक्षा के स्थान को कहते है। मध्यकालीन फारसी इतिहासों में इस शब्द का अभिप्राय इन्हीं स्थानों से है। मवासात बहुवचन बनाया गया और इतने पुराने मध्यकालीन इतिहासकार द्वारा इस शब्द का इतना अधिक प्रयोग आश्चर्यप्रद अवश्य है। होदीवाला ने अपनी समीक्षा में इस शब्द का सही अर्थ सिद्ध किया है और अनेक उदाहरण दिये हैं। अँगरेज़ी के अनुवादक इसे प्राय स्थान का नाम समझते रहे। इसके संस्कृत रूप की ओर होदीवाला ने भी ध्यान नहीं दिया। (पृ० २२७-२२८)

की ओर प्रस्थान किया और सन्तूर (देहरादून) के ८ मील उत्तर, कुनावर के मार्ग में पहुँचा। उसने वहाँ की जातियो और पहाडियो मे जाकर शरण ली।

(२२२) शाही झण्डे मगलवार २० जिलहिज्जा ६५४ हि० (८ जनवरी, १२५७ ई०) को उस विद्रोह को शान्त करने के लिये देहली से रवाना हुये। ६५५ हि० (१२५७-५८ ई०) के प्रारम्भ में शाही सेना ने सन्तूर की ओर प्रस्थान किया और पहाडी हिन्दुओ तथा इस्लामी सेना के बीच में युद्ध हुआ। कुतलुग खाँ इन्ही लोगो के बीच में था। मुसलमान अमीरो में से कुछ लोग, जिन्हे सुल्तान से किसी प्रकार का भय था, उससे मिल गये, किन्तु वे युद्ध करने मे असमर्थ रहे और पराजित हुये। उलुग खाँने मुअज्जम ने समस्त पहाडी प्रदेशो को विध्वस कर दिया और सिरमूर[1] पहाडी के दर्रों तक पहुँच गया। सिरमूर को, जिस पर किसी बादशाह का अधिकार न होसका था और जहाँ इस्लामी सेना अभी तक न पहुँच सकी थी, नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। धर्म-युद्ध करके इतने अधिक हिन्दुओ की हत्या करदी कि इसका उल्लेख सम्भव नहीं।

बारहवाँ वर्ष ६५५ हि० (१२५७ ई०)

युद्ध से लौटते समय रविवार ६ रबी-उल अव्वल ६५५ हि० (२४ मार्च, १२५७ ई०) को मलिक सनजान ऐबक खिताई घोडे से गिर कर मर गया। शाही झण्डे देहली की ओर प्रस्थान करके रविवार २६ रबी-उल-आखिर ६५५ हि० (१३ मई, १२५७ ई०) को राजधानी में पहुँच गये। विजयी सेना के वापस हो जाने के उपरान्त मलिक इज्जुद्दीन किशलू खाँ बल्बन उच्च तथा मुल्तान की सेना लेकर ब्याह नदी के तट पर पहुँच गया। मलिक कुतलुग खाँ तथा उसके सहायक अमीर मलिक किशलू खाँ से मिल गये। वहाँ से वे लोग मन्सूरा (मन्सूरपुर) तथा सामाना की ओर रवाना हुये।

(२२३) जब सुल्तान ने उन लोगो के आगे बढने का समाचार सुना तो उसने उलुग खाने मुअज्जम को सेना देकर उनकी ओर भेजा। उसने बृहस्पतिवार १५ जमादी-उल-अव्वल ६५५ हि० (३१ मई, १२५७ ई०) को देहली से कूच किया। जब वह विरोधी दल की सेना के निकट पहुँचा और केवल १० कोस की दूरी रह गई तो देहली से शेखुल इस्लाम *कुतुबुद्दीन, काजी शम्सुद्दीन बहराइची तथा कुछ अन्य लोगो ने मलिक कुतलुग खाँ तथा मलिक* किशलू खाँ बल्बन के पास गुप्त रूप से पत्र लिखे कि वे यदि देहली पहुँच जायें तो द्वार उनके लिये खोल दिये जायेंगे। वे शहर के सभी निवासियो से इस बात का वचन तथा बैअत लेते थे। राजभक्त गुप्तचरो ने देहली से इस षड्यन्त्र का हाल उलुग खाने मुअज्जम को भी लिख भेजा। उलुग खाँ ने सुल्तान को पगडी बाँधने[2] वालो के इस षड्यन्त्र से सूचित करते हुये लिखा कि यदि उचित समझा जाय तो देहली के आसपास के अक्तादारो को आदेश दे दिया जाय कि वे अपनी अपनी अक्ता को चले जायें जिससे यह उपद्रव शान्त हो जाय, सुल्तान उन्हे फिरसे शहर देहली में आने की आज्ञा न दे।

रविवार २ जमादी-उल आखिर ६५५ हि० (१७ जून, १२५७ ई०) को सुल्तान ने सैयिद कुतुबुद्दीन तथा काजी शम्सुद्दीन बहराइची को आदेश दिया कि वे लोग अपनी-अपनी अक्ता की ओर चले जायें। मलिक कुतलुग खाँ तथा मलिक किशलू खाँ बल्बन ने उन लोगो के पत्र पाते ही सेना लेकर अपने स्थान से देहली की ओर कूच कर दिया। वे लोग अपने शिविर सामाना से सोमवार ३ जमादी-उल-आखिर (१८ जून, १२५७ ई०) को रवाना हुये, और इस तेजी से कूच किया कि सौ कोस का मार्ग लगभग ढाई दिन मे पूर्ण करके बृहस्पतिवार ६ जमादी-उल-आखिर

१ पुस्तक मे सिन्मूर है।

२ आलिमों। आलिम प्राय पगडी बाधते थे अत उन्हें दस्तारबन्द अथवा पगडी बाँधने वाला लिखा गया है।

(२१ जून, १२५७ ई०) को बागेजूद के निकट पहुच गये और दूसरे दिन नमाज के उपरान्त शहर के (देहली) द्वार पर पहुच गये और दिन भर शहर के आसपास के स्थानो का चक्कर काटते रहे।

(२२४) रात्रि में शहर देहली के निकट किलोखडी तथा जूद के बीच मे पडाव डाला। उनके पत्रो के वचन पर विश्वास करके जब वे मलिक तथा सेना बागेजूद के निकट पहुँचे तो भगवान् की कृपा से इसके दो दिन पूर्व ही विरोधियो का दल शहर से निकाल दिया गया था। जब उन मलिकों को उन लोगो के चले जाने का हाल ज्ञात हुआ तो उनके सभी कार्यों में विघ्न पड गया। सुल्तान ने आदेश दिया कि शहर के द्वार बन्द कर दिये जायें, क्यो कि शाही सेना युद्ध करने के लिये बाहर गई थी। अमीरुल हुज्जाब अलाउद्दीन अयाज जनजानी, नायब अमीर हाजिब, उलुग कोतवाल बक, जमालुद्दीन निशापुरी तथा दीवाने अरजे ममालिक ने बडी वीरता से शहर की रक्षा की। रात्रि में शहर के अमीरो तथा सरखैलो और गण्यमान्य व्यक्तियो ने शहर की चहार दीवारी की रक्षा की। दूसरे दिन भगवान् की कृपा से शुक्रवार को प्रात काल मलिक किशलू खाँ ने वापस लौट जाने का निर्णय कर लिया। अन्य मलिको तथा सुल्तान की माता ने जब यह देखा तो सभी वापस होने के लिए तैयार हो गये। किन्तु उनके सहायको में से बहुत बडी सख्या मे लोग शहर के आसपास के स्थानो में रुक गये और उन लोगो के साथ न गये। अनेक प्रतिष्ठित तथा गण्यमान्य व्यक्ति सुल्तान की सेवा के लिये तैयार हो गये। वे मलिक निराश होकर लौट गये।

जब सिवालिक में इन लोगो के देहली पर आक्रमण करने का हाल उलुग खाने मुअज्जम तथा शाही सेना के मलिको एव अमीरो को प्राप्त हुआ तो वे सब शहर की ओर लौट पडे। जब वे लोग राजधानी के निकट पहुँचे तो उलुग खाने मुअज्जम को सब हाल ज्ञात हुआ। ये लोग मगलवार ११ जमादी उल-आखिर (२६ जून, १२७५ ई०) को देहली में प्रविष्ट हुए।

(२२५) इसके उपरान्त बुधवार ८ रमजान (१६ सितम्बर) को विजारत का पद जियाउलमुल्क ताजुद्दीन को प्राप्त हुआ। इस वर्ष के अन्त में काफिर मुगल खुरासान से उच्च तथा मुल्तान की ओर पहुँचे। मलिक किशलू खाँ ने उनसे सन्धि करली और उनका नेता सालीन नुईन से मिल गया।

तेरहवाँ वर्ष ६५६ हि० (१२५८ ई०)

नये वर्ष में सोमवार ६ मुहर्रम ६५६ हि० (१६ जनवरी, १२५८ ई०) को शाही झण्डे मुगल काफिरो से युद्ध करने के लिये देहली से रवाना हुये और प्रस्थान करने के लिये देहली के निकट शिविर लगा दिये गये। विश्वस्त सूत्रो से ज्ञात हुआ कि बुधवार ६ मुहर्रम (१६ जनवरी, को मुगलो के नेता हलाकू ने बगदाद में अमीरुलमोमिनीन अलमोतासिम[1] बिल्लाह को पराजित कर दिया। जब शाही झण्डे धर्म युद्ध के लिये बाहर निकले तो विभिन्न दिशाओ में मलिको तथा अमीरो को उनकी सेना सहित युद्ध करने के लिये नियुक्त कर दिया गया। कब्बे मुल्तानी १ रमजान (१ सितम्बर) को देहली वापस आ गया। यह लोग ५ मास तक देहली मे रुके रहे। १८ जीकाद (१६ नवम्बर) को लखनौती का राज्य मलिक जलालुद्दीन मसऊद मलिक जानी को प्रदान किया गया।

चौदहवाँ वर्ष ६५७ हि० (१२५८-५६ ई०)

(२२६) नये वर्ष बृहस्पतिवार १३ मुहर्रम ६५७ हि० (१० जनवरी, १२५६ ई०) को शाही पताकायें धर्म-युद्ध के लिये रवाना हुईं। रविवार २१ सफर (१७ फरवरी, १२५६ ई०) को

१ अन्तिम अब्बासी खलीफा जिसने १२४२ ई० से १२५८ ई० तक राज्य किया।

ब्याना, कोल, बलाराम तथा ग्वालियर मलिक शेर ख़ाँ को प्रदान किये गये। मलेकुन्नवाब ऐबक को सेना देकर काफ़िरो से युद्ध करने के लिये रणथम्भोर भेजा गया। शाही पताकायें राजधानी में वापस आ गई। बुधवार ४ जमादी-उल-आख़िर (२९ मई, १२५९ ई०) को दो हाथी तथा ख़ज़ाना लखनौती से सुल्तान की सेवा में भेजे गये। इस महीने की ६ तारीख़ को शेखुल इस्लाम जमालुद्दीन बिस्तामी की मृत्यु हो गई। २४ तारीख़ को क़ाज़ी कबीरुद्दीन का देहान्त हो गया। बादशाह ने दयापूर्वक उनके पद उनके पुत्रो को प्रदान कर दिये। रजब ६५७ हि० (जून-जूलाई १२५९) को मलिक किशली ख़ाँ आज़म बारबक ऐबक की मृत्यु हो गई और उसका पुत्र अलाउद्दीन मुहम्मद अमीर हाजिब नियुक्त हुआ। प्रथम रमज़ान (२२ अगस्त, १२५९ ई०) को इमाम हमीदुद्दीन मारीगला की मृत्यु हो गई। उसकी इनाम की भूमि उसके पुत्र को प्रदान की गई। जिस समय सुल्तान के सभी कार्य उचित ढग से सम्पन्न हो रहे थे, २९ रमज़ान ६५७ हि० (१९ सितम्बर, १२५९ ई०) को सुल्तान के उलुग ख़ाँ की पुत्री के गर्भ से एक पुत्र का जन्म हुआ।

(२२७) सुल्तान ने अत्यधिक दान पुण्य किया। शव्वाल (अक्तूबर) के अन्त मे मलिक तिमुर ख़ाँ सन्जर सेना लेकर देहली पहुँचा।

पन्द्रहवाँ वर्ष ६५८ हि० (१२५९-६० ई०)

नया वर्ष प्रारम्भ हुआ। १३ सफर (२९ जनवरी, १२६० ई०) को ख़ाने मुअज्ज़म, उलुग ख़ाने आज़म देहली से पर्वतो की ओर मेवातियो का, जिनसे भूत भी भयभीत रहते थे, दमन करने के लिये रवाना हुआ। लगभग १० हज़ार वीर रक्तपायी सवार उसके साथ में थे। दूसरे दिन उसे अत्यधिक धन सम्पत्ति तथा पशु प्राप्त हो गये। उसने पर्वतो के कठिन मार्गों को पार करके अनेक हिन्दुओ का वध किया। इस विजय के उपरान्त इस इतिहास का अन्त होता है। इसके पश्चात् यदि भगवान् ने चाहा तो भविष्य में जो कुछ हाल होगा, लिखा जायगा। यदि इसमें किसी को कोई त्रुटि दिखाई दे, वे लेखक को इसके लिये क्षमा करें, क्योकि लेखक ने जो कुछ पिछले इतिहासो में देखा उसे सक्षेप से इस इतिहास में लिख दिया, और जो कुछ उसने स्वय देखा उसका भी उल्लेख कर दिया।

(२२८) ईश्वर सुल्तान मुअज्ज़म शहंशाहे आज़म सुल्तानुस्सलातीन, नासिरुद्दुनियाँ वद्दीन अबुल मुज़फ्फर महमूद बिन अस्सुल्तान को राज सिंहासन पर आरूढ रखे।

हिन्दुस्तान के शम्सी मलिक

(१) ताजुद्दीन सन्जर कज़लक खाँ

(२३१) लेखक पहली रबी-उल-अव्वल ६२५ हि० (६ फरवरी, १२२७ ई०) को सुल्तान सईद (इल्तुतमिश) के दरबार में पहुँचा। उस समय शम्सी शाही पताकायें सिन्ध प्रदेश की विजय के लिए देहली से उच्च की ओर पहुँच चुकी थीं। इसके १५ दिन पूर्व बादशाह की विजयी सेना तथा मलिक ताजुद्दीन कज़लक खाँ की सेना उच्च पहुँच चुकी थी। मलिक ताजुद्दीन कज़लक खाँ पहला अमीर था जिसकी सेवा में लेखक उपस्थित हुआ।

(२३२) जब बुधवार १६ सफर ६२५ हि० (२६ जनवरी, १२२८ ई०) को लेखक उच्च से शाही शिविर की ओर गया तो उस गुणवान मलिक ने उसका[1] प्रेम-पूर्वक स्वागत किया और अपने पास बैठने को स्थान दिया। लेखक को बीस मगि प्रदान किये और कहा कि "हे मौलाना! इसे स्वीकार कीजिए। भगवान् इसके आशीर्वाद से आपकी सहायता करे।"

मलिक ताजुद्दीन कज़लक खाँ बड़ा ही प्रतापी मलिक था और बड़े वैभव तथा लाव लश्कर का स्वामी था। कहा जाता है कि सुल्तान ने मलिक ताजुद्दीन को सुल्तान कुत्बुद्दीन के राज्य काल में ख्वाजा अली बास्तावादी से खरीदा था। उस समय शम्सुद्दीन बदायूँ का वाली था। उसने उसे अपने ज्येष्ठ पुत्र नासिरुद्दीन महमूद को प्रदान कर दिया। दोनों का पालन-पोषण एक साथ हुआ। कुछ समय उपरान्त सुल्तान ने उसकी योग्यता देख कर उसे अपनी सेवा में ले लिया और चाश्नीगीरी[2] का पद प्रदान किया। कुछ समय सेवा करने के उपरान्त वह अमीर आखुर हो गया। अन्त में जब ६२८ हि०[3] (१२३० ३१) में सुल्तान ने मुल्तान की ओर प्रस्थान किया तो मुल्तान का बजरूत[4] नामक स्थान उसे प्रदान कर दिया। जब सुल्तान वहाँ से वापस हुआ तो उसने कुहराम की अक्ता प्रदान करदी। कुछ समय उपरान्त तबरहिन्दा का सुरक्षित नगर उसे प्रदान कर दिया। इसी वर्ष लेखक दरबार में पहुँचा। सुल्तान शम्सुद्दीन ने उसे मुक़द्दमे की सेना का सरदार बना कर मलिक इज़्ज़ुद्दीन मुहम्मद सालारी के साथ सिन्ध की सीमा से उच्च की ओर भेजा। जब शाही सेना ने उच्च में अपने शिविर लगा दिये तो ६२५ हि० (१२२७-२८ ई०) में कज़लक खाँ को राज्य के वज़ीर निज़ामुलमुल्क मुहम्मद जुनैदी की अधीनता में भक्खर[5] की ओर भेजा। कुछ समय उपरान्त उस क़िले पर विजय प्राप्त हो गई। उसका उल्लेख पहले हो चुका है। मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा के सिन्ध नदी में डूब जाने के उपरान्त उच्च के क़िले पर विजय प्राप्त हुई थी। उच्च नगर तथा आसपास के सभी स्थान मलिक कज़लक खाँ को प्रदान कर दिए गये। जब

१ पृष्ठ २२६ से २३१ तक लेखक ने उलग खाँ के दान पुन्य तथा अपने प्रति उसकी कृपा-दृष्टि का उल्लेख किया है अत इसे अनुवाद में छोड़ दिया गया।

२ शाही रसोई की देख भाल करने वाला।

३ इसे ६२५ हि० (१२२७ २८ ई०) होना चाहिए। किन्तु पुस्तक मे ६२८ हि० है।

४ पुस्तक में गुजरात है।

५ पुस्तक में भनकिर है।

शाही पताकायें देहली को लौट गईं तो कज़लक खाँ ने उन स्थानो पर अधिकार जमा कर सुव्यवस्थित कर दिया। नगर आबाद किया गया और जो लोग छिन्न-भिन्न हो गये थे उन्हे एकत्र किया गया। वह प्रजा के साथ न्याय-पूर्वक व्यवहार करता और प्रजा की रक्षा और सुख का ध्यान रखता था। उसकी धर्मनिष्ठता, पवित्रता, न्याय-प्रियता, दान पुण्य तथा अन्य कार्यों की प्रशंसा बहुत समय तक होती रही। ६२६ हि० (१२३१-३२ ई०) में उसकी मृत्यु हो गई।

(२) मलिक कबीर खाँ अयाज़ अलमुइज़्ज़ी हज़ारमर्दा

कबीर खाँ अयाज़ रूमी तुर्क था। वह मलिक नसीरुद्दीन हुसैन अमीर शिकार का दास था। उसकी हत्या के उपरान्त वह उसके पुत्र को लेकर हिन्दुस्तान पहुँचा। वह सुल्तान सईद (इल्तुतमिश) का विश्वासपात्र बन गया और सुल्तान उसे भिन्न भिन्न पदो पर नियुक्त करता रहा। वह बडा ही बुद्धिमान तथा योग्य तुर्क था। वीरता में उसके बराबर कोई न था। मलिक नसीरुद्दीन हुसैन, जोकि उसका स्वामी तथा आश्रयदाता था, समस्त गोर, गजनी, खुरासान तथा ख्वारज़्म में अपनी वीरता तथा युद्ध के लिए प्रसिद्ध था।

(२३४) मलिक कबीर खाँ ने अपने स्वामी की प्रत्येक स्थिति में सेवा की थी और उससे वीरता तथा युद्ध की शिक्षा ग्रहण की थी। जब मलिक नसीरुद्दीन हुसेन की गजनी के तुर्कों ने हत्या करदी तो उसके पुत्र शेर सुर्ख तथा उसका भाई सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुये। सुल्तान ने मलिक इज़्ज़ुद्दीन कबीर खाँ को उन लोगो से खरीद लिया। कुछ लोगो का कथन है कि जब सुल्तान ने ६२५ हि० (१२२७-२८ ई०) में मुल्तान प्रदेश पर अपना अधिकार जमा लिया तो मुल्तान नगर तथा किला एव आसपास के कस्बे मलिक इज़्ज़ुद्दीन कबीर खाँ अयाज़ को प्रदान कर दिए और उसे इस प्रदेश का वाली[१] नियुक्त कर दिया। उसे कबीर खाँ मँगीरनी की पदवी प्रदान की। लोग उसे अयाज़ हज़ारमर्दा कहते थे, किन्तु उसकी उपाधि कबीर खाँ मगीरिनी हो गई। जब शाही पताकायें देहली की ओर वापस हो गई तो कबीर खाँ ने उस प्रदेश को सुव्यवस्थित तथा आबाद किया। दो चार वर्ष उपरान्त उसे देहली बुला लिया गया और पलवल नामक स्थान को उसकी आवश्यकताओं के लिए उसे प्रदान कर दिया गया।

शम्सी राज्य के समाप्त हो जाने के पश्चात् सुल्तान रुक्नुद्दीन ने उसे सुनाम के आसपास के स्थान प्रदान कर दिये। जब लाहौर से मलिक जानी और हाँसी से मलिक (सैफुद्दीन) कूची सुल्तान के विरोध के लिये एकत्र हुये तो कबीर खाँ भी उनसे मिल गया। वे सुल्तान रुक्नुद्दीन की सेना को बहुत समय तक परेशान करते रहे। जब सुल्तान रज़िया राज सिंहासन पर आरूढ हुई तो उन्होंने शहर देहली के द्वार पर चढाई करदी और बहुत समय तक आसपास के स्थान के निवासियों को कष्ट पहुँचाते रहे।

(२३५) वे सुल्तान की सेना से युद्ध करते रहते थे, यहाँ तक कि सुल्तान रज़िया ने उसे लालच देकर उसके साथियो से उसे पृथक् करके अपनी ओर मिला लिया। वह तथा मलिक इज़्ज़ुद्दीन मुहम्मद सालारी सुल्तान से मिल गये। उनके मिल जाने से सुल्तान तथा शहर देहली के निवासियों की शक्ति बहुत बढ़ गई। मलिक जानी तथा मलिक कूजी पराजित हुये। सुल्तान रज़िया ने कबीर खाँ को बहुत सम्मानित किया। उसे लाहौर तथा आसपास के सभी प्रदेश प्रदान कर दिये। उसका अधिकार वहाँ कुछ समय तक स्थापित रहा। कुछ वर्ष उपरान्त सुल्तान उससे रुष्ट हो गई। ६३६ हि० (१२३८-३६ ई०) में सुल्तान ने लाहौर की ओर प्रस्थान

१ विलायत का अधिकारी, वाली कहलाता था। प्रदेश का हाकिम

दरबार में उपस्थित हुआ, उस समय मलिक नुसरतुद्दीन जिन्द बरवाना तथा हाँसी का मुक्ता था। कुछ समय तक उसने बड़ी योग्यता से कार्य किया।

(२४०) सुल्तान शम्सुद्दीन ने ग्वालियर की विजय के उपरान्त उसे भियाना तथा मुल्तानकोट की अक्ता प्रदान करदी और उसे ग्वालियर की विलायत की शहनगी[1] का आदेश दिया और उसे ग्वालियर में निवास करने की आज्ञा दे दी। कन्नौज महिर तथा महाबन की सेनायें उसके अधीन करदी गई, जिससे वह कालिजर तथा चन्देरी पर आक्रमण करता रहे। उसने ६३१ हि० (१२३३-३४ ई०) में ग्वालियर से सेना लेकर कालिञ्जर पर चढ़ाई की। कालिजर का राय भाग निकला। उसने उस विलायत के कस्बों को विध्वंस कर दिया और अत्यधिक धन सम्पत्ति पर अधिकार स्थापित कर लिया। ५० दिन में २५ लाख खुमसे[2] सुल्तानी एकत्र किये।

लौटते समय अजार[3] के राना जाहर ने इस्लामी सेना का मार्ग रोक दिया और इस प्रकार इस्लामी सेना के गुजरने का जो तंग मार्ग था उस पर युद्ध करने के लिये डट गया। मलिक नुसरतुद्दीन तायसी उस समय कुछ अस्वस्थ था। उसने सेना को तीन भागों में विभाजित किया, और उन्हें तीन भिन्न-भिन्न अमीरों के अधीन बनाकर अलग-अलग मार्ग में भेजा। एक सेना जरीदा[4] सवारों की थी। एक सेना के साथ सामान आदि था और वह एक अमीर के अधीन थी। एक सेना के साथ पशु तथा लूट का माल किया गया था। वह भी एक अमीर की अधीनता में दे दी गई। नुसरतुद्दीन से लेखक ने स्वयं सुना है, कि वह कहा करता था, कि "भगवान् की दया से हिन्दुस्तान में मैंने किसी को पीठ न दिखाई थी। उस दिन उस हिन्दू ने मेरे ऊपर इस प्रकार आक्रमण कर दिया जैसे भेड़िया भेड़ों के समूह पर आक्रमण करता है। मैंने अपनी सेना को इस कारण तीन भागों में विभाजित कर दिया कि यदि हिन्दू मुझ से तथा जरीदा सवारों से युद्ध करेगा तो सामान तथा पशु शान्ति से बच कर निकल जायेंगे। यदि वह सामान तथा पशुओं पर आक्रमण करेगा तो मैं उसके पीछे से अपने सहायकों को लेकर उस पर आक्रमण कर दूँगा और उसका विनाश कर दूँगा।' हिन्दू ने उसकी सेना से युद्ध किया, किन्तु भगवान् ने उसे विजय प्रदान की, और बहुत बड़ी संख्या में हिन्दू नरक में पहुँच गये। वह लूट का माल लेकर शान्ति से ग्वालियर पहुँच गया।

इस युद्ध के अवसर पर एक ऐसी घटना का वृत्तान्त लोगों ने लेखक को दिया। जिससे नुसरतुद्दीन की सूझबूझ का पता चलता है। वह घटना इस लिये लिखी जाती है ताकि पाठकगण उससे लाभ उठायें। कहा जाता है कि लश्कर से एक दूध वाली भेड़ लापता हो गई। उसका डेढ़ मास तक पता न चल सका।

(२४१) एक दिन मलिक नुसरतुद्दीन अपनी सेना के शिविरों में घूम रहा था। उस स्थान पर सेना एक सप्ताह से ठहरी हुई थी। प्रत्येक व्यक्ति ने छाया के लिये अलग अलग प्रबन्ध कर लिये थे। नुसरत के भ्रमण करते समय एक भेड़ के बोलने की आवाज सुनाई दी। उसने अपने एक विश्वासपात्र से कहा कि यह मेरी भेड़ की आवाज है। लोग उस ओर गये और उन्हें, जैसा उस अमीर ने कहा था, भेड़ मिल गई और वे भेड़ को वापस ले आये।

इस युद्ध के समय उसने भिन्न-भिन्न अवसरों पर अपनी समझ बूझ तथा अनुभव का विशेष परिचय दिया। एक घटना का उल्लेख इस प्रकार किया जाता है। जब राय कालिजर

१ शहना = प्रबन्धक

२ खुमस = १/५; इस्लामी नियमानुसार लूट की धन सम्पत्ति का शाही खजाने को केवल १।५ भाग प्राप्त होना चाहिये।

३ झाँसी के दक्षिण पूर्व की ओर १८ मील पर उनाँर।

४ वह सेना जो वृत्तिभोगी न हो।

भाग गया तो नुसरतुद्दीन तायसी ने उसका पीछा किया। उसका पीछा करते समय लोगो ने एक हिन्दू को मार्ग दर्शाने के लिये अपने साथ ले लिया। वे लोग दो रात तथा दो दिन बराबर चलते रहे। दूसरी रात्रि में आधी रात के निकट हिन्दू मार्ग दर्शाने वाले ने कहा कि, "मैं मार्ग भूल गया हू और आगे मेरी समझ में कुछ नही आता।" नुसरतुद्दीन तायसी ने आदेश दिया कि उसे तुरन्त नरक में भेज दिया जाय। नुसरतुद्दीन ने स्वय मार्ग बताना प्रारम्भ किया। चलते चलते वह एक पुल पर पहुँच गया। भागने वालो ने उस स्थान पर पानी लिया था और सेना के चौपायो से पानी तथा भारी बोझ उतार कर फेंक दिया था। इस्लामी सेना वाले भिन्न-भिन्न प्रकार की वार्ता करने लगे। लोगो ने कहा कि यह रात्रि का समय है, सम्भव है कि शत्रु निकट ही हो और हम उनके जाल में फँस जायें। मलिक नुसरतुद्दीन तायसी घोडे से उतर पडा और कुछ दूर तक पैदल चलकर उसने वह पानी देखा जो कि जानवरो पर से उतार कर फेंक दिया गया था। उसने परीक्षा के उपरान्त कहा कि, "मित्रो कोई चिन्ता नही, क्योकि जो सेना इधर से गई है वह शत्रु की सेना का अन्तिम भाग है, विशेष कर इस लिये भी कि यदि वहाँ कल्ब अथवा मुकद्दमे की सना होती तो उनकी रक्षा के लिये सेना का अन्य भाग होना भी आवश्यक था, किन्तु इस समय ऐसा दृष्टिगोचर नही होता। अत साहस से काम लो। हम लोग शत्रु के पीछे ही हैं।" इसके उपरान्त वह फिर सवार हुआ और सुब्ह होते होते काफिरो तक पहुँच गया, और सब को नरक भेज दिया। राय कालिजर के चत्र तथा झडो पर अधिकार जमा लिया और बिना अधिक हानि के युद्ध के उपरान्त वापस हो गया।

(२४२) सुल्तान (इल्तुतमिश) के राज्य के उपरान्त जब मलिक गयासुद्दीन मुहम्मदशाह बिन (पुत्र) सुल्तान की हत्या कर दी गई तो सुल्तान रजिया ने नुसरतुद्दीन तायसी को अवध प्रदान कर दिया। जिस समय मलिक जानी तथा मलिक कूची ने शहर (देहली) के द्वार पर आक्रमण कर दिया, तो वह अवध से सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ। मलिक कूची ने उस पर अचानक धावा करके कैद कर लिया। वह उस समय बडा अस्वस्थ था। इसी अवस्था में रोग के कारण उसकी मृत्यु हो गई।

(७) मलिक इज़्ज़ुद्दीन तुगरिल तुगान खाँ

मलिक तुगान खाँ तुर्की बडा रूपवान तथा चरित्रवान व्यक्ति था। उसके पूर्वज कराखिता के निवासी थे। उसमें अनेक गुण तथा नैतिकता पूर्ण बातें पाई जाती थी। वह दान पुण्य तथा दूसरो को प्रभावित करने में अद्वितीय समझा जाता था। जब सुल्तान (इल्तुतमिश) ने उसे खरीदा तो उसे अपना साकीये[1] खास नियुक्त कर दिया। वह बहुत समय तक उस पद पर विराजमान रहा। उसके उपरान्त उसे दावातदार[2] नियुक्त कर दिया, किन्तु एक बार उससे सुल्तान के जडाऊ काम की लेखन सामग्री खो गई। सुल्तान ने उसके लिए उसे विशेष चेतावनी दी, किन्तु कुछ समय पश्चात् खिलअत दे कर चाश्नीगीर और उसके उपरान्त अमीर आखुर नियुक्त कर दिया। ६३० हि० (१२३२-३३ ई०) में वह बदायूँ का मुक्ता नियुक्त हुआ। जब लखनौती की अक्ता सैफुद्दीन ऐबक यगानतत को प्रदान हुई तो बिहार की विलायत तुगाँन खाँ को प्रदान कर दी गई। यगानतत की मृत्यु के उपरान्त वह लखनौती का मुक्ता नियुक्त हुआ। उसने उस प्रदेश पर अपना अधिकार जमा लिया।

(२४३) सुल्तान की मृत्यु के उपरान्त उसमें तथा लखनौती के मुक्ता लकूर ऐबक में, जिसकी पदवी ऊर खाँ थी, युद्ध छिड गया। ऊर खाँ बडा ही वीर तथा साहसी पुरुष था।

१ जल तथा अन्य पीने की वस्तुओं का प्रबन्धक।
२ सुल्तान की लेखन सामग्री का प्रबन्धक।

था। तिमुर ख़ाँ क़ीरान नायब ने अमीर आखुर के पद पर बडी कुशलता से कार्य किया। जब तुगान ख़ाँ को बदायूँ प्रदान किया गया तो वह (तिमुर ख़ाँ) अमीर आखुर हो गया। सुल्तान रजिया के राज्य-काल में वह कन्नौज का मुक्ता हुआ। उसी समय उसे इस्लामी सेना देकर ग्वालियर तथा मालवे की ओर भेजा गया। उस युद्ध में उसने बडी योग्यता दिखाई। जब वह देहली वापस आया तो कडे की अक्ता उसे प्रदान की गई। उसने वहाँ से अनेक गज़वे (धर्म-युद्ध) किये। जब नुसरतुद्दीन तायसी की, जोकि अवध का मुक्ता था, मृत्यु हो गई, तो अवध तथा आसपास के स्थानो की विलायत तिमुर ख़ाँ कीरान को प्रदान कर दी गई। उसने उस स्थान से तिहुट की सीमा तक बडी वीरता दिखाई और अत्यधिक धन सम्पत्ति प्राप्त की। वहाँ के रायो, राजाओ तथा वहाँ की विलायत एव मवासात[1] की धन सम्पत्ति को लूट लिया। उसने कई बार भटकूर नामक स्थान को विध्वस करके धन सम्पत्ति प्राप्त की।

(२४८) ६४२ हि० (१२४४-४५ ई०) मे उसने लखनौती की ओर प्रस्थान किया। इसका उल्लेख तुगान खाँ के हाल मे किया जा चुका है। जिस समय तुगान ख़ाँ देहली में था, तो वह अकेले मानिश तक आया और अवध से अपनी धन सम्पत्ति तथा परिवार लखनौती ले गया। दो वर्ष तक वह लखनौती मे राज्य और दूसरे स्थानो पर आक्रमण करता रहा। जिस रात्रि में तुगान खाँ की मृत्यु हुई, उसी रात में उसकी भी मृत्यु हो गई। उसकी धर्म पत्नी मलिक यगानतत की पुत्री थी। वह अपने पति का मृतक शरीर लखनौती से अवध ले गई और वहीं उसे दफन (समाधिस्थ) किया।

(६) मलिक हिन्दू ख़ाँ मुबारक अलख़ाजिनुस्सुल्तानी

हिन्दू खाँ मेहतर मुबारक महिरवश से था। सुल्तान (इल्तुतमिश) ने उसे फखरुद्दीन इस्फहानी से मोल लिया था। वह बडा ही गुणवान, चरित्रवान तथा धर्मनिष्ठ था। वह सुल्तान का बडा विश्वासपात्र था। समस्त शम्सीकाल तथा रजिया के राज्य काल में उस पर बडा विश्वास किया जाता था। वह ख़जीनेदार[2] था और उसने बडी उत्तम सेवायेंकी। बहुत से राज्य के दास, जिन्हे पद तथा सम्मान प्राप्त हुये, उसके कृतज्ञ थे। वह सभी पर पिता-तुल्य कृपा करता था। सर्व प्रथम जब वह सुल्तान की सेवा मे उपस्थित हुआ तो उसे यूजबान[3] नियुक्त किया गया। तत्पश्चात् वह मिशअलदार[4] नियुक्त हुआ। जिस समय सुल्तान क़ुतुबुद्दीन राज सिंहासन पर विराजमान था और शम्सुद्दीन बरन का मुक्ता था तथा शम्सुद्दीन ने मेहराम हिन्दू कबील पर चढाई की और उस भगा दिया तो उस युद्ध मे हिन्दू खाँ मुबारक ने उस हिन्दू को अपनी मशाल की छड स नरक मे भज दिया।

(२४९) सुल्तान ने उसे तश्तदार[5] नियुक्त कर दिया। कई वर्ष तक वह उस पद पर कार्य करता रहा। जब शम्सी राज्य-काल प्रारम्भ हुआ, तब मेहतर मुबारक ख़ज़ानादार नियुक्त हो गया। किन्तु उसने आजीवन तश्तदारी का पद न त्यागा और उसी प्रकार तश्तेखास की सेवा करता रहा। जिस समय सुल्तान ने ग्वालियर के किले पर विजय प्राप्त की और

१ मवास उस स्थान को कहते थे जहाँ विद्रोही शरण के लिये छिप जाते थे। इस प्रकार के स्थान बघेलखण्ड, तिहुट, इटावा, दुआब, बुन्देलखण्ड तथा सिरमूर में बहुत बड़ी सख्या में थे। इन्हीं स्थानों के प्रसग में मवासात शब्द का प्रयोग हुआ है।

२ राज कोषाध्यक्ष।

३ सुल्तान के शिकारी चीतों की देखरेख करने वाला।

४ राज्य भवन तथा सुल्तान की सवारी के समय प्रकाश का प्रबन्ध करने वाला।

५ सुल्तान के स्नान तथा इसी प्रकार की अन्य सेवाओं का प्रबन्ध कर्ता।

मिनहाज सिराज को शाही शिविर में मुल्तानी शिविर के सामने सात मास तक तज्कीर करने के पद पर नियुक्त किया गया तो वह रमज़ान[1] के महीने तथा ज़िलहिज्जा[2] और मुहर्रम[3] के महीनो के प्रथम १० दिनो में रोज़ तज्कीर किया करता था। ग्वालियर पर पूर्ण विजय के उपरान्त समस्त शरा सम्बन्धी कार्यों का सचालन लेखक को प्रदान कर दिया गया। यह पद ६३० हि० (१२३२-३३ ई०) में प्रदान हुआ। मेहतर हिन्दू खाँ लेखक का बडा आदर सम्मान करता था। शम्सी राज्य काल के उपरान्त सुल्तान रज़िया ने उच्च के किले की विलायत उसे प्रदान कर दी। जब सुल्तान मुइज्जुद्दीन राज सिंहासन पर विराजमान हुआ तो वह उस प्रदेश से देहली पहुँचा और जालधर की विलायत उसे प्रदान कर दी गई। वहीं उसकी मृत्यु हो गई।

(१०) मलिक इख्तियारुद्दीन क़राक़श खान एतगीन

(२५०) मलिक इख्तियारुद्दीन कराकश एतगीन के पूर्वज कर्शविता के निवासी थे। वह बडा ही चरित्रवान, वीर तथा पराक्रमी था। उसका हृदय सब की ओर से साफ रहता था। सुल्तान शम्सुद्दीन ने उसे मोल लेकर अपना साक़ी[4] नियुक्त कर दिया था। कई वर्ष तक उसने इस पद पर काम किया। इसके उपरान्त उसे बरीहून तथा दरगवान की अक्ता प्रदान की गई। कुछ वर्ष पश्चात् वह तबरहिन्दा के खालसे[5] का शहना (प्रबन्धक) नियुक्त हो गया। तत्पश्चात् सुल्तान शम्सुद्दीन के राज्य-काल में उसे मुल्तान की अक्ता प्राप्त हो गई। कबीर खाँ के बाद उसकी पदवी कराकश खाँ हो गई। शम्सी राज्य-काल के उपरान्त सुल्तान रज़िया ने मलिक कबीर खाँ से लाहौर लेकर उसके स्थान पर मुल्तान प्रदान कर दिया। इसका उल्लेख इसके पूर्व हो चुका है। मलिक कराकश के लाहौर पर अधिकार करने तथा उसके हटाये जाने और मुगलो के लाहौर पर आक्रमण करने तथा लाहौर के विनाश का हाल लिखा जायगा।

कराकश खाँ को भियाना की विलायत प्रदान कर दी गई। वह बहुत समय तक उस स्थान पर रहा। सुल्तान मुइज्जुद्दीन के राज्य-काल में अमीरो के विद्रोह कर देने पर मलिक कराकश तथा मलिक युजबक देहली पहुँच गये। क्योंकि मेहतर मुबारकशाह फर्रुखी ने तुर्क मलिकों तथा अमीरो के विरुद्ध षड्यन्त्र प्रारम्भ कर दिया था, अत उसने सुल्तान मुइज्जुद्दीन तथा मलिक क़राकश और मलिक युज़बक के मध्य में मतभेद पैदा करा दिया और दोनो बन्दी बना लिये गये। जब शहर देहली पर विजय प्राप्त हो गई और सुल्तान अलाउद्दीन राज सिंहासन पर विराजमान हो गया, तो कराकश खाँ अमीर हाजिब नियुक्त हो गया। इसके कुछ समय उपरान्त शुक्रवार २५ जमादी-उल-अव्वल ६४० हि० (२० नवम्बर, १२४२ ई०) को उसे भियाना की अक्ता प्रदान कर दी गई। कुछ समय उपरान्त उसे कडा प्रदान कर दिया गया। वहाँ से मलिक तीरान तिमुर खाँ के साथ उसने लखनौती की ओर प्रस्थान किया और तुगान खाँ के साथ वापस हुआ।

(२५१) सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्य-काल मे ६४४ हि० (१२४६-४७ ई०) में कराकश खाँ की कड़े में मृत्यु हो गई।

१ इस्लामी नवाँ महीना।

२ इस्लामी बारहवाँ महीना।

३ इस्लामी पहला महीना।

४ पीने की वस्तुओं का प्रबन्ध करने वाला।

५ वह भूमि जिसका प्रबन्ध सुल्तान की ओर से होता था और जिसका कर शाही खज़ाने में आता था।

(११) इख्तियारुद्दीन अल्तूनिया तबरहिन्दा

मलिक इख्तियारुद्दीन तबरहिन्दा बहुत बडा मलिक था। उसकी वीरता, साहस, बहादुरी तथा शेर-दिली की उस समय के सभी मलिक प्रशसा करते थे। उसने सुल्तान रजिया के राज्य-काल में विरोधी सेनाओं से बडी वीरता से युद्ध किया था। सर्व प्रथम सुल्तान शम्सुद्दीन ने उसे खरीदा था और उसे शराबदार[1] नियुक्त कर दिया था, उसकी वीरता देख कर उसने उसे सरचत्रदार[2] नियुक्त कर दिया। शम्सी राज्य-काल के उपरान्त रजिया के राज्य-काल में उसे बरन की अक्ता प्रदान करदी गई। इसके उपरान्त उसे तबरहिन्दा प्रदान कर दिया गया। जब सुल्तान रजिया ने जमालुद्दीन याकूत हब्शी को अपना विश्वासपात्र बना लिया और शम्सीदास, तुर्क अमीर तथा मलिक सुल्तान से अप्रसन्न हो गये तो मलिक इख्तियारुद्दीन एतगीन अमीर हाजिब ने, जोकि मलिक इख्तियारुद्दीन अल्तूनिया तबरहिन्दा का मित्र तथा सहायक था, इस परिवर्तन की सूचना उसे दी। इख्तियारुद्दीन अल्तूनिया ने गुप्त रूप से तबरहिन्दा के किले में विद्रोह की तैयारी प्रारम्भ कर दी और आज्ञाकारिता त्याग दी। सुल्तान हश्मेकल्ब[3] को लेकर तबरहिन्दा की ओर आषाढ मास में रवाना हुआ। इसका उल्लेख पहले हो चुका है।

(२५२) जब सुल्तान रजिया बन्दी बना ली गई और मलिक तथा अमीर देहली वापस आ गये और मुइज्जुद्दीन राज सिंहासन पर आरूढ हो गया तो इख्तियारुद्दीन अल्तूनिया ने सुल्तान रजिया से, जो बन्दी थी, विवाह कर लिया। इसके कारण उसने विद्रोह कर दिया। जब मलिक इख्तियारुद्दीन एतगीन शहीद हो गया और बद्रुद्दीन सुन्कर रूमी अमीर हाजिब नियुक्त हो गया तो मलिक इख्तियारुद्दीन अल्तूनिया ने सुल्तान रजिया को तबरहिन्दा से निकाल कर एक सेना एकत्र की और देहली पर चढाई कर दी। रबी-उल-अव्वल ६३८ हि० (सितम्बर-अक्तूबर, १२४० ई०) में देहली पर अधिकार जमाने मे असमर्थ रहने के कारण वह वहाँ से वापस हुआ। सुल्तान रजिया कैथल में बन्दी बना ली गई। इख्तियारुद्दीन अल्तूनिया मन्सूरपुर के निकट गिरफ्तार हो गया। मगलवार २५ रबी-उल-अव्वल ६३८ हि० (१४ अक्तूबर, १२४० ई०) को उसकी मृत्यु हो गई।

(१२) मलिक इख्तियारुद्दीन एतगीन

मलिक इख्तियारुद्दीन एतगीन करा खिताई था। वह एक बडा योग्य तुर्क था। बडा गुणवान तथा रूपवान भी था। सुल्तान शम्सुद्दीन ने उसकी योग्यता तथा बुद्धिमत्ता देखकर उसे अमीर ऐबक समाई[4] से खरीद लिया था। उसने भिन्न-भिन्न पदो पर सुल्तान की सेवायें की और बादशाह का कृपा-पात्र बन गया। बादशाह ने उसे विशेष सम्मान प्रदान किया। सर्व प्रथम वह सरजानदार नियुक्त हुआ।

(२५३) कुछ समय उपरान्त उसकी योग्यता देखकर सुल्तान ने उसे मसूरपुर की अक्ता प्रदान कर दी। कुछ समय उपरान्त उसे बूजा तथा नन्दना की अक्ता प्रदान हो गई। वहाँ उसने बडी योग्यता से कार्य किया। सुल्तान रजिया ने राज सिंहासन पर विराजमान होने के उपरान्त उसे देहली बुलाकर बदायूँ की अक्ता प्रदान कर दी। कुछ समय पश्चात् वह अमीर हाजिब नियुक्त हो गया और उसने बडी योग्यता से अपने कर्त्तव्यो का पालन किया। जमालुद्दीन याकूत हब्शी के सुल्तान का विश्वासपात्र हो जाने के बाद सभी तुर्क गोरी तथा ताजीक

१ सुल्तान की पीने की वस्तुओं का प्रबन्ध करने वाला।
२ सुल्तानी छत्र के प्रबन्ध करने वालों का अफसर।
३ देहली की सेना।
४ पुस्तक में निमाई है।

अमीर उससे असन्तुष्ट हो गये, विशेष कर इख्तियारुद्दीन एतगीन अमीर हाजिब उसका विरोधी था। सुल्तान रज़िया के हाल में इसका उल्लेख किया जा चुका है। इसी कारण जमालुद्दीन याकूत की हत्या कर दी गई और राज्य सुल्तान रज़िया के हाथ से निकल गया। एक कवि ने इस विषय पर एक मसनवी[1] भी लिखी जिसका एक छन्द निम्नलिखित है

(छन्द)

राज्य उसके दामन से अलग हो गया।
जब उसने उसके ऊपर काली मिट्टी देखी॥

जब मुइज्जुद्दीन राज सिंहासन पर विराजमान हुआ तो मलिक अमीर, आलिम, सद्र तथा देहली के लश्कर के गण्यमान्य व्यक्ति दरबार में उपस्थित हुये। सभी ने सुल्तान मुइज्जुद्दीन की अधीनता स्वीकार कर ली और उसको (मलिक इख्तियारुद्दीन एतगीन) उसका नायब नियुक्त किया गया। सुल्तान मुइज्जुद्दीन बहरामशाह से यह तै कर लिया गया कि, क्योंकि अभी वह बालक है अतः वह एक वर्ष के लिये राज्य व्यवस्था सम्बन्धी समस्त अधिकार एक दास (एतगीन) को प्रदान कर दे। सुल्तान ने यह प्रार्थना स्वीकार करते हुये इसके विषय में आदेश दे दिया। मलिक इख्तियारुद्दीन एतगीन ने ख्वाजा मुहज्जबुद्दीन वज़ीर से मिलकर राज्य के कार्य प्रारम्भ कर दिये। सुल्तान से उसने नौबत बजवाने तथा हाथी रखने की भी प्रार्थना की। उसने सुल्तान की एक बहिन से विवाह कर लिया और राज्य के सभी कार्य करने लगा। इसके फलस्वरूप सुल्तान उससे असन्तुष्ट रहने लगा। कई बार गुप्त रूप से उसने उसकी हत्या करवाने का प्रयत्न किया किन्तु सफल न हो सका।

(२५४) सोमवार, ८ मुहर्रम ६३८ हि० (३० जुलाई, १२४० ई०) को सिपहसालार महमद सुल्तान की सेवा में गुप्त रूप से उपस्थित हुआ और उसके परामर्श से कुछ मस्त तुर्कों को इस कार्य के लिये नियुक्त किया गया। उन्होंने कसरे सफ़ेद के कोठे से नीचे उतर कर दरबार के मंच के सामने पहुँचकर इख्तियारुद्दीन को चाकू मार-मार कर हत्या करदी। ख्वाजा मुहज्जबुद्दीन के भी कुछ घाव लगे, किन्तु वह भाग निकला।

(१३) बद्रुद्दीन सुन्कर रूमी

बद्रुद्दीन सुन्क़र रूमी था। कहा जाता है कि वह एक मुसलमान का पुत्र था किन्तु बन्दी बना लिया गया था। वह बड़ा चरित्रवान तथा रूपवान था। नैतिकता तथा नाना प्रकार के उत्कृष्ट गुणों में वह सबसे बढ़ा हुआ था। सुल्तान ने जब उसे सर्व प्रथम खरीदा तो तश्तदार नियुक्त कर दिया। कुछ समय तक इस पद पर कार्य करने के उपरान्त उसे बहलादार[2] नियुक्त कर दिया गया। इसके उपरान्त वह बदायूँ के जर्रादखाने[3] का शहना नियुक्त कर दिया गया। कुछ समय उपरान्त वह नायब अमीर हाजिब नियुक्त हो गया। उसने सुल्तान की प्रत्येक पद से उचित सेवायें की। जब वह नायब अमीर आख़ुर नियुक्त हो गया तो किसी समय भी बिना आवश्यक कार्य के पायगाह से अनुपस्थित न होता था। यात्रा तथा अन्य समय पर वह सर्वदा सुल्तान के दरबार में उपस्थित रहा करता था। जब ग्वालियर पर सुल्तानी सेना ने चढ़ाई कर दी थी तो उस समय वह लेखक का बड़ा आदर सत्कार करता था। लेखक उसकी कृपा कभी नहीं भूल सकता।

१ वह कविता जिसमें किसी कहानी तथा शिक्षा का उल्लेख हो।

२ सुल्तान के व्यय के लिये जो धन पृथक कर दिया जाता था उसका प्रबन्धक।

३ अस्त्र शस्त्र के कारखाने का प्रबन्धक।

(२५५) सुल्तान रज़िया के राज्य-काल में उसे बदायूं की अक्ता प्रदान कर दी गई। ६३६ हि० (१२३८-३९ ई०) में मुइज्जुद्दीन के राज्य-काल में इख्तियारुद्दीन ऐतगीन की हत्या के उपरान्त उसे बदायूं से बुलवा कर अमीर हाजिब नियुक्त कर दिया गया। जब इख्तियारुद्दीन अल्तूनिया तबरहिन्दा ने सुल्तान रज़िया के साथ देहली पर आक्रमण किया और देहली की सीमा पर पहुँच गया तो बद्रुद्दीन सुन्कर उनसे युद्ध करने के लिये भेजा गया। उसने इस युद्ध में बडी वीरता दिखाई। कुछ समय उपरान्त उसमें तथा ख्वाजा मुहज्जब वजीर में किसी ऐसी बात पर मतभेद हो गया जिसका उल्लेख उचित नहीं। वह मतभेद बढता गया। इस कारण ख्वाजा मुहज्जबुद्दीन ने सुल्तान के हृदय में उसकी ओर से मलिनता पैदा करा दी और वह सुल्तान का विश्वासपात्र न रहा। उसने भी सुल्तान पर विश्वास करना बन्द कर दिया। उसने सोमवार १० सफर ६३९ हि० (२० अगस्त, १२४१ ई०) को सैयिद ताजुद्दीन मूसवी के निवास स्थान पर देहली के गण्यमान्य व्यक्तियों की एक सभा का आयोजन किया, जिसमें राज्य में षड्यंत्र रचने के विषय में वाद-विवाद हुआ। ख्वाजा मुहज्जबुद्दीन ने सुल्तान को इसकी सूचना दे दी। सुल्तान स्वयं सवार होकर पहुँचा और बद्रुद्दीन सुन्कर को षड्यंत्र के विचार त्यागने पर विवश किया। उसने सुल्तान की अधीनता का निश्चय कर लिया और *सुल्तान ने उसे उसी दिन बदायूँ की ओर भेज दिया। कुछ समय उपरान्त उसकी मौत उसे* देहली पुनः ले आई। उसे आने की आज्ञा न थी। देहली पहुँच कर वह मलिक कुतुबुद्दीन के निवास स्थान पर इस आशय से रुका कि कदाचित् उसके कारण उसे क्षमा कर दिया जायगा। दरबार से यह आदेश निकला कि उसे पकड़ कर कैद में रक्खा जाय। कुछ समय तक वह बन्दीगृह में रहा, अन्त में बुद्धवार की रात्रि को १४ जमादी-उल-अव्वल ६३९ हि० (२० नवम्बर, १२४१ ई०) में उसकी हत्या कर दी गई।

(१४) मलिक ताजुद्दीन संजर कुतलुक

(२५६) मलिक ताजुद्दीन सञ्जर कुतलुक एक उत्तम पुरुष था। वास्तव में किपचाक[१] उसके पूर्वजों का निवास स्थान था। वह बडा वीर, साहसी, पराक्रमी तथा गुणवान था। उसने कभी ऐसी वस्तुओं का सेवन नहीं किया जो धर्म के विरुद्ध थी। सुल्तान शम्सुद्दीन ने उसे ख्वाजा जमालुद्दीन करीमान से खरीदा था। सर्व प्रथम वह जामादार[२] नियुक्त हुआ। उसके कुछ समय उपरान्त वह शहनये आखुर नियुक्त हुआ। उसने प्रत्येक अवस्था में सुल्तान की बडी सेवा की। सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के उपरान्त रज़िया के राज सिंहासन पर विराजमान हो जाने के उपरान्त ताजुद्दीन सञ्जर को बरन का मुक्ता नियुक्त किया गया। उसे एक सेना देकर ग्वालियर की ओर भेजा गया। शाबान ६३५ हि० (मार्च-अप्रैल, १२३८ ई०) में लेखक मिनहाज सिराज उसकी सहायता से ग्वालियर के किले से निकल कर रज़िया के दरबार में पहुँचा। मार्ग में उसने लेखक पर बडी कृपा की। ग्वालियर से चलते समय लेखक की पुस्तकों के दो बक्स ऊँटों पर लदवा कर महावन पहुँचाये। अन्य अवसरों पर भी उसने लेखक को विशेष प्रोत्साहन दिया। देहली वापस आने पर वह सरसुती का मुक्ता नियुक्त हो गया। मुइज्जी राज्य-काल में उसने बडे अच्छे ढंग से सेवाएँ की। मुइज्जी राज्य-काल के उपरान्त अलाउद्दीन के राज सिंहासन पर विराजमान हो जाने के पश्चात् वह बदायूँ का मुक्ता नियुक्त हो गया। ६४० हि० (१२४२-४३ ई०) में उसने कटिहर तथा बदायूं के

---

१ तातरी में एक रेगिस्तान।

२ सुल्तान के वस्त्रों का प्रबन्धक।

मवासात को विध्वस कर दिया। कई स्थानो पर मस्जिदें निर्मित कराईं और मिम्बर[1] तथा खुत्बे का आयोजन कराया

(२५७) ८ हजार सवार और प्यादे तथा पायक बा अस्प[2] भर्ती किये। वह कालिजर तथा महोबे पर आक्रमण करके उन प्रदेशो पर विजय प्राप्त कर लेना चाहता था। कुछ लोगो को उसकी सेना की अधिकता, शक्ति, वीरता तथा साहस से ईर्ष्या होने लगी। शैतान के बहकावे में आकर उन्होंने उसे पान में विष मिला कर दे दिया। उसकी आँखें खराब हो गई और वह कुछ दिन उपरान्त मर गया। उसने लेखक की भिन्न-भिन्न अवसरो पर सहायता की थी। जब लेखक ६४० हि० (१२४२-४३ ई०) मे देहली से लखनौती की ओर रवाना हुआ तो उसने अपने परिवार को पहले ही बदायूं भेज दिया था। उसने लेखक के परिवार की बडी सहायता की और उनका बडा आदर सम्मान किया। पाँच महीने के उपरान्त लेखक भी बदायूँ पहुँचा। मलिक ताजुद्दीन ने उसे अत्यधिक धन सम्पत्ति प्रदान की और उसका बडा आदर सम्मान किया। उसको अक्ता भी प्रदान की और बदायूँ में उसे विशेष प्रोत्साहन देता रहा किन्तु अन्न-जल उसे लखनौती की ओर ले गया और वह वहाँ न रुक सका।

(१५) ताजुद्दीन सञ्जर कुरेत खाँ

(२५८) कुरेत खाँ किपचाक तुर्क था। वह बडा ही योग्य, पराक्रमी तथा बुद्धिमान था। युद्ध में वह इस्लामी सेना में सबसे बढ-चढ कर था। घुड-सवारी तथा युद्ध में वह अद्वितीय था; वह अपने साथ दो घोडे रखता था। एक पर वह स्वयं सवार होता था और दूसरे को आगे रवाना कर देता था। इस प्रकार वह शीघ्रातिशीघ्र बढता चला जाता था। घोडा के सरपट दौडने के समय वह एक घोडे की पीठ पर से कूद कर दूसरे की पीठ पर पहुँच जाता और पुन कूद कर पहले घोडे की पीठ पर आ जाता। इसी प्रकार वह कुछ स्थानो की यात्रा में दो घोडो पर सवार हो कर गया। धनुर्विद्या में वह इतना निपुण था कि युद्ध में कोई शत्रु तथा मृगया में कोई जन्तु उसके बाण से न बच सकता था। वह शिकारगाह में अपने साथ चीते, बाज तथा शिकारी कुत्ते न ले जाता था, केवल तीर से शिकार करता था। जहाँ कहीं भी वह शिकार का पता पा जाता तो सबसे पहले वहाँ पहुँच जाता। वह शहनये[3] बहर तथा कत्ती था। वह लेखक का बडा मित्र था। जब तुर्कों ने ख्वाजा मुहज्जबुद्दीन वजीर पर दो जमादी-उल-अव्वल ६४० हि० (२८ अक्तूबर, १२४२ ई०) में चढाई कर दी तो सञ्जर विरोधियो का नेता था। ख्वाजा मुहज्जब के दास मेहतर जता फर्राश ने उसके मुँह पर ऐसी तलवार मारी कि वह घायल हो गया और घाव के चिह्न कभी न मिट सके। ख्वाजा मुहज्जब की हत्या के उपरान्त कुरेत खाँ शहनये[4] पील हो गया। इसके उपरान्त वह सरजानदार नियुक्त हो गया फिर बरन का मुक्ता और उसके उपरान्त अवध का मुक्ता नियुक्त हुआ। उसने उन प्रदेशो में अत्यधिक युद्ध किया और अनेक मवासात के अधिकारियो को अपने अधीन बना लिया।

(२५९) अवध से उसने बिहार पर चढाई की और उस विलायत को विध्वस कर दिया। बिहार के किले के निकट उसके एक ऐसा बाण लगा कि उसकी मृत्यु हो गई।

१ वह मच जहाँ से खतीब (वक्ता) धार्मिक भाषण करते है।

२ पायक बा अस्प —वे पैदल सैनिक जिनके पास घोड़े भी हों। प्रारम्भ में देहली के सुल्तान कुछ पैदल सैनिकों को युद्ध के समय घोडे दे देते थे, क्योंकि वे लोग अपने साथ अपने घोडे नहीं लाते थे इसी लिये उनको भी वही वेतन मिलता था जो अन्य पैदल सैनिकों को।

३ जल सेना का प्रबन्धक।

४ हाथियों का प्रबन्धक

(१६) सैफ़ुद्दीन बतख़ाँ ऐबक ख़िताई

मलिक सैफुद्दीन बतखाँ ऐबक ख़िताई बडा गुणवान था। वह बडा धर्मनिष्ठ तथा नेक व्यक्ति था। युद्ध तथा वीरता के लिये वह बडा प्रसिद्ध था। सुल्तान शम्सुद्दीन ने उसे ख़रीदने के उपरान्त सरजामादार नियुक्त कर दिया। अलाउद्दीन के राज्य-काल में वह सरजानदार नियुक्त हो गया। कुहराम तथा सामाने की अक्ता उसे प्रदान कर दी गई। इसके उपरान्त उसे बरन की अक्ता दे दी गई। देहली में उच्च तथा मुल्तान पर चढाई करने के लिये उसे नियुक्त किया गया। इस युद्ध में उसका एक पुत्र, जोकि अपनी युवावस्था ही मे वीरता तथा साहस में बढा चढा था, घोडे से गिर कर सिन्ध नदी में डूब गया। वहाँ से वापस होने के उपरान्त सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्य-काल में वह वकीलदर नियुक्त हुआ और उसने बडी योग्यता से कार्य किया। सन्तूर के युद्ध में वह घोडे से गिर कर मर गया।

(१७) ताजुद्दीन सन्जर तबर ख़ाँ

(२६०) मलिक ताजुद्दीन सजर तबर खाँ गरजी[१] तुर्क है। वह बडा ही योग्य बुद्धिमान, पराक्रमी, वीर तथा साहसी है। वह अपनी वीरता, कार्य-कुशलता तथा युद्ध विद्या के लिये बडा प्रसिद्ध है। सुल्तान शम्सुद्दीन ने उसे खरीदा था। सुल्तान मुइज्जुद्दीन के राज्य-काल में वह अमीर आखुर नियुक्त हुआ। सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्य-काल में वह नायब अमीर हाजिब नियुक्त हुआ और अनजाने की अक्ता उसे प्रदान की गई। जब उलुग खाने आजम नागौर की ओर भेजा गया तो मलिक ताजुद्दीन तबर खाँ को उसका विश्वासपात्र तथा हितैषी होने के फलस्वरूप हिन्दुस्तान[२] की विलायत में कसमन्दी एव मदियाना की अक्ता प्रदान कर दी गई। वह वहाँ बहुत समय तक रहा। जब खाने आजम देहली पुन वापस आया, तो मलिक तबर खाँ भी देहली पहुँचा। उसे बरन की अक्ता प्रदान कर दी गई। कुछ समय तक वह वहाँ रहा। ६५४ हि० (१२५६ ई०) मे वह नासिरुद्दीन का वकीलदर नियुक्त हो गया और उसे बदायूँ की अक्ता प्रदान की गई। जब मलिक कुतलुग खाँ, जो अवध का शासक था, राजाज्ञा के विपरीत हिन्दुस्तान की सेना लेकर बदायूँ पर चढ आया तो देहली से मलिक तबर खाँ को सेना देकर मलिक बक्तमऊर खाँ के साथ उसका सामना करने के लिए भेजा गया। समरामऊ के क्षेत्र में दोनो सेनाओ में युद्ध हुआ। मलिक तबर खाँ को भागना पडा और वह देहली वापस आया। उसे अवध प्रदान कर दिया गया। वहाँ पहुँच कर उसने वह विलायत सुव्यवस्थित कर दी। हिन्दुस्तान के मवासात के काफिरो को उसने कठोर दण्ड दिये और उनकी धन सम्पत्ति पर अधिकार जमा लिया। राज्य की आज्ञानुसार वह कई बार देहली आया और प्रत्येक बार उसने बडे उचित ढँग से सेवायें की। ६५८ हि० (१२५९-६० ई०) मे जब यह इतिहास लिखा जा रहा था तब वह देहली आया। खाकाने मुअज्जम के परामर्श से सुल्तान ने उसे कल्बेहजरत की सेना देकर कोहपाया मेवात की ओर भेजा। उसने बडी उत्तम सेवायें की और पुन देहली वापस आगया। उलुग खाने मुअज्जम के साथ वह कोहपाया मेवात के हिन्दुओं से धर्म-युद्ध करने के लिये गया।

(२६१) इस युद्ध में उसने बडी वीरता दिखाई। देहली वापस आने पर उसे बहुमूल्य खिलअत प्रदान की गई और वह अवध की ओर वापस हो गया।

(१८) मलिक इख़्तियारुद्दीन युज़बक तुग़रिल ख़ाँ

मलिक इख्तियारुद्दीन युजबक वास्तव मे किपचाक वश मे था। वह सुल्तान शम्सुद्दीन

---

१ जारजिया का।

२ अलीगढ के पूरब का भाग, अवध तथा उसके आसपास के स्थान।

का दाम था। ग्वालियर के आक्रमण के समय वह नायब चाश्नीगीर[1] था। सुल्तान रुक्नुद्दीन के राज्य में वह अमीर मजलिस हो गया। इसके उपरान्त वह शहनये पील नियुक्त हुआ। *वह अत्यधिक विश्वासपात्र हो गया था।* जब तराएन के मैदान में सुल्तान के तुर्क दासों ने विद्रोह कर दिया और मलिक ताजुद्दीन, बहाउलमुल्क, करीमुद्दीन जाहिद तथा निज़ामुद्दीन राज सिंहासन पर विराजमान हुए और मलिकों तथा अमीरों के एक दल ने देहली को घेर लिया तो मलिक युज़बक तथा मलिक कराकश देहली पहुँच कर सुल्तान से मिल गये। मंगलवार शाबान मास ६३६ हि० के अन्तिम दिन (४ मार्च, १२४२ ई०) तक उसने बड़ी योग्यता से सुल्तान की सेवा की। सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन उस समय मेहतर मुबारकशाह फर्रुखी के पूर्णतय वश में था। उसने तुर्क मलिकों तथा अमीरों को देहली से निकलवा दिया था। सुल्तान को बहका कर उसने मलिक युज़बक तथा मलिक कराकश को कैद करवा दिया। बुधवार ६ रमज़ान ६३६ हि० (१३ मार्च, १२४२ ई०) को जब देहली पर पूर्णतय अधिकार स्थापित हो गया तो मंगलवार ८ जीकाद ६३६ हि० (१० मई, १२४२ ई०) को मलिक युज़बक को मुक्त कर दिया गया।

(२६२) सुल्तान अलाउद्दीन के राज्य-काल में उसे तबरहिन्दा की अक्ता प्रदान कर दी गई। इसके उपरान्त उसे लाहौर की अक्ता प्रदान हुई। वहाँ उसमें तथा मलिक नसीरुद्दीन मुहम्मद बिन्दार में युद्ध हो गया। इसके उपरान्त वह सुल्तान के विरुद्ध षड्यन्त्र रचने लगा। उसके मस्तिष्क में आतंक तथा हृदय में कठोरता उत्पन्न हो गई थी। उलुग खाने मुअज़्ज़म उसे दरबार में ले आया और उसको सम्मान प्रदान किया। उलुग खाने मुअज़्ज़म ने सुल्तान से सिफारिश करके उसे खिलअत तथा सम्मान प्रदान कराया और उसका विद्रोह क्षमा कर दिया गया। कुछ समय पश्चात् उसे कन्नौज की अक्ता प्रदान कर दी गई। उसने पुन विद्रोह करना प्रारम्भ कर दिया। देहली से मलिक कुतुबुद्दीन हसन को उस पर चढ़ाई करने के लिये सेना देकर भेजा गया। वह उसे अधीनता स्वीकार करने के लिये विवश करके देहली पुन ले आया। थोड़े समय के बाद उसे अवध प्रदान कर दिया गया। जब वह देहली फिर आया तो उसे लखनौती का राज्य प्रदान कर दिया गया। वहाँ पहुच कर उसने उस विलायत को सुव्यवस्थित किया। जाजनगर के राय से उसका युद्ध छिड़ गया। जाजनगर की सेनाओं का नेता साबन्तर था। वह राय का जामाता था। उसने मलिक इज़्ज़ुद्दीन तुग़रिल तुग़ान ख़ाँ के समय में लखनौती नदी के तट पर पहुँच कर बड़ी वीरता से इस्लामी सेना को लखनौती के अन्दर भगा दिया। तुग़ान खाँ युज़बक ने अपने समय में उस पर आक्रमण किया किन्तु पराजित हुआ। राय जाजनगर से मलिक युज़बक का पुन युद्ध हुआ और उसे विजय प्राप्त हुई। तीसरे अवसर पर उसे कुछ क्षति पहुँची। एक सफेद हाथी, जोकि उस प्रदेश में बड़ा ही बहुमूल्य समझा जाता था, मस्त हो गया और वह उसके हाथ से निकलकर जाजनगर के काफ़िरों के हाथ में पहुँच गया। दूसरे वर्ष मलिक युज़बक ने लखनौती से उरमुर्दन पर चढ़ाई की और राय की राजधानी पर पहुँच गया।

(२६३) वह नगर उरमुदन के नाम से प्रसिद्ध था। वहाँ का राय भाग गया, राय का घरबार, धन सम्पत्ति तथा हाथी इस्लामी सेना को प्राप्त हुये। वहाँ से लखनौती वापस होने के पश्चात् उसने देहली के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। लाल, काला तथा सफेद तीन प्रकार के छत्र धारण कर लिये। लखनौती से अवध पर चढ़ाई कर दी। अवध पहुँच कर वहाँ अपने

[1] सुल्तान के भोजन को सर्व प्रथम चख कर सेवन के योग्य बताना चाश्नीगीर का काम था।

नाम का खुत्बा पढ़वा दिया¹ और सुल्तान मुग़ीसुद्दीन की पदवी धारण कर ली। दो सप्ताह के उपरान्त एक तुर्क अमीर ने जोकि सुल्तान की सेना को लिये हुये अवध के निकट के एक स्थान में था, युजबक पर चढ़ाई करके यह प्रसिद्ध कर दिया कि सुल्तान की सेना शीघ्र पहुँचने वाली है। मलिक युजबक हार गया और नाव पर बैठकर लखनौती की ओर चल दिया।

मलिक युजबक के इस विद्रोह की समस्त हिन्दुस्तान के निवासियो, धार्मिक नेताओ, गण्यमान्य व्यक्तियो, मुसलमानो तथा हिन्दुओ ने निन्दा की। वे बादशाह के विरुद्ध विद्रोह करने के कारण उससे बड़े रुष्ट थे। वास्तव में उसने यह बड़ा दुष्कर्म किया। जब वह अवध से लखनौती वापस हुआ तब उसने कामरूद पर चढ़ाई करने के लिये बेगमती² नदी से एक सेना भेजी। राय कामरूद उससे युद्ध न कर सका और भाग गया। मलिक युजबक ने कामरूद नगर पर अधिकार जमा लिया और अत्यधिक धन सम्पत्ति तथा खज़ाना उसे प्राप्त हो गया। उस धन सम्पत्ति का उल्लेख सम्भव नही। इस लेखक ने, जब कि वह लखनौती में था विश्वस्त सूत्रो से सुना है कि ईरान के बादशाह गुश्तास्प के समय मे, जिसने कि चीन के मार्ग मे हिन्दुस्तान पर आक्रमण किया था, इस समय तक एक हज़ार दो सौ खज़ाने वहाँ वर्तमान थे। उन पर मुहर लगी हुई थी और किसी राय न उस खज़ाने में से कुछ खर्च न किया था।

(२६४) वह धन सम्पत्ति इस्लामी सेना को प्राप्त हो गई। कामरूद मे खुत्बे तथा नमाज़े जुमा का आयोजन हो गया और वहाँ पर इस्लाम के चिन्ह मिलने लगे, किन्तु इससे कोई लाभ न हुआ क्योकि उसने अपने पागल-पन से सब कुछ नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। बुद्धिमानो ने कहा है कि अत्यधिक सफलता प्राप्त करने के प्रयास से किसी को कोई लाभ नही हो सकता।

कामरूद की विजय के उपरान्त राय ने अपने विश्वास-पात्रो को उसके पास भेजकर निवेदन किया कि "इस राज्य पर तूने विजय प्राप्त कर ली। किसी मुसलमान राजा को यह राज्य न प्राप्त हो सका। अब तू लौट जा और मुझे सिंहासनारूढ कर दे। मैं तुझे प्रत्येक वर्ष इतना सोना और इतने हाथी भेजा करूगा कि तेरे नाम का खुत्बा और सिक्का यहाँ चलता रहेगा।" मलिक युजबक ने यह बात किसी प्रकार स्वीकार न की। राय ने फिर अपनी प्रजा को सिखा कर उसके पास भेजा कि वे उसे अपनी अधीनता-स्वीकृति अर्पण करें और जिस भाव पर भी सभव हो कामरूद का सब अनाज खरीद लें, यहाँ तक कि इस्लामी सेना के पास भोजन सामग्री न रह जाय। उन्होंने उसके आदेशानुसार समस्त अनाज मँहगे दामो में खरीद लिया। मलिक ने राज्य की जन सख्या तथा कृषि को देखकर जोकि उन्नति पर थी अपने पास कुछ भी अन्न तथा भोजन-सामग्री सग्रह न की। जब रबी की फसल का समय आया तो राय ने अपनी प्रजा को लेकर आक्रमण कर दिया और चारो ओर से पानी के बाँध खोल दिये। मलिक युजबक तथा इस्लामी सेना तग आ गई। भोजन-सामग्री न होने के कारण सभी मरने लगे। इस्लामी सैनिको ने यह निश्चय किया कि इस स्थान से चला जाना चाहिये नही तो सभी भूखे मर जायेंगे। वे कामरूद से लखनौती की ओर रवाना हुये। मैदानो तथा नदियो पर हिन्दुओ ने अपने अधिकार जमा लिये थे। मार्ग दर्शाने वालो ने उन्हे बहका कर ऐसे पर्वतीय प्रदेश में पहुँचा दिया जहाँ मार्ग तग था। उस स्थान पर चारो ओर से हिन्दू पहुँच गये।

(२६५) आगे की पक्तियो के दो हाथियो में युद्ध हो जाने के कारण इस्लामी सेना तथा हिन्दुओं की सेना में भी युद्ध प्रारम्भ हो गया। हिन्दू चारो ओर से पहुच गये। मुसलमान तथा हिन्दू भिड गये। मलिक युजबक उस समय हाथी पर था। बाण उसके सीने पर लगा और वह

१ अपने आपको स्वतंत्र शासक घोषित कर दिया।
२ पुस्तक में बरमदी है।

गिर कर कैद हो गया। उसका परिवार उसके सहायक तथा सैनिक बन्दी बना लिये गये। जब वे राय के सामने पेश हुये, तो उसने अपने पुत्र को बुलवाया। जब उसका पुत्र आया तो वह अपने पुत्र के मुँह पर मुँह रख कर मर गया।

(१६) मलिक ताजुद्दीन इरसलान खाँ सन्जर ख्वारज्मी

इरसलान खाँ बडा ही वीर तथा पराक्रमी था। वह बडा बुद्धिमान और साहसी था। सुल्तान ने उसे इख्तियारुलमुल्क अबूकक्र हब्शी से खरीदा था। इख्तियारुलमुल्क उसे अदन तथा मिस्र से लाया था। कुछ लोगो का कथन है कि वह ख्वारज्मी अमीरो में से किसी अमीर का पुत्र था, वह शाम अथवा मिस्र में कैद हो गया था और उसे बेच दिया गया था। जब सुल्तान ने उसे खरीद लिया तो वह सर्व प्रथम खासादार[1] नियुक्त हुआ। इस पद पर उसने कई वर्ष तक कार्य किया। रुक्नुद्दीन के राज्य-काल के उपरान्त रज़िया के राज्य-काल में वह चाश्नीगीर नियुक्त हो गया। कुछ समय उपरान्त उसे बलअराम की अक्ता प्रदान कर दी गई। सुल्तान शम्सुद्दीन ने अपने जीवन में मलिक बहाउद्दीन तुग़रिल भियाना (निवासी) की पुत्री का विवाह उससे कर दिया था। उस विलायत (प्रदेश) तथा उसके पास के स्थानो को इस्लामी राज्य-काल के प्रारम्भ में उसी ने सुव्यवस्थित किया था।

(२६६) सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्य-काल में भियाना की अक्ता इरसलान खाँ को प्रदान कर दी गई। कुछ समय तक वह वकीलदर के पद पर विराजमान रहा। इसके पश्चात् जब तबरहिन्दा नगर शेर खाँ के सम्बन्धियों से ले लिया गया तो वह ज़िलहिज्जा ६५१ हि० (जनवरी-फरवरी १२५४ ई०) में उसे प्रदान कर दिया गया। इसके उपरान्त जब खाने मुअज्जम उलुग खाने आज़म सुल्तान के आदेशानुसार नागौर गया और वहाँ से पुन सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ तो इरसलान खाँ भी उसके साथ था। जब वे देहली पहुँचे तो इरसलान खाँ को भी सम्मानित किया गया और तबरहिन्दा की ओर भेज दिया गया। जब मलिक शेर खाँ ने तुर्किस्तान से वापस होकर तबरहिन्दा पर पुन अधिकार जमाने का प्रयास प्रारम्भ किया तो वह अपने साथ लाहौर से सवार और प्यादों की बहुत बडी सख्या लेकर तबरहिन्दा के किले के निकट रात्रि में पहुँच गया। शेर खाँ के सैनिक शहर तथा किले के चारो ओर फैल गये। प्रात काल इरसलान खाँ सन्जर ने अपने पुत्रो तथा विश्वास-पात्रो को लेकर आक्रमण कर दिया। शेर खाँ के सवार इधर उधर हो गये थे। शेर खाँ को विवश होकर लौटना पडा। तत्पश्चात् जब शेर खाँ दरबार में पहुचा तो इरसलान खाँ भी दरबार में उपस्थित हुआ। वह कुछ समय देहली में रहा, इसके उपरान्त उसे अवध प्रदान कर दिया गया। कई बार कुतलुग खाँ ने अपने अमीरो तथा सहायको को लेकर अवध तथा कडे के आसपास आक्रमण किया किन्तु इरसलान खाँ ने उन्हे छिन्न-भिन्न कर दिया और सेना लेकर उन पर चढाई की। वे तितर-बितर हो गये। कुछ समय उपरान्त उसने सुल्तान का विरोध प्रारम्भ कर दिया। शाही पताकाये उससे युद्ध करने के लिए अवध तथा कडे की ओर रवाना हुई। जब शाही पताकाये वहाँ पहुँची तो इरसलान खाँ ने लश्करे क़ल्ब[2] से युद्ध न किया और अपने विश्वासपात्रो को भेज कर क्षमा याचना की।

(२६७) यह निश्चय हुआ कि जब सुल्तानी पताकाये देहली पहुँच जाय तो इरसलान खाँ तथा मलिक जानी का पुत्र कुतलुग खाँ दरबार में उपस्थित हो। उनके प्रार्थना-पत्र इस प्रकार स्वीकार हो गये। जब सुल्तान की सवारी राजधानी में पहुँच गई तो कुछ

१ सुल्तान का व्यक्तिगत सेवक

२ देहली की सेना।

पहुचा था। वह उस स्थान पर दो मास ठहरा रहा किन्तु बल्बन किले पर अधिकार न जमा सका। अत उच्च की ओर वापस लौट गया। मलिक शेर खाँ ने तबरहिन्दा तथा लाहौर मे उच्च के किले पर चढाई करके उसे घेर लिया और कुछ समय तक उसी स्थान पर रहा। मलिक बल्बन इस बात पर विश्वास करके, कि वे दोनों एक ही वश तथा एक ही सुल्तान के दास है, मलिक शेर खाँ की सेवा में पहुँच कर उसके शिविर में प्रविष्ट हो गया। मलिक शेर खाँ ने उस समय उसका स्वागत किया, किन्तु शिविर के बाहर निकल कर यह आदेश दे दिया कि मलिक बल्बन को उस समय तक बाहर न जाने दिया जाय जब तक कि किले के निवासी किला उसके हवाले न कर दें। मलिक बल्बन ने तग आकर किले वालो को यह आदेश दे दिया कि किला शेर खाँ को प्रदान कर दिया जाय। जब किले पर शेर खाँ का अधिकार स्थापित हो गया तो उसने मलिक बल्बन को छोड दिया। मलिक देहली पहुचा। जब वह दरबार में उपस्थित हुआ तो बदायूँ तथा आसपास के स्थान उसे प्रदान कर दिये गये। जब शाही पताकायें ऊपर की ओर रवाना हुई और तबरहिन्दा पर अधिकार स्थापित हो गया, तो उच्च तथा मुल्तान की ओर सेनाय भेजी गई। शेर खाँ तथा मुल्तान के मलिकों से युद्ध होता रहा। मलिक शेर खाँ ने तुर्किस्तान की ओर प्रस्थान कर दिया और मुल्तान तथा उच्च पुन मलिक बल्बन को प्राप्त हो गये। जब उसने उन स्थानों पर अधिकार स्थापित कर लिया तो मुल्तान का विरोध प्रारम्भ कर दिया। उसने मलिक शम्सुद्दीन कुर्त गोरी को तुर्किस्तान के बादशाह हलाकू मुग़ल के पास भेजकर एक शहना (प्रबन्धक) भेजने की प्रार्थना की। मलिक बल्बन ने अपने एक पुत्र को भी हलाकू के आश्वासन के लिये भेज दिया।

(२७२) इसके उपरान्त जब खान मुअज्जम उलुग खाने आजम दरबार को वापस हुआ और मलिक कुतलुग खाँ विद्रोह करके मलिक बल्बन से मिल गया तो मलिक बल्बन ने ६५५ हि० (१२५७-५८ ई०) में शाही पताकाओं के देहली पहुँच जाने के उपरान्त उच्च तथा मुल्तान की सेना लेकर देहली पर चढाई कर दी। जब सुल्तान को यह हाल ज्ञात हुआ तो उससे युद्ध करने के लिये आदेश प्रदान किया। उलुग खाँ समस्त मलिकों तथा अमीरों को लेकर विरोधी सेना से युद्ध करने के लिये निकल खडा हुआ। १५ जमादी-उल-अव्वल ६५५ हि० (१ जून १२५७ ई०) को वह कुहराम तथा सामाने के निकट पहुँच गया। देहली से पगडी बाँधने वालो तथा कुलाह धारण करने वालो (आलिमो) न मलिक बल्बन के पास पत्र भेज कर उससे निवेदन किया कि यदि वह शहर (देहली) पर आक्रमण कर दे तो वे लोग उसकी सहायता करेंगे। मलिक बल्बन ने शहर की ओर प्रस्थान किया। वह बृहस्पतिवार ६ जमादी-उल-आखिर ६५५ हि० (२१ जून, १२५७ ई०) को शहर के निकट पहुँच गया किन्तु उसे अपने विचारो में सफलता प्राप्त न हुई। जिन लोगो ने यह पत्र लिखे थे, उन्हे शहर के बाहर भेज दिया गया था। जब मलिक बल्बन जूद उद्यान के पास, जोकि देहली के निकट है, मलिक कुतलुग खाँ तथा सलेकये जहाँ के पास पहुँचा तो उन्ह उन लोगो के निकाले दिये जाने का वृत्तान्त ज्ञात हुआ। आशा की वह आग निराशा के जल मे बुझ गई। दोपहर पश्चात् की नमाज के उपरान्त वे शहर के (देहली) द्वार पर पहुँचे और शहर के चारो ओर चक्कर लगाते रहे। रात में वहीं रुके रहे और लौटने का दृढ सकल्प कर लिया। शुक्रवार ७ तारीख[1] (२२ जून, १२५७ ई०) को उच्च तथा मुल्तान की सेना बल्बन का साथ छोडकर चल दी।

---

१ पुस्तक में २७ जमादी-उल आखिर है किन्तु ७ जमादी-उल-आखिर उचित है, क्योंकि वे ६ जमादी उल आखिर को जूद उद्यान के निकट पहुँचे और एक दिन से अधिक वहाँ न ठहरे। ११ जमादी उल आखिर को उलुग खाँ भी देहली पहुँच गया (देखो ६५५ हि० का हाल पृ० २२५ २६)।

(२७३) अधिकतर लोग सुल्तान की सेवा में उपस्थित हो गये। मलिक बल्बन सिवालिक के मार्ग से लगभग २०० या ३०० सवारों को लेकर उच्च पहुँचा और वहाँ से खुरासान तथा एराक़ की ओर चल दिया। वहाँ वह तुर्किस्तान के शाहजादे हलाकू मुगल की सेवा में उपस्थित हुआ। वहाँ से वह पुन उच्च वापस आया और इस समय तक अर्थात् ६५८ हि० (१२५६-६० ई०) तक उसने अपने दूत तथा सिन्ध के शहना, जोकि मुगल सेना से सम्बन्धित थे, दरबार में भेजे। भगवान् करे कि भविष्य मे सभी कार्य उत्तम रूप से होते रहे।

(२१) मलिक नुसरत खाँ बद्रुद्दीन सुन्कर सूफी रूमी

मलिक नुसरत खाँ सुन्कर सूफी, रूमी वश से है। उसमें बड़े उत्तम गुण वर्तमान हैं और वह बडा ही वीर, पराक्रमी तथा चरित्रवान है। वह सुल्तान शम्सुद्दीन का दास था। उसने सुल्तान के पुत्रो के राज्य-काल में बडे उत्तम रूप से भिन्न भिन्न पदो पर कार्य किया किन्तु अलाउद्दीन मसऊदशाह के राज्य-काल म अर्थात् ६४० हि० (१२४२-४३ ई०) में जब तुर्क अमीरो ने विद्रोह करके ख्वाजा मुहज्जब वज़ीर की हत्या कर दी तो यह मलिक विद्रोही अमीरो के नेताओ में सम्मिलित था। इसके उपरान्त वह कोल का अमीर नियुक्त हो गया और वह विलायत अपने अधिकार में कर ली। वह अपने लश्कर तथा प्रजा से न्याय-पूर्वक व्यवहार करता था।

(२७४) जब लेखक मिनहाज सिराज ने लखनौती की ओर प्रस्थान किया और कोल प्रदेश में पहुँच गया तो इस चरित्रवान अमीर ने उसके प्रति बडी कृपा-दृष्टि दिखाई। इसके बाद उसे अन्य अक्तायें भी प्रदान हुई। सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्य में भियाना की विलायत उसे अक्ता के रूप में प्रदान की गई। वह कुछ समय तक वहाँ रहा और षड्यन्त्रकारियो को दण्ड देता रहा। जिस समय मलिक इज्जुद्दीन बल्बन किशलू खाँ सिन्ध की विलायत से शहर देहली की विलायत में पहुँच गया तो मलिक सुन्कर सूफी बहुत बडी सेना लेकर भियाना से शहर (देहली) पहुचा। शहर के निवासियो तथा प्रतिष्ठित लोगो को उसके देहली पहुँच जाने से बडा सतोष हो गया। इसके उपरान्त ६५७ हि० (१२५८-५६ ई०) मे सुल्तान तथा उलुग खाँ की कृपा से उसे तबरहिन्दा, सुनाम, भाभर, लखवाल तथा ब्याह नदी के तट तक के स्थान प्रदान कर दिये गये। उसे नुसरत खाँ की उपाधि प्रदान की गई। उसने उस प्रदेश में बडी योग्यता से कार्य किया और अत्यधिक सेना एकत्र की। इस समय तक, जबकि यह इतिहास लिखा जा रहा है, वह सुल्तान के आदेश मे उसी प्रदेश का अधिकारी है।

(२२) अरकली दादबक[१] सैफुद्दीन शम्सी अजमी

मलिक सैफुद्दीन अरकली दादबक शम्सी अजमी किपचाक वश से सम्बन्धित है। वह बडा ही न्यायकारी, योग्य, बुद्धिमान तथा समझदार व्यक्ति है। वह अपनी वीरता तथा साहस के लिए बडा प्रसिद्ध है। वह पक्का मुसलमान तथा धर्मनिष्ठ है।

(२७५) वह अपने वचन तथा कार्य मे बडा ही सच्चा एव नेक है। १८ वर्ष से वह मजालिम[२] तथा अदल की गद्दी को सुशोभित कर रहा है। वह शरा (इस्लामी धर्म के नियम) के आदेशो का पूर्णतय पालन करता है और शरा के आदेशो के विरुद्ध एक शब्द भी नही कहता। लेखक मिनहाज सिराज दो अवसरो पर लगभग ८ वर्ष तक उसके साथ देहली के अदल तथा मजालिम विभाग में कार्य कर चुका है। उसने उसे सर्वदा सुन्नत[३] तथा धर्म के

१ दादबक तथा अमीरदाद एक ही पदाधिकारी हैं।
२ न्याय विभाग।
३ वे कार्य जिन्हें मुहम्मद साहब उचित समझ कर किया करते थे।

मार्ग पर चलते हुये देखा है। उसके स्यासत[1] तथा न्याय द्वारा राजधानी के कुकर्मी तथा चोर डाकू लूट मार त्याग कर भय तथा खौफ़ के कोने में छिपे हुये हैं।

जिस समय से मलिक सैफुद्दीन ऐबक शम्सी दरबार में प्रविष्ट हुआ उसी समय से बराबर उसका आदर सम्मान होता रहा। जो स्थान, अक्ता, अथवा विलायत उसे प्रदान की गई, उसे उसने अपने न्याय तथा अपनी योग्यता से सुव्यवस्थित कर दिया और उसकी प्रजा सर्वदा सुखी रहती थी, उन पर कोई अत्याचार तथा जुल्म न हो सकता था। जब वह देहली का अमीरदाद नियुक्त हुआ तो वे १० या ११ शुल्क, जो उससे पूर्व अन्य अमीरदाद लेते थे, उसने लेने बन्द कर दिये, उनसे अपना कोई सम्बन्ध न रक्खा और उसकी आज्ञा भी न दी। सर्व प्रथम जब वह किपचाक के कबीलो से तथा अपनी मातृ भूमि से पृथक् हो गया, तो वह ख्वाजा मुनइम शम्सुद्दीन अज्मी अजम (ईरान) एराक, ख्वारज्म तथा गजनी के मलिकुत्तुज्जार के अधिकार मे पहुच गया। इसी कारण उसे अभी तक शम्सी कहा जाता है।

(२७६) जब वह सुल्तान शम्सुद्दीन के दरबार मे पहुँचा, तो सुल्तान ने उसकी योग्यता तथा वीरता देख कर उसे खरीद लिया। सुल्तान ने उसे देश के भिन्न-भिन्न भागो पर आक्रमण करने के लिये भेजा और सभी स्थानो पर उसने बडी योग्यता से कार्य किया। सुल्तान रजिया के राज्य-काल में वह सहमुलहश्म[2] नियुक्त हो गया। सुल्तान मुइज्जुद्दीन बहरामशाह के राज्य-काल में वह कडे का अमीरदाद नियुक्त हुआ। ६४० हि० (१२४२-४३ ई०) में सुल्तान अलाउद्दीन के राज्य में वह देहली का अमीरदाद नियुक्त हो गया। कुछ समय उपरान्त सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्य-काल में पलवल तथा कामा की अक्ता एव अमीरदाद का पद उसे प्रदान हुआ। कुछ काल के पश्चात् उसे बरन की विलायत प्रदान हुई। उसने वहाँ के विद्रोहियो को कडे दण्ड दिये। कुछ समय पश्चात् उसे कसरक की अक्ता तथा अमीरदाद का पद प्रदान किया गया। इसके दो वर्ष पश्चात् उसे बरन की अक्ता पुन दी गई। इस समय तक वह उसी स्थान पर विराजमान है।

(२३) मलिक नुसरतुद्दुनियाँ वद्दीन शेर खाँ सुन्कर

मलिक शेर खाँ बडा ही वीर तथा बुद्धिमान है। उसमे नाना प्रकार क गुण तथा उच्च कोटि की बातें पाई जाती हैं। वह उलुग खान आजम के चाचा का पुत्र था। उसके पिता तुर्किस्तान मे बडे प्रतिष्ठित समझे जाते थे। अलबरी कबीले में वे खान कहलाते थे। उनके पास अत्यधिक सेना तथा दास थे। इसका उल्लेख मलिक उलुग खाने आजम के हाल में, यदि भगवान् ने चाहा, तो किया जायगा।

(२७७) शेर खाँ को सुल्तान शम्सुद्दीन ने खरीदा था। उसने राज्य की अनेक सेवाये की थी। उसने इस वश के अन्य बादशाहो की भी बडी सेवाये की। जब वह बडा हो गया और जब सुल्तान अलाउद्दीन न मुगलो से, जोकि उच्च के किले तक पहुँच गये थे, युद्ध करने के लिये देहली मे लाहौर की ओर प्रस्थान किया तो तबरहिन्दा का किला तथा लाहौर की अक्ता उसे प्रदान कर दी। तबरहिन्दा तथा उसके आसपास के स्थान उसे सौंप दिये गये। जब कर्लुगियो ने मुलतान मलिक इज्जुद्दीन बल्बन से ले लिया तो शेर खाँ ने सेना लेकर तबरहिन्दा से मुल्तान की ओर प्रस्थान किया और उसे कर्लुगियो से छीन कर मलिक इख्तियारुद्दीन कुरेज को प्रदान कर दिया। कुछ समय उपरान्त मलिक शेर खाँ तथा मलिक बल्बन में इस कारण कि दोनो एक दूसरे के निकट के स्थानो के शासक थे मतभेद उत्पन्न हो गया। इसका

१ दण्ड विषयक कार्य।

२ दरबार तथा सेना के अर्ज के समय सहमुलहश्म सैनिकों की पंक्तियों को ठीक करने में।

उल्लेख हो चुका है। उसने उच्च का किला मलिक बल्बन से छीन कर समस्त सिन्ध प्रदेश पर अधिकार जमा लिया। जब मलिक आजम उलुग ख़ाँ ने सेना लेकर नागौर की ओर प्रस्थान किया, तो उलुग ख़ाँ तथा शेर ख़ाँ में सिन्धु नदी के तट पर मुठभेड हो गई। मलिक शेर ख़ाँ वहाँ से तुर्किस्तान चला गया और मुग़लो की सेना में मनकू ख़ाँ के दरबार में उपस्थित हो गया। वहाँ से बडे सम्मान से लौटने के पश्चात् वह लाहौर की ओर रवाना हुआ। जब वह लाहौर के निकट पहुँचा, तो मलिक जलालुद्दीन मसऊदशाह से, जोकि शम्सुद्दीन का पुत्र था, मिल गया। अन्त में दोनो में मतभेद हो गया और मलिक जलालुद्दीन निराश होकर लौट गया। उसके सैनिको पर शेर ख़ाँ के लश्कर ने अधिकार जमा लिया। इसके उपरान्त मलिक शेर ख़ाँ ने तबरहिन्दा पर चढाई की। जब इरसलान ख़ाँ किले के बाहर निकला तो मलिक शेर ख़ाँ को लौटना पडा। राजधानी से अमीरो ने उसके पास अपने दूत भेजे और मलिक शेर ख़ाँ उनसे सन्धि करके सुल्तान के दरबार मे उपस्थित हो गया।

(२७८) मलिक इरसलान ख़ाँ भी दरबार में पहुँचा। इरसलान ख़ाँ को अवध प्रदान कर दिया गया और तबरहिन्दा तथा अन्य विलायतें और अक्तायें, जो उसके पास पहले से थी, उसे पुन प्रदान कर दी गई। कुछ समय तक वह उस सीमा पर रहा, किन्तु इस बीच में भी पहले की भाँति उसका तथा मलिक इज्जुद्दीन किशलू ख़ाँ का विरोध बना रहा। दरबार से एक आदेश भेज कर शेर ख़ाँ को देहली बुलवा लिया गया और तबरहिन्दा नुसरत ख़ाँ सुन्कर सूफी को प्रदान कर दिया गया, जिससे सीमा पर विरोध न हो सके। कोल, बियाना, बलाराम जलेसर, मिहिर, महावन तथा ग्वालियर का क़िला मलिक शेर ख़ाँ को सौंप दिया गया और इस समय रजब ६५८ हि० (जून-जुलाई, १२६० ई०) में जब कि यह इतिहास लिखा जा रहा है वह उसी स्थान पर विराजमान है।

(२४) मलिक किशली ख़ाँ सैफ़ुद्दीन ऐबक अस्सुल्तान मलिकुलहुज्जाब

किशली ख़ाँ ऐबक उलुग ख़ाने आजम का सगा भाई है। वे अलबरी ख़ान थे। जब तुर्किस्तान तथा क़िपचाक के कबीले काफिर मुगलो के अधीन हो गये, तो उन्हे विवश होकर अपने परिवार तथा सहायको को लेकर अपना देश छोडना पडा। मलिक किशली ख़ाँ ऐबक छोटा भाई था और ख़ाकाने मुअज्जम उलुग ख़ाँ बडा भाई था। अपना देश छोडते समय भावी मलिक अमीर हाजिब अल्प अवस्था में था। जब उन्होने मुगलो के कारण प्रस्थान किया तो मार्ग में एक स्थान की भूमि में दलदल मिली।

(२७९) मलिक अमीर हाजिब रात्रि में सवारी से कीचड में गिर पडा। मुगल उनके पीछे आ रहे थे। कोई भी इस बात का साहस न कर सकता था कि उसे उठा ले। सब लोग आगे निकल गये। उलुग ख़ाने मुअज्जम ने उसके पास पहुँच कर उसे उठा लिया, मुगल दूसरी बार वहाँ पहुँच गये और उन्होंने मलिक (उलुग आजम) तथा अमीर हाजिब (किशली ख़ाँ) को पकड लिया। उन्हे एक व्यापारी ख़रीद कर इस्लामी नगरों में ले गया। इख्तियारुलमुल्क उनकी योग्यता देखकर उन्हे देहली लाया। सुल्तान शम्सुद्दीन ने उन्हे इख्तिया-रुलमुल्क से ख़रीद लिया। वे बडे योग्य, साहसी, बुद्धिमान तथा पराक्रमी प्रतीत होते थे। यह बात पूर्णतय न्यायपूर्ण तथा सत्य है कि उसके समान कोई अन्य तुर्क मलिक इतना बुद्धिमान, उत्कृष्ट तथा राज भक्त न था। ईश्वर ने उसे वीरता, साहस तथा अनेक गुण प्रदान किये थ। सूझबूझ में वह पिछले तथा वर्तमान सभी वजीरो से बढ-चढ कर था। वीरता तथा पौरुष मे ईरान तथा तूरान के किसी पहलवान की उससे समानता न की जा सकती थी।

जब सुल्तान ने मलिक अमीर हाजिब को ख़रीद लिया तो उसने बहुत समय तक

सुल्तान की सेवा की। सुल्तान रजिया के राज्य-काल मे वह नायब सरजानदार[1] नियुक्त हुआ। कुछ समय उपरान्त मुइज्जी राज्य-काल में वह सरजानदार हो गया। वह सुल्तान अलाउद्दीन के राज्य में अमीर आखुर नियुक्त हुआ।

(२८०) सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्य-काल में जब उलुग खाँ को खान बनाया गया तो किशली खाँ को मलिक अमीर हाजिब नियुक्त कर दिया गया। नागौर मलिक बल्बन से लेकर किशली खाँ को प्रदान कर दिया गया। जब वह अमीर हाजिब था तो उसने सभी छोटे बडे तुर्कों को इतना प्रसन्न कर रखा था कि उसका उल्लेख सम्भव नही। सभी लोग उसके कृतज्ञ तथा कृपा-पात्र थे। जब उलुग खाने आजम ने नागौर की ओर प्रस्थान किया तो मलिक अमीर हाजिब को कडा प्रदान कर दिया गया। वह उस ओर चल दिया। जब उलुग खाने आजम देहली आया तो अमीर हाजिब भी दरबार में उपस्थित हुआ। उसे दूसरी बार फिर अमीर हाजिब नियुक्त कर दिया गया। कुछ समय पश्चात् जब रबी-उल-आखिर ६५३ हि० (मई १२५५ ई०) में मलिक कुतुबुद्दीन हुसेन की मृत्यु हो गई तो मेरठ से बँदियारान पवत तक के स्थान उसको सौंप दिये गये। वे सब स्थान उसके अधीन रहे। कुछ वर्ष पश्चात् उसने आसपास के स्थानो पर आक्रमण करके बँदियारान पर्वत के प्रदेशो से रुडकी तथा मियाँपूर के स्थानो को अपने अधिकार में कर लिया। वहाँ से धन सम्पत्ति प्राप्त की। रायो तथा मवासात पर अधिकार जमा लिया। ६५६ हि० (१२५८ ई०) में उसे कोई भीतरी रोग हो गया। लज्जावश उसने इसके विषय में किसी को कुछ न बताया। कुछ महीने कष्ट भोग कर रविवार २० रजब ६५७ हि० (१३ जुलाई, १२५९ ई०) को मर गया।

(२५) खाकानुल मुअज्जम बहाउलहक् वद्दीन उलुग खाँ बल्बन अस्सुल्तानी

(२८१) खाकान मुअज्जम उलुग खान आजम प्रसिद्ध अलबरी खानो के वश से था। शेर खा तथा सुल्तान के पिता सगे भाई थे। दोनो के पिता अलबरी वश से थे। वह लगभग १० हजार वशो का खान था। तुर्किस्तान में अलबरी तुर्क बडे सम्मानित समझे जाते हैं। इस समय उलुग खा के चाचा के पुत्र उन कबीलो में बडे प्रतिष्ठित हैं। यह बात मैं ने मलिक कुरेत खाँ सजर से सुनी है। चूकि इस्लाम के लिये कोई दृढ स्थान बनाने, मुहम्मदी धर्म को ससार में एक ऐसा स्थान जहाँ वह शान्ति से रह सके देने, और हिन्दुस्तान को आश्रय प्रदान करने की ईश्वर की इच्छा थी, अत उसने उलुग खान आजम को मुगलो के उत्पात के फलस्वरूप तुर्किस्तान से हटाकर, कुटुम्ब तथा सम्बन्धियो सहित बगदाद और बगदाद से गुजरात की ओर भिजवा दिया। ख्वाजा जमालुद्दीन बसरी ने, जोकि अपनी धर्मनिष्ठता और पवित्रता के लिये प्रसिद्ध थे, उसे खरीद लिया और बडे प्रेम से उसका पालन-पोषण किया। क्योकि उसके माथे से समझ बूझ तथा वीरता दृष्टिगोचर होती थी, अत उसने उस पर विशेष कृपा दृष्टि रक्खी। ६३० हि० (१२३२-३३ ई०) में वह देहली आया। उस समय सुल्तान शम्सुद्दीन राज सिंहासन पर आरूढ था। उसे कुछ अन्य तुर्को के साथ सुल्तान की सेवा में पेश किया गया।

(२८२) जब सुल्तान ने उलुग खाँ को देखा तो उसे अन्य तुर्कों के साथ खरीद लिया और उसे राज्य का एक पद प्रदान कर दिया। उसकी योग्यता तथा कुशलता देख कर सुल्तान ने उसे खासादार नियुक्त कर दिया मानो अधिकार का बाज उसके हाथ पर

[1] पुस्तक में जामादार है किन्तु जानदार ही उचित है।

बैठा दिया। इसका अर्थ यह भी था कि वह सुल्तान के पुत्रों के राज्य-काल में उन्हें राज्य का अपहरण करने वालों से सुरक्षित रक्खे। वह उपर्युक्त पद पर शम्सी राज्य-काल में विराजमान रहा। भाग्यवश उसे उसका भाई किशली खाँ अमीर हाजिब भी मिल गया। वह इससे बड़ा प्रसन्न हुआ और इससे उसकी शक्ति बढ़ गई। सुल्तान रुक्नुद्दीन के राज्य-काल में वह अन्य तुर्कों के साथ हिन्दुस्तान की ओर गया और जब वे लोग लौटे तो वह भी उनके साथ देहली लौट आया। कुछ दिन वह बन्दीगृह में रहा और उसे असफलता का मुँह देखना पड़ा। सम्भवतः इसमें उसके लिये कोई अच्छाई ही रही हो। वह यह हो कि शायद उसे उन लोगों की दशा का अनुभव हो जाय जो असफल हो जाते हैं, इससे शिक्षा प्राप्त करके उसे ऐसे लोगों के साथ अच्छा व्यवहार करने की आदत पड़ जाय और अपने अधिकार के समय इस श्रेणी के लोगों से उचित रूप से व्यवहार कर सके।

कहानी

कहा जाता है कि किसी बादशाह के एक पुत्र था। उस बादशाह का वैभव बहुत बड़ा चढ़ा था। पुत्र बड़ा ही रूपवान और समझदार था। उस बादशाह ने आदेश दे दिया था कि जहाँ कहीं भी बुद्धिमान, ज्ञान-सपन्न तथा विद्वान् व्यक्ति मिल जायें तो उन्हें पुत्र की शिक्षा के लिये एकत्र किया जाय।

(२८३) (यह भी आदेश दिया कि) इन निपुण लोगों में से एक व्यक्ति, जो सब से अधिक बुद्धिमान, विद्वान् तथा कलाकार हो, चुन कर पुत्र की शिक्षा के लिये नियुक्त किया जाय, जिससे मेरा यह पुत्र शिक्षा तथा भिन्न-भिन्न जातियों के विषय में जानकारी, राज्य-सम्बन्धी कार्य, शासन, नीति, न्याय, प्रजा के पालन आदि के विषय में शिक्षा ग्रहण करे और प्रत्येक क्षेत्र में पूर्णतया जानकारी प्राप्त कर ले।

एक निपुण व्यक्ति, जो शिक्षा के लिये चुना गया था, सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ और उसने अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया। जब पुत्र शिक्षा समाप्त कर चुका और उसे प्रत्येक क्षेत्र में ज्ञान प्राप्त हो गया तो बादशाह को उसके पुत्र की योग्यता के विषय में सूचना दे दी गई। उसके गुरु के विषय में आदेश दिया गया कि 'कल प्रातःकाल दरबार में उपस्थित किया जाय और शाहज़ादे को भी पेश किया जाय, जिससे यह पता लगाया जा सके कि उसने कौन-कौन से ज्ञान प्राप्त किये हैं और किन-किन कलाओं में दक्ष हो गया है और जिससे सभी खास व आम को मेरे पुत्र की योग्यता, विद्वता तथा बुद्धिमत्ता का ज्ञान हो जाय। जब वह फरमान जारी हुआ तो गुरु ने बादशाह से तीन दिन का समय प्रदान किये जाने की प्रार्थना की। जब उसकी प्रार्थना स्वीकार हो गई तो पहले दिन गुरु घोड़े पर सवार होकर शाहज़ादे को लेकर नगर के बाहर चल दिया। जब वह आबादी के बाहर निकल गया तो शाहज़ादे को घोड़े से उतरवा कर अपने घोड़े के सामने कई फरसग पैदल दौड़वा दिया। शाहज़ादे के कोमल शरीर को पैदल दौड़ने से विशेष कष्ट हुआ। जब वह नगर में वापस आया तो दूसरे दिन मक्तब[1] में शाहज़ादे को आदेश दिया कि वह दिन भर खड़ा रहे। दिन भर खड़ा रहने से शाहज़ादे के कोमल शरीर को और भी कष्ट पहुँचा। तीसरे दिन जब वह मक्तब में पहुँचा तो गुरु ने वह स्थान रिक्त करवा कर बादशाह के पुत्र के हाथ पैर बँधवा दिये और उसके सौ से अधिक बेत मारे। चोट से शाहज़ादे का पूरा शरीर घायल हो गया। इस प्रकार उसे बँधा छोड़कर भाग खड़ा हुआ।

(२८४) जब बादशाह के सेवकों को यह हाल ज्ञात हुआ तो उन्होंने उसके पुत्र को

१ पाठशाला।

सुल्तान की सेवा की। सुल्तान रजिया के राज्य-काल में वह नायब सरजानदार[1] हुआ। कुछ समय उपरान्त मुइज्जी राज्य-काल में वह सरजानदार हो गया। व अलाउद्दीन के राज्य में अमीर आखुर नियुक्त हुआ।

(२८०) सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्य-काल में जब उलुग खाँ को ग्रान तो किशली खाँ को मलिक अमीर हाजिब नियुक्त कर दिया गया। नागौर लेकर किशली खाँ को प्रदान कर दिया गया। जब वह अमीर हाजिब छोटे बड़े तुर्कों को इतना प्रसन्न कर रखा था कि उसका उल्लेख सम्भ उसके कृतज्ञ तथा कृपा-पात्र थे। जब उलुग खाने आजम ने नागौर तो मलिक अमीर हाजिब को कड़ा प्रदान कर दिया गया। वह उलुग खाने आजम देहली आया तो अमीर हाजिब भी दरबार में बार फिर अमीर हाजिब नियुक्त कर दिया गया। कुछ समय ६५३ हि० (मई १२५५ ई०) में मलिक कुतुबुद्दीन हुसेन वँदियारान पर्वत तक के स्थान उसको सौंप दिये गये। वे वर्ष पश्चात् उसने आसपास के स्थानों पर आक्रमण रडकी तथा मियाँपूर के स्थानों को अपने अधिकार प्राप्त की। रायो तथा मवासात पर अधिकार उसे कोई भीतरी रोग हो गया। लज्जावश उसने कुछ महीने कष्ट भोग कर रविवार २० रज मर गया।

(२५) खाकानुल मुअज्जम

(२८१) खाकाने मुअज्ज शेर खाँ तथा सुल्तान के पिता १० हज़ार वर्षो का खान इस समय उलुग खाँ मे ने मलिक कुरेत स्थान बनाने, देने, और हि आज़म को सहित जोकि उ

सुल्तान ने ...

१ पुस्तक में जामादार है किन्तु जानदार

सुरक्षित शाही शिविर में पहुँच गया।

(२६१) बृहस्पतिवार २५ ज़ीकाद (३ अप्रैल, १२४७ ई०) को शाही पताकायें राजधानी की ओर रवाना हो गईं और बृहस्पतिवार २ मुहर्रम ६४५ हि० (६ मई, १२४७ ई०) को देहली पहुच गई।

उलुग खाने मुअज़्ज़म की वीरता, योग्यता तथा साहस को देखकर तुर्किस्तान तथा मुग़ल सेना में से कोई भी ६४५ हि० (१२४७-४८ ई०) में ऊपर से सिन्ध पर आक्रमण करने न आया। ६४५ हि० (१२४७-४८ ई०) में उलुग खाने आज़म ने निवेदन किया कि, 'उचित होगा कि इस वर्ष शाही पताकाये हिन्दुस्तान की ओर प्रस्थान करे, जिससे राजाओं तथा मवासात के निवासियो को, जिन्हे वर्षों से दण्ड नही दिया जा सका है, दण्ड दिया जाय और मुग़लों के विनाश के लिये धन सम्पत्ति प्राप्त हो'। इस परामर्श पर शुभ पताकायें प्रस्थान करके गंगा तथा यमुना के दुआब में पहुँची। युद्ध करके तलसन्दा[1] के क़िले पर अधिकार प्राप्त कर लिया गया। उलुग खाने मुअज़्ज़म तथा अन्य मुसलमान मलिको एवं सेना को दलकी मलकी से युद्ध करने के लिये भेजा गया। वह यमुना नदी के निकट के उस स्थान का राना था जोकि कालिंजर तथा कड़े के बीच में है और जिससे कालिंजर तथा मालवे के राजा युद्ध करने का साहस न कर सकते थे। उसके पास अत्यधिक सेना तथा धन सम्पत्ति थी। उसकी गढ़ बन्दी, जगलो, पहाड़ों तथा भयानक मार्गों के कारण इस्लामी सेना कभी उस ओर न पहुँच सकी थी।

(२६२) उलुग खाने मुअज़्ज़म जब उसके निवास स्थान तक पहुँचा गया तो राना ने अपनी रक्षा इस वीरता से की कि प्रात काल से सायंकाल की नमाज़ तक इस्लामी सेना को कोई सफलता प्राप्त न हुई। रात्रि में वह उस स्थान से एक दूसरे दृढ़ तथा सुरक्षित स्थान को भाग गया। दिन में इस्लामी सेना ने उस स्थान (क़िले) में प्रविष्ट होने के उपरान्त उसका पीछा किया। वह दुष्ट एक ऊँचे पर्वत पर चढ़ कर एक ऐसे भयानक स्थान को चला गया था जहाँ मार्ग न होने के कारण बिना रस्सियो अथवा सीढ़ियों के उतरना सम्भव न था। उलुग खाने मुअज़्ज़म ने जेहाद का लालच दिलाया। उसके प्रोत्साहन तथा वीरता के कारण उस स्थान पर अधिकार जमा लिया गया। उसके परिवार, चौपाये, घोड़े तथा दासो पर अधिकार स्थापित हो गया। मुसलमानो को इतनी धन सम्पत्ति प्राप्त हुई कि उसका लेखा करना असम्भव है। ६४५ हि० (१२४८ ई०) के शव्वाल मास के अन्तिम दिन (२६ फरवरी) में वह अत्यधिक धन सम्पत्ति लेकर शाही शिविर में पहुँच गया। शाही पताकायें ईदुज्ज़ुहा[2] के उपरान्त राजधानी की ओर रवाना हुई। इस यात्रा तथा युद्ध का उल्लेख एक पृथक् पुस्तक में किया जा चुका है। इस पुस्तक का नाम नासिरीनामा है। २४ मुहर्रम ६४६ हि० (१६ मई, १२४८ ई०) में शाही पताकायें राजधानी में पहुँच गई। शाबान ६४६ हि० (नवम्बर-दिसम्बर १२४८ ई०) में शाही पताकायें ऊपर की ओर चल पड़ी और ब्याह नदी तक पहुँच गईं। वहाँ से पुन राजधानी की ओर लौट आईं।

अन्य मलिको को उलुग खाँ के अधीन करके एक बहुत बड़ी सेना देकर रणथम्भोर[3] तथा मेवात के पर्वतीय प्रदेशो और नाहर देव के, जो हिन्दुस्तानी रायो में सबसे बड़ा समझा जाता था, प्रदेशो को भेजा गया। उसने वह विलायत (प्रदेश) तथा आसपास के प्रदेश विध्वस कर दिये और अत्यधिक धन सम्पत्ति प्राप्त की।

(२६३) रविवार ११ ज़िलहिज्जा ६४६ हि० (२७ मार्च, १२४६ ई०) को मलिक बहाउद्दीन ऐबक रणथम्भोर के क़िले के नीचे शहीद हो गया। उलुग खाने मुअज़्ज़म क़िले के

१ कनिंघम के अनुसार एटा (उत्तर प्रदेश) के उत्तर में दस मील पर एक ग्राम जो बिलसार कहलाता है।

२ बकरईद अथवा १० ज़िलहिज्जा (६ अप्रैल, १२४- ई०)।

३ पुस्तक में रतनपुर है।

पताकाओं के व्याह के निकट पहुँचने का हाल ज्ञात हुआ और यह पता चला कि इस्लामी सेना पर्वत के आंचल तथा नदी के किनारे किनारे प्रस्थान कर रही है, तो उसने लोगों से इस्लामी सेना के पर्वत के आंचल में प्रस्थान करने का कारण पूछा जबकि वह मार्ग बड़ा लम्बा और सरसुती तथा मारूत का मार्ग निकट का है।

(२८६)लोगों ने उसे बताया कि नदी के मार्ग से इस्लामी सेना को अनेक कटे-पिटे स्थानों से होकर प्रस्थान करना पड़ता। मङ्गूता के मुँह से निकला कि 'हम लोग इस सेना का मुकाबिला नहीं कर सकते, अतः हमें लौट जाना चाहिये।' वह तथा उसकी सेना अत्यन्त भयभीत हो गई। उसने सेना को तीन भागों में विभाजित कर दिया और सभी लोग भाग निकले। अत्यधिक मुसलमान तथा हिन्दू बन्दी स्वतन्त्र हो गये। यह विजय केवल उलुग खाँ की वीरता तथा साहस के कारण प्राप्त हुई। यदि वह इतनी वीरता तथा साहस न दिखाता तो इतनी बड़ी विजय कदापि प्राप्त न हो सकती थी। उलुग खाँ ने आदेश दिया कि शाही फौजों को सूधरह नदी (चिनाब) की ओर प्रस्थान करना चाहिये जिससे शत्रुओं के हृदय पर इस्लामी सेना की वीरता तथा साहस का सिक्का बैठ जाय। इस पर सेना ने सूधरह नदी (चिनाब) की ओर से प्रस्थान किया और २७ शव्वाल ६४३ हि० (१७ मार्च, १२४६ ई०) को शाही पताकायें सूधरह नदी (चिनाब) से देहली की ओर रवाना हुई और सोमवार १२ ज़िलहिज्जा ६४३ हि० (३० अप्रैल, १२४६ ई०) को देहली पहुँच गईं।

इस बीच में सुल्तान अलाउद्दीन मसऊदशाह का हृदय अपने मलिकों की ओर से बिगड़ गया। अधिकतर चाहे वह सेना के साथ होता या न होता वह उनकी ओर से सन्देहशील रहने लगा। सब मलिकों ने सहमत होकर देहली से सुल्तान नासिरुद्दीन की सेवा में पत्र भेजे और उसे देहली के राज सिंहासन पर अधिकार जमा लेने के लिये लिखा।

(२६०) वह रविवार २३ मुहर्रम ६४४ हि० (१० जून, १२४६ ई०) को देहली पहुंचा और राज सिंहासन पर आरूढ़ हुआ। उलुग खाने आज़म ने सुल्तान की सेवा में निवेदन किया कि इस समय नासिरी नाम[१] का खुत्बा तथा सिक्का प्रचलित हो गया है। गत वर्ष मुगलों की सेना इस्लामी सेना से भाग कर ऊपर (उत्तर-पश्चिम) की ओर चली गई थी। यह उचित होगा कि शाही पताकायें ऊपर की ओर प्रस्थान करें। इस परामर्श के अनुसार ऊपर की ओर प्रस्थान करने का दृढ़ सकल्प कर लिया गया। सोमवार पहली रजब ६४४ हि० (१२ नवम्बर, १२४६ ई०) को शाही पताकायें राजधानी के बाहर निकलीं और सूधरह नदी (चिनाब) तक पहुँच गईं। उलुग खाने मुअज्जम इस्लामी मलिकों तथा अमीरों को लेकर जूद पर्वत की ओर यह सकल्प करके रवाना हुआ कि उन पर्वतीय प्रदेशों के राना को उचित दण्ड देगा, क्योंकि उन्होंने मुगल काफिरों को मार्ग दर्शाने का कार्य किया था। इस उद्देश्य से जूद पर्वत तथा झेलम नदी के आसपास सिन्धु नदी तक इस्लामी सेना ने लूटमार की। काफिरों की स्त्रियाँ तथा परिवार भाग गये। मुगल सेनायें झेलम के घाट तक छापा मारती थीं, परन्तु उलुग खाँ के अधीन इस्लामी सेनाओं को देखकर भयभीत हो गईं। इस्लामी सेना की अधिकता, सवारों की संख्या तथा अस्त्र शस्त्र देखकर मुगल स्तब्ध थे और इस्लामी सेना का आतंक उनके हृदय पर बैठ गया था। उलुग खाने मुअज्जम ने ऊँचे-ऊँचे पर्वतों, भयानक दर्रों तथा जंगलों को काटने और किलों पर अधिकार जमाने में जिस वीरता का प्रदर्शन किया उसका उल्लेख सम्भव नहीं। इस युद्ध का हाल तुर्किस्तान तक पहुँच गया।

उस प्रदेश में कृषि तथा चारे की कमी के कारण उसे वापस होना पड़ा। वह इस प्रकार विजय तथा सफलता प्राप्त करके समस्त सैनिकों तथा मलिकों को लेकर पूर्णतय

१ सुल्तान नासिरुद्दीन के नाम का।

सुरक्षित शाही शिविर में पहुँच गया।

(२६१) बृहस्पतिवार २५ जीकाद (३ अप्रैल, १२४७ ई०) को शाही पताकायें राजधानी की ओर रवाना हो गईं और बृहस्पतिवार २ मुहर्रम ६४५ हि० (९ मई, १२४७ ई०) को देहली पहुच गईं।

उलुग खाने मुअज्ज़म की वीरता, योग्यता तथा साहस को देखकर तुर्किस्तान तथा मुगल सेना में से कोई भी ६४५ हि० (१२४७-४८ ई०) में ऊपर से सिन्ध पर आक्रमण करने न आया। ६४५ हि० (१२४७-४८ ई०) में उलुग खाने आज़म ने निवेदन किया कि, 'उचित होगा कि इस वर्ष शाही पताकायें हिन्दुस्तान की ओर प्रस्थान करें, जिससे राजाओं तथा मवासात के निवासियों को, जिन्हें वर्षों से दण्ड नहीं दिया जा सका है, दण्ड दिया जाय और मुगलों के विनाश के लिये धन सम्पत्ति प्राप्त हो'। इस परामर्श पर शुभ पताकायें प्रस्थान करके गंगा तथा यमुना के दुआब में पहुँची। युद्ध करके तलसन्दा[1] के किले पर अधिकार प्राप्त कर लिया गया। उलुग खाने मुअज्ज़म तथा अन्य मुसलमान मलिकों एवं सेना को दलकी और मलकी से युद्ध करने के लिये भेजा गया। वह यमुना नदी के निकट के उस स्थान का राना था जोकि कालिंजर तथा कड़े के बीच में है और जिससे कालिंजर तथा मालवे के राजा युद्ध करने का साहस न कर सकते थे। उसके पास अत्यधिक सेना तथा धन सम्पत्ति थी। उसकी गढ़ बन्दी, जंगलों, पहाड़ों तथा भयानक मार्गों के कारण इस्लामी सेना कभी उस ओर न पहुच सकी थी।

(२६२) उलुग खाने मुअज्ज़म जब उसके निवास स्थान तक पहुँचा गया तो राना ने अपनी रक्षा इस वीरता से की कि प्रातःकाल से सायंकाल की नमाज़ तक इस्लामी सेना को कोई सफलता प्राप्त न हुई। रात्रि में वह उस स्थान से एक दूसरे दृढ़ तथा सुरक्षित स्थान को भाग गया। दिन में इस्लामी सेना ने उस स्थान (क़िले) में प्रविष्ट होने के उपरान्त उसका पीछा किया। वह दुष्ट एक ऊँचे पर्वत पर चढ़ कर एवं ऐसे भयानक स्थान को चला गया था जहाँ मार्ग न होने के कारण बिना रस्सियों अथवा सीढ़ियों के उतरना सम्भव न था। उलुग खाने मुअज्ज़म ने जेहाद का लालच दिलाया। उसके प्रोत्साहन तथा वीरता के कारण उस स्थान पर अधिकार जमा लिया गया। उसके परिवार, चौपाय, घोड़े तथा दासों पर अधिकार स्थापित हो गया। मुसलमानों को इतनी धन सम्पत्ति प्राप्त हुई कि उसका लेखा करना असम्भव है। ६४५ हि० (१२४८ ई०) के शव्वाल मास के अन्तिम दिन (२६ फरवरी) में वह अत्यधिक धन सम्पत्ति लेकर शाही शिविर में पहुँच गया। शाही पताकायें ईदुज्जुहा[2] के उपरान्त राजधानी की ओर रवाना हुईं। इस यात्रा तथा युद्ध का उल्लेख एक पृथक् पुस्तक में किया जा चुका है। इस पुस्तक का नाम नासिरीनामा है। २४ मुहर्रम ६४६ हि० (१९ मई, १२४८ ई०) में शाही पताकायें राजधानी में पहुँच गईं। शाबान ६४६ हि० (नवम्बर-दिसम्बर १२४८ ई०) में शाही पताकायें ऊपर की ओर चल पड़ी और व्याह नदी तक पहुँच गईं। वहाँ से पुन राजधानी की ओर लौट आईं।

अन्य मलिकों को उलुग खाँ के अधीन करके एक बहुत बड़ी सेना देकर रणथम्भोर[3] तथा मेवात के पर्वतीय प्रदेशों और नाहर देव के, जो हिन्दुस्तानी रायों में सबसे बड़ा समझा जाता था, प्रदेशों को भेजा गया। उसने वह विलायत (प्रदेश) तथा आसपास के प्रदेश विध्वंस कर दिये और अत्यधिक धन सम्पत्ति प्राप्त की।

(२६३) रविवार ११ जिलहिज्जा ६४६ हि० (२७ मार्च, १२४९ ई०) को मलिक बहाउद्दीन ऐबक रणथम्भोर के किले के नीचे शहीद हो गया। उलुग खाँ मुअज्ज़म किले के

१ कनिंघम के अनुसार एटा (उत्तर प्रदेश) के उत्तर में दस मील पर एक ग्राम जो बिलसार कहलाता है।
२ बकरईद अथवा १० ज़िलहिज्जा (६ अप्रैल, १२४८ ई०)।
३ पुस्तक में रतनपुर है।

दूसरी ओर जेहाद मे लगा हुआ था। उसके सहायक भी धर्म-युद्ध में लगे थे। अत्यधिक काफिर नरक में भेज दिये गये। अपार धन सम्पत्ति प्राप्त हुई। इस्लामी सेना अपार धन सम्पत्ति लेकर सुल्तान के पास रवाना हुई। सोमवार ३ सफर ६४७ हि० (१८ मई, १२४९ ई०) को वह सुल्तान के पास पहुँच गई। इस वर्ष सुल्तान का यह विचार हुआ कि वह खाने आज़म के परिवार से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करे, क्यों कि वह प्रत्येक वर्ष आक्रमण और बडी योग्यता से सेवायें करता था। किसी बादशाह को ऐसा खान अथवा मलिक कभी प्राप्त न हुआ था जिसमें इतनी वीरता, योग्यता तथा गुण पाये जाते हो। उलुग खाने मुअज्जम ने सुल्तान की आज्ञा का पालन किया, और शनिवार २० रबी-उल-आखिर ६४७ हि० (२ अगस्त, १२४९ ई०) को वह सम्बन्ध स्थापित हो गया। उस विवाह से जो शाहज़ादे पैदा हुये ईश्वर उन्हें सुल्तान तथा उलुग खाँ की छाया में जीवित रक्खे।

(२९४) इसके फलस्वरूप उलुग खाँ का पद बढा दिया गया और वह अमीर हाजिब से खान के पद पर पहुँच गया। मगलवार ३ रजब ६४७ हि० (१२ अक्तूबर, १२४९ ई०) को उसे एक फरमान द्वारा लश्करकशी तथा मुल्कदारी[1] मे नियाबत[2] का पद प्रदान किया गया। उसे उलुग खाँ की भी उपाधि मिली। उसके उलुग खाँ हो जाने पर उसके भाई को, जो अमीर आखुर था, अमीर हाजिब कर दिया गया। वह दानी तथा गुणवान मलिक सैफुलहक वद्दीन किशली खाँ ऐबक, अमीर हाजिब हुआ। मलिक ताजुद्दीन सन्जर तबर खाँ नायब अमीर हाजिब नियुक्त हुआ। अमीरुलहुज्जाब अलाउद्दीन अयाज तबर खाँ जनजानी नायब वकीलदर नियुक्त हुआ। वह मेरा पुत्र और बडा गुणवान है। उसका इससे अधिक कोई अन्य गुण नही हो सकता कि वह उलुग खाँ का विश्वासपात्र है। यह पद शुक्रवार ६ रजब ६४७ हि० (१५ अक्तूबर, १२४९ ई०) को प्रदान किये गये। नायब अमीर आखुर इख्तियारुद्दीन एतगीन मूयेदराज (लम्बे केशो वाला) अमीर आखुर नियुक्त हुआ।

सोमवार ९ शाबान ६४७ हि० (१७ नवम्बर, १२४९ ई०) को (उलुग खाँ) जेहाद के लिये रवाना हुआ और जून नदी के घाट पर शिविर लगा दिये गये। युद्ध प्रारम्भ हो गया। लेखक को खुरासान से यह सूचना मिली कि उसकी बहिन अकेली होने के कारण बडे कष्ट मे है। लेखक ने उलुग खाने मुअज्जम की सेवा मे उपस्थित होकर यह हाल बताया।

(२९५) उसने उसकी ओर विशेष कृपा दिखाई और उसे एक बहुमूल्य खिलअत, घोड़ा तथा एक गांव प्रदान किया, जिसकी आय ३० हजार जीतल थी। इस समय तक उस इनाम से प्रत्येक वर्ष लेखक को लाभ पहुँच रहा है। उलुग खाँ ने सुल्तान से भी लेखक के कष्टों के विषय में निवेदन किया। रविवार २ ज़ीकाद ६४७ हि० (६फ़रवरी, १२५० ई०) को दरबार से ४० गुलाम और १०० खच्चरो पर लदा हुआ सामान लेखक को अपनी बहिन के पास खुरासान भेजने के लिये प्रदान हुआ। सोमवार २६ ज़ीकाद (५ मार्च, १२५० ई०) को लेखक राजधानी से यह सामान खुरासान भेजने के लिये मुल्तान की ओर रवाना हुआ। मार्ग के प्रत्येक कस्बे, नगर तथा किले में उलुग खाँने मुअज्जम के दासों ने लेखक का इतना आदर सम्मान किया कि उसे देखकर बुद्धि की आँखें स्तब्ध रह गई। बुद्धवार ६ रबी-उल-अव्वल ६४८ हि० (८ जून, १२५० ई०) को लेखक मुल्तान पहुँचा और वहाँ से भेलम की ओर रवाना हुआ। वह सामान तथा दास खुरासान भेज देने के उपरान्त लेखक दो मास तक ग्रीष्म ऋतु के कारण मुल्तान के किले मे मलिक इज्जुद्दीन बल्बन किशली खाँ की सेना में रहा। वर्षा ऋतु के प्रारम्भ हो जाने के उपरान्त ६ जमादी-उल-अव्वल (६ अगस्त, १२५० ई०) को मुल्तान से लौटकर २ जमादी-

१ सेना सचालन तथा राज्य व्यवस्था।
२ मुल्तान का नायब होने का पद।

उल ग्राखिर (२ सितम्बर, १२५० ई०) को बादशाह के दरबार में उपस्थित हो गया।

(२६६) इस समय काज़ीउलकुज्जात जलालुद्दीन काशानी हिन्दुस्तान का काजिये-ममालिक था। उस अद्वितीय व्यक्ति की अवस्था के दिन समाप्त हो जाने के फलस्वरूप उलुग खाँ ने इस हितैषी की सुल्तान से सिफारिश की। रविवार १० जमादी-उल-अव्वल ६४६ हि० ३१ जूलाई, १२५१ ई०) को यह हितैषी दूसरी बार काज़िये ममालिक बनाया गया। मगलवार २५ शाबान ६४६ हि० (१२ नवम्बर, १२५१ ई०) को शाही पताकायें मालवा तथा कालिंजर की ओर रवाना हुईं। जब उलुग खान आज़म इस्लामी सेना लेकर उस प्रदेश में पहुँचा तो खान ने जाहर अजारी को, जोकि निकट के स्थानों का राना था और जिसके पास बहुत बड़ी सेना तथा अत्यधिक मनुष्य, धन सम्पत्ति, घोड़े आदि थे, पराजित करके उसका प्रदेश विध्वस कर दिया। यह अजारी राना, जिसका नाम जाहर था, बड़ा वीर तथा पराक्रमी था। सुल्तान शम्सुद्दीन के राज्य-काल में ६३२ हि० (१२३४-३५ ई०) में इस्लामी सेनायें भियाना, सुल्तान कोट, कन्नौज, मिहिर, महाबन, तथा ग्वालियर से कालिंजर तथा जमु[1] की ओर युद्ध करने के लिये भेजी गई थी। मलिक नुसरतुद्दीन तायसी, जोकि अपने समय में साहस, वीरता योग्यता तथा युद्ध में अद्वितीय समझा जाता था, सेना का सरदार नियुक्त हुआ था। ग्वालियर से वे लोग सेना लेकर ५० दिन तक युद्ध करके अत्यधिक धन सम्पत्ति लाये।

(२६७) इस प्रकार मुल्तानी खुम्स २२ लाख के लगभग हो गया था। कालिंजर से लौटते समय इस्लामी सेना के मार्ग पर अजारी राना का राज्य था। उस राना ने इस्लामी सेना का मार्ग गराना[2] नदी तक रोक दिया था।

लेखक ने नुसरतुद्दीन तायसी से सुना है कि वह कहा करता था कि हिन्दुस्तान में किसी शत्रु ने उस हिन्दू अजारी के अतिरिक्त मेरी पीठ नही देखी है। उस हिन्दू अजारी ने मेरे ऊपर इस प्रकार आक्रमण किया कि मानो कोई भेड़िया भेड़ के गल्ले मे घुस गया हो। मुझे उसके सामने से भाग कर दूसरी ओर से आक्रमण करके उसे परास्त करना पड़ा। इस घटना का उल्लेख इस कारण किया गया है ताकि पाठकगणों को यह ज्ञात हो जाय कि उलुग खाने आज़म कितना वीर, पराक्रमी था तथा युद्ध-विद्या मे इतना निपुण था कि उसने ऐसे शत्रु को पराजित किया और नरबर[3] का दृढ किला उससे छीन लिया। इस युद्ध मे उसने ऐसी वीरता दिखाई कि उसकी बहुत समय तक स्मृति बनी रहेगी।

सोमवार २३ रबी-उल अव्वल ६५० हि० (३ जून, १२५२ ई०) में शाही पताकाये देहली वापस आईं। ६ मास तक देहली में सबने विश्राम किया। सोमवार १२ शव्वाल ६५० हि० (१६ दिसम्बर, १२५२ ई०) को शाही पताकाये ऊपर की ओर व्याह नदी की तरफ रवाना हुई। इस समय मलिक बल्बन बदायूँ का मुक्ता था, मलिक कुतलुग खाँ भियाने का मुक्ता था। दोनो मुक्तो को सुल्तान ने बुलवाया और दोनो ही मुक्ते तथा अन्य अमीर इस आक्रमण में उसके साथ थे। जब शुभ पताकायें व्याह नदी की ओर पहुँची तो एमादुद्दीन रैहान अन्य मलिकों से मिलकर षड्यन्त्र रचने लगा।

(२६८) सभी लोग उलुग खाने आजम से ईर्ष्या करते थे और इस द्वेष के कारण वे इस बात का प्रयत्न करने लगे कि उलुग खाँ की शिकारगाह अथवा किसी पर्वतीय मार्ग या किसी

१ यह नाम छपी हुई पुस्तक तथा हस्तलिखित पुस्तकों मे स्पष्ट नहीं। होदीवाला का विचार है कि कदाचित् यह छत्रपूर नामक स्थान है जो कालिंजर के ४० मील दक्षिण-पश्चिम में है। (होदीवाला २३२)

२ पुस्तक में मन्दी है किन्तु रैवर्टी का विचार है कि गराना ठीक है।

३ पुस्तक में बजरर है।

नदी के किनारे हत्या कर दी जाय, किन्तु भगवान् उलुग खाँ के भाग्य की रक्षा कर रहा था। उसके शत्रुओं को किसी प्रकार की सफलता प्राप्त नहीं हुई। इस प्रकार मलिकों ने सहमत होकर सुल्तान को इस बात पर तैयार कर लिया कि वह उसे उसकी अक्ता की ओर भेज दे। ६५१ हि० के मुहर्रम मास के अन्तिम दिन (१ अप्रैल, १२५३ ई०) को उलुग खाने आज़म अपने सैनिकों तथा विश्वासपात्रों को हसीरा[१] से लेकर हाँसी की ओर चल दिया। जब शाही पताकायें देहली पहुँची तब उलुग खाने आज़म के प्रति ईर्ष्या के काँटे एमादुद्दीन रैहान को कष्ट पहुँचा रहे थे। उसने सुल्तान से निवेदन किया कि यह उचित होगा कि उलुग खाने आज़म को नागौर की ओर भेज दिया जाय और हाँसी किसी शाहज़ादे को प्रदान कर दी जाय। इस परामर्श के फलस्वरूप शाही पताकायें उलुग खाने मुअज़्ज़म को हाँसी से नागौर भेजने के लिये जमादी उल आख़िर ६५१ हि० (अगस्त-सितम्बर १२५३ ई०) को हाँसी की ओर रवाना हुई। जब वे हाँसी पहुँची तो एमादुद्दीन रैहान वकीलदर नियुक्त हो गया, और उसने राज्यव्यवस्था अपने हाथ में ले ली। उलुग खाने आज़म से ईर्ष्या के कारण काज़िये ममालिक का पद लेखक मिनहाज सिराज से रजब ६५१ हि० (अगस्त सितम्बर १२५३ ई०) में ले लिया गया और यह पद काज़ी शम्सुद्दीन बहराइची को प्रदान कर दिया गया।

(२९९) १७ शव्वाल (१० दिसम्बर, १२५३ ई०) को सुल्तान देहली पहुँचा। उलुग खाने मुअज़्ज़म के भाई मलिक सैफुद्दीन किशली खाँ ऐबक को कड़े की अक्ता प्रदान की गई। कुतलुग खाँ के जामाता इज़्ज़ुद्दीन बल्बन को नायब अमीर हाजिब नियुक्त किया गया। जो पद उलुग खाँ ने अपने विश्वासपात्रों को प्रदान किये थे उन्हें उन पदाधिकारियों से या तो ले लिया गया या उनका स्थानान्तरण कर दिया गया। राज्य की शान्ति एमादुद्दीन रैहान के कुशासन के फलस्वरूप भँग हो गई।

जिस समय उलुग खाँन मुअज़्ज़म नागौर का शासक था उस समय उसने इस्लामी सेना लेकर रणथम्भोर, बूँदी तथा चित्तौड़ पर अधिकार जमाने के लिए प्रस्थान किया। रणथम्भोर का राय नाहर देव, जोकि हिन्दुस्तानी रायों तथा मलिकों में बड़ा प्रतिभाशाली था, सेना लेकर उलुग खाँन मुअज़्ज़म से युद्ध करने के लिए निकला। चूँकि भगवान् ने उलुग खाँने मुअज़्ज़म को भाग्यशाली बनाया था, अतः राय नाहर देव की बहुत बड़ी सुसज्जित सेना, जिसमें घोड़े बहुत बड़ी संख्या में थे, हार गई। अत्यधिक शत्रु नरक में भेज दिये गये। अपार धन-सम्पत्ति, घोड़े तथा दास प्राप्त हुये। उलुग खाँ बिना किसी क्षति के नागौर वापस हो गया।

६५२ हि० (१२५४-५५ ई०) में उलुग खाने आज़म के विश्वास पात्र जोकि पदच्युत हो जाने के कारण भगवान् से उसकी उन्नति की प्रार्थना किया करते थे, अपनी प्रार्थनाओं में सफल हुये। उलुगखानी पताकायें नागौर से देहली की ओर रवाना हुईं।

(३००) इसका कारण यह था कि दरबार के समस्त तुर्क तथा ताजीक उच्च वंश के थे और एमादुद्दीन रैहान नपुंसक तथा तुच्छ था। वह हिन्दुस्तानी कबीले से सम्बन्धित था। उत्कृष्ट वंश वालों को उसका अधिकार सम्पन्न होना उचित प्रतीत नहीं होता था। वे उसका अधिकार-सम्पन्न होना अपने लिए बड़ी लज्जा की बात समझते थे। यह तुच्छ एमादुद्दीन रैहान के दुष्ट सहायकों के कारण ६ या उससे कुछ अधिक मास तक अपने घर से न निकल सका और जुमे की नमाज पढ़ने न जा सका। यही हाल राज्य के अन्य वीर, योग्य, प्रसिद्ध तथा पराक्रमी तुर्कों एवं मलिकों का था। वे अधिक दिनों तक इस अपमान की अवस्था में नहीं रह सकते थे। समस्त हिन्दुस्तान के मलिकों ने कड़ा मानिकपुर, अवध, बदायूँ, तबरहिन्दा

१ पुस्तक में सैमरह है।

मुनाम, मामाने तथा सिवालिक से उलुग खाने मुअज्जम की सेवा में देहली वापस होने के लिए पत्र लिखे। इग्मलान खाँ तबरहिन्दा से एक सेना लेकर रवाना हुआ। बत खाँ सुनाम तथा मसूरपुर से बाहर निकला। उलुग खाँ ने नागौर तथा सिवालिक से सेना एकत्र की। मलिक जलालुद्दीन मसऊदशाह बिन (पुत्र) सुल्तान शम्सुद्दीन लाहौर से आकर इन लोगों में मिला और सब लोग देहली की ओर रवाना हुए। एमादुद्दीन रैहान ने सुल्तान से निवेदन किया कि शाही पताकायें युद्ध करने के लिए प्रस्थान करें। सेना देहली से सुनाम की ओर रवाना हुई। उलुग खाने मुअज्जम अन्य मलिकों के साथ तबरहिन्दा के निकट था। लेखक शाही सेना के प्रस्थान करने के कारण शाही शिविर में सोमवार २६ रमजान ६५२ हि० (६ नवम्बर, १२५४ ई०) को पहुँचा, क्योंकि उसका नगर में रहना सम्भव न था।

(३०१) सिकन्दर[1] को उसने शाही शिविर में पहुँच कर सुल्तान के लिए भगवान् से प्रार्थना की। दूसरे दिन बुधवार २८ रमजान (११ नवम्बर, १२५४ ई०) को दोनों सेनायें एक दूसरे के निकट पहुँच गईं। दोनों ओर के यजकियों[2] के बीच में युद्ध हो गया। शाही लश्कर को बड़ी क्षति पहुँची। ईदुलफित्र सुनाम में हुई। शनिवार ८ शव्वाल (२१ नवम्बर, १२५४ ई०) को शाही पताकायें हाँसी की ओर वापस हुईं। मलिक जलालुद्दीन तथा उलुग खाने मुअज्जम एवं अन्य प्रतिष्ठित मलिक कैथल की ओर रवाना हुये। दोनों ओर से मलिकों तथा अमीरों ने सन्धि का प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया। सिपहसालार करा जमाक, जो कि उलुग खाँ का विश्वासपात्र तथा अपनी वीरता के लिए प्रसिद्ध था, शाही सेना के शिविर से उलुग खाँ के पास पहुँचा। काले झण्डे का अमीर हुसामुद्दीन कुतलुग जो कि बड़ा ही राज-भक्त तथा चरित्रवान था और समस्त अमीरों में वृद्ध था, सिपहसालार करा जमाक के साथ भेजा गया। मलिक इस्लाम कुतुबुद्दीन हसन अली ने भी इस विषय में विशेष प्रयत्न किया। समस्त मलिकों ने सुल्तान की सेवा में निवेदन किया कि 'हम सब अन्नदाता के दास तथा आज्ञाकारी हैं, किन्तु हमें एमादुद्दीन रैहान के षड्यन्त्र तथा कुकर्मों से बड़ा भय है। यदि वह दरबार से पृथक् करके किसी अन्य ओर भेज दिया जाय तो हम सब आज्ञा पालन तथा सेवा के लिये तैयार हैं।' जब शाही झण्डे सोमवार २२ शव्वाल ६५२ हि० (१५ दिसम्बर, १२५४ ई०) को हाँसी से भिन्द की ओर रवाना हुए तो एमादुद्दीन रैहान से वकीलदर का पद ले लिया गया।

(३०२) उसे बदायूँ का वाली कर दिया गया। इज्जुद्दीन बल्बन नायब अमीर हाजिब उलुग खाँ की सेना की ओर गया। मंगलवार ३ जीक़ाद (१५ दिसम्बर) को मलिक बत खाँ ऐबक खिताई सन्धि की पूर्ति के लिये शाही शिविर में पहुँचा। इस समय एक ऐसी घटना हुई जिसकी लेखक को पूर्णतया जानकारी है। वह इस प्रकार है कि एमादुद्दीन रैहान ने उलुग खाने मुअज्जम का विरोध करने वाले तुर्कों से मिल कर यह षड्यन्त्र रचा कि जब बत खाँ ऐबक खिताई सुल्तानी शिविर में पहुँचे तो उसकी हत्या कर दी जाय। जब यह सूचना उलुग खाँ की सेना में पहुँचेगी तो वे लोग इज्जुद्दीन बल्बन की हत्या कर देंगे। इस प्रकार सन्धि न हो सकेगी, एमादुद्दीन रैहान को न तो कोई क्षति पहुँचेगी और न उलुग खाँ दरबार में पुन: वापस हो सकेगा। जब यह सूचना मलिक कुतुबुद्दीन हसन को प्राप्त हुई तो उसने एक उलुगे खास (विशेष सन्देश-वाहक), हाजिब शर्फुलमुल्क रशीदुद्दीन हनफी को बत खाँ के पास भेजा और उसे यह सूचना दे दी कि उसके लिए यह उचित होगा कि वह कल प्रात: अपने ही स्थान पर रहे और शाही शिविर की ओर प्रस्थान न करे। यह सूचना मिलते ही बत खाँ ने शाही शिविर

१ २७ रमज़ान

२ अग्रगामी सेना।

की ओर प्रस्थान करने में विलम्ब किया और एमादुद्दीन रैहान तथा अन्य तुर्क अमीरों का षड्यन्त्र सफल न हो सका। प्रतिष्ठित अमीरों को इस षड्यन्त्र की सूचना मिल गई। एमादुद्दीन रैहान को सुल्तान ने शाही शिविर में बदायूं की ओर प्रस्थान करने का आदेश दे दिया। मंगलवार १७ जीकाद (२६ दिसम्बर, १२५४ ई०) को दरबार के मलिकों के परामर्श से सुल्तान ने इस तुच्छ मिनहाज सिराज को दोनों दलों में सन्धि कराने के लिए भेजा और यह आदेश दिया कि मैं सभी बातें पक्की कर लूं।

(३०३) बुधवार को उलुग खाने मुअज्जम अन्य मलिकों को लेकर सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ। सुल्तान ने उसे दस्तबोस[1] का सम्मान प्रदान किया। शाही पताकायें रवाना हुई और उलुग खाने मुअज्जम के साथ बुधवार ६ जिलहिज्जा (२० जनवरी, १२५५ ई०) को देहली पहुँच गई। इस बीच में एक विचित्र बात यह हुई कि उलुग खाने मुअज्जम की दरबार से अनुपस्थिति के समय वर्षा न हुई थी, उसके देहली पहुँच जाने पर उसके शुभ चरणों के आशीर्वाद से वर्षा प्रारम्भ हो गई और पानी, जोकि पशु-पक्षियों, मनुष्यों, कृषि तथा वनस्पति के लिये अत्यावश्यक है, बरसने लगा। उसके देहली वापस हो जाने पर सभी लोग बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने भगवान् के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। नये वर्ष में ६५३ हि० (१२५५ ई०) में सुल्तान के अन्तःपुर में कोई ऐसी घटना घटी जिसकी जानकारी किसी को भी नहीं और जिसके फलस्वरूप बुधवार, ७ मुहर्रम ६५३ हि० (१६ फरवरी, १२५५ ई०) को कुतलुग खाँ को अवध का वाली नियुक्त करके उस ओर भेज दिया गया। एमादुद्दीन रैहान को बहराइच का वाली नियुक्त किया गया था। उलुग खाँ के भाग्य की उन्नति के उपरान्त उसके तुच्छ सेवक मिनहाज सिराज जूजजानी को, जिस पर उसकी अनुपस्थिति में नाना प्रकार के अत्याचार किये गये थे, रविवार, ७ रबी-उल-अव्वल ६५३ हि० (१६ अप्रैल, १२५५ ई०) में तीसरी बार राज्य का काजी बनाया गया।

(३०४) कुतलुग खाँ ने अवध पहुँच जाने के उपरान्त कई बार विद्रोह करने का प्रयत्न किया और दरबार से उसको चेतावनी दी गई। एमादुद्दीन रैहान ने इस आशय से अपने छल द्वारा उपद्रव की अग्नि भड़काने का प्रयास किया कि कदाचित् उसे सफलता प्राप्त हो जायगी। मलिक ताजुद्दीन सजर माह पेशानी को मलिक कुतलुग खाँ ने बन्दी बना लिया था क्यों कि उसे सुल्तान ने बहराइच प्रदान कर दिया था। उसने अपनी वीरता से अवध की कैद से मुक्ति प्राप्त करके सरयू नदी पार करने के उपरान्त बहराइच की ओर कुछ सवारों को लेकर प्रस्थान कर दिया। ईश्वर की कृपा से तुर्कों का सितारा उन्नति पर था और हिन्दुओं का पतन हो रहा था। एमादुद्दीन रैहान परास्त हो गया और बन्दी बना लिया गया। उसके जीवन का सूर्यास्त हो गया।

(३०५) उसकी मृत्यु से कुतलुग खाँ का भी पतन होने लगा और रजब ६५३ हि० (अगस्त-सितम्बर, १२५५ ई०) में उसका भी अन्त हो गया। इन विद्रोहों तथा षड्यन्त्रों को दबाने के लिये शाही पताकायें बृहस्पतिवार अन्तिम शव्वाल ६५३ हि० (१ दिसम्बर, १२५५ ई०) को देहली से हिन्दुस्तान की ओर रवाना हुई। शाही शिविर तिलपट में लगा दिया गया। सिवालिक का लश्कर जोकि उलुग खाने मुअज्जम की अक्ता में था पूर्णतया तैयार न होने के कारण कुछ देर में पहुँचा। उलुग खाने मुअज्जम ने तिलपट से हाँसी की ओर प्रस्थान किया। रविवार १७ जीकाद ६५३ हि० (१८ दिसम्बर, १२५५ ई०) को उसने हाँसी में पहुँच कर

[1] हाथ चूमने का सम्मान। यह बहुत बड़ा सम्मान था। अधिकतर लोगों को जमीन बूस (भूमि चूमने) का सम्मान प्रदान किया जाता था।

शीघ्रातिशीघ्र सिवालिक, हाँसी, सरसुती, भिन्द तथा बरवाले की सेना १४ दिन में एकत्र की और लोहे के पहाड की भाँति सुसज्जित तथा दृढ सेना लेकर ३ जिलहिज्जा (३ जनवरी, १२५६ ई०) को देहली पहुँचा। १८ दिन तक वह अन्य सेनायें तथा मेवात के कोहपाया (पर्वत के आँचल) की सेना एकत्र करने में लगा रहा। १६ जिलहिज्जा (१६ जनवरी) को सेना लेकर शाही शिविर में पहुँचा। मुहर्रम ६५४ हि० (जनवरी-फरवरी, १२५६ ई०) में वे लोग अवध पहुँचे। कुतलुग खाँ तथा उसके सहायक अमीर सुल्तान के दरबार के दास होते हुये भी कुछ मत भेद के कारण अवध में सरयू नदी पार करके भाग गये।

(३०६) सुल्तान ने उलुग खाँ को उनका पीछा करने के लिये मुहर्रम ६५४ हि० (जनवरी-फरवरी, १२५६ ई०) में भेजा। उलुग खान आजम एक बहुत बडी सेना लेकर उनके पीछे रवाना हुआ किन्तु घने जगलो, नदी-नालो के कारण वह उन लोगो को न पकड सका। वह बमनपुर (बदीकोट) तथा त्रिहुट की सीमा तक बढता चला गया और हिन्दू राजाओ तथा मवासात को विध्वस कर दिया और अपार धन सम्पत्ति लेकर सुल्तान की सेवा में उपस्थित हो गया। जब उलुग खान मुअज्जम सरयू पार करके अवध पहुँच गया तो शाही पताकायें राजधानी की ओर लौट गई। उलुग खाने आजम भागे हुए अमीरो का पीछा करने के उपरान्त जब सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ तो सुल्तानी शिविर के साथ लौटते समय कसमडा होता हुआ मगलवार १६ रबी-उल-अव्वल ६५४ हि० (१३ अप्रैल, १२५६ ई०) को देहली पहुँच गया।

मलिक कुतलुग खाँ हिन्दुस्तान में सफलता पाने से निराश होकर सन्तूर की ओर चल दिया और उन पहाडी प्रदेशो मे छिप गया। उस ओर के सभी लोग उसके अधीन हो गये क्यो कि वे उसको दरबार का बहुत बडा अमीर समझते थे और उसकी गणना उत्कृष्ट तुर्क अमीरो में होती थी। वह जिस ओर भी गया उसके पिछले आदर सम्मान के कारण सभी ने स्वागत किया। जब उसने सन्तूर के पर्वतीय प्रदेशो मे गढबन्दी प्रारम्भ कर दी तो राना रनपाल हिन्दी ने, जोकि हिन्दुओ में बडा ही प्रतिष्ठित था और उन सब लोगो की सहायता करता था जो उसकी शरण में जाते थे, उसे विशेष सहायता प्रदान की। जब सुल्तान को यह समाचार मिला तो शाही पताकायें रबी-उल आखिर ६५५ हि० (अप्रैल, १२५७ ई०) के प्रारम्भ मे सन्तूर की ओर रवाना हुई।

(३०७) उलुग खाने मुअज्जम ने देहली की सेना लेकर अन्य मलिको के साथ उन पहाडी प्रदेशो मे घोर युद्ध किया। पर्वत के ऊबड़-खाबड तथा दुर्गम मार्गों को पार करके बडी वीरता के साथ सिरमूर प्रदेश तथा सिरमूर के किले तक पहुँच गया। वह प्रदेश उसी महान राना के अधीन था और आसपास के सभी राजा उसके अधीन थे, किन्तु वह उलुग खाने मुअज्जम से युद्ध न कर सका और भाग गया। इस्लामी सेना ने सिलमूर नगर तथा बाजार विध्वस कर दिये। उलुग खाँ ने ऐसे स्थान पर विजय प्राप्त कर ली जहाँ इससे पूर्व कोई भी इस्लामी सेना न पहुँच सकी थी। अपार धन सम्पत्ति लेकर उलुग खाँ सुल्तान की सेवा मे पहुँचा। शाही पताकाये २५ रबी-उल-आखिर ६५५ हि० (१२ मई, १२५७ ई०) को देहली पहुँची। कुतलुग खाँ सिलमूर के पर्वतीय प्रदेशो मे निकल कर मलिक किशली खाँ बल्बन से मिल गया। वे सामाने तथा कुहराम की ओर रवाना हो गये और उन्होंने उन स्थानो पर अधिकार जमाना प्रारम्भ कर दिया। जब यह समाचार सुल्तान को प्राप्त हुये तो उसने मलिक उलुग खाने मुअज्जम, मलिक किशली खाँ तथा अन्य देहली के अमीरो और लश्कर को उन से युद्ध करने के लिये भेजा। बृहस्पतिवार १४ जमादी उल अव्वल ६५५ हि० (३१ मई,

१२५७ ई०) को उलुग खाने मुअज्जम देहली मे चल पड़ा और शीघ्रातिशीघ्र कैथल की ओर रवाना हो गया। मलिक कुतलुग खाँ उसी ओर था। जब दोनो सेनायें एक दूसरे के सामने सामने हुई तो सभी भाई मित्र एक ही वंश के दो सहायक, एक ही दरबार के दो अमीर, एक ही प्रदेश की दो सेनायें, एक ही शरीर के दो अंग, एक दूसरे से युद्ध के लिये तैयार हो गये। यह बड़ी विचित्र बात थी कि एक ही थैली के चट्टे-बट्टे शैतान के मार्ग-भ्रष्ट कर देने एवं स्वार्थ के कारण युद्ध करने के लिये तैयार थे। स्वार्थियो ने दोनो दलो में शत्रुता और भी बढा दी थी।

(३०८) उलुग खाने आजम ने बड़ी योग्यता से हश्मेक़ल्ब[१] को मलिक शेर खाँ से, जोकि उसके चाचा का पुत्र तथा भाई था, कल्बे मुल्तानी[१] की सेना से पृथक् कर दिया। मलिक किशली खाँ अमीर हाजिब को, जोकि उसका सगा भाई था, दरबार के मलिको तथा हश्मेकल्ब के सैनिको और हाथियो की सेना देकर पृथक् कर दिया। इस प्रकार यह दोनो सेनाये दो बड़े-बड़े भागो में विभाजित हो गई। दोनो सेनायें सामाने तथा कैथल के निकट पहुँच कर युद्ध की प्रतीक्षा करने लगी। कुछ पगड़ी बाधने वालो (आलिमो) तथा षड्यन्त्र-कारियो ने मलिक बल्बन एवं मलिक कुतलुग खाँ को पत्र लिख कर यह प्रार्थना की कि 'शहर के द्वार हमारे हाथ में हैं, तुम लोग शहर पहुच जाओ, क्योकि शहर खाली है। तुम में और सुल्तान की सेना में कोई अन्तर नही। जब तुम इस ओर पहुँच जाओ तो सुल्तान की सेवा मे उपस्थित हो जाना। उलुग खाँ अपनी सेना के साथ बाहर होगा और तुम्हे सफलता प्राप्त हो जावेगी'। सुल्तान के कुछ हितैषियो तथा उलुग खाँ के भक्तो ने इस षड्यन्त्र की सूचना पाकर शीघ्रातिशीघ्र उलुग खाँ को सब कुछ लिख भेजा। उलुग खाँ ने सुल्तान की सेवा मे पत्र भेजा कि विरोधियो को शहर से निकाल दिया जाय। इस घटना का उल्लेख सुल्तान नासिरुद्दीन के इतिहास में किया जा चुका है। जो लोग इसमे सम्मिलित थे उनके नाम भी लिखे जा चुके है।

(३०९) उस समय, जब कि दोनो सेनाये एक दूसरे के निकट थी, एक व्यक्ति अपना तथा अपने पिता का नाम बता कर मलिक बल्बन किशलू खाँ की ओर से उलुग खाँ के पास जासूसी करने के लिये पहुँचा। उसने यह कहा कि वह उलुग खाँ की सेवा में यह सूचना देने के लिये उपस्थित हुआ है कि जो मलिक तथा अमीर मलिक बल्बन किशलू खाँ की सहायता कर रहे हैं वे उलुग खाँ की सेवा में उपस्थित होने को तैयार हैं। वे केवल इतना चाहते हैं कि उनकी रक्षा का वचन दे दिया जाय और जो लोग उपस्थित हो उनकी रोटी तथा अक्ता का प्रबन्ध कर दिया जाय। इस प्रकार बल्बन के सभी मलिक तथा अमीर उलुग खाँ की सेवा मे उपस्थित हो जायेंगे। उलुग खाँ समझ गया कि उसके दिल में कुछ खोट है। उसने आदेश दिया कि उसे समस्त सेना का, सेना की तैयारियो का तथा साज व सामान एवं हाथियों का निरीक्षण कराया जाय। इसके उपरान्त उसने बल्बन के अमीरों तथा मलिकों को यह पत्र लिखवाया कि 'तुम्हारे पत्र पढ़े गये। तुम्हारी इच्छाओं का ज्ञान प्राप्त हुआ। इसमें सन्देह नही कि यदि तुम लोग मेरे आज्ञाकारी हो जाओगे तो मैं तुम्हारी योग्यता के अनुसार अपितु उससे भी अधिक रोटी तथा अक्ता प्रदान करूँगा। यदि इसके विरुद्ध हुआ तो समस्त ससार को ज्ञात हो जायगा कि किस प्रकार तलवार तथा बर्छे की नोक से षड्यन्त्र-कारियो का अन्त कर दिया जाता है।' इस प्रकार जब यह पत्र, जिसमें मधु के साथ विष, चोट के साथ सम्मान तथा कृपा के साथ कठोरता मिली हुई थी, लिखा जा चुका तो वह लौट गया और उसने मलिक बल्बन को सब हाल सुना कर पत्र दिखाये। बुद्धिमान लोग समझ गये कि अमीर तथा मलिको के षड्यन्त्र का क्या फल होता है।

---

१ देहली की सेना।

(३१०) इसी बीच मे शहर देहली मे पत्र पहुँचे और मलिक बल्बन तथा मलिक कुतलुग खाँ शहर की ओर रवाना हो गये किन्तु उन्हे निराश होकर वापस होना पडा। उनके चले जाने के दो दिन उपरान्त उलुग खाँ को यह हाल ज्ञात हुआ। वह इस बात से बडा परेशान हुआ कि राजधानी तथा सुल्तान की क्या दशा होगी। उलुग खाँ ने पत्र पाते ही वहाँ से प्रस्थान कर दिया और सोमवार १० जमादी-उल आखिर ६५५ हि० (२५ जून, १२५७ ई०) को देहली पहुँच गया। ७ मास तक शाही सेनायें देहली में रही। जिलहिज्जा ६५५ हि० के आरम्भ (दिसम्बर, १२५७ ई०) मे दुष्ट मुगलो की सेनायें सिन्ध पहुँच गईं। उन लोगो का सरदार नूईन सारी था। मलिक बल्बन ही उन लोगो के शहना को लाया था, अत वह उन लोगो के पास पहुच गया और उन लोगों ने मुल्तान के किले की गढबन्दी को बडी क्षति पहुचाई। जब यह समाचार देहली पहुचे तो उलुग खाँ ने सुल्तान के सम्मुख निवेदन किया कि शाही पताकाओं को देहली मे प्रस्थान करना चाहिये। ६५६ हि० (१२५८-५९ ई०) वर्ष प्रारम्भ हो गया था। शाही पताकाये २ मुहर्रम ६५६ हि० (९ जनवरी, १२५८ ई०) को एक शुभ नक्षत्र मे देहली से चल पडी। सुल्तान का शिविर देहली शहर के सामने लग गया। उलुग खाने मुअज्जम के परामर्श से सुल्तान ने राज्य के चारो ओर के बडे-बडे मलिको, विलायत तथा सरहदो के खानो के नाम फरमान जारी कर दिये कि सभी तैयारी करके सुल्तानी शिविर में पहुच जायं। आशूरे के दिन (१७ जनवरी, १२५८ ई०) लेखक को आदेश मिला कि वह तज्कीर करे और लोगो को धर्म-युद्ध तथा इस्लाम की रक्षा के लिये तैयार करे।

(३११) *उलुग खाने मुअज्जम एक बहुत बडी सेना लेकर सुल्तान की सहायता के लिये* बाहर निकला। समस्त मलिको ने साथ दिया और सेनाये एकत्र होने लगी। जब दुष्ट मुगलो को इस तैयारी की सूचना मिली तो वे उस सीमा के आगे, जिसे वे विध्वस कर चुके थे न बढ सके और उन्होने कोई विशेष उत्पात न किया। यह उचित समझा गया कि ४ मास या इससे कुछ अधिक समय तक सेनायें शहर देहली के सामने एकत्रित रहे। सवारो के दस्ते आक्रमण करने के लिये मवासात तथा भिन्न-भिन्न दिशाओ में जाते थे। इसके उपरान्त यह सूचना मिली कि दुष्टो की सेना भाग गई। सुल्तान तथा अन्य लोगो को सन्तोष प्राप्त हो गया।

इस बीच मे उलुग खाने मुअज्जम को गुप्तचरो द्वारा यह सूचना मिली कि (ताजुद्दीन) इस्लान खाँ सजर ने अवध मे, तथा कुतलुग खाँ और मसऊद जानी, सुल्तानी शिविर में देर से उपस्थित होने के कारण बडे भयभीत हैं और षड्यन्त्र रचने का विचार कर रहे हैं। उलुग खाने मुअज्जम ने सुल्तान की सेवा मे निवेदन किया कि इससे पूर्व कि इस दल के पख निकल आयें और वे विरोध करने लगें, यह उचित होगा कि उन्हे इसका समय न मिलने पाये और यह अग्नि शीघ्रातिशीघ्र बुझ जाय। उलुग खाँ के परामर्श से शाही पताकायें हिन्दुस्तान की ओर मंगलवार ६ जमादी-उल-आखिर ६५६ हि० (१०जून, १२५८ ई०) को चल पडी और कडा मानिकपूर पहुँच गईं। यद्यपि यह ग्रीष्म ऋतु थी और इस्लामी सेना को मुगलो के *आक्रमण के फलस्वरूप विशेष कष्ट* उठाना पडा था, किन्तु उलुग खाँ ने विद्रोही हिन्दुओ तथा उपद्रवकारी राजाओ को इतने कठोर दण्ड दिये कि उनका उल्लेख सम्भव नहीं।

(३१२) उसके उस ओर पहुँचने के उपरान्त इस्लान खाँ तथा कुतलुग खाँ भाग गये और उन्होंने अपने परिवार तथा सहायकों को मवासात में भेज दिया। उन्होने अपने विश्वासपात्र उलुग-

खाने मुअज्जम की सेवा में भेजे और उसमे यह निवेदन किया कि वह सुल्तान की सेवा में यह लिख भेजे कि किस प्रकार उन्हे विवश होकर भागना पडा और कि शाही पताकाओ के देहली पहुँच जाने के उपरान्त दोनो (इरसलान खाँ तथा कुतलुग खाँ) दरबार में उपस्थित हो जायेंगे। उलुग खाने मुअज्जम ने उपर्युक्त प्रार्थना-पत्र सुल्तान की सेवा में भिजवा दिये और शाही पताकायें सोमवार २ रमजान ६५६ हि० (२ सितम्बर, १२५८ ई०) को राजधानी में पहुँच गई। ७ शव्वाल ६५६ हि० (७ अक्तूबर, १२५८ ई०) को इरसलान खाँ तथा कुतलुग खाँ सुल्तान के दरबार मे उपस्थित हुए। इतने विरोध, संघर्ष तथा उत्पात के प्रदर्शन के उपरान्त भी उलुग खाने मुअज्जम ने उन लोगो को इतना प्रोत्साहन प्रदान किया और उनके साथ इस प्रकार उदारता-पूर्वक उचित व्यवहार किया कि उसकी उदारता, नम्रता एव प्रोत्साहन के फलस्वरूप वे राज-भक्त बन गये। २ मास उपरान्त उलुग खाने मुअज्जम की सिफारिश से लखनौती कुतलुग खाँ को और कडा इरसलान खाँ को प्रदान कर दिये गये।

नये वर्ष में १३ मुहर्रम ६५७ हि० (१० जनवरी, १२५९ ई०) को शाही पताकायें राजधानी के बाहर चल खडी हुई और शाही शिविर देहली के सामने लगा दिये गये।

(३१३) उलुग खाने मुअज्जम अपने चाचा के पुत्र शेर खाँ को बडा प्रोत्साहन दिया करता था। उसकी सिफारिश से रविवार २१ सफर ६५७ हि० (१७ फरवरी, १२५९ ई०) को भियाना, कोल, जलसर तथा ग्वालियर की विलायत उसे प्रदान कर दी गई। ईश्वर की कृपा से उस वर्ष किसी दुर्घटना के न होने के फलस्वरूप शाही पताकाओ को किसी ओर प्रस्थान न करना पडा। बुधवार ४ जमादी-उल-आखिर ६५७ हि० (२९ मई, १२५९ ई०) को लखनौती से खजाना, धन सम्पत्ति, बहुमूल्य वस्तुये तथा दो हाथी दरबार में प्राप्त हुए। उलुग खाने मुअज्जम ने इन उपहारो को विशेष महत्व प्रदान किया। लखनौती के मुक्ता इज्जुद्दीन बल्बन यूजबकी को जिसने यह उपहार तथा हाथी भेजे थे लखनौती की अक्ता का फरमान प्रदान किया गया और वह प्रदेश उसी को स्थायी रूप से दे दिया गया।

नये वर्ष म सफर ६५८ हि० (जनवरी-फरवरी, १२६० ई०) में उलुग खाने मुअज्जम ा कोहपाया (पर्वतो के आँचल) की ओर प्रस्थान करने का दृढ सकल्प कर लिया। इस कोहपाया ा आज्ञाओ के उल्लङ्घन करने वालो के दल सर्वदा लूटमार किया करते थे और मुसलमानों ही धन सम्पत्ति लूट ले जाते थे, तथा प्रजा को कष्ट पहुँचाते थे। वे हरियाना, सिवालिक, था भियाना के ग्रामो में लूटमार किया करते थे। इसके ३ वर्ष पूर्व उलुग खाँ के दास तथा वश्वासपात्र ऊँटो का एक गल्ला हाँसी की विलायत के निकट से ले जा रहे थे। इन उपद्रव-ारियो का नेता एक हिन्दू था जिसका नाम मल्का था। उसने भूतो के समान झपट कर ऊँटो था दासो से गल्ला छीन लिया। उन लोगो ने उन्हे कोहपाया से लेकर रनतपुर (रणथम्भोर) क के हिन्दुओ में बाँट दिया।

(३१४) उस समय एक युद्ध का आयोजन हो रहा था और उलुग खाने मुअज्जम को ामान ले जाने के लिये ऊँटो की विशेष आवश्यकता थी। इससे उलुग खाने मुअज्जम तथा मस्त मलिको, अमीरो और सैनिको को विशेष कष्ट पहुँचा किन्तु वे उन पर किसी प्रकार ढाई न कर सकते थे क्योकि मुगल सेना इस्लामी नगरो की, अर्थात् सिन्ध, लाहौर तथा याह नदी की सीमा पर धावे मार रही थी। इसी समय तुर्किस्तान तथा एराक की ओर से दूत, जहूह हलाकू मुगल ने, जोकि चगेज खाँ के पुत्र तूली का पुत्र था, भेजा था, देहली के निकट हुँच चुके थे। सुल्तान की ओर से उनके विषय में आदेश हुआ कि दूतो को माहना (बाहता) था उसके निकट के स्थानो पर ठहराया जाय। उलुग खाने मुअज्जम तथा अन्य मलिको एव

(३१६) बड़े-बड़े मलिक, अमीर, सद्र तथा गण्य-मान्य व्यक्ति, रूपवान तुर्क दास सुनहरी पेटियाँ बाँधे तथा पहलवान बड़े सजधज से खड़े हुये थे। इनके द्वारा सजा हुआ भवन आठवें स्वर्ग[1] का एक भाग ज्ञात होता था। निम्नाङ्कित छन्द[2] इस अवसर के अनुकूल लिखे गये, और लेखक के एक पुत्र ने इन्हें सुल्तान के समक्ष पढ़ा।

(३२०) यह सच होगा यदि इस जश्न को सितारों से भरा हुआ आकाश कहा जाय। संसार का बादशाह राज सिंहासन पर इस प्रकार विराजमान था कि मानो सूर्य चौथे आकाश पर चमक रहा हो। उलुग खाँ उसकी सेवा में इस प्रकार नम्रता से दोनों जानुओं पर बैठा था कि मानो चन्द्रमा चमक रहा हो। मलिक नक्षत्र की भाँति इधर उधर थे। तुर्क सुनहरे वस्त्र पहने हुये तथा सुनहरी पेटियाँ बाँधे हुये अगणित सितारों की भाँति थे। यह सब प्रबन्ध तथा व्यवस्था उलुग खाने मुअज्ज़म की योग्यता द्वारा सम्पन्न हुये थे। यद्यपि सुल्तान ने मुहम्मद साहब के आदेशानुसार उसे पिता का स्थान प्रदान किया था, किन्तु वह अपने आपको एक तुच्छ दास समझता था। इस प्रकार जब दूत पेश किये जा चुके तो उनका उचित आदर सम्मान करने तथा उन्हें इनाम इकराम देने के उपरान्त उस स्थान पर भेज दिया गया जो उनके लिए निश्चित किया गया था।

इस स्थान पर इस बात का उल्लेख आवश्यक है कि ये दूत खुरासान से किस कारण भेजे गये और हलाकू मुगल का उद्देश्य क्या था तथा इसके उपरान्त क्या हुआ। मलिक नासिरुद्दीन मुहम्मद हसन कर्लुग़ की यह आकांक्षा थी कि उसके परिवार की सीपी से एक मोती का उलुग खाने मुअज्ज़म के पुत्र शाह[3] से विवाह हो जाय जिससे उसका सम्मान अन्य मलिकों की अपेक्षा बढ़ जाय और इस वैवाहिक सम्बन्ध से उसकी शक्ति तथा अधिकार में उन्नति हो जाय। उसने इस विषय से सम्बन्धित एक पत्र उलुग खाने आज़म के एक विश्वासपात्र को गुप्त रूप से लिखा और यह ज्ञात करने का प्रयत्न किया कि उसकी प्रार्थना स्वीकार भी हो सकेगी अथवा नहीं। उसका विचार था कि इसके उपरान्त वह स्वयं उलुग खाने आज़म की सेवा में निवेदन करे। चूँकि मलिक नासिरुद्दीन मुहम्मद अपने समय का एक प्रतिष्ठित मलिक था अतः उलुग खाँ ने यह सम्बन्ध स्वीकार कर लिया। उसने अपने सेवकों में से एक को उसके पास उत्तर ले जाने के लिए नियुक्त किया। सन्देश वाहक अति योग्य हाजिब जमालुद्दीन अली खलजी था।

(३२१) जब यह खलजी इस कार्य के लिए नियुक्त हुआ तो उसे यात्रा व्यय तथा अन्य खर्च मुख्य दीवान (राज्य की ओर से) द्वारा प्रदान किये गये। जब वह यात्रा के लिए रवाना हुआ तो मार्ग के कर वसूल करने वाले निश्चित कर इस हाजिब से भी माँगते थे, किन्तु वह उन्हें यह कह कर हटा देता था कि "मैं दूत हूँ।" जब उसने अपने राज्य की यात्रा का अन्त कर लिया और सिन्ध प्रदेश में पहुँचा तो मलिक इज़्ज़ुद्दीन किशलू खाँ ने आदेश दिया कि उसे बुला कर पूछ-ताछ की जाय। हाजिब अली से वे पत्र माँगे गये जो वह लेजा रहा था जिससे उन पत्रों में जो कुछ लिखा था उसके विषय में जानकारी प्राप्त हो सके। हाजिब अली ने पत्र दिखाने से मना कर दिया। जब बहुत सख्ती की गई तो उसने मुगल शहना के सम्मुख कहा कि "मैं दूत हूँ और मैं ऊपर की ओर जा रहा हूँ।" जब उसने मुगलों के सम्मुख

१ मुसलमानों के अनुसार स्वर्ग के आठ भाग हैं। अन्तिम भाग बड़ा ही भव्य बनाया जाता है और प्रत्येक भव्य वस्तु की तुलना उसी से की जाती है।

२ छन्दों में कोई विशेष बात नहीं कही गई। अतः उनका अनुवाद नहीं किया गया।

३ शाहज़ादे का नाम छपी तथा हस्तलिखित पुस्तक में कहीं नहीं मिलता।

गया। समस्त प्रतिष्ठित मलिकों, अमीरों, पहलवानों और योद्धाओं को उलुग खाँ के खजाने से बहुमूल्य वस्त्र एक दिन पूर्व प्रदान कर दिये गये थे। सब लोगों को, जोकि विजय तथा सफलता प्राप्त करके दरबार में उपस्थित हुए थे, सुल्तान ने दस्तबोस का सम्मान प्रदान किया। प्रत्येक का अत्यधिक आदर सम्मान किया गया। दो दिन उपरान्त सेना धर्म-युद्ध के लिये सुल्तान की सेवा में शहर से हौजे रानी के मैदान की ओर रवाना हुई और यह आदेश दिया गया कि पहाड़ों तथा भूतों के समान हाथियों को जोकि क्षण भर में लोगों को मृत्यु के घाट उतार देते थे, काफिरों को दण्ड देने के लिये उपस्थित किया जाय। रक्तपात करने वाले तुर्क अपनी नंगी तलवार लेकर विद्रोहियों की हत्या के लिये उपस्थित हुए।

(३१७) कुछ विद्रोहियों को हाथी के पैरों के नीचे कुचलवा दिया गया। तुर्कों की रक्त बहा देने वाली तलवारों ने दो-दो हिन्दुओं के चार-चार हिन्दू कर दिये। कई सौ विद्रोही हिन्दुओं की खाल चाकू से उतरवा ली गई। खालों में घास फूस भर कर शहर के द्वार पर लटका देने का आदेश दे दिया गया। इस प्रकार का कठोर दण्ड हौजे रानी के सामने तथा देहली के द्वार के समक्ष किसी को कभी न दिया गया था और न इस प्रकार के दण्ड की किसी ने कोई कथा ही सुनी थी। इस धर्म-युद्ध तथा वीरता से उलुग खाने मुअज्जम का सम्मान और बढ़ गया। उलुग खाने मुअज्जम ने निवेदन किया कि उचित होगा कि इस अवसर पर खुरासान के दूतों को भी बुलवा कर उन्हें दस्तबोस का सम्मान प्रदान किया जाय। सुल्तान के आदेशानुसार बुद्धवार = रबी-उल आखिर ६५८ हि० (२३ मार्च, १२६० ई०) को शाही सवारी कूशके सब्ज (हरे राज भवन) की ओर रवाना हुई। उलुग खाने मुअज्जम ने आदेश दिया कि दीवाने अर्जे ममालिक के अधिकारी देहली के आसपास से सेनायें एकत्र करें। दो लाख सशस्त्र प्यादे देहली में एकत्र हुए तथा ५० हजार सजी हुई काठियाँ, झण्डे एवं अस्त्र शस्त्र लगाकर इकट्ठा हुये। शहर के निवासी (उत्तम, मध्यम तथा निम्न वर्ग के) पैदल तथा घोड़ों पर सवार होकर बाहर निकले।

(३१८) शहरे नव किलोखड़ी से राजधानी के राज भवन तक मनुष्यों की २० पंक्तियाँ एक दूसरे के पीछे इस प्रकार खड़ी की गईं मानो एक बाग लगा दिया गया हो, जिसमें वृक्षों की पंक्तियाँ लगी हों या ऐसा ज्ञात होता था कि कयामत का दिन आ गया है और लोग अपने कर्मों का हिसाब देने के लिये एकत्र हुए हैं। इस प्रकार उलुग खाँ ने अपनी नियाबत के समय बड़ी वीरता तथा साहस का प्रदर्शन किया। उसने अमीरों मलिकों, गण्यमान्य व्यक्तियों, सद्रों, अन्य प्रतिष्ठित लोगों एवं झण्डों तथा पताकाओं के लिये उचित स्थान निश्चित किये। प्रत्येक को उचित स्थान प्रदान किया गया। भीड़-भाड़ तथा शोरगुल और ढोल की आवाज, हाथियों के चिंघाड़ने तथा घोड़ों के दौड़ाने से सर्व साधारण के कान बहरे हो गये थे और ईर्ष्या करने वालों की आँखों का प्रकाश समाप्त हो गया था। जब तुर्किस्तान के दूत शहरे नव से पहुँचे तो उन्हें भी वह भीड़भाड़ तथा शोरगुल दिखाई पड़ा। वे लोग इस दृश्य को देख कर इतने भयभीत हो गये कि ऐसा ज्ञात होता था कि उनके प्राण पखेरू उनके शरीर से उड़ जायेंगे। यह विश्वास से कहा जा सकता है कि गज-युद्ध को देख कर अनेक दूत घोड़े से गिर पड़े होंगे। जब दूत शहर के द्वार पर पहुँचे तो मलिकों ने उलुग खाँ के आदेशानुसार उनका स्वागत किया और उन्हें बड़े आदर सम्मान से हरे राज भवन में राज सिंहासन के सम्मुख ले गये। उस दिन शाही राज भवन नाना प्रकार के फर्शों, सुनहरे रुपहले पर्दों तथा अन्य वस्तुओं से सजाया गया था। तख्त के दोनों ओर काले और लाल रंग के बहुमूल्य दो चत्र लगे थे जिन में बहुमूल्य जवाहिरात जड़े हुए थे। सुनहरे राज सिंहासन को सुल्तान का आसन सुशोभित कर रहा था।

(३१९) बडे-बडे मलिक, अमीर, सद्र तथा गण्य-मान्य व्यक्ति, रूपवान तुर्क दास सुनहरी पेटियाँ बाँधे तथा पहलवान बडे सजधज से खडे हुये थे। इनके द्वारा सजा हुआ भवन आठवें स्वर्ग[1] का एक भाग ज्ञात होता था। निम्नाङ्कित छन्द[2] इस अवसर के अनुकूल लिखे गये, और लेखक के एक पुत्र ने इन्हें सुल्तान के समक्ष पढा।

(३२०) यह सच होगा यदि इस जश्न को सितारो से भरा हुआ आकाश कहा जाय। ससार का बादशाह राज सिंहासन पर इस प्रकार विराजमान था कि मानो सूर्य चौथे आकाश पर चमक रहा हो। उलुग खाँ उसकी सेवा में इस प्रकार नम्रता से दोनो जानुओ पर बैठा था कि मानो चन्द्रमा चमक रहा हो। मलिक नक्षत्र की भाँति इधर उधर थे। तुर्क सुनहरे वस्त्र पहने हुये तथा सुनहरी पेटियाँ बाँधे हुये अगणित सितारो की भाँति थे। यह सब प्रबन्ध तथा व्यवस्था उलुग खाने मुअज्जम की योग्यता द्वारा सम्पन्न हुये थे। यद्यपि सुल्तान ने मुहम्मद साहब के आदेशानुसार उसे पिता का स्थान प्रदान किया था, किन्तु वह अपने आपको एक तुच्छ दास समझता था। इस प्रकार जब दूत पेश किये जा चुके तो उनका उचित आदर सम्मान करने तथा उन्हे इनाम इकराम देने के उपरान्त उस स्थान पर भेज दिया गया जो उनके लिए निश्चित किया गया था।

इस स्थान पर इस बात का उल्लेख आवश्यक है कि ये दूत खुरासान से किस कारण भेजे गये और हलाकू मुगल का उद्देश्य क्या था तथा इसके उपरान्त क्या हुआ। मलिक नासिरुद्दीन मुहम्मद हसन कर्लुग की यह आकांक्षा थी कि उसके परिवार की सीपी से एक मोती का उलुग खाने मुअज्जम के पुत्र शाह[3] से विवाह हो जाय जिससे उसका सम्मान अन्य मलिकों की अपेक्षा बढ जाय और इस वैवाहिक सम्बन्ध से उसकी शक्ति तथा अधिकार में उन्नति हो जाय। उसने इस विषय से सम्बन्धित एक पत्र उलुग खाने आजम के एक विश्वासपात्र को गुप्त रूप से लिखा और यह ज्ञात करने का प्रयत्न किया कि उसकी प्रार्थना स्वीकार भी हो सकेगी अथवा नही। उसका विचार था कि इसके उपरान्त वह स्वय उलुग खाने आजम की सेवा में निवेदन करे। चूं कि मलिक नासिरुद्दीन मुहम्मद अपने समय का एक प्रतिष्ठित मलिक था अत उलुग खाँ ने यह सम्बन्ध स्वीकार कर लिया। उसने अपने सेवकों में से एक को उसके पास उत्तर ले जाने के लिए नियुक्त किया। सन्देश-वाहक अति योग्य हाजिब जमालुद्दीन अली खलजी था।

(३२१) जब यह खलजी इस कार्य के लिए नियुक्त हुआ तो उसे यात्रा व्यय तथा अन्य सर्व मुख्य दीवान (राज्य की ओर से) द्वारा प्रदान किये गये। जब वह यात्रा के लिए रवाना हुआ तो मार्ग के कर वसूल करने वाले निश्चित कर इस हाजिब से भी माँगते थे, किन्तु वह उन्हे यह कह कर हटा देता था कि "मैं दूत हूँ।" जब उसने अपने राज्य की यात्रा का अन्त कर लिया और सिन्ध प्रदेश में पहुचा तो मलिक इज्जुद्दीन किशलू खाँ ने आदेश दिया कि उसे बुला कर पूछ-ताछ की जाय। हाजिब अली से वे पत्र माँगे गये जो वह लेजा रहा था जिससे उन पत्रो में जो कुछ लिखा था उसके विषय में जानकारी प्राप्त हो सके। हाजिब अली ने पत्र दिखाने से मना कर दिया। जब बहुत सख्ती की गई तो उसने मुग़ल शहना के सम्मुख कहा कि "मैं दूत हू और मै ऊपर की ओर जा रहा हूँ।" जब उसने मुग़लो के सम्मुख

१ मुसलमानों के अनुसार स्वर्ग के आठ भाग हैं। अन्तिम भाग बड़ा ही भव्य बताया जाता है और प्रत्येक भव्य वस्तु की तुलना उसी से की जाती है।

२ छन्दों में कोई विशेष बात नहीं कही गई। अत उनका अनुवाद नहीं किया गया।

३ शाहजाद का नाम छपी तथा हस्तलिखित पुस्तक में कहीं नहीं मिलता।

यह बात कही तो मलिक इज्जुद्दीन बल्बन किशलू खाँ ने पत्र पढने पर ज़ोर न दिया और कहा कि "तू आगे जा सकता है। मैं तुझे तेरे निश्चित स्थान तक पहुँचा सकता हूँ।" हाजिब अली ने उत्तर दिया कि "मुझे मलिक नासिरुद्दीन मुहम्मद हसन कर्लुग की सेवा में उपस्थित होने का आदेश दिया है।" इस पर मलिक इज्जुद्दीन बल्बन को विवश होकर उसे उस ओर जाने की आज्ञा देनी पडी।

जब वह बानियान प्रदेश में पहुँचा तो यह सूचना मुगल शहना (अधिकारियो) तथा अन्य साधारण तथा विशेष व्यक्तियो को मिल गई, कि वह देहली से पत्र लेकर आया है। मलिक नासिरुद्दीन मुहम्मद हसन कर्लुग को उसे एराक तथा आजरबैजान की ओर हलाकू मुगल की सेवा में भेजना पडा, किन्तु उसने बिना देहली के दरबार तथा उलुग खाने मुअज्जम की आज्ञा के उनकी ओर से पत्र तथा उपहार उसके साथ कर दिये और अपने विश्वासपात्रो को भी उसके साथ रवाना कर दिया।

(३२२) एराक के निकट पहुँच कर वे तबरेज़ आजरबैजान में हलाकू से मिले। हलाकू ने हाजिब अली का बडा आदर सम्मान किया। जिस समय हलाकू के सम्मुख पढने हेतु फारसी से मुगली भाषा में अनुवाद किये जाने लगे तो उलुग खाने मुअज्जम के नाम के स्थान पर अनुवाद में मलिक लिख दिया गया, कारण कि तुर्किस्तान की यह प्रथा है, कि केवल एक व्यक्ति ही बादशाह (खान) कहलाता है और अन्य व्यक्तियों को मलिक कहते हैं। जब हलाकू ने पत्र सुने तो उसने कहा कि उलुग खाँ का नाम किस कारण बदल दिया गया। उसका नाम उसी प्रकार खान रखा जाय। इससे सिद्ध होता है कि वह उलुग खाने मुअज्जम का कितना आदर सम्मान करता था। इससे पूर्व हिन्दुस्तान तथा सिन्ध के खान भी मुगल खानो तथा शासको के सम्मुख उपस्थित हुये। किन्तु उनका नाम बदल दिया गया था। उलुग खाने मुअज्जम के नाम में किसी प्रकार का कोई परिवर्तन न किया गया। यह ईश्वर की कृपा से उसके गौरव का प्रमाण है कि सभी मुसलमान तथा काफिर उसका नाम आदर-पूर्वक लेते थे।

जब हाजिब अली को विदा किया गया तो बानियान के शहना को, जाकि एक प्रसिद्ध तथा गण्यमान्य मुसलमान अमीर यगरश का पुत्र था, उसके साथ जाने के लिये नियुक्त किया गया। मुगल सेना को, जोकि सारी नूईन के अधीन थी, आदेश भेजा गया कि यदि तुम्हारे किसी घोडे का खुर भी मुल्तान नासिरुद्दीन के राज्य में पहुच जाय तो उस घोडे के पैरों को काट डाला जाय। इस प्रकार उलुग खाँ की कुशल नीति द्वारा हिन्दुस्तान को शान्ति प्राप्त हो गई।

(३२३) जब मुगल दूत इस्लामी राजधानी में पहुचे तो जिस प्रकार हलाकू ने सुल्तान के हाजिब का आदर सम्मान किया था उसी प्रकार सुल्तान ने भी "नेकी का बदला नेकी से देने के लिये", मुगल दूत का आदर किया। इसी कारण खुरासान तथा तुर्किस्तान की सेना के दूत देहली आये।

इस समय की अन्तिम घटना इस प्रकार है। उलुग खाने मुअज्जम के कोहपाया में (पर्वतो के आँचल मे) युद्ध करने तथा कठोर दण्ड देने के उपरान्त भी उन विद्रोहियों के कुछ सम्बन्धी बच गये थे। वे कोहपाया से इधर-उधर भाग गये थे और इस प्रकार उलुग खानी तलवार से बच गये थे। उन्होंने पुन विरोध करना प्रारम्भ कर दिया और मुसलमानो को लूटना शुरू कर दिया। लोग उनके उपद्रवो से भयभीत रहने लगे। यह हाल उलुग खाँ को ज्ञात हुआ। उसने गुप्तचरो तथा अन्य पता लगाने वालो को इस बात के लिये नियुक्त

किया कि वे उन उपद्रवकारियो के निवास स्थान को देखलें और उनके विषय मे पूर्णतया पूछताछ करलें। सोमवार २४ रजब ६५८ हि० (५ जूलाई, १२६० ई०) को उसने शाही सेना तथा मलिको की सेना लेकर कोहपाया की ओर प्रस्थान किया। एक ही धावे में ५० कोस या इससे कुछ अधिक यात्रा करके अचानक उन पर टूट पडा और सभी को, जो लगभग १२ हज़ार की सख्या में थे, और जिनमे स्त्री बालक तथा पुरुष सभी सम्मिलित थे, बन्दी बना लिया। इस प्रकार समस्त पर्वतीय प्रदेश तथा भयानक मार्ग इस्लामी तलवारो द्वारा सुरक्षित हो गये और अपार धन सम्पत्ति प्राप्त हुई।

(३२४) जो कुछ भी मै ने उस राज्य के विषय में देखा था उसे लिख दिया। पाठको से अपने लिये प्रार्थना करने की याचना करता हू। शव्वाल ६५८ हि० (सितम्बर-अक्तूबर, १२६० ई०)।

---

(३)

तारीखे फ़ीरोज़शाही

ज़ियाउद्दीन बरनी

ज़ियाउद्दीन बरनी का जन्म बलबन के राज्य-काल मे ६८४ हि० (१२८५-८६ ई०) में हुआ था[१]। वह माता की ओर से कैथल के सैयिदो के वश का था। यह वश अपने समय में विद्वत्ता एव कुलीनता के लिये बडा प्रसिद्ध था। उस समय अनेक प्रतिष्ठित सैयिदो के वश वर्त्तमान थे[२]। बरनी का पिता मुईदुलमुल्क सैयिद जलालुद्दीन कैथली के वश की एक पुत्री का नाती था। सैयिद जलालुद्दीन, कैथल के सैयिदो में बडे प्रतिष्ठित और प्रभावशाली व्यक्ति समझे जाते थे। चगेज़ खाँ के आक्रमण तथा हलाकू के बगदाद को विध्वस कर देने के उपरान्त इस्लामी ससार के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति भारतवर्ष में आकर बस गये थे। इनके कारण देहली और देहली के आस-पास के स्थान इस्लामी शिक्षा तथा मुसलमान विद्वानो के केन्द्र बन चुके थे। बरनी का प्रारम्भिक जीवन इन्ही लोगो के मध्य में व्यतीत हुआ था। उसने इन्ही लोगों से शिक्षा ग्रहण की और उनके प्रभाव की छाप उसके समस्त जीवन पर पडी रही[३]।

उसने अपने दादा के विषय में किसी स्थान पर कुछ नही लिखा। अलाउद्दीन ने उसके चचा अलाउलमुल्क के विषय में एक अवसर पर कहा था कि यह वज़ीर-ज़ादा था[४]। इससे पता चलता है कि ज़ियाउद्दीन बरनी का दादा भी अपने समय में किसी उच्च पद पर विराजमान रहा होगा। उसका नाना सिपेहसालार हुसामुद्दीन, बल्बन का बहुत बडा विश्वासपात्र था। जिस समय सुल्तान बल्बन तुग़रिल का पीछा कर रहा था उसने लखनौती की शहनगी हुसामुद्दीन को प्रदान कर दी थी। वह उस समय वकीलदर और मलिक बारबक था। उसे आदेश दिया गया कि वह प्रत्येक सप्ताह तीन चार बार देहली के समाचार तथा अमीरो के प्रार्थना-पत्र उसके पास भेजता रहे[५]।

उसके पिता मुईदुलमुल्क ने किलोखडी में एक विशाल भवन बनवाया था। जलालुद्दीन के राज्य-काल में वह अरकली खाँ का नायब था[६]। बरनी ने जलाली राज्य-काल में लिखना पढना सीखा और कुरान खत्म किया[७]। उसका पिता अपने समय का बडा प्रभावशाली व्यक्ति था। अलाउद्दीन ने अपने सिहासनारोहण के प्रथम वर्ष म उसे बरन की नियाबत तथा ख्वाजगी

१ ज़ियाउद्दीन बरनी ने अपनी जन्म तिथि किसी स्थान पर नहीं लिखी, किन्तु तारीखे फ़ीरोज़शाही के अन्त में उसने लिखा है कि उस समय उसकी आयु ७४ वर्ष की थी (पृ० ५७३)। भूमिका में वह कहता है कि उसने तारीखे फ़ीरोज़शाही ७५८ हि० (१३५७ ई०) में पूरी की (पृ० २३)। इस प्रकार उसकी जन्म तिथि ६८४ हि० (१२८५-८६ ई०) के लगभग होती है।

२ बरनी पृ० ३५०, खलजी कालीन भारत पृ० १०५

३ बरनी पृ० ३५१, खलजी कालीन भारत पृ० १०६

४ बरनी पृ० २५७, २५६ खलजी कालीन भारत पृ० ५१-५२। यह वार्ता जिस गोष्ठी में हुई, उसी गोष्ठी में अलाउद्दीन ने उसके चचा तथा पूर्वजों के लिये नवीसिंदा (लिपिक) के शब्द का भी प्रयोग किया।

५ बरनी पृ० ८७

६ बरनी पृ० २०६, खलजी कालीन भारत पृ० २२

७ बरनी पृ० २०५। खलजी कालीन भारत पृ० १६।

प्रदान कर दी थी[१]। बडे-बडे मलिक और अमीर एव उच्च पदाधिकारी उसके पिता के यहाँ अतिथि हुआ करते थे[२]।

उसका चचा अलाउलमुल्क सुल्तान अलीउद्दीन का बडा विश्वास-पात्र था। जब सुल्तान ने कडे से देवगिरि पर आक्रमण किया तो अपनी अनुपस्थिति में उसको कडे का नायब नियुक्त किया। सुल्तान जलालुद्दीन को वह बडी सफलता से बराबर बहकाता रहा और सुल्तान को यह पता लगने न दिया कि अलाउद्दीन कहाँ और किस उद्देश्य से गया है[३]। जब सुल्तान अलाउद्दीन बादशाह हो गया तो उसने अलाउलमुल्क को कडे और अवध का नायब नियुक्त कर दिया किन्तु अब वह बडा वृद्ध और चलने फिरने में असमर्थ हो चुका था। इस लिये सुल्तान ने उसे शीघ्र ही कडे से बुलवा कर देहली का कोतवाल बना दिया[४]। सुल्तान के राज्य के आरम्भ में जब मुगलो ने देहली पर आक्रमण किया और सुल्तान ने देहली छोडकर सीरी मे अपने शिविर लगाये, तो देहली और उसका पूरा प्रबन्ध मलिक अलाउलमुल्क को सौप दिया गया[५]। मलिक अलाउलमुल्क सुल्तान को बराबर परामर्श देता रहा। जब सुल्तान ने दिग्विजय करने और एक नया धर्म स्थापित करने का सकल्प किया, तो अलाउलमुल्क ने ही सुल्तान को दोनो कार्यो से रोका और उसे पथ-भ्रष्ट न होने दिया[६]।

अलाउद्दीन और उसके उत्तराधिकारियो के राज्य में बरनी ने बडे सुख और आराम से जीवन व्यतीत किया। उसका अधिक समय विद्याध्ययन तथा विद्वानो के साथ व्यतीत होता था। अमीर खुसरो[७] और अमीर हसन[८] उसके बडे मित्र थे। न तो अमीर हसन और अमीर खुसरो को उसके बिना और न उसको उन दोनो के बिना चैन पडता था। सुल्तानुल मशायख निज़ामुद्दीन औलिया[९] का वह शिष्य था। उसने इस विषय पर अपनी एक पुस्तक हसरतनामे में बडे विस्तार से लिखा[१०] है।

---

१ बरनी पृ० २४८, खलजी कालीन भारत पृ० ४५।

२ बरनी पृ० २०४। खलजी कालीन भारत पृ० १६

३ बरनी पृ० २२२। खलजी कालीन भारत पृ० ३०

४ बरनी पृ० २४० खलजी कालीन भारत पृ० ४६

५ बरनी पृ० २५५। खलजी कालीन भारत पृ० ४६

६ बरनी पृ० २६४ २६६ खलजी कालीन भारत पृ० ५४ ५५

७ भाग दो में अमीर खुसरो की जीवनी पढो।

८ अमीर हसन भी अमीर खुसरो की भाँति अपने समय के बहुत बड़े कवि थे। दोनों ही शेख निज़ामुद्दीन औलिया के भक्त थे। इनका जन्म ६५२ हि० १२५४ ई० मे बदायूँ में हुआ था। इनकी रचनाओं में फवायदुल फवाद बडी प्रसिद्ध है। इसमें शेख निजामुद्दीन औलिया की सत-गोष्ठियों का उल्लेख है। अमीर हसन को भी मुहम्मद तुगलक के राज्य-काल में दौलताबाद जाना पड़ा और वहीं ७३७ ७३८ हि० (१३३७ ३८ ई०) में उनकी मृत्यु हो गई।

९ शेख निज़ामुद्दीन औलिया —भारतवर्ष के इस्लामी सूफियों मे बड़े प्रसिद्ध हैं। इनका सम्बन्ध शेख मुइनुद्दीन चिश्ती के भारतीय चिश्ती सिलसिले से था। इनके पूर्वज बुखारे के सैयिद थे। इनका जन्म ६३६ हि० (१२३८ ई०) में हुआ। इनकी बाल्यावस्था में ही इनके पिता का देहान्त हो गया। इनका पालन-पोषण इनकी माता ने किया। वे शेख फरीदुद्दीन गजशकर के चेले थे। इनके शिष्य समाज के प्रत्येक वर्ग से सम्बन्धित थे। शाहजादे, बडे-बड़े अमीर, उच्च पदाधिकारी, सर्व साधारण सभी इनके शिष्य थे। वे सुल्तानों के दरबार में कभी न जाते थे और सर्वदा अपना समय ईश्वर के ध्यान तथा अपने शिष्यों को शिक्षा देने में व्यतीत करते थे। उनका देहान्त १३२५ ई० में देहली में हुआ और वहीं दफ्न हुए।

१० सियरुलऔलिया—लेखक मौलाना सैयिद मुहम्मद मुबारक अलवी किर्मानी मीर-खुर्द प्रकाशक मुहिब्बे हिन्द देहली (१३०२ हि० १८८५ ई०) पृ० ३१२ ३१३।

वह सुल्तान मुहम्मद तुगलक का बडा विश्वास-पात्र था और १७ वर्ष ३ महीने तक उसके दरबार में रहा[१]। सुल्तान मुहम्मद तुगलक के समय में जो आदर सम्मान उसे प्राप्त था वह न तो इससे पूर्व और न इसके पश्चात् फिर कभी उसे मिल सका। वह उसको अत्यधिक धन सम्पत्ति प्रदान करता था और उस पर विशेष कृपा-दृष्टि रखता था[२]। बडे-बडे अमीर उसके द्वारा सुल्तान तक अपने प्रार्थना-पत्र पहुँचाते रहते थे[३]। जब सुल्तान मुहम्मद तुगलक चारों ओर से विरोधियो से घिर गया और जब एक स्थान पर विद्रोह शान्त करने पर दूसरी ओर से विद्रोह की अग्नि भडक उठती थी तो उसने जियाउद्दीन बरनी से परामर्श किया[४]। एक समय सुल्तान मुहम्मद तुगलक ने बडे शोक एव निराशा की मुद्रा में जियाउद्दीन बरनी से प्रश्न किया कि प्राचीन काल के बादशाह जब विद्रोह-दमन में असमर्थ हो जाते थे तो उस परिस्थिति में वे क्या करते थे? बरनी ने निस्संकोच कह दिया कि ऐसे अवसरो पर प्राचीन काल में बादशाह राज सिंहासन अपने पुत्रो अथवा सम्बन्धियो को सौंपकर स्वय पृथक् हो जाते थे[५]।

सुल्तान मुहम्मद की मृत्यु के पश्चात् जियाउद्दीन बरनी कठिनाइयो की काली घटाओ से घिर गया। उसने अपनी कठिनाइयो का सविस्तार उल्लेख कई स्थानो पर किया है, किन्तु किसी स्थान पर यह नही लिखा कि किन लोगो के षड्यत्र द्वारा वह अपने पद से वचित किया गया। सहीफ़ नाते मुहम्मदी[६] की भूमिका से पता चलता है कि वह ७५४ हि० (१३५३ ई०) के लगभग पहतीज[७] नामक स्थान में बन्दी बना दिया गया था। इस प्रकार सुल्तान फीरोज के सिंहासनारोहण के पश्चात् उसका सब कुछ छिन गया था। न तो वह सुल्तान का विश्वास-पात्र ही रह गया था और न उसकी राजसभा में उसे कोई मान प्राप्त था। अपने पिता के समय को स्मरण करके वह लिखता है कि, "मागने वाले मेरे द्वार से निराश होकर लौट जाते हैं, यद्यपि मैं एक दानी का पुत्र हूँ। मृत्यु को इस दिन से हजार गुना अच्छा समझता हूँ। न मेरे पास कुछ रह गया है और न मुझे कोई ऋण ही देता है[८]।" उसे सबसे अधिक चिन्ता इस बात की थी कि सुल्तान फीरोज जैसे दयालु बादशाह के सिंहासन पर विराजमान होते हुये भी उसके कष्ट दूर नही हो रहे थे। उसने अपने इतिहास में पिछले कलाकारो का स्मरण करके खून के आँसू बहाये हैं और स्थान-स्थान पर भाग्य को कोसते हुये लिखा है कि नीच और धूर्त लोग तो बडे-बडे पदो पर विराजमान हैं, किन्तु योग्य लोगो को कोई पूछता ही नही[९]। सुल्तान बल्बन के दरबार के अमीरो को याद करके वह अत्यधिक दुख प्रकट करते हुये लिखता है कि उन अमीरो के समान दानी और धर्मनिष्ठ अमीर नही[१०] रह गये। मुइज्जुद्दीन कैकुबाद की महफिलो को याद करके वृद्धावस्था में भी उसके मुँह में पानी भर आता है। जलाली राज्य-काल के उन अमीरो को याद करके जो उसके पिता के घर आते जाते थे और जिनके द्वारा बडी चहल पहल रहती थी, उसका हृदय

१ बरनी पृ० ५०४।
२ बरनी पृ० ४६७, ४६७, ५०४।
३ बरनी पृ० ५०८।
४ बरनी पृ० ५०९-५१०।
५ बरनी पृ० ५२१ ५२२।
६ सहीफ़े नाते मुहम्मदी (हस्तलिखित, रामपुर रिजा पुस्तकालय पृ० ४ अ।
७ पहतीज नामक स्थान के विषय में कुछ ज्ञात नहीं हो सका है। खलजी कालीन भारत पृ० १६।
८ बरनी २०५।
९ बरनी ६६।
१० बरनी १९४।

टुकड़े-टुकड़े हो जाता है[1]। सुल्तान जलालुद्दीन की महफिलों का उल्लेख भी उसने बड़े शोक से किया है। एक स्थान पर तो उसने अपनी दशा का बड़ा ही मार्मिक वर्णन किया है। वह लिखता है "मुझ जैसे मार्ग-भ्रष्ट वृद्ध की, जोकि इस समय पूर्णतया निराश हो चुका है और जिसके थोड़ी ही सी साँसें शेष हैं, उपर्युक्त महफिलों की प्रशंसा लिखते समय, यह इच्छा हुई कि मैं *उन सुन्दरियों युवतियों, रमणियों तथा तरुणों को याद कर लूँ*, जिनमें नाज़ व अन्दाज़ और कृत्रिम भाव भरे पड़े थे। मैं ने उनमें से कुछ के नाज़ व अन्दाज़ तथा कृत्रिम भाव देखे हैं। कुछ का गाना एवं नृत्य देखा है। मेरा जी चाहता है कि मै उनकी याद में जुन्नार बाँध लूँ और ब्राह्मणों का टीका अपने दुष्ट माथे पर लगा कर तथा अपना मुँह काला करके सुन्दरता के बादशाहों और खूबसूरतों के आकाश के सूर्यों की याद में गलियों तथा बाजारों में मारा मारा फिरूँ।'

"आज साठ वर्ष पश्चात्, जबकि मैं उन्हें नहीं पाता, जी चाहता है कि रोते चिल्लाते, वस्त्र फाड़ते, सिर व दाढ़ी के बाल नोचते हुये उनकी कब्र पर पहुँच कर अपने प्राण त्याग दूँ। मुझे अपने ऊपर इस कारण बहुत ही शोक है कि न तो मैं धर्म के कार्य के ही योग्य रहा और न दुनियाँ के। मुझे तो अपने उच्च स्वभाव और उत्कृष्ट चरित्र के कारण बहुत ऊँचे स्थान पर होना चाहिये था, किन्तु आज, जब मैं वृद्ध, बेकार, असहाय और दरिद्र हो गया हूँ, पश्चाताप तथा शोक प्रकट करने के अतिरिक्त मेरे पास और कोई कार्य नहीं।'[2] मुल्तान मुहम्मद तुग़लक के इनाम व इकराम को याद करके वह और भी दुःखी हो जाता है[3]।

उसने फीरोज़ तुग़लक के छः वर्ष के राज्य के इतिहास का उल्लेख तारीखे फीरोज़शाही में किया है किन्तु तारीखे फीरोज़शाही, जिसकी रचना में उसने इतना परिश्रम किया, उसके समकालीन अमीरों के षड्यन्त्र के कारण फीरोज़ के दरबार में प्रस्तुत भी न हो सकी थी। *उसने फीरोज़शाह की प्रशंसा में अपनी लेखनी की सम्पूर्ण शक्ति समाप्त कर दी थी किन्तु* फिर भी कुछ न हो सका, यहाँ तक कि उसकी कठिनाइयाँ अपनी चरम सीमा पर पहुँच गईं। सियरुल औलिया के लेखक मीर खुर्द ने, जो ज़िया बरनी को भली भाँति जानता था, लिखा है, कि जब बरनी की अवस्था सत्तर वर्ष से अधिक हो गई, तो फीरोज़शाह के राज्य-काल में उसने अपनी दरिद्रता के कारण एकान्तवास ग्रहण कर लिया। अन्त में कुछ दिन बीमार रह कर ईश्वर के अन्य भक्तों के समान इस लोक से परलोक को सिधार गया। मृत्यु के समय उसके पास पैसा-कौड़ी कुछ न था। पहनने के वस्त्र भी उसके पास न रह गये थे। उसके जनाज़े में नीचे एक बोरिया और ऊपर एक चद्दर के अतिरिक्त कुछ न रह गया था। सुल्तान उल-मशायख शेख निज़ामुद्दीन औलिया के कब्रिस्तान में अपने पिता की कब्र के पायती दफन हुआ[4]।

ज़ियाउद्दीन बरनी का चरित्र—

ज़ियाउद्दीन बरनी ७५ वर्ष से अधिक जीवित रहा। उसे अपने पूर्वजों से बड़ा प्रेम था और वह उन पर बड़ा गर्व किया करता था। उसका अपने समकालीनों से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। उसने तारीखे फीरोज़शाही में अपने मित्रों का उल्लेख बड़े प्रेम से किया है। अमीर खुसरो और अमीर हसन से तो उसकी बहुत बड़ी घनिष्ठता थी। उस युग के समकालीन औलिया

---

१ बरनी २०४ २०५।

२ बरनी १०...०१। ख़लजी कालीन भारत पृ० १०।

३ बरनी ४६७।

४ सियरुल औलिया पृ० ३१३ कमाल रुल अखियार ल्वार शेख अब्दुल हक मुहद्दिस देहलवी (मृ० १०५२ हि० १६४२ ई०) मुज्तबाई प्रेस देहली १३३२ हि० (१९१३-१४ ई०) पृ० १०३।

आलिमो और सूफियो की गोष्ठी में भी अभिरुचि थी। शेख निजामुद्दीन औलिया का तो वह भक्त ही था[1] किन्तु अन्य सूफियों से भी वह बड़ा प्रभावित था। सीदी मौला के जीवन का वर्णन उसने बड़े विस्तार से किया है[2]। शेख रुक्नुद्दीन[3] मुल्तानी और शेख फरीदुद्दीन[4] गज-शकर के पोते शेख अलाउद्दीन से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध था। वह धर्म में कट्टर सुन्नी था और सुन्नियो के अतिरिक्त किसी को भी आदरपूर्वक जीवन व्यतीत करने का अधिकारी न समझता था। उसकी समस्त रचनाओ, विशेषकर तारीखे फीरोजशाही तथा फतावाये जहाँदारी को समझने के लिए उसके चरित्र को समझना परमावश्यक है। उसकी मानसिक उलझनो की अमिट छाप उपर्युक्त दोनो ग्रन्थो में वर्तमान है और उसको समझे बिना लगभग ८२ वर्ष का इतिहास (१२६५ ई०-१३५७ ई०) समझना बड़ा कठिन है।

उसकी रचनायें—मीर खुर्द ने निम्नाकित पुस्तको को जियाउद्दीन बरनी की रचना बताया है—

१—सनाय मुहम्मदी।
२—सलाते कबीर।
३—इनायत नामये इलाही।
४—मआसिरे सादात।
५—तारीखे फीरोजशाही।
६—हसरतनामा।

इनके अतिरिक्त जियाउद्दीन बरनी की दो पुस्तकें और वर्तमान हैं।

१—फतावाये जहाँदारी।
२—तारीख बरमकियान।

मीर खुर्द की बताई हुई पुस्तको में से सलाते कबीर, इनायत नामये इलाही और मआसिरे सादात का कही पता नही चलता। इण्डिया आफिस की फारसी की हस्तलिखित पुस्तको की सूची से पता चलता है कि हसरतनामे के कुछ भाग (सवाते उल अनवार) में नक्ल किये गये हैं[5] किन्तु पूर्ण पुस्तक का कही पता नही।

---

१ जियाउद्दीन बरनी ने अपनी पुस्तक हसरतनामे में शेख निजामुद्दीन औलिया से अपनी वार्ता का विशेष उल्लेख किया है (अखबारुल अखियार पृ० १००)।

२ बरनी पृ० २०८–२१२। खलजी कालीन भारत पृ० २१–२४।

३ शेख रुक्नुद्दीन का जन्म १२४८ ई० में हुआ। वे शेख बहाउद्दीन जकरिया के पोते थे। शेख बहाउद्दीन जकरिया ने भारतवर्ष में सुहरवर्दी नामक सूफी सिलसिले की स्थापना की। इनकी शिक्षा का केन्द्र मुल्तान था, इनकी मृत्यु १२६७ ई० में हुई। इनके उत्तराधिकारी (खलीफा) इनके पुत्र शेख सद्रुद्दीन आरिफ थे। इनकी मृत्यु १२८५-८६ ई० में हुई। शेख रुक्नुद्दीन इन्हीं के पुत्र थे। इनके समय तक मुल्तान तथा सिन्ध प्रदेश में सुहरवर्दी सिलसिले को बड़ा मान प्राप्त रहा।

४ शेख फरीदुद्दीन गजशकर—शेख फरीद शेख कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी उशी के खलीफा थे। शेख बख्तियार, शेख मुईनुद्दीन चिश्ती (मृ० ११५५ ई०) के खलीफा थे। शेख फरीद, शेख कुतुबुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् १२३५ ई० में खलीफा हुये। वे अधिकतर अजुधन में विराजमान रहे और वहीं से अपनी शिक्षा का प्रचार करते रहे। इनकी मृत्यु ९५ वर्ष की अवस्था में ६६४ हि० (१२६५-६६ ई०) में हुई।

५ इथे, फारसी की हस्तलिखित पुस्तकों की सूची न० ६५४ (२३)।

सहीफ़े नाते मुहम्मदी—'सनाय मुहम्मदी' नामक किसी पुस्तक का पता नहीं चलता। जियाउद्दीन बरनी की एक पुस्तक सहीफ़े नाते मुहम्मदी रामपुर के रजा पुस्तकालय में वर्त्तमान है। सम्भव है कि सहीफ़े नाते मुहम्मदी और सनाय मुहम्मदी एक ही पुस्तक हो। पुस्तकों के नामों में विषय तथा लेखक के नाम के अनुसार कुछ उलट फेर होना साधारण सी बात है। अमीर खुर्द ने सहीफ़े नाते मुहम्मदी के स्थान पर सनाय मुहम्मदी लिख दिया हो। रामपुर की सहीफ़े नाते मुहम्मदी को १०८३ हि० (१६७२ ई०) में नूरुद्दीन मुहम्मद अकबराबादी ने मध्यकालीन नस्ख और नस्तालीक[1] में लिखा है। इसमें २३२ पन्ने हैं और यह १०¾ इञ्च लम्बी तथा ६¾ इञ्च चौड़ी है। प्रत्येक पृष्ठ में २५ पंक्तियाँ हैं।

वह इस किताब की भूमिका में लिखता है कि इस समय उसकी आयु ७० वर्ष से अधिक हो चुकी है। वह वृद्ध हो जाने के कारण बड़ा ही निर्बल हो गया है। इस प्रकार यह पुस्तक ७५४ हि० (१३५३-५४ ई०) के लगभग लिखी गई। उस समय उसकी कठिनाइयाँ प्रारम्भ हो चुकी थीं। वह पहतीज नामक स्थान पर ५ महीने से कैद था। इन्हीं परेशानियों में उसने सहीफ़े नाते मुहम्मदी की रचना प्रारम्भ[2] की। उसे आशा थी कि कदाचित् इसी के आशीर्वाद से उसे कष्टों से मुक्ति प्राप्त हो जाय। इसमें बरनी ने किसी विद्वत्ता का दावा नहीं किया, अपितु अपने आप को मुहम्मद साहब की प्रशंसा करने वाला एक तुच्छ लेखक बताया है[3]। पुस्तक में पाँच अध्याय और प्रत्येक अध्याय में कई कई खण्ड हैं। पाँचवें अध्याय में मुहम्मद साहब के प्रति उनके अनुयायियों के उत्तरदायित्व का वर्णन है। इस अध्याय के तीसरे खण्ड में बरनी ने मुहम्मद साहब के शत्रुओं का उल्लेख किया है और उनसे घृणा करने का आदेश दिया है। इस खण्ड का निम्नांकित भाग, जिसमें जियाउद्दीन बरनी ने सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश की एक परामर्श-गोष्ठी की चर्चा की है, भारतवर्ष के मध्यकालीन इतिहास का ज्ञान प्राप्त करने वालों के लिये बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। वह कहता है कि 'मुस्तफा अलैहिस्सलाम[4] के दूसरे प्रकार के शत्रु वे हैं जो मुस्तफा अलैहिस्सलाम को इस कारण शत्रु समझते हैं कि उन्होंने हनीफ़ी दीन[5] और आदेशों का प्रचार किया। यह शत्रु कई प्रकार के हैं अर्थात् यहूदी, ईसाई नास्तिक कूट-तार्किक जिन्दीक,[6] मुग,[7] मजूस,[8] दार्शनिक[9], हिन्दू और सभी मुशरिक[10] एवं काफिर जोकि मुस्तफा अलैहिस्सलाम के तथा उनके धर्म के इस कारण विरोधी हैं कि मुस्तफा अलैहिस्सलाम

१ पुस्तकें लिखने की एक प्रकार की शैली।
२ सहीफ़े नाते मुहम्मदी पृ० ४ अ, ६ ब।
३ ,, पृ० ६ अ।
४ ,, पृ० ३६० ।
५ हनीफ़ शब्द का अर्थ 'दीन का पक्का या मजहब का सच्चा' है। मुहम्मद साहब के पूर्व कुछ लोग अरब के देवी देवताओं को नहीं मानते थे। वे अपने आप को दीने हनीफ का अनुयायी कहते थे। कुरान में इब्राहीम पैग़म्बर के धर्म के लिये हनीफ़ शब्द का ६ स्थानों पर प्रयोग हुआ है। मुहम्मद साहब के समय से सच्चे दीन अथवा इस्लाम के मानने वाले, हनीफ़ी दीन के मानने वाले कहे जाने लगे।
६ जिन्दीक़ वे लोग कहलाते हैं जिनका कुफ्र बहुत बढ़ा हुआ होता है।
७ अग्नि पूजा करने वाले।
८ रुद्र, सूर्य तथा अग्नि के उपासक।
९ दार्शनिक अथवा फ्लासफ़र वे लोग कहलाते थे जो फलसफ़े पर विश्वास रखते थे। अब्बासी राज्य काल (७४९ ई०—१२५८ ई०) में फ़लसफ़े का बड़ा विरोध आरम्भ हो गया था।
१० वे लोग जिनका यह विश्वास है कि एक खुदा के अतिरिक्त कई खुदा हैं। मध्यकालीन इस्लामी साहित्य में ईसाइयों तथा हिन्दुओं आदि के लिये भी मुशरिक शब्द का प्रयोग हुआ है।

उनके धर्मों के विरुद्ध थे। जिस समय देहली के राज्य पर विजय प्राप्त हुई और दुष्ट चंगेज खाँ के भय से प्रत्येक स्थान के आलिम देहली पहुँचने लगे और देहली का राज्य सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश को प्राप्त हुआ तो आलिमों ने देखा कि हिन्दुओं में शिर्क और कुफ्र जड़ पकड़ चुका है। हिन्दू न तो किताब[1] वाले हैं और न जिम्मी[2]। यदि अपने सिर पर तलवार तथा सेना पाते हैं तो खिराज[3] अदा कर देते हैं, अन्यथा विरोध करते रहते हैं। कुछ प्रतिष्ठित आलिमों ने इस समस्या पर वाद विवाद करना प्रारम्भ कर दिया कि हिन्दुओं की हत्या कर दी जाय, अथवा उन्हें इस्लाम स्वीकार करने के लिये विवश किया जाय, या उनसे खिराज लेकर जिस प्रकार वे सुख एवं धन-धान्य सम्पन्न जीवन व्यतीत करते हैं तथा मूर्ति पूजा करते हैं, कुफ्र और काफिरी के आदर्शों का निर्भीक होकर पालन करते हैं, उस पर रोक टोक न की जाय और उन्हें आदर-पूर्वक जीवन व्यतीत करने दिया जाय। बहुत वाद विवाद के पश्चात् लोगों ने एक दूसरे से कहा कि मुस्तफा अलैहिस्सलाम के सब से कट्टर शत्रु हिन्दू हैं,[4] क्योंकि मुस्तफा अलैहिस्सलाम के धर्म में यह आया है कि हिन्दुओं को कत्ल करा दिया जाय, उनकी धन सम्पत्ति, उन्हें अपमानित और तिरस्कृत करके उनसे छीन ली जाय। दीनें हनीफी का यह आदेश न तो यहूदियों के लिये है, न ईसाइयों के लिये है और न दूसरे धर्मों के सम्बन्ध में। हिन्दू ब्राह्मणों, जिनमें शिर्क और कुफ्र फैल चुके हैं, के लिये उपर्युक्त आदेश पहले दिया जा चुका है। प्रत्येक स्थान के हिन्दू, चाहे वे विरोधी हों और चाहे आज्ञाकारी हों, मुस्तफा अलैहिस्सलाम के सब से बड़े शत्रु हैं, अत यह अत्युत्तम होगा कि आरम्भ ही में ऐसे शत्रुओं के विषय में वाद विवाद की आज्ञा बादशाह से प्राप्त कर ली जाय। उस समय के कुछ प्रतिष्ठित आलिम सुल्तान शम्सुद्दीन की सभा में पहुँचे और उपर्युक्त समस्या का उसके सम्मुख बड़े विस्तार से उल्लेख किया। उससे निवेदन किया कि दीन हनीफी के लिये यह उचित होगा कि या तो हिन्दुओं को कत्ल करा दिया जाय या उन्हें इस्लाम स्वीकार करने पर विवश किया जाय। हिन्दुओं से खिराज तथा जजिया[5] लेकर सन्तुष्ट न हो जाना चाहिये। सुल्तान ने उनसे वार्तालाप करने के पश्चात् वजीर को आदेश दिया कि वह आलिमों की बातों का उत्तर दे और जो कुछ उचित हो उनसे कह दे। निजामुलमुल्क जुनैदी ने उन आलिमों से जो उपस्थित थे सुल्तान के सम्मुख कहा, कि 'इसमें कोई सन्देह या शक नहीं कि आलिमों ने जो कुछ कहा वह ठीक है। हिन्दुओं के विषय में यही होना चाहिये कि या तो उनका बध करा दिया जाय या उन्हें इस्लाम स्वीकार करने पर

१ कुरान के लिये मुसलमान धर्म शास्त्र के लेखक किताब शब्द का प्रयोग करते हैं। अहलुल किताब अथवा अह्ल किताब का शब्द यहूदियों और ईसाइयों के लिये प्रयोग में आता है, क्योंकि खुदा ने इनके पथ प्रदर्शन के लिये भी कुरान के समान इन्जील तथा जुबूर नामक पुस्तकें भेजीं।

२ जिम्मी—यहूदी तथा ईसाई, इस कारण कि वे अह्ले किताब थे, जिम्मी कहलाते थे।

३ भूमिकर। खिराज शब्द का प्रयोग अधिकतर उस भूमि कर के लिये किया जाता था, जोकि मुसलमानों के अतिरिक्त अन्य धर्म के मानने वालों से उनकी भूमि के बदले वसूल किया जाता था, किन्तु बाद में खिराज शब्द का प्रयोग साधारणतया भूमि कर के लिए किया जाने लगा।

४ सहीफ़े नाते मुहम्मदी पृ० २६१।

५ एक प्रकार का कर जो इस्लामी राज्य में उन लोगों से वसूल किया जाता था जो इस्लाम को न मानते थे। इसका कारण यह बताया गया है कि चूंकि मुसलमानों को ऐसे बहुत से कर अदा करने पड़ते थे, जोकि अन्य धर्मों के मानने वालों से न वसूल किये जाते थे अत उनसे कोई न कोई कर लिया जाना आवश्यक था। कुछ इस्लामी धर्म नीति के लेखकों ने लिखा है कि जजिया इस्लाम को न मानने वालों को अपमानित करने के उद्देश्य से लिया जाता था। ज़ियाउद्दीन बरनी का भी यही विचार था। इस विषय पर आगे के काज़ी मुग़ीस तथा सुल्तान अलाउद्दीन की भी वार्तालाप पढ़नी चाहिये (बरनी पृ० २९०, खलजी कालीन भारत पृ० ७०।

विवश किया जाय, क्योंकि वे मुस्तफा अर्लेहिस्लाम के कट्टर शत्रु हैं। न तो वे जिम्मी[1] हैं और न उनके लिए हिन्दुस्तान में कोई किताब भेजी गई है और न पैगम्बर, किन्तु हिन्दुस्तान अभी-अभी अधिकार में आया है। हिन्दू बहुत बडी सख्या में है। मुसलमान उनके मध्य में दाल में नमक के समान हैं। कहीं ऐसा न हो कि हम उपर्युक्त आदेश का अनुसरण प्रारम्भ कर और वे सुसगठित होकर चारो ओर से विद्रोह तथा उपद्रव प्रारम्भ करदें, फिर हम बडे कष्ट में पड जायेंगे। जब कुछ वर्ष व्यतीत हो जायेंगे और राजधानी के भिन्न-भिन्न प्रदेश और कस्बे मुसलमानो से भर जायेंगे तथा बहुत बडी सेना एकत्र हो जायेगी, उस समय हम यह आज्ञा दे सकेंगे कि या तो हिन्दुओ को कत्ल करा दिया जाय या उन्हें इस्लाम स्वीकार करने पर विवश किया जाय।"

जब आलिमो ने वजीर का यह नीति-पूर्ण उत्तर सुना तो उन्होने सुल्तान से कहा कि "यदि हिन्दुओं को कत्ल कराने की आज्ञा नही दी जा सकती तो सुल्तान को यह चाहिए कि वह उनका अपने दरबार तथा राज-भवन में आदर सम्मान न होने दे। हिन्दुओ को मुसलमानों के बीच में न बसने दे। मुसलमानो की राजधानी, प्रदेशो और कस्बो मे मूर्ति पूजा तथा कुफ्र के आदेशो का पालन न होने दे।" बादशाह[2] और मत्री ने आलिमो की सीधी बातें स्वीकार कर ली। चूकि प्रारम्भ में उनके कत्ल की आज्ञा न दी गई, अत मुसलमानो तथा दीनदारो में कुफ्र, शिर्क और मूर्ति पूजा ने अपना अधिकार जमा लिया।

इख़बारे बरामेका[3]—यह अब्बासियो के प्रसिद्ध मत्रियो का इतिहास है जोकि बरामेका कहलाते थे। यह अरबी के एक इतिहास का अनुवाद है जिसके लेखक अबू मुहम्मद अब्दुल्ला बिन (पुत्र) तबरी और अब्दुल कासिम ताबिकी थे।

बरनी की भूमिका से पता चलता है कि इसका अनुवाद पहले भी हो चुका था किन्तु जियाउद्दीन बरनी उससे सन्तुष्ट न था। उसने इसे भी अपने समकालीन बादशाह, सुल्तान फीरोजशाह को समर्पित किया है, क्योंकि बरमक मत्री अपनी दानशीलता के लिये प्रसिद्ध थे[4]। जियाउद्दीन बरनी का विचार था कि दानियों के इतिहास से बादशाहो को विशेष रुचि होनी है, इसी लिये महमूद गजनवी भी बरमकियो का इतिहास सदैव ही सुना करता था और इस बात पर शोक प्रकट करता था कि हारूनुर्रशीद[5] ने इन लोगो का विनाश करा दिया[6]। इस पुस्तक में जियाउद्दीन बरनी को किसी स्थान पर अपने विचार प्रकट करने का अवसर नही प्राप्त हो सका किन्तु भूमिका में उसने किताब के अनुवाद का जो उद्देश्य लिखा है, उससे प्रकट होता है कि वह किसी न किसी प्रकार से फीरोजशाह का विश्वास पात्र बनना चाहता था।

---

१ जिम्मियों के अतिरिक्त किसी से जजिया नहीं लिया जा सकता। हिन्दुओं को मुहम्मद बिन कासिम के समय ही से जिम्मी मान लिया गया था। इसके अतिरिक्त तुर्क सुल्तान उन सिद्धान्तों के मानने वाले थे जिनका प्रसार अबू हनीफा (मृत्यु १५० हि०, ७६७-६८ ई०) द्वारा हुआ था। वे भी हिन्दुओं को जिम्मी मानते थे, अत जिम्मी के विषय में किसी प्रकार के वाद विवाद का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

२ सहीफ़ नाते मुहम्मदी पृ० ३६२।

३ यह पुस्तक बंबई से प्रकाशित हो चुकी है।

४ इख़बारे बरामिका पृ० ५।

५ हारूनुर्रशीद बड़ा प्रतापी अब्बासी खलीफा हुआ है। उसने ७८६ ई० से ८०६ ई० तक राज्य किया। उसके राज्य काल में कला दर्शन तथा संस्कृति की बड़ी उन्नति प्राप्त हुई। उसके राज्यकाल में ज्योतिष विद्या की एक संस्कृत पुस्तक सिद्धान्त का अरबी में अनुवाद हुआ।

६ इख़बारे बरामिका पृ० ३४।

हसरतनामा —हसरतनामे का उल्लेख मीर खुर्द तथा शेख अब्दुल हक मुहद्दिस देहलवी दोनो ने किया है किन्तु यह पुस्तक किसी स्थान पर नही पाई जाती। मीर खुर्द तथा शेख अब्दुल हक मुहद्दिस देहलवी के वर्णन से पता चलता है कि इसमें बरनी ने अपनी जीवनी तथा शेख निजामुद्दीन औलिया की सन्त गोष्ठियो एव अपने समकालीन साहित्यकारों तथा कलाकारो का वर्णन किया होगा[1]।

फतावाये जहाँदारी —जियाउद्दीन बरनी की फतावाये जहांदारी की केवल एक हस्तलिखित प्रति इण्डिया आफिस लन्दन के पुस्तकालय में मिलती[2] है। इसमें २४८ पन्ने हैं। किताब ६½ इच लम्बी और ५⅓ इन्च चौडी है।। प्रत्येक पृष्ठ में १५ सतरें हैं। कही-कही पृष्ठो के बीच का लिखा हुआ भाग मिट गया है। पृ० ११५ अ, १५१ अ, १७२ ब और १७३ अ का कुछ भाग बिल्कुल सादा है। इस पुस्तक में जियाउद्दीन बरनी ने अपना नाम कही नही लिखा है, किन्तु 'दुआगाये मुल्तानी' अर्थात् 'सुल्तान का हितैषी' के शब्द से ज्ञात होता है कि यह शब्द उसने अपने लिये लिखे हैं। इसके अतिरिक्त फतावाये जहांदारी तथा तारीखे फीरोज शाही के राज्य व्यवस्था सम्बन्धी सिद्धान्तो में जो समानता है वह इस बात का बहुत बडा प्रमाण है कि दोनो का लेखक एक ही है किन्तु यह पुस्तक भारतवर्ष तथा भारतवर्ष के बाहर किसी स्थान पर प्रसिद्ध न हो सकी। अमीर खुर्द ने तो इस पुस्तक का नाम भी जियाउद्दीन बरनी की सूची में नही लिखा है, जियाउद्दीन बरनी लिखता है कि प्राचीन लेखको ने राज्य व्यवस्था सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ लिखे हैं, किन्तु बादशाहो, मन्त्रियो, मलिको तथा अमीरो के पथ प्रदर्शन के लिये मैं ने जिस प्रकार राज्य-व्यवस्था सम्बन्धी अधिनियमो का उल्लेख इस ग्रथ में किया है उस प्रकार आज तक किसी लेखक ने नही किया।[3]

फतावाये जहांदारी में राज्य व्यवस्था सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण उपदेश दिये गये हैं। जियाउद्दीन, महमूद गजनवी को अनुपम तथा आदर्श बादशाह समझता था। उसने उसके बाद के समस्त मुसलमान बादशाहो को महमूद की सन्तान बताया है। प्रत्येक शिक्षा, बादशाहाने इस्लाम अथवा फरजनदाने महमूद अर्थात् महमूद के पुत्र के नाम से आरम्भ की है। यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि प्रत्येक गुण जिसका उल्लेख फतावाये जहांदारी में हुआ है, महमूद में वर्त्तमान था, अत महमूद की सन्तान अर्थात् इस्लामी बादशाहो को उनका अनुसरण करना चाहिये। प्रत्येक उपदेश के पश्चात् उसे स्पष्ट करने के लिये प्राचीन ईरान और इस्लामी तारीख की भिन्न भिन्न घटनाओ से उदाहरण दिये हैं। इस प्रकार फतावाये जहांदारी के उपदेशों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(१) सिद्धान्तो का उल्लेख।

(२) इतिहास से उदाहरण।

फतावाये जहांदारी में जिन समस्याओं का उल्लेख किया गया है वे निम्नांकित हैं—

सृष्टि की रचना

ईश्वर ने अपनी पूजा कराने के लिये की। पृ० २४२ अ

आदम के दो पुत्रो मे शीस को पैगम्बर और कयुमुर्स को बादशाह बनाया गया। बादशाह कयुमुर्स के और पैगम्बर शीस के वश से हैं। पृ० २४२ ब

कयुमुर्स की नसीहतें पृ० २४७ अ।

---

१ अखबारुल अखियार (मुजतबाई प्रेस देहली, १३३२ हि०) पृ० १०३, १०४।

२ ईथे, इण्डिया ऑफिस की फारसी हस्तलिखित पुस्तकों की सूची।

३ फतावाये जहांदारी पृ० २४० ब।

बादशाह कौन ?

वास्तविक शासक ईश्वर है। सासारिक बादशाह उसके खिलौने हैं। पृ० १४३ अ

राज्य व्यवस्था के सचालन हेतु ईश्वर के गुणो का अनुसरण करना चाहिये। पृ०१८७ अ

बादशाही खुदा की खिलाफत और नियाबत है। पृ० १६७ अ

बादशाही सम्पूर्ण अधिकार-सम्पन्न होने का नाम है। यह अधिकार किसी सिद्धान्त पर हो या विजय प्राप्त करके मिल जायें। २१४ अ

बादशाही उसी समय तक स्थापित रह सकती है जब तक बादशाह पर लोगो को विश्वास हो। पृ० २३५ अ

बादशाह कैसा हो ?

बादशाह के लिये सत्य का अवलोकन आवश्यक है। उसे उन आदेशो का पालन करना चाहिये, जिन्हे ईश्वर ने आवश्यक बनाया है। उन बातों से घृणा करनी चाहिये जिनका भगवान् ने निषेध किया है। पृ० २४२ ब

बादशाह को आतक, ऐश्वर्य तथा वैभव का प्रदर्शन करते हुये सहृदयता, दया और कृपा का व्यवहार करना चाहिये। पृ० १६४ अ

उसमें ऐसे गुण हो जो एक दूसरे के विरुद्ध हो। पृ० १६४ ब

मनुष्य स्वाभाविक रूप से उन कार्यों को करना चाहता है जो सुगमता और सरलता से हो जाते हैं किन्तु बादशाह को इस पर ध्यान न देना चाहिये। पृ० १६८ ब

साहसहीन बादशाह बादशाही के योग्य नही।

बादशाही के स्तम्भ

कृपा और क्रोध। पृ० १६८ ब

बादशाह के सभी गुण अन्य मनुष्यो से उत्तम होन चाहिये। पृ० १६६ अ

राज्य व्यवस्था मे इस बात पर ध्यान रखना चाहिये कि सर्व साधारण की आवश्यकतायें राजधानी से पूरी हो जायें। पृ० १७५ अ

यदि कोई सेना किसी दूसरे स्थान पर भेज दी गई हो तो लूट के धन में उसके हिस्से का माल सुरक्षित रखना चाहिये। पृ० १७५ ब

बादशाह को कपटी लोगो और धूर्तों से कष्ट पहुँचता रहता है, अत उनसे सावधान रहना चाहिये।

राज्य के अच्छे और बुरे कार्य इस बात पर निर्भर हैं कि बादशाह का ईश्वर के प्रति दृढ विश्वास हो। पृ० ६ ब, १५ अ, १५ ब

बादशाह की सफलता की परीक्षा यह है कि शरा की आज्ञाओ का पालन होने लगे। पृ० १५ ब

दीन पनाही और दीन परवरी[1]

अमरे मारूफ[2] व निही मुन्किर[3] की देख भाल। पृ० ७ अ

१ दीन पनाही—धर्म की रक्षा करना। दीन परवरी—धर्म-पालन। बरनी ने इन शब्दों का प्रयोग केवल सुन्नी धर्म की रक्षा तथा सुन्नी धर्म को आश्रय देने के लिए किया है, अत बरनी की पुस्तक के अनुवाद में धर्म-रक्षा तथा धर्म पालन का अर्थ सुन्नी धर्म की रक्षा समझना चाहिए।

२ वे बातें जिनके पालन का शरा में आदेश दिया गया है।

३ वे बातें जिनसे घृणा करने के लिये शरा में आदेश दिया गया है।

दीन पनाही और दीन परवरी न करने मे उलिलग्रम्री[1] को धक्का पहुचता है। पृ० ८ ग्र

कठोर मुहतसिबो[2] तथा ग्रमीरदादो[3] को अपने राज्य के भिन्न-भिन्न भाग में नियुक्त करना चाहिये। पृ० ८ ग्र

बादशाह का ग्रपने समय का मूल्य समझना पृ० १०४ ग्र

बादशाह को अपने समय का क्रमानुसार विभाजन करना चाहिये। पृ० १०५ ग्र

समय का मूल्य दो प्रकार से स्थापित हो सकता है।

(ग्र) उत्तम कार्यों के ग्रतिरिक्त किसी कार्य में हाथ न डाल कर। पृ० १०६ ब

(ब) राज्य व्यवस्था के सचालन में विशेष प्रयास द्वारा। पृ० १०६

भोग विलास एव सभी ग्रन्य सासारिक कार्यों की तुलना में राज्य व्यवस्था सम्बन्धी कार्यों को पहला स्थान मिलना चाहिये। पृ० ११० ग्र

दीन सम्बन्धी कार्यों को सर्व श्रेष्ठ समझना चाहिये।

बादशाह की ग्रनुमति

बादशाह की ग्रच्छी ग्रनुमति तथा उपायो की पहचान —

ग्रच्छी ग्रनुमति का बहुत बडा महत्व है। पृ० १६ ग्र

ग्रच्छी ग्रनुमति भगवान् की बहुत बडी देन है। पृ० १६ ब

बुरी ग्रनुमति से ससार में बडे दोष उत्पन्न हो जाते हैं। पृ० २१ ग्र

बुरी ग्रनुमति के चिन्ह। पृ० २१ ग्र

ग्रच्छी ग्रनुमति वाला बादशाह एक ग्रद्भुत वस्तु है। पृ० २१ ग्र

ग्रच्छी ग्रनुमति वाले बादशाह के गुण। पृ० २२ ग्र

(भगवान् का भय रखना, ज्ञान, राज्य की घटनाग्रो का निरीक्षण करते रहना, ग्रत्यधिक बुद्धिमत्ता ग्रौर समझ बूझ, निर्दोषी होना, वीर ग्रौर दिल का ग्रच्छा होना, सम्मान, सहनशीलता)।

बुद्धिमान मत्री बादशाह के लिये बडे गर्व की वस्तु होता है।

उचित तथा दृढ़ संकल्प। पृ० ३२ ब

ग्रज्म (सकल्प) का ग्रर्थ। पृ० ३३ ब

इस्लामी बादशाहा तथा ग्रत्याचारी बादशाहो के सकल्प में ग्रन्तर। पृ० ३३ ब

धर्म निष्ठ बादशाहो का सकल्प ग्रच्छाइयो ग्रौर नेकिया पर ग्राधारित होता है। पृ० ३५ ब

बादशाह को ग्रपने सकल्प के विषय में ग्रपनी प्रजा को परिचित रखना चाहिये तथा प्रजा से परामर्श करते रहना चाहिये। पृ० ३५ ग्र

बादशाह को मुहम्मद साहब तथा उनके चारो खलीफाग्रो का सकल्प, पथ-प्रदर्शन के लिये ग्रपने समक्ष रखना चाहिये। पृ० ३५ ब

यदि कोई ऐसा सकल्प कर लिया जाय जो सत्य पर ग्राधारित हो तो उससे पीछे न हटना चाहिये। पृ० ३७ ग्र

---

१ उलिलग्रम्र का ग्रर्थ "वह जिसके ग्रादेशों का सभी पालन करें। इस शब्द के प्रयोग पर इस्लामी धर्म शास्त्र वेत्ताग्रों में बडा मत भेद है, किन्तु वास्तव में सभी मुसलमान बादशाहों को उलिल-ग्रम्र लिखा जाता था।

२ वे पदाधिकारी जो भ्रष्टाचार को रोकने का प्रयत्न किया करते थे।

३ वे लोग जो काज़ियों के निर्णय का पालन कराने तथा ग्रभियुक्तों को काज़ी के न्यायालय में पेश किया करते थे।

उचित सकल्प तथा अत्याचार में अन्तर। पृ० ४२ अ

अच्छी अनुमति वाले बादशाहों की पहचान

बादशाह को मनमाना कार्य नही करना चाहिये। अच्छे परामर्श-दाताओ से परामर्श करते रहना चाहिये। पृ० २२ ब

परामर्श की शर्तें

अनुमति देने वालो को राज्य का सभी भेद बता देना चाहिये। उन्हे बादशाह का विश्वास-पात्र होना चाहिये। बादशाह अपने विचार को परामर्श-दाताओ की गोष्ठी में दूसरों से राय सुनने से पूर्व कभी न बताये। जो उचित राय हो उसे स्वीकार करे। यह आवश्यक नही कि यदि कोई ऐसी राय दे जिसे बादशाह पसन्द करता हो तो बादशाह उसी को स्वीकार करले। पृ० २३ अ-२४ ब

बड़े-बड़े कार्यों की सफलता अच्छी राय पर निर्भर है। पृ० २४ ब

मनमानी करने से राज्य में विघ्न पड जाता है। पृ० २५ अ

इस्लाम का सम्मान किस प्रकार स्थापित हो सकता है

कुफ्र और काफिरों के विनाश द्वारा। पृ० ११८ ब

केवल जजिया लेने से इस्लाम को सम्मान प्राप्त नही हो सकता। पृ० ११६ ब

जिम्मी का आदर कभी न करना चाहिये। पृ० १२० अ

रात दिन कुफ्र तथा काफिरो की अपमानित करने का प्रयास करते रहना चाहिये। पृ० १८१ ब

जिम्मी। १४८ अ

इस्लाम को विरोधियो के विनाश से सम्मान प्राप्त हो सकता है। पृ० २६ अ

जिम्मी को जीवित न रहने देना चाहिये। पृ० १४८ अ

आलिमो ने बादशाहो को आतंक तथा ऐश्वर्य की आज्ञा प्रदान की है। पृ० ४४ ब

बादशाही, ईरानियो के रीति-रिवाज के पालन के बिना सम्भव नही। पृ० १०० अ

बादशाहों का आतंक तथा ऐश्वर्य:--

बादशाह के आतक और ऐश्वर्य की परिभाषा। पृ० १०१ अ

गुजूबी तथा गजब में अन्तर। पृ० २३७ अ

कमीनों और धूर्त्तों से व्यवहार

भगवान् जिसे ऐश्वर्य तथा वैभव प्रदान करता है, उसमें अनुपम गुण उत्पन्न कर देता है। कमीनो में उसी प्रकार के दोष पैदा कर देता है। पृ० ५७ ब

लोगो के साथ उनकी कुलीनता के अनुसार व्यवहार करना चाहिये। पृ० ५६ अ

कमीनो और धूर्त्तों को सम्मान न प्रदान करना चाहिये। पृ० ५६ ब

कमीने राज्य व्यवस्था तथा शासन सम्बन्धी कार्य करने के योग्य नही। पृ० ६२ अ, २१८ ब

बादशाह के कार्य उसके कुलीन या कमीने होने का प्रमाण होते हैं। पृ० २०७ अ

अकासिरा[1] ने कभी किसी कमीने को अपना विश्वास-पात्र नही बनाया। पृ० २०७ ब

भगवान् अच्छे कार्य करने वालो तथा चरित्रवान व्यक्तियो को अपना विश्वास-पात्र बनाता है। पृ० २०८ अ

---

१ *इस्लाम से पूर्व ईरान के सम्राटों की पदवी किस्रा थी। किसरा का बहुवचन अकासिरा है।*

कमीनों तथा धूर्त्तों के बादशाह बन जाने से राज्य का विनाश हो जाता है। पृ० २११ अ

न्याय

न्याय क्या है ? पृ० ४४ अ

स्वाभाविक न्याय की पहचान। पृ० १३३ ब

शासन सम्बन्धी कार्यों में न्याय सबसे बढ़कर है। पृ० ४६ अ

बादशाह को अपने सम्बन्धियों और मित्रों के विषय में न्याय करते समय बड़ा सावधान रहना चाहिये। पृ० ४६ ब

बादशाह में न्याय की योग्यता स्वाभाविक रूप से होनी चाहिये। पृ० ४६ अ, ४७ अ

बादशाह को विलायतों और कस्बों में भी न्याय की सुव्यवस्था पर ध्यान रखना चाहिये। पृ० ४६ ब

बादशाह को क्या नहीं करना चाहिये

झूठ कभी न बोलना चाहिये। पृ० २३२ ब

धोखा कभी न देना चाहिये। पृ० २३६ ब

अत्याचारियों को कभी सम्मानित न करना चाहिये। पृ० २३७ अ

किसी राज्य पर अधिकार करने के पश्चात् उस राज्य के सम्मानित व्यक्तियों का विनाश न करना चाहिये। पृ० २३३ अ

अपराध और दण्ड

दूरदर्शी बादशाहों को दण्ड देने का उचित समय तथा अवसर भली भाँति समझना चाहिये। पृ० १४४ अ

दण्ड किस किस को दिया जाय। पृ० १४६ अ

धूर्त्त और मक्कार। पृ० १४६ ब

अत्याचारियों को क्षमा प्रदान न करना चाहिये। पृ० १४७ अ

दुष्ट दो प्रकार के होते हैं। गाली जोकि सदैव अपराध किया करते हैं और दूसरे वह जो कभी-कभी अपराध करते हैं। पृ० १४७ ब

जिम्मी को दण्ड। १४८ अ

सहाबा[1] की आलोचना करने वालों को दण्ड। पृ० १४६ अ

बैतुलमाल[2] का धन अपहरण करने वालों के लिये मृत्यु-दण्ड नहीं। पृ० १४६ अ

राज्य में दो प्रकार के अपराध होते हैं

(१) ऐसे अपराध जिनसे राज्य की अवनति हो। (२) ऐसे अपराध जिन से बादशाह अपमानित हो। पृ० १४६ ब

मुसलमान तथा नास्तिक को कौन-कौन से दण्ड दिये जायँ। पृ० १४६ ब

दण्ड अपराध के अनुसार दिया जाय। पृ० १५० ब

मुसलमानों को दण्ड। पृ० १५२ अ

अभिमानवश मनमाना कार्य न कर डालना चाहिये। पृ० १५४ अ

दूसरों की शिक्षा के लिये कुछ मनुष्यों को कठोर दण्ड दिये जा सकते हैं। पृ० १५५ ब

---

१. मुहम्मद साहब के सहायक तथा मित्र।

२ इस्लामी राज कोष। इसका धन मुसलमान बादशाह अपने हित के लिये व्यय न कर सकते थे। बैतुलमाल का धन केवल मुसलमानों के हित के लिये खर्च किया जा सकता था किन्तु मुहम्मद साहब के प्रथम चारों खलीफाओं के पश्चात् सभी खलीफा बैतुलमाल का धन अपनी इच्छानुसार खर्च करने लगे थे।

देश पर आक्रमण और विद्रोह

राज्य के दोषों तथा दुर्घटनाओं को किस प्रकार दूर किया जाय। पृ० १७८ ब

जब बादशाह से सभी लोग घृणा करने लगें तो उसे क्या करना चाहिये। पृ० १८० अ

जब कोई बहुत बडा शत्रु आक्रमण कर दे तो क्या करना चाहिये। पृ० १०८ अ

जिस प्रकार हो सके शत्रु पर विजय पाने का प्रयास करना चाहिये। विरोधी सेना के ालक को धन सम्पत्ति का लालच देकर मिला लेने का प्रयत्न करना चाहिये और जब कुछ हो सके तो अपने देश की धन सम्पत्ति का विनाश कर देना चाहिये। मार्गों को खराब और ो आदि को नष्ट कर देना चाहिये। पृ० १८० ब

अपने राज्य के बाहर चला जाना चाहिये। पृ० १८२ अ

शत्रु से युद्ध करने के लिये अपने देश वासियों से ऋण लेना चाहिये। पृ० १८२ अ

युद्ध में अपनी सेना को अधिक और शत्रु की सेना को कम न समझना चाहिये। १८३ अ

राज कोष

राज कोष पर विशेष ध्यान देना चाहिये। धन सम्पत्ति ही से मनुष्य की आवश्यकताओ पूर्ति होती रहती है और राज्य को सुव्यवस्थित रखन में सहायता मिलती है। पृ० ७८ अ

सेना

बादशाही के दोनो स्तम्भ अर्थात् जहाँदारी और जहाँगीरी सेना पर निर्भर हैं। ६५ अ

सेना को सुव्यवस्थित रखने के नियम। पृ० ६५ ब

सेना की आवश्यक्ताओ का ध्यान रखना। दिल खोल कर सेना पर धन सम्पत्ति ं करना, दयावान सरदार नियुक्त करना, आरिज़[1] का अनुभवी होना। पृ० ६६ अ

सेना की अधिकता से बडे लाभ होते हैं, बादशाह की शक्ति और अधिकार की उन्नति न होती है, लोग राज भक्त हो जाते हैं और किसी को बादशाह के राज्य पर अधिकार ाने की लालसा नही होती। पृ० ७१ ब

सेना को बेकार न रखना चाहिये। पृ० ७३ ब

सेना के अध्यक्ष के गुण

भगवान् से भय, बादशाह का निष्कपट सहायक होना, कुलीन होना, चरित्रवान होना, ज-भक्त होना, अनुभवी होना वीर, दानी, सच्चा तथा सूझ-बूझ रखने वाला होना। ० ६७ अ

ऐसे नियम जिनसे सेना सुव्यवस्थित रहती है

सेना की भोजन व्यवस्था का ध्यान रखना, उसकी आवश्यक्ताओं का ध्यान रखना, सके घोडो तथा अन्य सामान के विषय में साल में दो बार पूछताछ करते रहना। पृ० ७० ब, ३ अ

सेना को बराबर हर प्रकार का सुख पहुँचाते रहना चाहिये। पृ० ७४ अ

---

[1] युद्ध विभाग को दीवाने अर्ज कहा जाता था। उसका सबसे बड़ा पदाधिकारी आरिजे ममालिक होता था। वह अफसरों की भर्ती का जिम्मेदार था। वह साल में दो बार सेना का निरीक्षण करता था।

यदि कोई सेना दूर के स्थान पर पड़ी हो तो लूट के माल में उसका हिस्सा सुरक्षित रखना चाहिये। पृ० १७५ ब

आरिज़

आरिज़े ममालिक, आरिज़े फस्ल, आरिज़े हश्म। पृ० ६७ ब

आरिज़ पर सेना वालो को विश्वास होना चाहिये। पृ० ६८ अ

लावलश्कर की रक्षा आरिज़ का परम कर्त्तव्य होना चाहिये। पृ० ६८ ब

बरीद[1]

मुशरिफ और सच्चे बरीद। पृ० ८० अ

बरीदों की नियुक्ति की शर्तें। पृ० ८१ अ, ८३ ब

बरीद क्यों नियुक्त किये जायें। पृ० ८१ अ

बरीदो को किन बातो पर ध्यान रखना चाहिये। पृ० ८३ अ

बरीदो का वेतन। पृ० ८६ अ

बरीदों को किस दशा में उनके पद से वंचित किया जा सकता है। पृ० ८७ अ

राजदूतो को बड़ा बुद्धिमान होना चाहिये।

बाजार के दाम

चीजो के सस्ते होने से सेना सुव्यवस्थित रहती है, सर्व साधारण के कार्य में सुगमता होती है। पृ० ६० ब, ६२ अ

अकाल के समय खराज और जजिया न लेना चाहिये। पृ० ६१ अ

दाम को सस्ता करने का प्रयत्न करते रहना चाहिये। पृ० ६१ ब

दाम के निरीक्षण के लिए गुमाश्ते[2], शहने[3] आदि नियुक्त किये जायें, कोतवालो को इस पर विशेष ध्यान देना चाहिये। पृ० ६२ अ

चीजो के सस्ता होने से कलाकारो, बुद्धिमानो तथा अन्य व्यवसाय करने वालो को बड़ा प्रोत्साहन मिलता है। पृ० ६३ ब

प्रजा के सुख-सम्पन्न होने और सेना के सुव्यवस्थित होने से विरोधी सिर नही उठा सकते। पृ० ६३ ब

दाम के सस्ता होने से बादशाह की नेकनामी होती है। पृ० ६३ ब

राज्य व्यवस्था के सचालन में धन की बड़ी आवश्यकता होती है और इसकी कोई सीमा नहीं। पृ० ६४ अ

न्याय में सुगमता होती है। पृ० ६४ ब

दरवेशों को भी लाभ पहुँचता है। पृ० ६४ ब

दाम के सस्ता होने से प्रत्येक व्यक्ति को अपने कार्य करने में सुगमता होती है। पृ० ६५ ब

---

१ बरीद का कार्य बादशाह को हर प्रकार की सूचना पहुँचाना होता था। बरीदे ममालिक बड़ा ही अधिकार-सम्पन्न व्यक्ति समझा जाता था। प्रान्तों में भी बरीद नियुक्त किये जाते थे और वे गुप्त रूप से भी बादशाह को सूचनायें भेजा करते थे।

२ परगने के कर्मचारियों में गुमाश्ते का नाम मिलता है। वहाँ उसका कार्य एजेन्ट का होना था किन्तु बाजार में गुमाश्ते का कर्त्तव्य भाव की देख भाल करना होता था। अलाउद्दीन के समय में इस पद को बड़ा महत्व प्राप्त था।

३ शहना सेना का एक कर्मचारी होता था किन्तु बाजारों में उसका कार्य गुमाश्ते से मिलता जुलता था।

दाम के सस्ता होने से कोई उपद्रव नही होता । पृ० ६६ अ

दाम के सस्ता होने में भगवान् की सहायता की भी आवश्यकता होती है । पृ० १०२ ब

चोर बाजारी और एहतेकार[1] तथा दाम को बहुत बढ़ा देना बड़े पाप हैं । चोर बाजारी, अग्नि पूजा करने वाले काफिरो, मुशरिकों तथा हिन्दुओ का कार्य है । पृ० ६५ अ

राज्य के नियम १५७ अ

राज्य के नियम नीच और कमीनो को पद न देने से दृढ़ हो सकते हैं । पृ० १५८ अ

नियम बनाने की शर्तें । पृ० १५६ अ

बुद्धि पर आधारित नियमो द्वारा राज्य किस प्रकार सम्भव है । पृ० १६१ ब

बादशाह को झूठ न बोलना चाहिये, गबन करने वालो को कोई पद न देना चाहिये, विरोधियो का विनाश कर देना चाहिये । पृ० १६२ अ

किसी कमीने को अपना विश्वास-पात्र न बनाना चाहिये । अत्याचार का अन्त कर देना चाहिये, सैनिको को आश्रय देना चाहिये, अनाज का भाव नियत रखना चाहिये, हर चीज की खबर रखनी चाहिये । पृ० १६२ ब

सेना का सरदार योग्य होना चाहिये, जिन लोगो ने दुनियाँ त्याग दी है उनका सम्मान करना चाहिये, बुजुर्गों, प्रतिष्ठित तथा गण्यमान्य व्यक्तियों का आदर सम्मान करते रहना चाहिये । पृ० १६३ अ

बुद्धिमानो के परामर्श से प्रत्येक कार्य करना चाहिये, सेना की देखभाल रखनी चाहिये, खराज और जज़िया वसूल करने में मध्य का मार्ग ग्रहण करना चाहिये । पृ० १६३ ब

वचन पूरा करने का ध्यान रखना चाहिये, विद्रोही को क्षमा न करना चाहिये, ईर्ष्या रखने वालो की बातो पर ध्यान न देना चाहिये । पृ० १६४ अ

अपने कुटुम्ब वालो का ध्यान रखना चाहिये, राज्य की गुप्त बातो को छिपाये रखना चाहिये । पृ० १६४ ब

महमूद के नियम

शरा पर विशेष ध्यान देना चाहिये । पृ० १६५ अ

अपने विश्वास-पात्रो को अपमानित न करना चाहिये, सेना के ऊपर खर्च करने में संकोच न करना चाहिये, विद्या, बुद्धि, न्याय, धर्मनिष्ठता, कला तथा नैतिकता का ध्यान रखना चाहिये । पृ० १६५ ब

सब बातो की देख-रेख रखनी चाहिये, प्रत्येक कार्य करते समय उचित अवसर का ध्यान रखना चाहिये, प्रत्येक कार्य सोच विचार से करना चाहिये, आज्ञाकारियों पर दया करनी चाहिये । पृ० १६६ अ

झूठे लोगो के धोखे में न आना चाहिये, हिन्दुओं के कुफ्र और शिर्क का अन्त करके मुसलमान बना लेना चाहिये, खुदा और रसूल से भय । पृ० १६६ ब

माल के अपराधियो को मृत्यु-दण्ड न देना चाहिये, अभिमान न करना चाहिये, अपनी हिम्मत और इरादे बुलन्द रखने चाहिये, बादशाह को खुदा का खलीफा और नायब समझना चाहिये । पृ० १६७ अ

बादशाह को बुद्धिमान मन्त्रियो की राय से काम करना चाहिये । पृ० १७५ ब

सुल्तान महमूद को अपने समक्ष रखते हुये ज़ियाउद्दीन बरनी ने अपनी महत्वाकांक्षा इस प्रकार व्यक्त की है, "...महमूद यदि एक बार फिर हिन्दुस्तान की ओर आता तो समस्त

१ एहतेकार '—भविष्य में अधिक मूल्य पर बेचने के विचार से सामान इकट्ठा करना ।

हिन्दुस्तान के ब्राह्मणों को, जो इस देश में एक छोर से दूसरे छोर तक, कुफ्र तथा शिर्क की प्रथाओं को दृढ बनाने का कारण हैं, मरवा डालना और अनुमानतः दो सौ तीन सौ हजार हिन्दू नेताओं की गर्दन मरवा देता। जब तक समस्त हिन्दुस्तान इस्लाम स्वीकार न कर लेता और कलिमा न पढ लेता हिन्दुओं की हत्या करने वाली तलवार को मियान में न रखता क्योंकि महमूद, शाफई धर्म का अनुयायी था और इमाम शाफई[1] के निकट हिन्दुओं के लिये यह आदेश है कि वे या तो इस्लाम स्वीकार करलें अन्यथा उन की हत्या कर दी जाय। हिन्दुओं से जजिया लेने की आज्ञा नहीं क्योंकि न तो उनकी कोई किताब है और न पैगम्बर।" पृ० १२ अ

तारीखे फीरोजशाही[2] :—

जियाउद्दीन बरनी की सर्व प्रसिद्ध रचना तारीखे फीरोजशाही है जिसे उसने ७५८ हि० (१३५७ ई०) में पूर्ण किया। इसमें बलबन के सिंहासनारोहण (६६४ हि०, १२६५ ई०) से लेकर फीरोजशाह के छठे वर्ष तक (७५८ हि०, १३५७ ई०) का हाल है। वह आरम्भ में पूरे विश्व का इतिहास लिखना चाहता था किन्तु उसने यह देखा कि तबकाते नासिरी में सब कुछ लिखा जा चुका है, अतः उसने विश्व इतिहास लिखने का विचार त्याग दिया[3]।

जियाउद्दीन बरनी ने अपने इतिहास में अधिकतर उन्हीं घटनाओं का उल्लेख किया है जिनकी सत्यता पर उसे अपने दृष्टिकोण के अनुसार पूर्ण विश्वास था। वह स्वयं लिखता है कि "मैंने जो कुछ इस इतिहास में लिखा है, वह सच सच लिखा है और उस पर विश्वास किया जा सकता है[4]।" वह इस बात से भली भाँति परिचित था कि इस्लाम के भिन्न-भिन्न फिरकों ने किस प्रकार धार्मिक कट्टरपन के कारण सच और झूठ को मिश्रित[5] कर दिया है, वह यह भी जानता था कि इससे इतिहास को कितनी क्षति पहुँची है। अतः वह भावी सन्तानों को किसी धोखे में न रखना चाहता था। वह लिखता है "यदि भय अथवा डर के कारण अपने समकालीन बादशाह के विरुद्ध कुछ लिखना सम्भव न हो तो इसके लिये वह अपने आपको विवश समझ सकता है किन्तु पिछले लोगों के विषय में उसे सच-सच लिखना चाहिये।" अपनी भूमिका में अतिशयोक्ति की बड़ी निन्दा की है। वह लिखता है कि किसी से प्रसन्न अथवा अप्रसन्न होकर उसकी प्रशंसा या बुराई न करनी चाहिये[6]। उसने सभी के गुण तथा दोष खोलकर बताये हैं। सुल्तान जलालुद्दीन की हत्या कराने में जिन लोगों ने अलाउद्दीन की सहायता की, उन सब की उसने बड़ी कटु आलोचना की है और अपने चाचा अलाउलमुल्क तक को नहीं छोड़ा। उसने ताजुद्दीन एराकी के पुत्र कबीरुद्दीन के फतहनामों की, जो उसने अलाउद्दीन के राज्य-काल में लिखे, बड़ी सुन्दर आलोचना की है। वह लिखता है, "उसने फतहनामों (विजय के उल्लेख) के अनेक ग्रन्थ लिखे हैं और पद्य लिखने में बड़ी योग्यता दिखाई है। वह पिछले तथा सभी वर्त्तमान लेखकों से बढ गया है। अलाई राज्य-काल के इतिहास के सम्बन्ध में उसने

१ इमाम शाफई, अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद बिन (पुत्र) इदरीस (मृत्यु ८२० ई०)

२ तारीखे फ़ीरोजशाही कलकत्ते में १८६०-६२ ई० (बिबलियोथिका इण्डिका) में प्रकाशित हुई थी, इसका संस्करण सर सैयिद अहमद खाँ द्वारा प्रकाशित हुआ था। रामपुर के रिज़ा पुस्तकालय में तारीखे फ़ीरोजशाही की एक संक्षिप्त हस्तलिखित प्रति वर्तमान है जिसे मुहम्मद इब्ने जमाल, मुहम्मद खतीब मुल्तानपुरी ने १०१७ हि० (१६०८ ई०) में नक़ल किया था। भारत तथा भारत के बाहर भी तारीखे फीरोजशाही की हस्तलिखित प्रतियाँ वर्तमान हैं।

३ बरनी पृ० २१-२२।

४ बरनी पृ० २३।

५ बरनी पृ० १४।

६ बरनी पृ० १६।

अनेक विजय-पत्र लिखे हैं। उसमें सुल्तान की प्रशंसा बहुत बढ़ा चढ़ा कर की है। उसने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि इतिहासकारों के लिए यह परम आवश्यक है कि वे प्रत्येक व्यक्ति की अच्छाइयों और बुराइयों दोनों ही का उल्लेख करें। चूँकि उसने अलाई इतिहास, सुल्तान अलाउद्दीन के राज्य-काल में लिखा था और प्रत्येक ग्रन्थ उसके सम्मुख पेश होता था, अतः वह सुल्तान की प्रशंसा के अतिरिक्त कुछ और लिख भी नहीं सकता था[1]।"

बल्बन के इतिहास के विषय में यह लिखता है कि उसने जो कुछ लिखा है वह अपने पूर्वजों से सुनकर लिखा है[2]। मुइज्जुद्दीन कैकुबाद के इतिहास में जिन घटनाओं का उल्लेख किया है, वह उसने अपने पिता और गुरुओं से सुनी थीं[3]। जलालुद्दीन के राज्य-काल से फीरोज़ के राज्य-काल तक का समस्त हाल उसकी अपनी जानकारी पर आधारित है[4]। उसने अपने नाना सिपहसालार हुसामुद्दीन से भी अनेक घटनाओं का वर्णन सुना था[5]। अपने चचा अलाउलमुल्क द्वारा उसे अलाउद्दीन के राज्य-काल का बहुत कुछ हाल ज्ञात हुआ होगा। बहुत सी घटनाओं का हाल उसने अमीर हसन तथा अमीर खुसरो से सुना था[6]। अमीर खुसरो की कविताओं से भी उसने अपने इतिहास में विशेष लाभ उठाया है। कहीं-कहीं उसने अमीर खुसरो के छन्द नकल भी कर दिये हैं[7]।

ज़ियाउद्दीन बरनी के इतिहास की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसने समस्त घटनाओं का उल्लेख एक विशेष दृष्टिकोण से किया है। राजनीति में उसका एक विशेष धार्मिक दृष्टिकोण था। इसी दृष्टिकोण की छाप तारीखे फीरोजशाही के पृष्ठों में विद्यमान है। उसका विचार था कि तारीखे फीरोज़शाही के समान कोई इतिहास पिछले एक हज़ार वर्ष से नहीं लिखा जा सका है।[8] इतिहास के विषय में ज़ियाउद्दीन बरनी का दृष्टिकोण समझ लेने के पश्चात् ही तारीखे फीरोजशाही तथा तुर्क-कालीन भारतीय इतिहास के समझने में विशेष सुगमता होती है। वह इतिहास को केवल बादशाहों के युद्ध तथा उनकी शासन व्यवस्था तक ही सीमित न समझता था। अपितु उसका विचार था कि इसमें राज्य के उच्च पदाधिकारियों अमीरों, आलिमों, कलाकारों, सूफियों तथा इस्लाम के उच्च वर्ग से सम्बन्धित सभी व्यक्तियों का उल्लेख होना चाहिये। तबकाते नासिरी में अमीरों का उल्लेख बड़े विस्तार से किया गया है। ज़ियाउद्दीन बरनी ने उपर्युक्त श्रेणी का वर्णन बड़े जोश तथा उत्साह से किया है। उनकी विशेषताओं और गौरव के उल्लेख में किसी स्थान पर कोई संकोच नहीं किया है। इतिहास के अध्ययन के उसने सात लाभ बताये हैं जोकि उच्च वर्ग के हित तथा राजनीति से सम्बन्धित हैं[9]। उसे इस बात से बड़ा दुःख था कि फीरोजशाह के अमीरों, प्रतिष्ठित तथा गण्य मान्य व्यक्तियों की इतिहास में पूरी रुचि नहीं, यहाँ तक कि लोग जिस नगर में वर्षों से निवास करते चले आ रहे थे, उसके विषय में भी उन्हें कोई ज्ञान नहीं[10]। समाज के निम्न वर्ग से वह

१ बरनी पृ० ३६१ खलजी। कालीन भारत पृ० ११२-११३।
२ बरनी पृ० २५
३ बरनी पृ० १२७।
४ बरनी पृ० १७५। खलजी कालीन भारत पृ० २
५ बरनी पृ० ११६।
६ बरनी पृ० ६० ६८, १८३।
७ बरनी पृ० ११०, ११८, १७६।
८ बरनी पृ० १२४।
९ बरनी पृ० १० १२।
१० बरनी पृ० ४८ ४९।

इतिहास का कोई सम्बन्ध नही समझता। उसका विचार था कि इतिहास कुलीन तथा गण्य-मान्य व्यक्तियो के उल्लेख तक ही सीमित रहना चाहिये। निम्न वर्ग के वर्णन से इतिहास का कोई मूल्य शेष नही रहता और न निम्न वर्ग को इतिहास का अध्ययन ही करना चाहिये। क्योकि, जब उनका इसमे कोई सम्बन्ध ही नही तो फिर इसे पढने से क्या लाभ[१] ? वह सभी ऊँचे पदों के लिए कुलीनता परमावश्यक समझता था। योग्यता का उसके निकट कोई विशेष मूल्य न था[२]।

उसके इतिहास का सबसे बडा दोष यह है कि उसने प्राय बडी महत्त्वपूर्ण घटनाओं को बडे ही सक्षिप्त रूप मे लिख दिया है और घटनाओ का क्रमानुसार उल्लेख भी नही किया है। कुछ बडी-बडी घटनाओ के विषय में या तो उसने कुछ लिखा ही नही और यदि कुछ लिखा भी है तो वह इतना सक्षिप्त है कि उसके द्वारा उस समय का इतिहास समझने में बडी कठिनाई होती है। इसका कारण यह है कि उसने अधिकतर घटनाओ का उल्लेख करते हुये यह बात अपने समक्ष रक्खी है कि किसी प्रकार उनमे राज्य व्यवस्था अथवा शासन सम्बन्धी शिक्षा ग्रहण की जा सके और उनके द्वारा समकालीन बादशाह तथा उच्च पदाधिकारियो का पथ-प्रदर्शन किया जा सके। उसने भिन्न-भिन्न सूत्रो से भी घटनाओ को एकत्र करके जाँचने का प्रयत्न नही किया है। उसने अपनी भूमिका में हदीस[३] का इतिहास से सम्बन्ध बताया[४] है किन्तु हदीस के नियमो का अनुसरण करते हुये घटनाओं को परखने का प्रयत्न नही किया। उसका विचार था कि इतिहासकार के लिए पक्का मुसलमान होना पर्याप्त है, उसे किसी प्रमाण की आवश्यकता नही। धर्मनिष्ठ मुसलमान के प्रत्येक लेख पर सभी को विश्वास करना चाहिये। इसका कारण यही समझ मे आता है कि उसका उद्देश्य घटनाओ को जाँचने तथा उनके सविस्तार उल्लेख के बिना ही पूरा हो जाता है। वह उद्देश्य राजनीति तथा शासन व्यवस्था के नियमों को समझना था, इसके लिए उसने फतावाये जहाँदारी नामक ग्रन्थ अलग भी लिखा।

तारीखे फीरोजशाही में मुहम्मद तुगलक का इतिहास लिखने के पूर्व उसने अपने इतिहास लिखने की योजना इस प्रकार स्पष्ट की है। वह लिखता है, "यदि मैं उसके प्रत्येक वर्ष का हाल लिखूँ और जो कुछ उस वर्ष में हुआ उसका सविस्तार उल्लेख करूँ तो कई ग्रन्थ तैयार हो जायेंगे। मै इस इतिहास में सुल्तान मुहम्मद की राज्य-व्यवस्था तथा शासन सम्बन्धी समस्त कार्यों का सक्षिप्त उल्लेख करता हूँ। प्रत्येक विजय के आगे पीछे घटित होने तथा प्रत्येक हाल और घटना के प्रथम या अन्त में घटित होने पर कोई ध्यान नही दिया गया है क्योकि योग्य लोगों को शासन नीति एव राज्य व्यवस्था सम्बन्धी कार्यों के अध्ययन से शिक्षा प्राप्त होती है। असावधान तथा बेखबर लोगों को प्राचीन लोगो के अच्छे बुरे हाल की जानकारी मे कोई रुचि नही होती। वे इतिहास की, जोकि समस्त ज्ञानो में उत्तम तथा लाभदायक है, कोई जानकारी नही रखते। यदि वे अबूमुस्लिम के क़िस्सो के ग्रन्थों का बराबर अध्ययन किया करें तो भी बुद्धि तथा समझ के अभाव के कारण उन्हें इससे कोई लाभ नही हो सकता और वे उस असावधानी से मुक्त नही हो सकते जो उनमें बाल्यावस्था ही मे विद्यमान हैं।[५]"

फतावाये जहाँदारी तथा तारीखे फीरोजशाही को साथ-साथ पढ़ने से पता चलता है

---

१ बरनी पृ० ६
२ बरनी पृ० १८
३ हदीस में मुहम्मद साहब के कथन तथा कार्यों का उल्लेख होता है।
४ बरनी पृ० १०-११
५ बरनी पृ० ४६८।

कि जियाउद्दीन बरनी ने बल्बन, जलालुद्दीन, अलाउद्दीन और मुहम्मद तुगलक द्वारा जिन सिद्धान्तो का प्रचार कराया है, वे कुछ सीमा तक उसके अपने सिद्धान्त तथा विचार भी थे। अलाउद्दीन के आर्थिक सुधार एव अनेक सिद्धान्त कहानियो द्वारा फतावाये जहाँदारी में भी स्पष्ट किये गये हैं। मुहम्मद तुगलक को राज्य त्यागने का जो परामर्श बरनी ने तारीखे फीरोजशाही में दिया है, उसी को सिद्धान्त के रूप में कहानियों द्वारा फतावाये जहाँदारी में भी लिखा है। इसके प्रमाण में इस स्थान पर दोनों ग्रन्थों से उदाहरण देना सम्भव नही किन्तु अनुवाद के फुटनोट में फतावाये जहाँदारी के पृष्ठो का भी हवाला दे दिया गया है, जिससे दोनो पुस्तको की तुलना करने वाले सुगमतापूर्वक स्वय तुलना करके देख लेंगे कि किस प्रकार कही-कही जियाउद्दीन बरनी ने अपने विचार बल्बन तथा अन्य बादशाहों की जबान से कहलवाये हैं।

इतिहास द्वारा राजनीति को स्पष्ट करने की शैली का मध्यकालीन राजनीति के लेखको ने प्रत्येक ग्रन्थ में पालन किया है, किन्तु किसी लेखक ने शरा को इतना महत्त्व प्रदान नही किया। हिन्दुओ की तहस नहस करने तथा उनके विनाश पर इतना जोर उससे पूर्व किसी भी इतिहासकार ने नहीं दिया है। फखरे मुदब्बिर ने तो शासन-व्यवस्था एव युद्ध के नियमो पर एक पृथक् ग्रन्थ[1] लिखा जिसमें हिन्दुओ का विनाश करने का प्रचार बडी सुगमता से किया जा सकता था किन्तु उसने ऐसा नही किया।

इसका कारण ढूँढने के लिये हमें जियाउद्दीन बरनी के जीवन काल का अध्ययन करना होगा और उस विशेष वातावरण को भी अपने समक्ष रखना पडेगा जिसमें तारीखे फीरोजशाही तथा फतावाये जहाँदारी की रचना की गई। इस समय जियाउद्दीन बरनी अपने सभी अधिकारो से वचित हो चुका था। उसे कोई सम्मान अथवा प्रतिष्ठा प्राप्त न थी। उसका विचार था कि इन ग्रन्थो की रचना द्वारा उसका खोया हुआ सम्मान पुन वापस मिल जायगा। वह एक ओर तो भगवान् से प्रार्थना करता था और दूसरी ओर उसको आशा थी कि कदाचित् फीरोज़ या उसका कोई उच्च पदाधिकारी उसकी सहायता कर दे।[2]

मुहम्मद तुगलक के समय ही से देश के उच्च वर्ग की आर्थिक दशा डावा डोल हो चुकी थी। अलाउद्दीन के समय की वह स्थिति, जब कि अनाज तथा अन्य वस्तुओ का भाव सस्ता कर दिया गया था, अब वर्त्तमान न थी। जियाउद्दीन बरनी अपने समकालीनो की भाँति स्वय बडा अपव्ययी बन गया था। उसने अपने समय के सभी अपव्ययी अमीरों की तारीखे फीरोजशाही में बडी प्रशसा की है। उसने अपने सुख के दिन याद करके आँसू बहाये हैं, किन्तु मुसलमानो के इस वर्ग को धन अब किस प्रकार प्राप्त हो सकता था। जियाउद्दीन बरनी स्वय देश के साधन बढाने के उपाय न सोच सकता था। उसने सुल्तान मुहम्मद तुगलक की कृषि-उन्नति योजनाओ की भी हँसी सी उडाई है[3]। फीरोज के समय की नई नहरो तथा आर्थिक व्यवस्था से भी उसे कोई लाभ न प्राप्त हो सके, उसे कोई ऐसा उपाय भी समझ में नही आया जिससे हिन्दू महाजनों, साहूकारो तथा धनी लोगो के धन का किसी प्रकार अपहरण किया जाय। यह केवल उसी समय सम्भव था जब कि बादशाह तथा समस्त उच्च पदाधिकारियो को यह समझा दिया जाता कि धर्मनिष्ठ अथवा दीनदार बादशाह का कर्त्तव्य यह है कि हिन्दुओ को अपमानित और तिरस्कृत किया जाय। उसे इस बात पर विश्वास था कि सभी हिन्दुओ को मुसलमान बना लेना या उनको तलवार के घाट उतार देना सम्भव नही। अस्तु उसने तारीखे फीरोजशाही तथा फतावाये जहाँदारी द्वारा यह समझाने का प्रयत्न किया

१ अदाबुल हर्ब वश्शुजाअत।
२ बरनी पृ० १२४ २५।

है कि कम से कम इतना तो होना अनिवार्य है कि हिन्दुओं को दरिद्र तथा मुहताज बना दिया जाय, उनके पास इतना धन शेष न रहे कि वे आदर-पूर्वक जीवन व्यतीत कर सकें। इससे उसे आशा थी कि मुसलमानों को पुन धन सम्पत्ति प्राप्त हो जायगी और उच्च वर्ग की आर्थिक समस्याओं का कुछ दिनों के लिये समाधान हो जायगा। जहाँ तक साधारण वर्ग का सम्बन्ध है उसे जियाउद्दीन बरनी जीवित रहने का अधिकारी समझता ही न था। वह चाहता था कि लूट के माल में से सब कुछ राज कोष में ही न पहुँच जाय अपितु मुसलमानों के उच्च वर्ग को भी अधिक से अधिक लाभ उससे प्राप्त हो।

फतावाये जहाँदारी में उसने जिस आर्थिक नीति का उल्लेख किया है, वह वही है जिसका अनुसरण अलाउद्दीन ने किया था। उसका विचार था कि चीजों का दाम राज्य की ओर से निश्चित हो, किसी को निश्चित भाव से अधिक दाम वसूल करने की आज्ञा न हो, बाजार में निरीक्षक तथा अन्य पदाधिकारी नियुक्त किये जायें जो इस बात की देख-रेख करते रहें कि राजाज्ञाओं का किसी प्रकार उल्लघन न हो। उसके समय में देश का सभी व्यापार हिन्दुओं के हाथ में था, अत उसने जिस स्थान पर भी चोर बाजारी को रोकने की शिक्षा दी है उसी स्थान पर यह भी लिख दिया है कि वास्तव में चोर बाजारी हिन्दू तथा काफिर करते हैं। इस प्रकार उसने हिन्दू व्यापारियों तथा महाजनों को अपमानित करने की शिक्षा प्रत्येक स्थान पर दी है। ब्राह्मणों का विरोध भी इस कारण किया गया है कि हिन्दू समाज में उनका बडा सम्मान होता था। वे भी धनी थे। इसके साथ-साथ हिन्दुओं के धर्म सम्बन्धी सभी कार्य उन पर निर्भर थे। जियाउद्दीन बरनी समझता था कि इन लोगों के विनाश द्वारा मुसलमानों को धन सम्पत्ति एकत्र करने में बडी सुगमता होगी।

अत जियाउद्दीन बरनी के दृष्टिकोण को उस समय के उन मुसलमानों का दृष्टिकोण समझना चाहिये, जिनकी आर्थिक दशा बडी खराब हो चुकी थी। इस प्रकार जियाउद्दीन बरनी की तारीखे फीरोजशाही द्वारा हमें केवल उस समय की राज्य सम्बन्धी घटनाओं का ही ज्ञान नहीं प्राप्त होता, अपितु बल्बन से लेकर फीरोज के राज्य-काल तक की सास्कृतिक, आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति का भी पता चलता है। इस कारण तारीखे फीरोजशाही को मध्यकालीन इतिहास के ग्रन्थों में एक बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त है।

तारीखे फ़ीरोज़शाही

भूमिका

(अल्लाह के नाम से जोकि बडा ही दयालु और कृपालु है ।)

भगवान् की वन्दना तथा मुहम्मद साहब और उनके सहायको की प्रशसा —

बन्दना और प्रार्थना ईश्वर के लिये है, जिसने आसमानी वही[1] एव नबियो[2] और त्लानों के इतिहास और तारीख द्वारा मानव जाति का पथ प्रदशन किया। समस्त विश्वास-त्रों तथा घृणा के योग्य व्यक्तियों के हाल, पहली उम्मत[3] के विश्वास के योग्य लोगो के रव एव ईश्वर से दूर हो जाने वालो के अवगुण मुहम्मद साहब के मानने वालों को स्पष्ट या साफ-साफ बता दिये। इस मार्ग प्रदर्शन और शिक्षा के द्वारा इस उम्मत को अपना कृतज्ञ नाया। उसने कुरान में कहा है "और जो कुछ लोग पहले कर चुके हैं, उनको तथा उनके च्छे या बुरे चिन्हो को हम लिखते जाते हैं।" दूसरी आयत[4] में कहा है "तुम पर कुरान भेज र हम एक अत्युत्तम किस्सा बयान करते हैं।" उस पालन वाले का कृतज्ञ और आभारी होना चित है, जिसने ध्यान पूर्वक निरीक्षण करने वालो और बुद्धिमान लोगो को बुद्धि तथा अपनी क्ति के प्रकाश से उज्ज्वल किया है और उत्तम तथा स्पष्ट सोचने की शक्ति से सुशोभित किया , जिससे वे लाग पहले के लोगो का इतिहास और तारीख, उनकी भलाइयाँ और बुराइयाँ, ण तथा अवगुण, आज्ञाकारियो का आज्ञा-पालन, विरोधियो की अवज्ञा का अनुसरण करना, क्तो की मुक्ति और दुष्टो का विनाश अपनी बुद्धि की आँखो से देख। भगवान् के भक्तो को ग्य-शाली और भगवान् से दूर हो जाने वालों को अभागा समझें। नेक और अत्याचारियो, श्वास-पात्रों और ईश्वर से दूर पडे हुये लोगो, भगवान् के प्रिय और अप्रिय, मार्ग ज्ञाताओं या मार्ग-भ्रष्टो, मित्रो और शत्रुओं का अन्तर समझ सक और उत्कृष्ट तथा निकृष्ट बातो, लाइयो और बुराइयो को एक दूसर से पृथक् कर मक। वे इस्लाम की अच्छाई, कुफ्र की रावी, प्रशसात्मक नेकी और घृणात्मक वदी में जो अन्तर है, उसे भली भाँति समझ सकें। ल्लाह के विश्वास-पात्रो और उसके भक्तो के वचनो और कार्यो का अनुसरण अनिवार्य मझें।

(२) जिन लोगों को भगवान् ने त्याग दिया है, उनके कार्यो की बुराइयो और अनैतिक नों से बचें, भाग्यशालियो का अनुसरण करना और अभागे के मार्ग स सुरक्षित रहना धर्म र राज्य के लिये अति आवश्यक समझें, जिससे वे अच्छे और नेक लोगो का अनुसरण कर

---

[1] वही अथवा ईश्वर से प्रेरणा —मुसलमानों का विश्वास है कि खुदा जिबरील फरिश्ते द्वारा मुहम्मद साहब के पथ-प्रदर्शन के लिये सदेशे भेजा करता था। इन सदेशों को वही कहा जाता है। कुरान में आया है कि मुहम्मद साहब उस समय तक कोई बात न कहते थे, जब तक कि उन्हें वही द्वारा भगवान् की इच्छा न ज्ञात हो जाती थी। कुरान इन्हीं वहियों का सग्रह है।

[2] मुसलमानों का विश्वास है कि, खुदा सृष्टि की रचना के पश्चात् सर्व साधारण के पथ प्रदर्शन के लिये प्रत्येक काल मे अपनी ओर से कोई न कोई व्यक्ति भेजता रहा है। उन्हें नबी, पैगम्बर, रसूल अथवा मुरसिल कहा जाता है। मुहम्मद साहब अन्तिम नबी, पैग़म्बर, अथवा रसूल माने जाते हैं।

[3] अनुयायी। प्रत्येक नबी के अनुयायी उसकी उम्मत कहलाते हैं।

[4] कुरान का प्रत्येक वाक्य आयत कहलाता है।

के तथा बुरा के अनैतिक कार्य से सुरक्षित रह कर, मुक्ति प्राप्त कर सकें। इस प्रकार के भगवान् के शरण में स्थान पा सकेंगे। नेकी बदी की जानकारी, पहले लोगों की अवज्ञा और आज्ञा-पालन के समाचार को मुहम्मद साहब के हर विशेष तथा साधारण अनुयायी को भगवान् की एक बहुत बड़ी देन और उसका दान समझना चाहिये। इतनी बड़ी देन की कृतज्ञता प्रकट करने में जिह्वा को सर्वदा लगाये रहना चाहिये। प्राचीन काल के समाचारों को ईश्वर की बहुत बड़ी देन और कृपा समझ। यह समझें कि निम्नांकित आयत में बड़े अच्छे फल की ओर सकेत किया गया है। यह ईश्वर की कृपा-दृष्टि है कि जिसे चाहे उसे प्रदान करे। भगवान् की दया तथा कृपा तो अपार है। अल्लाह नबियों, फरिश्तों, वलियों[1], असफिया[2] पिछली उम्मतों के मान्य व्यक्तियों और मुहम्मद साहब की उम्मत के समस्त साधारण तथा विशेष व्यक्तियों का दरूद[3] और सलाम, नबियों और मुर्सलीन के सरदार मुहम्मद इब्ने (पुत्र) अब्दुल्ला कुरैशी[4] हाशमी[5] बतही[6] की पाक और पवित्र आत्मा पर हमेशा होता रहे, जिनके सर्वोत्तम गुणों तथा प्रशसा के योग्य नैतिकता का वर्णन आसमानी पुस्तकों में वर्तमान है और नित्य बना रहेगा और जिनके प्रशसनीय वचनों तथा कार्यों का यश एव गौरव, हदीस एव इतिहास की पुस्तकों में भरा पड़ा है। यह उपदेश और कार्य ऐसे हैं कि जिनके प्रकाश मे शरीअत[7] और तरीक़त[8] की आज्ञायें पूर्व से पश्चिम तक जारी होती रहती हैं। इनके अनुसरण से उनके अनुयायियों को उच्च श्रेणी तथा मुक्ति प्राप्त होती है।

(२) इस्लाम के बादशाहों की राज्य-व्यवस्था इन्ही पर अवलम्बित है। अल्लाह रसूल समस्त उम्मत के वली और असफिया तथा मुहम्मद साहब के साधारण अनुयायियों का दुरूद और सलाम, रसूल के चारों खलीफाओं और कुटुम्ब वालों तथा समस्त निष्कपट सहाबियों पर सदैव तथा प्रलय तक होता रहे। यह लोग भगवान् और रसूल के चुने हुये लोगों में से थे। इनके कारनामों का उल्लेख सम्भव नहीं, क्योंकि इनकी प्रशसा में कुरान की यह आयत वर्तमान है "और महाजिरीन[9] एव अंसार[10] म से (ईमान की ओर) बढ़ने वाले वे लोग जिन्होंने अच्छे विचार से (ईमान के स्वीकार करने में) उनका साथ दिया, भगवान् उन से सन्तुष्ट और वे लोग भगवान् स प्रसन्न रहे।"

१ भगवान् के मित्र। इस शब्द का प्रयोग उन सूफियों (मुसलमान सतों) के लिये किया जाता है, जो अपना समय केवल ईश्वर ध्यान में व्यतीत करते हैं।

२ सूफी का बहुवचन असफिया है। मुसलमान सत सूफी कहलाते हैं।

३ अर्बी का एक वाक्य जिसमें मुहम्मद साहब, उनकी सतान तथा सहायकों और मित्रों के लिये भगवान् से प्रार्थना की जाती है। मुसलमानों के लिये इस वाक्य को दुहराते रहना अति आवश्यक बताया गया है, और लिखा गया है कि इसमें बड़ा पुण्य है।

४ कुरैश अरबों का बड़ा प्रतिष्ठित क़बीला समझा जाता था। इस क़बीले से सम्बन्धित लोग कुरैशी कहलाते थे। मुहम्मद साहब इसी क़बीले से सबन्धित थे।

५ मुहम्मद साहब के पूर्वजों में हाशिम एक प्रसिद्ध व्यक्ति हुये हैं। मुहम्मद साहब इन्हीं के वश मे होने के कारण हाशिमी कहलाते हैं।

६ मक्के का नाम बतहा भी है। मुहम्मद साहब का जन्म मक्के में हुआ था अत वे बतही कहलाते हैं।

७ मुहम्मद साहब के बताये हुए नियम एव इस्लामी सिद्धान्त, इस्लामी शरीअत के नाम से प्रसिद्ध हैं। इस्लामी नियमों एव सिद्धान्तों के लिये शरा के शब्द का भी प्रयोग होता है।

८ तरीक़त अथवा मार्ग —सूफी साधना का मार्ग है।

९ वे लोग जो मुहम्मद साहब के साथ मक्के से मदीने को प्रस्थान कर गये। इस प्रस्थान करने को हिजरत करना कहते हैं। इस्लामी इतिहास में यह घटना बड़ी महत्वपूर्ण समझी जाती है। इस्लामी वर्ष इसी सबन्ध के कारण हिजरी वर्ष कहलाता है।

१० वे लोग जिन्होंने मुहम्मद साहब की मक्के से मदीने पहुँचने पर सहायता की।

रसूल के खलीफ़ा

कौन लेखक या मक्लन-कर्त्ता इस बात का साहस कर सकता है कि ऐसे लोगो की प्रशसा तथा तारीफ करे जिनके विषय मे कुरान मे कहा गया है, "हे रसूल तुमको भगवान् और तुम्हारे भक्त और तुम पर ईमान रखने वाले पर्याप्त हैं।" विशेष कर धर्म-निष्ठा के काबे[१] के चारो स्तम्भो के गुण ऐसे हैं जोकि रसूल के धर्म सम्बन्धी और राज्य व्यवस्था सम्बन्धी कार्यों में चार तत्वो के समान जब ये व्यक्ति रसूल के पश्चात् खिलाफत के सम्मान मे विभूषित हुये, तो उन्होने जमशेद[२] और कैखुसरो[३] का राज-सिंहासन बडी सफलता-पूर्वक प्राप्त किया। वे समस्त ससार के शासक बन गये, इस 'उलिलग्रम्री' और ससार की बादशाही के होते हुये मुहम्मद साहब की बताई हुई बातो का अनुसरण करने मे वे सर्वदा धर्मनिष्ठ और फकीर बने रहे। फटे पुराने वस्त्रो और मोटी-मोटी कमलियो के धारण करते हुये भी अपनी पवित्रता द्वारा ससार के सर्वोत्तम भागो को अपने अधिकार में कर लिया। यह रसूल का ही चमत्कार था कि इन लोगो ने फकीरी और गरीबी के साथ-साथ बादशाही के कार्यों को भी प्रफुल्लता प्रदान की। इस्लाम का झण्डा पूर्व से पश्चिम तक पहुँचा दिया और रसूल की शरीयत की आज्ञाये समस्त ससार मे प्रचलित कर दी। अमीरुल मोमिनीन अबूबक्र सिद्दीक रजि अल्लाह अनहो[४] की खिलाफत[५] के समय से जहाँदारी[६] और जहागीरी[७] के कार्य भी प्रारम्भ हो गये।

(४) झूठे नबियो और दीन के विरोधियो का विनाश प्रारम्भ हो गया। इस्लामी सेनायें शाम और एराक के विधर्मी बादशाहो से युद्ध करने लगी और उनके विनाश मे सलग्न हो गई। विधर्मी बादशाहो को क्षीण कर दिया गया।

"क्योकि अमीरुल मोमिनीन सिद्दीके अक्बर[८] की खिलाफत की अवधि तीस मास मे, जोकि ढाई वर्ष होते हैं, अधिक न रही, अत विरोधियो और धर्म के शत्रुओ के इकालीम[९], जो (नष्टभ्रष्ट) हो चुके थे और जिनका विनाश हो चुका था, सुव्यवस्थित न हुये थे, एव झूठे नबियो तथा उनके अनुयायियो का विनाश कर दिया गया था। अरब के कबीले, जो मुरतद[१०] हो गये थे, उन्हे फिर तलवार के बल से इस्लाम स्वीकार करने पर विवश किया गया। जिस

१ मक्के का प्राचीन पूजागृह जिसका सम्मान समस्त अरब मे किया जाता था। इस्लाम के फैलने के पश्चात् भी इसे उतनी ही प्रतिष्ठा प्राप्त रही। मुसलमान काबे का हज करने के लिये मक्के जाने का हमेशा प्रयत्न किया करते हैं।

२ ईरानियों का पौराणिक बादशाह। फ़िरदौसी के शाहनामे द्वारा पता चलता है कि वह आज से छ. हज़ार वर्ष पूर्व राज्य करता था। इसके विषय में प्रसिद्ध है कि उसने विज्ञापन-कला तथा साहित्य को विशेष प्रोत्साहन किया था।

३ कैखुसरो को भी ईरान का पौराणिक बादशाह बताया जाता है। कहा जाता है कि उसने बड़े ऐश्वर्य तथा वैभव से राज्य किया था।

४ अल्लाह उनसे सन्तुष्ट रहे।

५ खलीफ़ा अथवा उत्तराधिकारी होना।

६ राज्य व्यवस्था।

७ राज्यों पर अधिकार जमाना अथवा विजय प्राप्त करना। दिग्विजय

८ रसूल के प्रथम खलीफ़ा अबूबक्र। इनका राज्य ६३२ ई० से ६३४ ई० तक रहा।

९ इक़लीम का बहुवचन इकालीम है। इक्लीम का अर्थ है, "एक जलवायु का प्रदेश"। मध्यकालीन भूगोल-वेत्ता ससार को इक्लीमों में विभाजित किया करते थे, किन्तु बरनी तथा अन्य इतिहासकारों ने भी छोटे-छोटे प्रदेशों और राज्यों के लिये भी इक्लीम शब्द का प्रयोग किया है।

१० वे लोग जो इस्लाम स्वीकार करने के पश्चात् इस्लाम त्याग कर किसी अन्य धर्म को स्वीकार कर लें।

प्रकार नबूवत के समय में सदकात[1], ज़कात[2], जज़िया और उश्र[3] मुसलमानों और उनके राज्य के अधीन प्रजा से लिया जाता था उसी प्रकार सिद्दीक़ की खिलाफत के समय में भी लिया जाता था। ऊँट के पैर बाँधने की रस्सी भी, जो वाजिब होती थी, ले ली जाती थी। झूठे नबियों ने जो उपद्रव की अग्नि भड़का रखी थी, उसे तलवार और बर्छे के जोर से शान्त कर दिया गया। उनके एवं इस्लाम से मुर्तद्द हो जाने वालों के परिवार, धन सम्पत्ति आदि को इस्लामी मुजाहिदों[4] ने लूट लिया। उनके राज्य-काल में मुस्तफा की सुन्नत[5] को बड़ी उन्नति प्राप्त हुई। सिद्दीक़ अकबर की सच्चाई और धर्म-निष्ठता के कारण रसूल के सभी सहाबी उनका बड़ा आदर करते थे। कोई एक दूसरे से विरोध या शत्रुता न रखता था।

सिद्दीक़ अकबर के पश्चात् सहाबा ने अमीरुल मोमिनीन उमर खत्ताब[6] को सर्व सम्मति से उनका उत्तराधिकारी बनाकर खिलाफत की गद्दी पर आरूढ़ किया। वे दस वर्ष और नौ महीने खलीफ़ा रहे। इसे मुस्तफा अलैहिस्सलाम का चमत्कार ही कहना चाहिये कि उमर के राज्य-काल में दुनिया का बहुत बड़ा भाग इस्लाम के अधीन हो गया। मुहम्मद साहब की शरीअत की आज्ञायें समस्त संसार में चालू हो गईं। इस्लामी नियमों को सम्मान प्राप्त हुआ। इस्लामी पताकायें संसार के पूर्वी और पश्चिमी सभी भागों में पहुँच गईं। अरब के सभी क़बीला, हिजाज़, यमन, बहरैन, एराक, शाम, मिस्र, और खुरासान तथा मावराउन्नहर का बहुत बड़ा भाग एवं रूम का कुछ भाग उमर की 'खिलाफत' के समय में जेहाद की तलवारों द्वारा पराजित हो गया। किसा[7] और कैसर[8] के राज सिंहासन एवं दूसरे सुल्तानों के राज्यों पर इस्लामी सम्मान और मुसलमानी शक्ति के कारण वे सहाबा, जो कि फ़क़ीरों का जीवन व्यतीत करते थे एवं मुस्तफा के विश्वासपात्र थे, अमीर और वाली[9] नियुक्त हो

१ एक प्रकार का दान, जैसे ईद के अवसर पर। इस दान का इस्लाम में बड़ा महत्व है।

२ एक प्रकार का कर जो कि मुसलमानों को अपनी धन सम्पत्ति पर अदा करना होता है। यह कर इस्लामी राज्य में भी केवल मुसलमानों ही से लिया जाता था। जिन वस्तुओं पर ज़कात लिया जाता है वे निम्नांकित हैं सोना, चाँदी, पशु, व्यापार का माल आदि। प्रत्येक वस्तु के लिए यह निश्चित है कि उसकी इतनी संख्या हो जाय, जिससे ज़कात लागू किया जा सके। इस निश्चित संख्या को निसाब कहते हैं। निसाब से कम धन सम्पत्ति पर ज़कात नहीं लिया जा सकता। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि धन सम्पत्ति उसके स्वामी के पास पूरे वर्ष तक रहे।

३ इस्लामी राज्य में मुसलमानों की कृषि योग्य भूमि को उश्री भूमि कहते थे। इस भूमि में कुए आदि से सिंचाई के बिना जो अनाज पैदा होता था उस पर पैदावार का $\frac{1}{10}$ लगान के रूप में लिया जाता था। जिस भूमि को सींचने की आवश्यकता होती थी उस पर पैदावार का $\frac{1}{20}$ लगान के रूप में लिया जाता था। उश्री भूमि के लगान को उश्र कहते हैं।

४ इस्लाम की धार्मिक आवश्यकताओं में जेहाद भी सम्मिलित है। जेहाद शब्द का अर्थ चेष्टा या प्रयत्न करना है। किन्तु साधारणतः इस्लाम के प्रचार के लिये जो युद्ध किया जाता था उसे जेहाद कहते थे। जेहाद में युद्ध करने वाले मुजाहिद कहलाते थे। सुल्तानों के इतिहास में सभी लड़ाइयों को जेहाद लिखा गया है, यहाँ तक कि विद्रोही मुसलमानों से युद्ध को भी जेहाद कहा जाता था।

५ मुहम्मद साहब जिन सिद्धान्तों पर आचरण करते अथवा जो कार्य करते थे उन्हें उनकी सुन्नत कहा जाता था।

६ रसूल के दूसरे खलीफ़ा जो ६३४ ई० से ६४४ ई० तक खलीफ़ा रहे हैं।

७ ईरान के बादशाहों की उपाधि किसा थी।

८ रूम के बादशाह की उपाधि क़ैसर थी।

९ विलायत (प्रदेशों) का अधिकारी, राज्य-पाल।

गये। एराक की इकलीमो और दूसरी इकलीमो से कुफ्र, शिर्क और अग्नि-पूजा का अन्त हो गया। पारसियों और अग्नि पूजा करने वालो के धर्मों को क्षीण कर दिया गया। कूफे और बसरे की स्थापना की गई। इस्लामी नगर आबाद किये गये। यह बात सात हजार वर्ष तक लोगो के लिए आश्चर्य-जनक रहेगी कि उमर खत्ताब, मुहम्मद साहब के चमत्कारो के आशीर्वाद से चौदह पैवन्द का खिर्का[1] पहनते हुये भी ससार में सुलेमानी[2] तथा सिकन्दरी[3] करते थे। उमर के कोडे के भय से ससार के विरोधी और विद्रोही, आज्ञाकारी तथा राजभक्त हो गये। ससार के विरोधियो और विद्रोहियो से खराज और जजिया दांत की जड से निकलवा लिया जाता था[4]। अकासरा का हजारो वर्ष का खजाना और कयासरा का वह खजाना, जोकि प्राचीन समय मे उनके पास था, जिनके बल पर कैसर और किसा खुदा के विरुद्ध विद्रोह कर देते थे और खुदाई का दावा करते थे, इस्लामी योद्धाओ के हाथ म पहुँच गया और मुस्तफा की मस्जिद और मदीने में मुसलमानो क साधारण व विशेष व्यक्तियों में वितरित हो गया। ससार की घटनाओ से शिक्षा ग्रहण करने वालों के हृदय में इस्लामी प्रतिष्ठा बैठ गई और कुफ्र को सब अपमान-जनक समझने लगे।

चूंकि उमर खत्ताब स्वय इस्लामी खजाने में हाथ न डालते थे और खजाने के वितरण के पश्चात् खाली हाथ घर लौट आते थे और जीविकोपार्जन तथा अपने परिवार का पालन-पोषण ईंट बना कर करते थे, अत उनका मान और उनकी प्रतिष्ठा सहाबा की आँखो में बहुत बढ गई थी। उनकी आज्ञा का समस्त ससार पालन करता था। यह भी ईश्वर के रसूल की सगति का आशीर्वाद है कि उमर की खिलाफत के समय में बारह हजार तुर्की घोडे मुसलमानो के बैतुलमाल के पायगाह[5] मे विद्यमान रहते थे। सहाबा ने उस समय भी जुमे के दिन उमर के खिर्के पर नौ पैवन्द गिने थे।

(६) हदीस और इतिहास के लेखको ने हदीस एव इतिहास की पुस्तकों में लिखा है कि 'उलिलअम्री का' वह वैभव जो उमर खत्ताब को अपनी धर्मनिष्ठता के कारण फटा हुआ खिर्का पहनने के बावजूद भी प्राप्त हुआ, जमशेद[6], कैकुबाद और कैखुसरो को भी न प्राप्त हो सका, यद्यपि वे लोगो को बडी कठोरता, आतक, सख्ती, अत्याचार और जुल्म द्वारा दबा दिया करते थे। यह सम्मान सात हजार वर्ष से नबियो और मुरसिलो के अतिरिक्त किसी बादशाह अथवा खलीफा को नही प्राप्त हुआ था।

जो न्यायशीलता और दानशीलता उमर खत्ताब में देखी गई थी, वह हातिमताई[7] एव न्यायी नौशेरवाँ[8] में भी न देखी गयी थी। कोई भी बादशाह अथवा

१ चीवर—यह साधारणत सूफी तथा दरवेश पहना करते है।

२ मुसलमान सुलेमान को बहुत बड़ा पैग़म्बर मानते है। उनका विश्वास है कि सुलेमान समस्त ससार के सम्राट थे। सुलेमानी करने का अर्थ बहुत बडे राज्य का स्वामी होना है।

३ सिकन्दरी करने का अर्थ बहुत बड़े राज्य का स्वामी होना है।

४ यह एक फारसी मुहाविरे का अनुवाद है। इसका भावार्थ निम्नांकित है "जबरदस्ती वसूल कर लिया जाता था"

५ अस्तबल।

६ कैकुबाद और कैखुसरो भी ईरान के पौराणिक बादशाह थे।

७ इस्लाम से पूर्व अरब के एक कबीले का एक बहुत बड़ा दानी नेता।

८ नौशेरवाँ ईरान के राज सिंहासन पर ५२१ ई० में आरूढ़ हुआ। वह अपने दान तथा ऐश्वर्य के लिये बड़ा प्रसिद्ध था। उसे किस्रा भी कहते हैं।

'उलिलअम्र', 'जमशेदी', 'दरवेशी', एवं 'कैखुसरवी'[१] करने तथा फटा हुआ खिर्क़ा पहनने में इस प्रकार समन्वय स्थापित न कर सका था और न क़यामत तक कोई बादशाह अथवा उलिलअम्र कर सकेगा।

सबसे पहले जिस खलीफ़ा को 'अमीरुल मोमिनीन' की पदवी मिली, वह उमर खत्ताब थे। सर्व प्रथम जिस खलीफ़ा ने मुजाहिदों और सहायता के योग्य लोगों के लिये बैतुलमाल से सहायता करना प्रारम्भ किया, वह उमर खत्ताब थे। सर्व प्रथम जिन्होंने मुसलमानों के नगरों की स्थापना की, उमर खत्ताब थे। सबसे पहले जिस खलीफ़ा ने सहाबा और ताबईन[२] को श्रेणियों में विभाजित किया, उमर खत्ताब थे। सर्व प्रथम खलीफ़ा जिसने प्रजा और *रियाया* पर खराज लगाया उमर खत्ताब थे। पहले खलीफ़ा जिन्होंने इस्लाम के नगरों में क़ाज़ी[३] नियुक्त किये, उमर खत्ताब थे। पहले खलीफ़ा जिन्होंने हाथ में कोड़ा लेकर लोगों को अनुशासन में रखना आरम्भ किया, उमर खत्ताब थे। इस्लामी खलीफ़ाओं में शहीद[४] होने वाले पहले खलीफ़ा उमर खत्ताब थे।

उमर खत्ताब के पश्चात् उस्मान बिन अफ़्फ़ान[५] रज़ि अल्लाहो अनहुमा[६] खलीफ़ा हुये। मुहाजिर और अन्सार ने उनकी खिलाफ़त को स्वीकार कर लिया[७]। इतिहास की पुस्तकों में अमीरुल मोमिनीन उस्मान की दया, कृपा, दान तथा पुण्य का विशेष वर्णन है। उन्होंने क़ुरान को एक ग्रंथ के रूप में संग्रहित किया।

(७) उनके संग्रहीत क़ुरान से सभी सहाबा, सहमत थे। अमीरुल मोमिनीन उस्मान ने मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम[८] के युद्धों में अपनी धन-सम्पत्ति दान कर दी थी।

उनके इस्लाम पर अनेक हक़ हैं। वे वहीं को लिखते थे और क़ुरान के हाफ़िज़[९] थे। मुस्तफा अलैहिस्सलाम की दो पुत्रियाँ उनको विवाहित थीं, इस कारण उन्हें जुन्नूरैन कहते थे। अमीरुल मोमिनीन उमर खत्ताब के समय में वे अधिकांश क़ाज़ियों और पदाधिकारियों को पत्र तथा सदेश लिखकर भेजा करते थे। मुस्तफ़ा और शैखैन[१०] उनसे *सन्तुष्ट* थे। *उस्मान* की खिलाफ़त के समय में उमर के समय का राज्य सुव्यवस्थित रहा। समस्त खुरासान और मावाउन्नहर पूरी तरह विजित हो गये। उस्मान बारह वर्ष तक खलीफा रहे।

उस्मान के पश्चात् अली करमल्लाहो वजहो[११] मुसलमानों के, सर्व सम्मति से, खलीफा हुए। अमीरुल मोमिनीन अली अपनी विद्वत्ता में नबियों और मुरसिलों के अतिरिक्त आदम से लेकर क़यामत तक मुस्तफा अलैहिस्सलाम के आशीर्वाद से सर्वश्रेष्ठ रहेंगे। मुस्तफा के चाचा हमज़ा (मृ० ६२५ ई०) के पश्चात् वीरता में उनकी पदवी असदुल्लाह[१२] हुई। सभी सहाबा

१ बड़े ऐश्वर्य तथा वैभव से राज्य करने को जमशेदी तथा कैखुसरवी करना लिखा गया है।
२ वे लोग जिन्होंने स्वयं रसूल को न देखा था किन्तु उनके सहाबा को देखा था।
३ इस्लामी राज्यों के न्यायाधीश।
४ इस्लाम के लिये अपने प्राण त्यागने वाले शहीद कहलाते हैं।
५ रसूल के तीसरे खलीफा। इनका राज्य ६४४ ई० से ६५६ ई० तक रहा।
६ अल्लाह उनसे राज़ी रहे।
७ इस प्रकार के स्वीकार करने को बैअत करना कहते हैं।
८ उन पर सलाम हो।
९ जिन लोगों को पूरा क़ुरान कण्ठस्थ होता है, वे हाफ़िज़ कहलाते हैं।
१० अबूबक्र और उमर।
११ इस्लाम के चौथे खलीफा जो ६५६ ई० से ६६१ ई० तक खलीफा रहे।
१२ अल्लाह का सिंह।

मुरतजा[1] के गौरव को पूर्णतया मानते थे। सर्व प्रथम इसलिये कि वे मुस्तफा अलैहिस्सलाम के भतीजे थे और बनी हाशिम के उन व्यक्तियो में से थे जिन्होंने अपनी मातृ भूमि को त्याग दिया था। दूसरे यह कि मुस्तफा अलैहिस्सलाम ने बाल्यावस्था ही से माता-पिता के समान अली का पालन-पोषण किया था। तीसरे यह कि वे मुस्तफा के प्रिय नाती हसन और हुसैन के पिता थे। चौथे यह कि पैगम्बर उन्हें बहुत बडा धर्म-निष्ठ कहते थे और वे धर्म निष्ठता में सब सहाबा से बढ चढ कर थे। पाँचवे यह कि विद्वत्ता में उनके समान सहाबा में कोई न था। छठे यह कि इस्लाम स्वीकार करने के पूर्व भी क्षण भर के लिये उनके हृदय में कुफ्र और शिर्क न उत्पन्न हुआ था। इतिहास वेत्ताओ ने लिखा है कि जब अमीरुल मोमिनीन अली माँ के गर्भ में थे और उनकी माता मूर्त्तियो को सिज्दा करना चाहती (शीश नवाना चाहती) तो वे अपनी माँ के गर्भ में इस प्रकार उलटते पुलटते कि वे मूर्त्तियो के सामने शीश न नवा सकती थी। सातवे यह कि उनके दान के विषय में कुरान में कुछ आयतें विशेष रूप से विद्यमान हैं।

(८) चूँकि अबूबक्र और उमर रजि अल्लाहो अनहुमा के इस्लाम पर विशेष अधिकार प्रमाणित थे और उन्होंने इस्लाम के लिये अपने प्राण और अपनी धन-सम्पत्ति सभी लगा दी थी, अत वे सब से पहले खलीफा हुये। अली के गुणों के ऊपर उनके इस्लामी हुकूक का विशेष ध्यान रखा गया।

जिस समय उस्मान के पश्चात् अली मुरतजा खलीफा हुए, तो उन्होंने सुना कि उस्मान के भाई, जोकि इस्लाम के सभी देशो मे वाली और अधिकारी बन बैठ है, चारो ओर अधर्म फैला रहे है, मुस्तफा की सुन्नत और शेखैन की सुन्नत के जो यथार्थ मे मुहम्मद की सुन्नत थी, विरुद्ध प्रचार कर रहे है, तो मुरतजा ने चाहा कि तलवार के बल से इन अधर्मियो को सुन्नत के मार्ग पर चलने के योग्य बनादें और सत्य पुन अपने केन्द्र पर आजाये, मुहम्मद की सुन्नत और उमर के अनुशासन में फिर से चमक दमक पैदा हो जाय, क्योकि माविया[2] और अमीरुल मोमिनीन, उस्मान के अन्य भाई, प्रत्येक इकलीम और राज्य के अधिकारी हो गये थे तथा उन्हें बहुत बल और शक्ति प्राप्त हो गई थी और वे अली का विरोध और उनके विरुद्ध विद्रोह करने लगे थे। वे अली के आज्ञाकारी न बने और षड्यन्त्र रचने लगे। शेखैन के समय में सहाबा का जो दल शक्तिशाली और अधिकार-सम्पन्न था वह अब न रहा था। बहुत से "अमवास की सक्रामक" में मर चुके थे। अमीरुल मोमिनीन अली ने विद्रोहियो के विद्रोह को शान्त करने के लिये मदीने से एराक की ओर प्रस्थान किया और कूफे में निवास-स्थान ग्रहण किया। दो ढाई सौ सहाबी और एक सेना जिसमें सहाबा न थे, लेकर अपनी 'खिलाफत' के चार साल चार महीने तक विद्रोहियो से युद्ध करते रहे। बहुत से सहाबी विरोधी सैनिको के हाथ से मारे गये। दुष्ट इब्ने मुल्जिम ने तलवार से अली की हत्या कर दी।

नबी की "खिलाफत", जैसा कि मुस्तफा ने स्वय कहा था कि, "मेरे पश्चात् तीस वर्ष तक खिलाफत चलेगी, तत्पश्चात् बादशाहो का राज्य स्थापित हो जायगा", मुरतजा रजि अल्लाह अनहो के पश्चात् समाप्त हो गई।

---

१ अली को मुरतजा भी कहते हैं।

२ माविया ने अली की खिलाफत के समय उनका बड़ा विरोध किया और शाम में ६६१ ई० में खलीफा बन बैठे। अली की हत्या के उपरान्त वे स्वय समस्त मुसलमानों के खलीफा बन गये। उन्होंने ६६१ ई० से ६८० ई० तक राज्य किया। उनकी खिलाफत के समय से उमैया वंश की खिलाफत प्रारम्भ हुई, जो ७५० ई० तक चलती रही। उमैया वंश के उपरान्त अब्बासी वंश का राज्य हुआ।

इतिहास का महत्व तथा उससे लाभ

(९) मैंने मुस्तफा के चारों मित्रों का वृत्तान्त जोकि मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम के विश्वासपात्र थे, आशीर्वाद के लिए इस भूमिका में लिख दिया है। ईश्वर की वन्दना और मुस्तफा की प्रशंसा के पश्चात् मैं तारीखे फीरोज़शाही को कुछ बादशाहों के वर्णन से सुशोभित करता हूँ। ईश्वर से क्षमा याचना करने वाला पापी ज़िया बरनी ईश्वर की वन्दना और मुस्तफा की प्रशंसा एवं मुस्तफा की सन्तान पर दरूद तथा उनके चुने हुए मित्रों की तारीफ के पश्चात् इस प्रकार निवेदन करता है कि उसने अपनी आयु किताबें पढ़ने में व्यतीत की है। प्रत्येक ज्ञान सम्बन्धी प्राचीन और नवीन सभी ग्रन्थों का अध्ययन किया है। मैंने तफसीर[1], हदीस, फ़िक्ह[2] और मशायख[3] की तरीक़त के अतिरिक्त इतिहास से बढ़ कर किसी भी ज्ञान में इतना लाभ और उपलब्धि नहीं पाई। नबियों, ख़लीफाओं, सुल्तानों, धर्म तथा राज्य के बुज़ुर्गों के हाल एवं उनके विषय में जानकारी प्राप्त करने को इतिहास का ज्ञान कहते हैं। इतिहास के ज्ञान में विशेषकर वही बातें आती हैं जोकि धर्म तथा राज्य के बुज़ुर्गों की कीर्ति से सम्बन्धित हों। इनमें उनकी कीर्ति का वर्णन होता है। कमीनों, तुच्छों, क्षुद्रों, अयोग्यों, दुराचारियों, व्यभिचारियों, असभ्यों, साहसहीनों, बकवादियों, कमअसलों, पतितों और बाज़ारी व्यक्तियों से इतिहास का कोई सम्बन्ध या लगाव नहीं होता। उपर्युक्त समुदाय को इतिहास के ज्ञान से कोई लाभ नहीं होता। वह उनके किसी समय अथवा किसी अवसर पर काम नहीं आता क्योंकि इतिहास में राज्य और दीन के बुज़ुर्गों के कार्यों, गुणों तथा उनकी प्रशंसा का वर्णन होता है। इसमें तुच्छ, पतित, कमीनों, कमअसल, और बाज़ारियों का कोई स्थान नहीं, क्योंकि वे पतित कर्मों, कमीनी हरकतों और तुच्छ पदार्थों से प्रेम रखते हैं। यह लोग तारीख से कोई रुचि नहीं रखते, अपितु तारीख पढ़ना तथा तारीख़ का ज्ञान प्राप्त करना क्षुद्रों तथा तुच्छ व्यक्तियों के लिए हानिकारक है, लाभ प्रद नहीं। इतिहास के महत्व में इससे अधिक और क्या सोचा जा सकता है कि इस उत्कृष्ट ज्ञान को कमीनों, क्षुद्रों तथा कमअसलों से कोई सम्बन्ध नहीं और न यह उनकी कमीनी हरकतों और कमीनी बातों में उनका सहायक होता है।

(१०) गण्यमान्य व्यक्तियों की प्रतिष्ठा का वर्णन उनको शोभा नहीं देता। कमीने लोग जिस ज्ञान या जिस कार्य को सिद्ध करने में सलग्न रहते हैं, उससे उन्हें कुछ न कुछ लाभ हो जाता है, किन्तु इतिहास द्वारा नहीं। जिन लोगों के वंश को सम्मान प्राप्त होता है अथवा जो स्वयं गण्यमान्य और जिनकी सतान प्रतिष्ठित होती है, उनके लिये इतिहास का ज्ञान और उसका सुनना परमावश्यक होता है। वे बिना इतिहास सुने जीवित नहीं रह सकते। प्रतिष्ठित व्यक्ति, कुलीन एवं उनकी सन्तान, इतिहासकार को अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय समझते हैं। उनकी यह कामना होती है कि वे इतिहासकार के पैर की धूल को अपने ससार का ऊँच नीच समझने वाली आँखों में सुरमे के स्थान पर लगा लें, क्योंकि उनके लेख एवं व्याख्या से धर्म और राज्य के गण्यमान्य व्यक्ति चिर प्रसिद्ध हो जाते हैं। धर्म और राज्य के प्रसिद्ध व्यक्तियों ने इतिहास के ज्ञान में विशेष गुण बताये हैं।

इतिहास के ज्ञान का प्रथम गुण यह है कि इसमें आसमानी किताबों की अनेक बातें होती हैं। इसमें भगवान् की बात, नबियों के हाल एवं सर्वोत्तम प्राणियों का वर्णन, और

१ कुरान के अनुवाद तथा उसकी व्याख्या को तफसीर कहते हैं।

२ इस्लामी धर्म नीति के ज्ञान को फ़िक़्ह कहते हैं।

३ सूफ़ियों।

बादशाहो का वृत्तान्त तथा उनके वैभव एव ऐश्वर्य का हाल होता है। इतिहास का ज्ञान वह ज्ञान है जिसमे आँखो वाले के लिये शिक्षा ग्रहण करने की विशेष सामग्री होती है।

इतिहास के ज्ञान का दूसरा गुण यह है कि इसका हदीस के ज्ञान से विशेष सम्बन्ध है। हदीस में रसूल के वक्तव्य और कीर्ति का वर्णन होता है। हदीस तफसीर के बाद सर्वोत्तम ज्ञान है और इसके द्वारा सब से अधिक लाभ पहुँचता है। रवात[1] की आलोचना, व्याख्या, आधार, हजरत मुस्तफा अलैहिस्सलाम के युद्ध का वर्णन तथा यह ज्ञान कि इनमे कौन घटना पहले घटी और कौन बाद में, कौनसी रद्द हो चुकी है और कौन सी नही, इतिहास से सम्बन्धित हैं। इसी कारण इतिहास का हदीस से विशेष सम्बन्ध है। हदीस के इमामो[2] का कथन है कि हदीस का ज्ञान और इतिहास जुडवा बच्चो के सदृश हैं।

(११) यदि हदीस वेत्ता, इतिहासकार नही होता तो उसे हजरत मुस्तफा और सहाबे-कराम रिजवानुल्लाहा अलैहिम की बातो का ज्ञान नही हो पाता, क्योकि हदीसो के रवात (सूत्र) वास्तव में वही हैं। ऐसे व्यक्तियो में सहाबा की निष्कपटता और सत्य एव छली और सहाबा पर आरोप लगाने वालो की बातो में अन्तर ज्ञात करने की योग्यता नही होती। यदि हदीस वेत्ता इतिहासकार नही होता तो उसे उपर्युक्त बातों का ज्ञान नही हो पाता। वे हदीस की रवायतें[3] न तो स्वय समझ सकते हैं और न उन्हे दूसरो को ही समझा सकते है। मुहम्मद साहब की नबूव्वत के तथा सहाबा के समय में जो बात हुई और जिनके सविस्तार ज्ञान से उनके बाद के अनुयायियो को सन्तोष और विश्वास होता है, वे इतिहास द्वारा ही ज्ञात होती हैं।

इतिहास की तृतीय विशेषता यह है कि इसके ज्ञान द्वारा मनुष्य की बुद्धि में चेतना, उत्कृष्ट विचार और उपाय ज्ञात करने की शक्ति में वृद्धि होती है। मनुष्य दूसरे के अनुभव के ज्ञान से लाभ उठा कर स्वय अनुभवी हो जाता है। इतिहासवेत्ता प्राचीन घटनाओ के ज्ञान से अपने कार्य में सावधान हो जाता है। अरस्तू और बुजर्चमेहर[4] ने कहा है कि इतिहास के ज्ञान द्वारा मनुष्य के विचार उत्तम हो जाते हैं और भावी सन्तानें प्राचीन घटनाओ के ज्ञान से अपने विचारो को ठीक बना लेती हैं।

तारीख के ज्ञान का चतुर्थ लाभ यह है कि इसके ज्ञान से, सुल्तानो, मलिको, मन्त्रियो और गण्य मान्य व्यक्तियो के हृदय में वर्त्तमान घटनाओ और वाकयात के प्रति सन्तोष उत्पन्न हो जाता है। यदि बादशाहो पर किसी आकस्मिक घटना के कारण कोई विशेष कठिनाई आ जाती है तो उसके समाधान की आशा समाप्त नही हो पाती। जिस प्रकार पिछले लोगो ने उन कठिनाइयो के होते हुये भी सफलता प्राप्त कर ली, उसी प्रकार वर्त्तमान सुल्तान भी अपनी कठिनाइयो पर विजय प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। जिन वाकयात और घटनाओ के विषय में आशका अथवा भय होता है, ऐतिहासिक ज्ञान द्वारा उनसे मुक्ति प्राप्त हो जाती है। इतिहास के ज्ञान से बहुत सी घटनाओ का पता उनके घटने के पूर्व ही चल जाता है। यह लाभ सर्वोत्तम और सर्वोपरि है।

(१२) इतिहास के ज्ञान से पाँचवाँ लाभ यह है कि नबियो का इतिहास और उनके समय की घटनाओ की जानकारी से तथा यह ज्ञात होने से कि उन्होने उनका किस प्रकार से सामना किया और इन घटनाओ और वाकयात के होते हुये भी किस प्रकार धैर्य तथा

१ हदीस में बयान की गई घटनाओं के सूत्र।
२ हदीस के विशेषज्ञों।
३ जो बयान किया गया हो। घटनायें
४ ईरान के बादशाह नौशेरवाँ का मुख्यमन्त्री।

शान्ति से कार्य किया, इतिहासवेत्ता भी उसी प्रकार धैर्य एवं शान्ति से कार्य करने योग्य हो जाता है। इतिहासवेत्ता को नबियों के विपत्तियों से मुक्त हो जाने का ज्ञान प्राप्त होने के कारण लोगों को बड़ा प्रोत्साहन मिलता है। इस जानकारी से कि नबी, जोकि आदम के पुत्रों में सर्वश्रेष्ठ थे फिर भी नाना प्रकार के कष्टों में ग्रस्त रहे, इस्लाम पर श्रद्धा रखने वाले विपत्तियों तथा आकस्मिक घटनाओं से नहीं घबड़ाते।

इतिहास की जानकारी से छठा लाभ यह है कि इतिहासवेत्ता को यह भली-भाँति ज्ञात होता है कि न्यायवर्ती, नेक लोग तथा वे जिन्हें ईश्वर ने दुराचार एवं पाप से मुक्त कर रखा है, कितने सर्वश्रेष्ठ थे। खलीफाओं, सुल्तानों, वजीरों तथा इस्लामी बादशाहों को यह ज्ञात हो जाता है कि वैभव तथा ऐश्वर्य वालों का अन्त किस प्रकार हुआ और वे किस प्रकार विनाश तथा कष्ट में फँसे। राज्य व्यवस्था में दुराचार का जो परिणाम होता है, वह भी उन्हें ज्ञात हो जाता है। खलीफा, सुल्तान और नेक बादशाह, नेकी तथा परोपकार करने लगते हैं। इस्लामी बादशाह वैभव और ऐश्वर्य की ओर ध्यान नहीं देते तथा लोगों से घृणा एवं अभिमान-पूर्वक व्यवहार नहीं करते। नम्रता के गुण वह कभी नहीं भूलते। खलीफाओं, सुल्तानों, मन्त्रियों और बादशाहों के सद्व्यवहार से जो लाभ होता है, वह दूर तथा निकट एवं अन्य सब लोगों तक पहुँच जाता है।

तारीख की जानकारी से सातवाँ लाभ सत्य से सम्बन्धित है। पिछले तथा वर्तमान धर्म एवं राज्य के सर्वश्रेष्ठ लोगों ने कहा है कि इतिहास के ज्ञान का आधार सच्चाई पर रखा गया है जैसा कि मेहतर इब्राहीम अलैहिस्सलाम[1] ने कहा है और भगवान् से प्रार्थना की है—

इतिहास की विशेषता तथा इतिहासकार के कर्त्तव्य

(१३) इतिहास में जो रचना की जाती है, वह उन बुजुर्गों से विशेष रूप से सम्बन्धित होती है जो न्याय-प्रिय सत्यवक्ता होते हैं तथा स्वतन्त्र विचार रखते हैं। इतिहास में पिछले लोगों की अच्छाई-बुराई, न्याय-अन्याय, अधिकार अनाधिकार, भलाई-बुराई, आज्ञाकारिता-अवहेलना, सदाचार तथा दुराचार का वर्णन होता है। इससे भविष्य के पाठकों को शिक्षा मिलती है। राज्य व्यवस्था से लाभ-हानि, शासन-प्रबन्ध की भलाई-बुराई ज्ञात हो जाती है। लोग हृदय में सदाचारी बनने का प्रयत्न करते हैं और दुराचार से बचते हैं।

ईश्वर न करे कोई झूठा या छली इतिहासकार झूठ लिखना आरम्भ कर दे या अपनी दुर्भावना तथा कुत्सित हृदय से अनुचित बातें पूर्वजों के सम्बन्ध में लिखने लगे अथवा मनगढ़न्त कथायें लिपि-बद्ध करने लगे, अपने झूठ और जाल को सुन्दर शब्दों में प्रसारित करदे, झूठ को सच बना कर दिखा दे और लिख दे, लोक तथा परलोक में अपने पाप से भय न करे, कयामत[2] में उत्तर देने का भय उसके हृदय से निकल जाय। सदाचारियों की निन्दा करना तथा उनकी कटु आलोचना करना, लोगों की पीठ पीछे बुराई फैलाना बड़ा ही निकृष्ट कार्य हैं। बुरे को नेक कहना और लिखना अत्यन्त निन्दनीय कार्य है। चूँकि इतिहास में जो कुछ उल्लेख होता है, उसके लिये प्रमाण नहीं देना पड़ता और इसमें सुल्तान तथा प्रतिष्ठित लोगों का वर्णन होता है, अतः इतिहासकार को ऐसा होना चाहिये

१ एक बहुत बड़े पैगम्बर। इनके विषय में प्रसिद्ध है कि इन्होंने काबे की स्थापना की थी।

२ मुसलमानों का विश्वास है कि एक समय ऐसा आयगा जबकि खुदा समस्त सृष्टि का अन्त कर देगा और फिर सबको जिन्दा करके उनके कार्यों के विषय में पूछ ताछ करेगा। जिस दिन यह पूछ ताछ होगी उसे कयामत का दिन कहते हैं। स्वर्ग या नरक मनुष्य को कयामत की पूछ ताछ के पश्चात् प्रदान किया जायगा।

जस पर सब विश्वास करें और जो अपनी सत्यता तथा न्याय के लिये प्रसिद्ध हो, जिससे जो कुछ उसने लिखा है, उस पर प्रमाण के न होते हुये भी लोग विश्वास करें और गण्यमान्य व्यक्तियों का भी उस पर विश्वास हो, क्योंकि ये लोग ऐसे लोगों के अतिरिक्त जिनका सब लोग विश्वास करते हैं और जिनकी सत्यता तथा ईमानदारी पर सन्देह नही किया जा सकता, किसी अन्य की बात पर ध्यान नही देते।

अरब के प्राचीन इतिहास

ईरान और अरब के समस्त इतिहासकार जिन्होने अरबी या फारसी में इतिहास लिखे हैं अपने समय और काल में बडे विश्वास के योग्य समझे जाते थे। इमाम मुहम्मद इसहाक[1] जिन्होंने सियरउन्नबी व आसारे सहाबा' नामक पुस्तक की रचना की है, एक सहाबी के पुत्र थे और हदीस के इमामो मे बडे प्रतिष्ठित थे। मगाजी वाक्दी[2] के लेखक इमाम वाक्दी भी सहाबी के पुत्र थे और हदीस के इमाम उनका सम्मान करते थे। उनकी पुस्तक उन पुस्तकों में, जिन पर विश्वास किया जा सकता है, सर्व श्रेष्ठ है।

(१४) इमाम असमई[3] किरअत के ज्ञान में सबसे बढ चढ कर थे और बहुत बडे विद्वान् थे। वे उत्कृष्ट भाव-व्यजना-पूर्ण रचना के आचार्य थे। इमाम मुहम्मद बुखारी[4] हदीस के आलिमो में सबसे बढ चढ कर थ। तारीख के इमामो में उनकी बराबरी करना और विश्वास के योग्य रवायतें लिखना उनसे उत्तम किसी से भी सम्भव न था। इमाम सालबी,[5] इमाम मुकद्दिसी,[6] इमाम दीनुरी,[7] इमाम हज्म,[8] इमाम तबरी[9] भी इतिहासकार थे। इन्होने तफसीरें और ऐसी पुस्तकें लिखी हैं जिनकी सत्यता पर सभी विश्वास रखते हैं।

ईरान तथा देहली के इतिहासकार

ईरान का इतिहास लिखने वालो में भी अपने समय तथा काल के बहुत बडे बडे एव

---

१ इनकी मृत्यु ७६७ ई० तथा ७६६ ई० के बीच में हुई। इन्होंने मुहम्मद साहब की जीवनी पर एक प्रसिद्ध पुस्तक लिखी है।

२ वाक्दी का जन्म ७४७ ७४८ ई० मे मदीने मे हुआ। उनकी मृत्यु ८१८-१९ ई० में हुई। इनकी सर्व प्रसिद्ध पुस्तक कितावुलमगाजी में मक्के और मदीने के आरम्भ के इतिहास से लेकर बाद के इस्लामी इतिहास तक का उल्लेख है।

३ इनका जन्म बसरे में ७४० ई० में तथा मृत्यु ८२८ ई० में हुई। अब्बासी खलीफा हारूनुर्रशीद इनका बड़ा आदर करता था। वे भाषा सम्बन्धी सभी विषयों के आचार्य थे।

४ इनका जन्म ८१० ई० म बुखारे में हुआ था और मृत्यु समरकन्द के निकट ८७० ई० में हुई। इन्होंने अपनी पुस्तक मे मुहम्मद साहब की ७००० चुनी हुई हदीसों का वर्णन किया है।

५ इनका जन्म ६९१ ई० और मृत्यु १०३८ ई० में हुई। वे अपने समय के कवियों के विषय में बड़ा अच्छा ज्ञान रखते थे।

६ अलमुकद्दिसी बड़े प्रतिष्ठित भूगोल वेत्ता हुये हैं। उन्होंने ससार के भिन्न भिन्न भागों की यात्रा की और ९८८ ८६ ई० में अपनी यात्रा के सम्बन्ध में एक पुस्तक की रचना की जो 'एहसनुत्तकासीम फी मारिफतुलअकालीम' के नाम से प्रसिद्ध है।

७ इनकी मृत्यु ८९५ ई० तथा ९०२ ई० के बीच में हुई। य वनस्पति विज्ञान क बहुत बड़े आचार्य थे।

८ अली इब्ने हज्म स्पेन व इस्लामी राज्य के बहुत बडे विद्वान् हुये हैं। वे ९९४ ई० से १०६४ ई० तक जीवित रहे। वे भिन्न भिन्न धर्मों के विषय में अच्छी जानकारी रखते थे। इस विषय पर उनकी रचना "अलफसल फिलमिलल वल अहवा वल निहल" प्रसिद्ध है।

९ इनका जन्म ८४८ ई० तथा मृत्यु ९२३ ई० में हुई। इन्होंने ९१० ई० तक का एक सविस्तार इतिहास लिखा है।

प्रतिष्ठित इतिहासकार हुये हैं। फिरदौसी,[1] बेहकी,[2] तारीखे आईन के लेखक, तारीखे किसरवी, तथा यमीनी[3] के सकलनकर्त्ता उत्बी का अपने समय और काल में बडा विश्वास किया जाता था। वे अपने समय के प्रतिष्ठित तथा गण्यमान्य व्यक्ति थे। देहली राज्य के इतिहासकार भी अपने समय के विश्वास के योग्य व्यक्ति थे। ताजुल मआसिर के लेखक ख्वाजा सद्र निज़ामी, जामेउलहेकायात[4] के सकलनकर्त्ता मौलाना सद्रुद्दीन औफी तबकाते नासिरी के लेखक काज़ी सद्रे जहाँ मिनहाज जूर्जानी, ताजुद्दीन एराकी के पुत्र कबीरुद्दीन[5] जिन्होने अलाई राज्य-काल में सुल्तान अलाउद्दीन के फतेहनामे लिखे हैं, और उनमें बडी जादू-बयानी की है, अपने समय के प्रतिष्ठित तथा गण्यमान्य, बुजुर्ग और विश्वास के योग्य व्यक्ति थे।

झूठे इतिहासकार

यह समझना चाहिये कि विश्वास के योग्य व्यक्तियों ने अपने इतिहास में जो कुछ लिखा है, उस पर सभी लोग विश्वास करते हैं। साधारण तथा ऐसे व्यक्तियो ने जिनके वश में कोई विद्वान कभी हुआ ही नही, जो कुछ लिखा है, उन पर विद्वान लोग विश्वास नही करते। साधारणतया ऐसे लेखकों की पुस्तकें, पुस्तक विक्रेताओ की दूकान पर पडी-पडी सड जाती हैं और पुन कागज बनाने वालो के पास पहुच जाती हैं तथा कागज़ सफेद कर दिया जाता है। इतिहासकार को प्रतिष्ठित एव सर्वश्रेष्ठ होने के अतिरिक्त यह भी होना आवश्यक है कि वह इतिहास लिखते समय अपने दीन और धर्म को ठीक रखे क्योंकि कुछ अधर्मियो, धर्मान्ध और भ्रष्ट लोगो ने अपनी धार्मिक कट्टरता के कारण इतिहास में झूठ और सच मिला दिया है।

(१५) जिस प्रकार गुलात[6] रवाफिज़[7] खवारिज[8] ने सहाबा के प्रति बहुत सी झूठी बातें गढ दी हैं, इसी प्रकार अधर्मी और बे दीनो ने भी मन गढन्त बातें लिखी हैं। उन्होने

---

१ फ़िरदौसी तूसी का जन्म ९३४ ई० मे ९३६ ई० के बीच में हुआ था। उसका सर्व प्रसिद्ध ग्रन्थ शाहनामा है, जिसकी रचना उसने ९८०-८१ ई० के लगभग प्रारम्भ की। इसका पहला सस्करण उसने ९९४-९५ ई० में पूरा किया। दूसरा सस्करण ९९९ ई० में तैयार किया। तीसरा सस्करण १०१० ई० में तैयार करके महमूद ग़ज़नवी (९९८ ई० १०३० ई०) को समर्पित किया, उसकी मृत्यु उसके जन्म स्थान तूस में १०२० या १०२५-२६ ई० में हुई।

२ अबुल फजल मुहम्मद बिन अल हुसैन अल बेहकी का जन्म ९९६ ई० मे हुआ था। बेहकी ने तारीखे बेहकी की रचना की है, जिसमें ग़ज़नी दरबार मे सम्बन्धित उन घटनाओं का उल्लेख किया है, जो १०१८ ई० से १०५० के बीच में घटीं। यह घटनायें उसकी अपनी जानकारी पर आधारित हैं। इसका एक भाग कलकत्ते म १८६१-६२ ई० में और कुछ भाग तेहरान से १८८९-९० ई० में प्रकाशित हुआ। इसकी हस्तलिखित प्रतियाँ भी भारतवर्ष तथा योरुप में वर्त्तमान हैं।

३ तारीखे यमीनी में अमीर सुबुक्तगीन तथा सुल्तान महमूद ग़ज़नवी के १०२०-२१ ई० तक के राज्य का हाल है। यह इतिहास अरबी में लिखा गया और देहली मे १८४७ ई० में प्रकाशित हो चुका है। इसके लेखक अबूनस्र मुहम्मद बिन अब्दुल जब्बार अल उत्बी की मृत्यु १०३५-३६ ई० में हुई।

४ मौलाना नूरुद्दीन मुहम्मद औफ़ी ने यह पुस्तक सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश को समर्पित की। इसकी रचना औफी ने ६२५ हि० (१२२८ ई०) में की। इसमें भिन्न भिन्न प्रकार की कहानियाँ हैं। इलियट के इतिहास के दूसरे भाग में (पृष्ठ १५५ से २०३ तक) इसके एक भाग का अनुवाद भी हुआ है। अंजुमन तरक्किये उर्दू ने इसके कुछ भागों का उर्दू अनुवाद भी प्रकाशित किया है।

५ इस पुस्तक की किसी प्रति का इस समय तक कोई पता नहीं चल सका है।

६ यह शीयों का एक फ़िरका है जिनका विश्वास है कि उनके इमाम मनुष्य जाति से बहुत बढ चढ कर थे।

७ राफ़ज़ी का बहुवचन। राफ़ज़ी का अर्थ "त्यागने वाला है"। यह भी शीआ होते हैं।

८ मुसलमानों का एक फिरका।

प्रसिद्ध और अमान्य बातें, दोनों ही लिख दी हैं। चूंकि इतिहास के पढ़ने वालों को इतिहास के सकलन-कर्त्ताओं के धर्म, दीन और बदएतकादी[1] के विषय में कुछ ज्ञान नहीं होता, अतः वे यही समझने लगते हैं कि जो कुछ उन्होंने लिखा है सत्य लिखा है। प्राचीन लोगों की रचना होने के कारण इतिहास पर विश्वास रखते हुये जो कोई भी अधर्मियों की धोखेबाजी को नहीं समझता और यह नहीं जानता कि इसमें अधर्मियों और बदएतकादों की बातें लिखी हैं, वह उन पर विश्वास करने लगता है। यह लोग अपने झूठ, जाल और बदएतकादी की बातों को सच्चे इतिहासों और लेखों में मिला कर उन्हें भी प्रसिद्ध कर देते हैं। इस प्रकार अपनी घृणा के योग्य रचनाओं द्वारा पाठकों में अपनी बदएतकादी और अपने अधर्म को प्रचलित कर देते हैं चूंकि साधारण लोगों को इतिहास का ज्ञान नहीं होता, अतः उन लोगों के विश्वास में इन झूठी बातों से विघ्न पड़ जाता है और वे बेईमानों की झूठी और जाली रचनाओं को सत्य समझने लगते हैं।

इतिहास की जानकारी से लाभ

इतिहास की जानकारी से एक बहुत बड़ा लाभ यह है कि सुन्नी लोग अधर्मियों की, सच्चे लोग झूठों की और (इस्लाम पर) विश्वास रखने वाले मक्कार लोगों की चालों से परिचित हो जाते हैं। उन्हें विश्वास के योग्य कहानियों और उन बातों के समझने की, जिन पर विश्वास नहीं किया जाता, योग्यता हो जाती है। उस धर्म के विषय में, जिसमें बुरे एतकाद नहीं हैं तथा सुन्नत जमाअत के इमामों की बताई हुई बात हैं, जानकारी हो जाती है।

इतिहास की रचना के लिये शर्तें

इतिहास की रचना करते समय सबसे बड़ी शर्त, जो कि इतिहासकार के लिये उसकी धर्म-निष्ठता को देखते हुये आवश्यक है, यह है कि वह बादशाहों की प्रतिष्ठा, गुणों, उत्तम बातों, न्याय और नेकियों का उल्लेख करे। उसे यह भी चाहिये कि वह उनकी बुरी बातों और अनाचार को न छिपाये, इतिहास लिखते समय पक्षपात न करे।

(१६) यदि उचित देखे तो स्पष्ट अन्यथा संकेत या इशारे से बुद्धिमानों और ज्ञान-सम्पन्न व्यक्तियों को सचेत कर दे। यदि भय अथवा डर के कारण अपने समकालीन बादशाह के विरुद्ध कुछ लिखना सम्भव न हो तो इसके लिये वह अपने आप को विवश समझ सकता है किन्तु पिछले लोगों के विषय में उसे सच सच लिखना चाहिये। यदि किसी इतिहासकार को किसी बादशाह या मन्त्री अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा कोई कष्ट या दुःख पहुँचा हो या किसी ने इस पर विशेष कृपादृष्टि एवं दया, क्रोध और सहायता की हो तो उसे उस पर ध्यान न देना चाहिये तथा वह किसी की अच्छाई या बुराई सत्य के विरुद्ध न लिखे और न ऐसी घटनाओं का उल्लेख करे, जो कभी न घटी हों। इतिहासकार को सच-सच और ठीक-ठीक लिखना चाहिये। उसे अपने धर्म, दीन और एतकाद का ध्यान रखना चाहिये और कयामत में उत्तर देने के भय से डरना चाहिये।

इतिहासकार के लिये यह परमावश्यक है कि वह झूठ बोलने वालों की बातों, प्रणालियों तथा बढ़ा चढ़ा कर प्रशंसा करने वालों, कवियों, जाल रचने वालों और झूठी बात गढ़ने वालों से बचता रहे। उपर्युक्त लोग सीपी को लाल और याकूत बना देते हैं। वे लोग जो भी लिखते या जाल रचते हैं, वह सर्वदा झूठ होता है किन्तु इतिहासवेत्ता की लिखी हुई

[1] इस्लाम में अविश्वास।

बातो पर सभी विश्वास करते हैं। यदि वह झूठ हो तो उससे सकलनकर्त्ता को विशेप हानि पहुचती है और इस कारण वह भगवान् के निकट दण्ड का पात्र हो जाता है।

इतिहासकार के प्रति उत्तरदायित्व

सक्षेप में इतिहास का ज्ञान बडा ही लाभप्रद और उत्तम ज्ञान है। इस ज्ञान का लाभ उसके समकालीनो को भी होता है क्योंकि उनकी प्रशसा ससार में सर्वदा वर्त्तमान रहती है। इतिहास का अध्ययन करने वालो को भी विशेप लाभ होता है।

(१७) इतिहासकारो का उनके समकालीनो के ऊपर बहुत बडा उत्तरदायित्व होता है क्योंकि वे उनका इतिहास लिखते हैं और उनकी कीर्ति को प्रसारित करते हैं। इतिहासकार के जीवन में ही सभी लोग उसके प्रेमी और शुभ चिन्तक हो जाते हैं। उसकी नेकी और मित्रता से सभी जाने-पहचाने और अनजान व्यक्ति प्रभावित रहते हैं। अपनी मृत्यु के उपरान्त समकालीनो का इतिहास लिखने के कारण उन्हे दूसरा जीवन मिल जाता है। उनकी आत्मा को ईश्वर भी सुख और शान्ति देता है। इतिहास का अध्ययन करने वालो और सुनने वालो पर भी उसका विशेप उत्तरदायित्व होता है क्योंकि इससे उन्हे अधिक लाभ पहुचता है।

इमाम सालबी ने तारीख गररुस्मियर में लिखा है कि आरम्भ के अब्बासी खलीफाओ, सुल्तानो, तथा उस समय के प्रतिष्ठित एव गण्यमान्य व्यक्तियो को इतिहास से विशेप रुचि हो गई थी। अमीरुल मोमिनीन हारूनुर्रशीद को जोकि अब्बासी खलीफाओ में सर्वश्रेष्ठ था, इतिहास से विशेप रुचि थी। खलीफा की रुचि को देख कर अबूयूसुफ[1] काजी और इमाम मुहम्मद शैबानी ने इतिहास का ज्ञान प्राप्त किया। इमाम वाकदी से मुस्तफा सल्लल्लाहो अलैहे व सल्लम और सहाबा का इतिहास तथा उनके युद्ध आदि का वर्णन पढा क्योंकि खलीफा और बादशाह प्रतिष्ठित वश तथा बुजुर्ग खानदान के होते हैं, अत वे अपनी बुजुर्गी तथा बुजुर्ग-जादगी[2] के कारण इतिहास में विशेप रुचि रखते हैं। उस काल में खलीफाओ सुल्तानो, वजीरो, मलिको का कोई दिन अथवा रात ऐसी न व्यतीत होती थी जबकि किसी प्रतिष्ठित तथा गण्यमान्य व्यक्ति से वे विश्वस्त इतिहास न सुन लेते थे। उस समय के सुल्तानो वजीरो, और बुजुर्गों की इतिहास में रुचि होने के कारण इतिहासकारो को बडा सम्मान प्राप्त हो गया था। वे धन-धान्य सम्पन्न तथा सर्व प्रिय होते थे।

(१८) खलीफा, सुल्तान, वजीर तथा प्रतिष्ठित मलिक इतिहासकारो को धन-सम्पत्ति गाँव, बाग, घोडे और ऊँट प्रदान करते थे। उन साहसी तथा उत्कृष्ट स्वभाव वालो की मृत्यु के पश्चात्, जिन्हे इतिहास में विशेप रुचि थी, अन्य लोगो की इतिहास में रुचि और इतिहासकार के प्रति प्रेम का अन्त हो गया। बाद के खलीफाओ तथा सुल्तानो के उच्च स्वभाव में उनके ऐश व इशरत तथा भोग विलास में ग्रस्त रहने के फलस्वरूप कमी होने लगी। बुजुर्गों के कार्यों तथा प्रशसा के उल्लेख के लिए जो परिश्रम करना पडता है, जिसमें उनके नाम एव कीर्ति इतिहास में चिरस्थायी और प्रलय तक शेप रहते हैं, उसकी ओर विशेप रुचि उनके हृदय में न रही। इस बात के ऊपर लोगो ने ध्यान देना छोड दिया कि सुल्तानो की बादशाही, मन्त्रियो की विजारत और वालियों के शासन तथा उलिलअम्री के लिए कुलीन होना परमावश्यक है। बल के आधार पर बादशाही पर अधिकार जमाया जाने लगा और योग्यता तथा कार्य-कुशलता के

---

१ इनका जन्म ७३१-३२ ई० में हुआ तथा मृत्यु ७९८ ९९ ई० में हुई। ये प्रसिद्ध इमाम अबूहनीफा के शिष्य थे। इन्हीं के द्वारा अबूहनीफा के समस्त विचार लिखित रूप में प्रसारित हुये। इस्लाम के हनफी सम्प्रदाय के नियम इन्हीं की रचनाओं पर आधारित हैं।

२ बुजुर्गों की सन्तान से होना।

अनुसार विजारत मिलने लगी। इस कारण इतिहास की प्रसिद्धि तथा इतिहासकार के सम्मान में बाधा पडने लगी। जिस प्रकार पहले के लोग इतिहास पढने, सीखने और जानने में रुचि रखते थे, तथा इतिहास के ज्ञान को बुजुर्गी की निशानी समझते थे, और इतिहास पढने पढाने में रुचि रखते थे, वह बात बाद के लोगों में न रही। इतिहासकारो का आदर सम्मान होना बन्द हो गया।

एराक के अक्वासरा के समय में बादशाही और बादशाह जादगी केवल कुलीनो को प्राप्त होती थी। वजीरी, वजीर जादगी, मलिकी, मलिक जादगी के लिये उच्च वंश का होना शर्त थी। इतिहासकारो का वेतन निश्चित था और उनका आदर किया जाता था। इतिहासकारो के आदर सम्मान, प्रतिष्ठा और इज्जत का मोबिदों के समान, जोकि उन बादशाहों के धर्म और दीन के नेता होते थे, ध्यान रखा जाता था। इमाम मालकी ने, जोकि बहुत बडे इतिहासकार थे, तारीखे अरायसी में लिखा है कि खलीफा और बादशाह, वजीर और मलिक इतिहासकारो की सेवाओ का बदला नहीं चुका सकते और उनकी सेवा का मूल्य नही समझ सकते।

(१९) उनके दरबारो में अनेक नदीम[1], कवि, प्रशंसा करने वाले, बकवादी, मक्कार, झूठे और अनुचित बातें करने वाले विद्यमान रहते हैं, जो उनकी निराधार प्रशंसा और बढा-चढा कर तारीफ किया करते है, अपनी विचित्र बातो और झूठी तारीफों से धन-सम्पत्ति आदि वसूल कर लेते हैं, उनकी प्रशंसा और तारीफ का उल्लेख करते हुये बडे-बडे ग्रन्थ लिखते हैं और बडी-बडी पुस्तको की रचना करते हैं। उन बादशाहों के राज्य और शान के उपरान्त तथा उन वजीरो की विजारत एव मलिकों का अधिकार समाप्त हो जाने के पश्चात् उन चरणो की रचनाओ तथा उन झूठी और बढा चढा कर तारीफ करने वालो की पुस्तको का कोई नाम भी नही लेता और उनकी लिखी हुई प्रशंसा का अध्ययन भी नही करता। इस प्रकार की झूठी तथा व्यर्थ पुस्तक उनके रचयिता के घर तक ही सीमित रहती हैं। इसके विरुद्ध बादशाहो का जो उल्लेख इतिहास में होता है और उनकी कीर्ति का जो वर्णन प्राचीन सुल्तानो, वजीरो तथा मलिको के वर्णन के साथ मिश्रित होता है, वह सर्वदा सुरक्षित रहता है। वे उन घटनाओ में, जो किसी वर्ष अथवा महीने में घटी है, सम्बन्ध पैदा कर देते हैं। वे भिन्न-भिन्न कालो में सम्बन्ध स्थापित करने का, जोकि इतिहास के लिये परमावश्यक है, ध्यान रखते हैं। वे ऐसी सेवा करते है, जिसके चिह्न प्रलय तक वर्त्तमान रहते हैं। उच्च स्वभाव वाले पाठकों की रुचि इतिहासकारों के ग्रन्थो तथा उनकी रचनाओ को सुनने से कभी कम नही होती। उससे बडा भाग्यशाली और कौन हो सकता है कि उस व्यक्ति की मृत्यु हो गई, उसका राज्य भी वर्त्तमान न रहा और उसके राज्य, देश, लाव-लश्कर, हाथी, घोडे, ऊँट, धन-सम्पत्ति, मित्र, सहायक, सम्बन्धी, निकटवर्त्ती, स्त्री, बालक, कर्मचारी दास, दासियो, खजाने तथा एकत्र किये हुये माल का कोई चिह्न भी शेष नही रहा, किन्तु दूसरे सुल्तानो के साथ-साथ उनके कार्यों तथा उनकी प्रशंसा का वर्णन इतिहास में शेष रह जाता है। प्रत्येक सप्ताह सुल्तानो, मलिको और प्रतिष्ठित लोगो का वर्णन, जोकि इतिहास में लिखा होता है, सुल्तानों, मलिको और प्रतिष्ठित व्यक्तियो की सेवा में लोग पढा करते हैं।

(२०) प्रत्येक काल में इतिहास सुनने से सुनने वाला बुजुर्गों के विषय मे सैकडो बार शाबाशी देता है और उसके लिये सैकडो बार प्रार्थना करता है क्योकि उसने इस प्रकार शासन किया। दूसरा उसकी प्रशंसा करते हुये कहता है कि ऐसे बादशाह के आचार, विचार, नेकी और न्याय का अनुकरण एव अनुसरण करना परमावश्यक है। प्रत्येक ओर से सुनने

१ बादशाह के मुसाहिब तथा उनके साथ उठने बैठने वाले।

वाले उसकी प्रशंसा करने लगते हैं। इससे जिस व्यक्ति की उस प्रकार प्रशंसा की जाती है, उसकी कीर्ति पुनः जीवित हो जाती है और उसकी आत्मा को सुख मिलता है। मुस्तफा अलैहिस्सलाम की हदीस में आया है कि जो मुसलमानों का नाम नेकी से लेता है और उनकी प्रशंसा करता है, वह स्वर्ग का भागी है।

बरनी के विश्व इतिहास न लिखने के कारण

इस तारीख फीरोजशाही के संकलनकर्त्ता जिया बरनी ने इस इतिहास की भूमिका में इतिहास के ज्ञान की शर्तें, आवश्यकतायें, लाभ और उसमें लोगों की रुचि का वर्णन कर दिया है और इस प्रकार प्राचीन फारसी इतिहासकारों से कुछ अधिक लिख दिया है। इन बातों के सविस्तार उल्लेख का ध्येय यह है कि मुझे इतिहास में बड़े गुण तथा लाभ दृष्टिगोचर हुये हैं। मेरी यह महत्वाकांक्षा थी कि मैं एक ऐसा इतिहास लिखूं जिसमें आदम के दोनों जुड़वाँ पुत्रों तथा उनकी सन्तानों का इतिहास हो। आदम के पुत्रों में से एक मेहतर शीस थे, जोकि नबियों के पूर्वज थे, दूसरे कयूमुर्स थे, जोकि सुल्तानों के पूर्वज थे। इस प्रकार क्रमानुसार नबियों तथा सुल्तानों के भिन्न-भिन्न युगों का उल्लेख करते हुये, मुस्तफा अलैहिस्सलाम का इतिहास जोकि अन्तिम नबी थे और खुसरो परवेज की तारीख जो कयूमुर्स की सन्तानों के वंश का अन्तिम बादशाह था, लिखना चाहता था। तत्पश्चात् मुस्तफा के अनुयायियों के खलीफाओं तथा इस्लाम के सुल्तानों का हाल लिखते हुये, अपने समकालीन बादशाह के राज्य-काल का वर्णन करने की मेरी अभिलाषा थी।

(२१) मैं इसी सोच विचार में था कि मुझे तारीखे तबकाते नासिरी याद आ गई, जिसकी रचना सद्रे जहाँ मिनहाजुद्दीन जूर्जानी ने की है और जिसमें उन्होंने अपनी महान कुशलता का परिचय दिया है। उन्होंने तबकाते नासिरी की रचना देहली में की थी। नबियों, खलीफाओं और सुल्तानों के इतिहास का उल्लेख तेईस तबकों में किया है। आदम मेहतर शीस और कयूमुर्स से आरम्भ करके क्रमानुसार तथा तरतीब से शम्सुद्दीन इल्तुतमिश के पुत्र सुल्तान नासिरुद्दीन शम्सी तथा नासिरी काल के उच्च पदाधिकारियों का वर्णन उसने अपने इतिहास में किया है। मैं ने सोचा कि यदि मैं वही लिखूं, जो कि वे लिख गये हैं, तो उनकी रचना के पढ़ने के उपरान्त मेरी रचना के पढ़ने से किसी को कोई लाभ न होगा। यदि मैं उस बुजुर्ग की रचना के विरुद्ध कुछ लिखूँ या उसमें कुछ घटा बढ़ा दूँ तो यह बड़े दुस्साहस का तथा अशिष्ट कार्य होगा। तारीखे तबकाते नासिरी के पाठक भी सन्देह तथा भ्रम में पड़ जायेंगे।

इस कारण मैं ने अपना इतिहास लिखते हुये यह उचित समझा कि जो कुछ भी तबकाते नासिरी में लिखा है, उसे इस इतिहास में न लिखूं और देहली के राज्य के उन सुल्तानों का इतिहास या वर्णन लिखूं, जिनका उल्लेख काजी मिनहाजुद्दीन ने अपने इतिहास में नहीं किया है। जो कुछ भी तबकाते नासिरी में नबियों, खलीफाओं, सुल्तानों, उनके पुत्रों तथा उनके मित्रों एवं सहायकों के सम्बन्ध में लिखा है उसे पूर्णतया स्वीकार कर लूं। यदि मैं अपने इतिहास में इतिहास के ज्ञान की शर्तों को पूरा कर दूँगा और तारीख के ज्ञान के प्रति अपने कर्त्तव्यों का पालन करूँगा, तो विद्वान, बुद्धिमान तथा न्याय-मर्मज्ञ मेरे संक्षिप्त लेख को पढ़कर यह समझेंगे कि मैं बहुत कुछ जानता था, मेरी प्रशंसा करने में और मेरे प्रति न्याय करने में उन्हें कोई आपत्ति न होगी। इस विचार के उपरान्त मैंने यह देखा कि तबकाते नासिरी में जिन बादशाहों का उल्लेख है उनके पश्चात् पचानवे वर्ष व्यतीत हो चुके हैं।

(२२) इन पचानवें वर्षों में आठ बादशाह देहली के राज सिंहासन पर विराजमान हुये। इनके अतिरिक्त तीन अन्य बादशाह तीन-तीन, चार-चार, महीनों तक राज्यारूढ हुये। मैंने

इस संक्षिप्त इतिहास में उन्ही आठो बादशाहो का उल्लेख किया है। इसे मैंने सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन के राज्य के वर्णन से आरम्भ किया है क्योंकि तबकाते नासिरी में उस समय का वर्णन दिया हुआ है जब वह खान था किन्तु उसकी बादशाही का वर्णन वर्त्तमान नहीं। वे आठ बादशाह जिनका उल्लेख मैंने इस तारीखे फीरोजशाही में किया है, निम्नांकित हैं।

तारीखे फ़ीरोजशाही की विषय-सूची

प्रथम सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन[1] था, जिसने देहली के राज सिंहासन पर बीस वर्ष तक राज किया। द्वितीय सुल्तान बल्बन का पोता सुल्तान मुइज्जुद्दीन कैकुबाद था जिसने तीन वर्ष तक देहली में राज्य किया। तीसरा सुल्तान जलालुद्दीन फीरोज खलजी है जो सात वर्ष तक देहली का राज्य करता रहा। चौथा सुल्तान अलाउद्दीन खलजी है जोकि बीस वर्ष तक राज सिंहासन को सुशोभित करता रहा। पाँचवाँ सुल्तान अलाउद्दीन का पुत्र सुल्तान कुतुबुद्दीन है जोकि चार वर्ष और चार महीने देहली के राज सिंहासन पर विराजमान रहा। छठा सुल्तान गाजी ग़यासुद्दीन तुगलकशाह है, जिसने चार साल और कुछ महीने देहली में शासन किया। सातवाँ तुगलकशाह का पुत्र सुल्तान मुहम्मद है, जिसने सत्ताईस वर्ष तक देहली के राज सिंहासन पर हुकूमत की। आठवाँ इस समय और इस काल का सुल्तान फीरोजशाह है, जो कि देहली के राज सिंहासन पर जहाँदारी और जहाँबानी कर रहा है। ईश्वर उसे बहुत वर्षों तक राज-सिंहासन पर आरूढ रखे।

फ़ीरोजशाह को समर्पण

उसके राज्य के हितैषी जिया बरनी ने, जिसने उपर्युक्त आठों बादशाहो का उल्लेख किया है और इनके पश्चात् जिस सुल्तान का वर्णन दिया है, उसके नाम पर इतिहास का नाम तारीखे फीरोजशाही रखा है।

(२३) अपने समकालीन सुल्तान फीरोजशाह खलादल्लाहो मुल्कहू व सुल्तानहू[2] के राज्य के छः वर्षों में मैंने जो कुछ देखा है उसे इतिहास में संक्षिप्त में लिख दिया है। मुझे आशा है कि यदि मैं जीवित रहा तो मैं अपने इस समकालीन बादशाह का वर्णन, जिसके लिये मेरी भगवान् से यह प्रार्थना है कि वह अनेक वर्षों तक राज सिंहासन पर आरूढ रहें, इस इतिहास में परिशिष्ट

		हिजरी	ईस्वी
१	ग़यासुद्दीन बल्बन	६६४	१२६६
	मुइज्जुद्दीन कैकुबाद	६८६	१२८७
	शम्सुद्दीन क्यूमुर्स	६८६	१२६०
	खलजी		
	जलालुद्दीन फ़ीरोज	६८६	१२६०
	रुक्नुद्दीन इबराहीम	६६५	१२६६
	अलाउद्दीन मुहम्मद	६६५	१२६६
	शिहाबुद्दीन उमर	७१५	१३१६
	कुतुबुद्दीन मुबारकशाह	७१६	१३१६
	शम्सुद्दीन महमूद (राज्य का दावा करने वाला)	७१८	१३१८
	नासिरुद्दीन खुसरव	७२०	१३२०
	तुग़लक़		
	ग़यासुद्दीन तुग़लक़	७२०	१३२०
	मुहम्मद बिन तुग़लक़	७२५	१३२५
	फ़ीरोजशाह	७५२	१३५१

२ उसका राज्य तथा शासन सर्वदा वर्तमान रहे।

के रूप में करूँगा। यदि मेरी मृत्यु हो जाय तो, जिसे भी ईश्वर शक्ति दे, वह उसके विषय में लिखेगा। मैंने इस इतिहास के लिखने में विशेष कष्ट उठाया है। मुझे न्याय-प्रिय लोगों से न्याय की आशा है, क्योंकि इस रचना में अनेक अर्थ (शिक्षा) संगृहीत हैं। यदि इस रचना को इतिहास कहा जाये तो इसमें सुल्तानों और मलिकों का इतिहास मिल जायेगा। यदि इस रचना में शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी आज्ञाओं और आदेशों को ढूँढा जाये तो उससे भी यह इतिहास शून्य नहीं। यदि इस इतिहास में जहाँबानों तथा जहाँदारों के उपदेशों और नसीहतों की खोज की जाये तो उपर्युक्त बातें भी इस रचना में अन्य रचनाओं की अपेक्षा उच्चकोटि की मिलेंगी। मैंने जो कुछ लिखा है, वह सच सच और ठीक ठीक लिखा है। यह इतिहास विश्वास के योग्य है। इसमें थोड़े से शब्दों में बहुत सी बातें लिख दी गई हैं। यह बातें अनुकरण के योग्य हैं। मैं इस इतिहास की विशेषता, न्याय एवं सत्यता पूर्वक इस प्रकार व्यक्त कर सकता हूँ

छन्द

यदि मैं यह कहूँ कि संसार में मेरे इतिहास के समान कोई अन्य इतिहास नहीं, तो मेरी बात पर कौन विश्वास करेगा, क्योंकि इस विषय का कोई अन्य विद्वान् नहीं।

मैंने सन् ७५८ हि० (१३५६-५७ ई०) में उपर्युक्त इतिहास की रचना समाप्त की। भगवान् जो सबसे महान् और सर्वश्रेष्ठ है मेरे समकालीन प्रतिष्ठित व्यक्तियों को तारीखे फीरोजशाही के अध्ययन की रुचि और शौक प्रदान करे, मेरा समकालीन बादशाह राज सिंहासन पर वर्षों तक विराजमान रहे और जहाँगीरी से फलता फूलता रहे। समस्त प्रशंसा भगवान् के लिए है जोकि विश्व का पालन कर्त्ता है। बहुत बहुत दुरूद और सलाम उसके रसूल मुहम्मद पर व उसकी समस्त संतान पर। समस्त लोगों से अधिक कृपा-दृष्टि रखने वाले, इन लोगों पर अपनी कृपा दृष्टि रख।

असुल्तानुल मोअज़्ज़म गयासुद्दुनियां वद्दीन बल्बन

(२४) काज़ी सद्रे जहां फखरुद्दीन नाक्लिा, सुल्तान बल्बन का ज्येष्ठ पुत्र खाने शहीद, सुल्तान बल्बन का लघु पुत्र बुगरा खा, आदिल खाँ शम्सी, खाने शहीद का पुत्र कैखुसरो, बुगरा खा का पुत्र कैकुबाद, तिमुर खाँ शम्सी, एमादुलमुल्क रावते अर्ज़, ख्वाजा हुसैन बसरी वज़ीर, मलिक अलाउद्दीन किशिली खाँ बारबक, मलिक निज़ामुद्दीन बुज़गाला वकीलदर, मलिक इख्तियारुद्दीन बेक्तर्स सुल्तानी बारबक, अमीन खाँ एतगीन मूयेदराज़ (लम्बे केशो वाला), मलिक अमीर अली सरजानदार, हैबत खाँ आखुरबक मैसरा (बाँई पंक्ति), मलिक बूतू सरजानदार, मलिक मुहम्मद सरदार, मलिक सौंज सरजानदार, मलिक अवाजी आखुरबके मैमना (दाहिनी पंक्ति), मलिक तरगी सरसिलाहदार मैसरा, मलिक इख्तियारुद्दीन कतमीरानी, मलिक ताशमन्द आखुरबक मैसरा, उम्दतुलमुल्क ख्वाजा अलादबीर, मलिक विदामुद्दीन इलाकादबीर (अलादबीर) मलिक तरगी सरसिलाहदार मैमना, मलिक मुकद्दिर तुगरिल कुश, मलिक शिहाबुद्दीन खलजी, मलिक जलालुद्दीन खलजी, अमीर जमाल नायब दादबक, मलिक नसीरुद्दीन बूची दादबक कुतलुग खाँ का पुत्र मलिक ताजुद्दीन, मलिक नसीरुद्दीन दाना शहनक पील मैमना मलिक अइज़्ज़ुद्दीन शहनक पील मैसरा, ख्वाजा शर्फुद्दीन राशदी मुस्तौफी, ख्वाजा खतीरुद्दीन नायब वज़ीर, मलिक अलाउद्दीन शानक, मलिक फखरुद्दीन नायब वज़ीर एतमन सुरखा, मलिक नसीरुद्दीन बर्की, मलिक इख्तियारुद्दीन, मलिक जमालुद्दीन एतगीन बरीदे ममालिक ।

(अल्लाह के नाम से जोकि रहमान और रहीम हैं) ।

(२५) समस्त प्रशसा ईश्वर के लिए है, जोकि विश्व का पालन-कर्त्ता है, और बहुत बहुत दुरूद उनके रसूल मुहम्मद पर और सलाम उनकी समस्त सतान पर ।

मुसलमानों का शुभ चिन्तक ज़िया बरनी इस प्रकार निवेदन करता है कि 'इस तुच्छ ने जो कुछ भी इस इतिहास में गयासुद्दीन बल्बन का वर्णन अथवा वृत्तान्त दिया है, वह उसने अपने पूर्वजो से सुना है। उसके शासन प्रबन्ध का हाल उन लोगो से सुना है जोकि उसके राज्य-काल में बडे बडे पदो पर नियुक्त थे।'

जब ६६२ हि० (१२६३-६४ ई०[1]) में सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन, जो शम्सी[2] दासो में से एक दास था और चेहलगानी[3] तुर्क दासो की श्रेणी से मुक्त हो चुका था, दिल्ली के राज सिंहासन पर विराजमान हुआ, तो उसने प्राचीन राजाओ के अनेक अधिनियमो का अनुसरण करते हुये, ईरान के सम्राटों की भाँति अपनी राज सभा को सुशोभित किया, अपने मित्रो तथा सम्बन्धियो को देश में प्रतिष्ठा तथा सम्मान प्रदान किया, अपने पुत्रों तथा सरदारो को उच्च पद दिये और बडी बडी अक्तायें प्रदान की।

(२६) सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन के सिंहासनारोहण के पूर्व राज्य का वैभव, जोकि मिस्र के सम्राटो और एराक, ख्वारज़्म तथा खुरासान के बादशाहो के (राज्य के) समान था सुल्तान शम्सुद्दीन के मरते ही तीस वर्ष के भीतर ही सुल्तान शम्सुद्दीन के पुत्रो की अनुभव-शून्यता एव विलास-प्रियता तथा उसके लघु पुत्र सुल्तान नासिरुद्दीन की स्वाभाविक मृदुलता एव सौम्य के कारण क्षीण हो गया था। राजाज्ञाओ का उल्लघन होने लगा था। राज कोष एव सुल्तानी पायगाह में अधिक सम्पत्ति, घोडे आदि न रह गये थे। राज-भण्डार तथा अधिकार, शम्सी तुर्क दासो में जोकि खान बन बैठे थे विभाजित हो चुके थे। वे राज्य के भिन्न-भिन्न भागो के स्वामी बन बैठ थे।

सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् दस साल के समय में उसके चार पुत्रो को सिंहासन पर बैठाया गया। वे नवयुवक तथा अनुभव-शून्य थे और राज्य-व्यवस्था की कठिनाइयों को सुलझा न सकते थे (अर्थात् शासन चलाने में असमर्थ थे)। वे अपना समय भोग विलासिता में एव असावधानी में व्यतीत करते थे। उनके राज्य-काल में तुर्क दासो को चेहलगानी कहते थे। उन्होंने राज्य व्यवस्था पर अपना अधिकार जमा लिया था और बडे प्रभुत्वशाली एव अधिकार-सम्पन्न हो गये थे। प्रसिद्ध अमीर तथा बडे-बडे सरदार, जोकि शम्सी काल में प्रभुत्व-सम्पन्न एव विश्वासपात्र थे, पृथक् कर दिये गये।

शम्सुद्दीन के चार पुत्रो के दस साल के राज्य-काल के पश्चात् सुल्तान शम्सुद्दीन का लघु पुत्र सुल्तान नासिरुद्दीन सिंहासन पर बैठाया गया। सुल्तान नासिरुद्दीन, जिसके नाम पर तबकात लिखी गई है, बडा ही मृदुल, दानशील और धर्मनिष्ठ था। वह अपनी जीविकोपार्जन

---

१ ६६४ हि० (१२६६ ई०) होना चाहिये।

२ सुल्तान शम्सुद्दीन के।

३ चेहलगानी—प्राय इसका अनुवाद 'चालीस तुर्कों का सघ' किया जाता है किन्तु वह लोग किसी समय भी सगठित न हुये और उनके लिये केवल चालीस कहना ही उचित है।

कुरान शरीफ नक्ल करके करता था।[1] २० वर्ष तक[2], जब तक सुल्तान नासिरुद्दीन बादशाह रहा, सुल्तान बल्बन को उसके नायब[3] की पदवी प्राप्त रही। उस समय सुल्तान को उलुग खाँ कहते थे। सुल्तान नासिरुद्दीन केवल नाम मात्र को शासक था किन्तु वास्तविक रूप से राज्य का सचालन वही करता था। उसे खानी के समय में भी राजसी ठाटबाट, चत्र[4], दूरबाश[5], पील[6] और दारात[7] प्राप्त थे।

(२७) उनकी मृत्यु के पश्चात् शम्सी अमीरों का क्लेश तथा शासन के क्षीण होने का हाल इस कारण से लिखा गया है कि इस शम्सुद्दीन के राज्य में दुष्ट चगेज खाँ 'मुगल' के रक्तपात के भय से बड़े-बड़े अमीर, प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध मत्री जिन्होंने वर्षों तक प्रशासन एव राज्य किया था, सुल्तान शम्सुद्दीन की राज्य सभा में सम्मिलित हो गये थे। ऐसे अमीरों, जिनकी गणना उत्कृष्ट अमीरों में की जाती थी और ऐसे प्रसिद्ध मन्त्रियो तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों, जिनके समान पृथ्वी पर कोई भी प्रतापी और सुदक्ष, कुलीन, शक्तिशाली,

---

१ "प्रसिद्ध है कि सुल्तान नासिरुद्दीन एक वर्ष में दो कुरान नक्ल करता था और उसके मूल्य से अपना जीवन निर्वाह करता था। एक बार ऐसा हुआ कि सुल्तान का नकल किया हुआ कुरान किसी अमीर ने अधिक मूल्य पर मोल ले लिया। जब सुल्तान को यह बात ज्ञात हुई तो वह उससे बड़ा अप्रसन्न हुआ। उसने आदेश दे दिया कि मेरा लिखा हुआ (कुरान) गुप्त रूप से प्रचलित मूल्य पर बेचा जाया करे। यह भी कहा जाता है कि सुल्तान के पास उसकी पत्नी के अतिरिक्त कोई दासी अथवा नौकरानी न थी। वह सुल्तान के लिये भोजन बनाती थी। उसने एक दिन सुल्तान से कहा, 'रोटी पकाने से मेरे हाथों को सर्वदा कष्ट पहुँचा करता है। यदि रोटी पकाने के लिये एक दासी मोल ले ली जाय तो कोई आपत्ति न होगी।' सुल्तान ने उत्तर दिया, 'बैतुलमाल ईश्वर के बन्दों का हक है, मुझे नहीं प्राप्त होता जिससे मैं दासी मोल ले सकूँ। सतोष रखो। अल्लाह तुझे क्यामत में अच्छा बदला देगा।" तबकाते अकबरी भाग १ (कलकत्ता १९२७) पृ० ७७। मुन्तखबुत्तवारीख भाग १ (कलकत्ता १८६८) पृ० ७९, ८०। तारीखे फरिश्ता (नवल किशोर) पृ० ७४।

२ ६४४ हि० से ६६४ हि० (१२४६ ई० से १२६६ ई०)।

३ नायब शब्द का अर्थ उप है। बादशाह राजधानी छोडने से पूर्व अपना नायब नियुक्त कर दिया करते थे। लखनौती पर आक्रमण करने के पूर्व बल्बन ने देहली का नायब फ़खरुद्दीन कोतवाल को नियुक्त कर दिया था। लखनौती से तुग़रिल का पीछा करते समय बल्बन ने सिपहसालार हुसामुद्दीन को लखनौती म अपना नायब नियुक्त कर दिया था। नायब की पूरी पदवी नायबुलमुल्क अथवा मलिक नायब भी हुआ करती थी। बड़े बड़े अमीर नायबुलमुल्क बनने का प्रयास किया करते थे। निर्बल बादशाहों तथा उनके अल्पायु के पुत्रों के समय में उन्हें सुल्तान के पूरे अधिकार प्राप्त हो जाते थे।

४ राजसी छत्र। इसे केवल सुल्तान ही रख सकते थे या कभी कभी वे अपने पुत्रों तथा नायबुलमुल्क को भी इसके रखने की आज्ञा प्रदान कर देते थे। अमीर खुसरो ने कैकुबाद के भिन्न भिन्न रंगों के छत्रों का वर्णन किया है। आईने अकबरी के उन्नीसवें आईन में लिखा है कि चत्र (छत्र) में कम से कम सात बहुमूल्य जवाहिरात टाँके जाते थे।

५ यह एक प्रकार का दो शाखों का भाला होता था जिसे मोती और जवाहिरात आदि से सजा कर बादशाह की सवारी के सामने रखते थे, जिससे लोगों को बादशाह की उपस्थिति का ज्ञान हो जाय और वे बादशाह के निकट न आने पायें।

६ हाथी। इन्हें भी बादशाह की आज्ञा बिना न रखा जा सकता था।

७ सुल्तानी वैभव के वे सामान जिन्हें केवल सुल्तान ही अपने प्रयोग में लाते थे।

अनुभव एवं ज्ञान-सम्पन्न न था, की उपस्थिति के कारण सुल्तान शम्सुद्दीन की राज सभा महमूद और सजर की राज सभा के समान तथा लोगों के विश्वास की पात्र हो गई थी।

सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् उसके चेहलगानी तुर्क दास शक्तिशाली बन बैठे। सुल्तान शम्सुद्दीन के पुत्रो में राजकुमारो के योग्य आचरण न रह गये थे। राज्य संचालन की योग्यता, जिससे बढकर नुबूवत के अतिरिक्त अन्य कार्य नही होता, उनमें न थी। तुर्क दासो के प्रभाव के कारण अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियो और उनकी सन्तान का, जिनके पूर्वज अमीर तथा अमीर-जादे और वजीर तथा वजीर-जादे थे, सुल्तान शम्सुद्दीन के पुत्रो के राज्य-काल में, जोकि शासन प्रबन्ध का कोई अनुभव न रखते थे, अनेक उपायो से विनाश हो गया था।

उन सरदारों तथा नेताओ के विनाश के पश्चात् शम्सी दास बढते-बढते खान बन गये और उनमें से प्रत्येक ने राजसी ठाटबाट एवं वैभव ग्रहण कर लिया। यह सब उसी कहावत के अनुसार हुआ जो कि जमशेद के नाम से प्रसिद्ध है, अर्थात् जब तक शेर जगल से नही जाता, हिरनों को चरागाह में कोई स्वतन्त्रता नही मिलती और जब तक बाज अपने अड्डे पर नही बैठता या अपने घोसले में नही घुस जाता, फाख्ता तथा अन्य छोटी-छोटी चिडियो का उडना सम्भव नही हो सकता। उस समय के लोगो ने देख लिया कि जब तक प्रतिष्ठित तथा शक्तिशाली सरदारों का प्रभुत्व और अधिकार बना रहा, उस समय तक नीच एवं क्रय किये हुये दासो का वैभव स्थापित न हो सका और न उन्हे कोई प्रभुत्व ही प्राप्त हुआ।

(२८) इनमें एक शम्सी दास ख्वाजा ताश[1] थे। चालीस दासों में प्रत्येक एक क्षेत्र पर अधिकार प्राप्त किये हुये था। उनमें से कोई भी एक दूसरे के आगे सिर न झुकाता था और न एक दूसरे का आधिपत्य स्वीकार करता था। वे चाहते थे कि सबका अधिकार भक्ता, प्रभुत्व तथा वैभव एक दूसरे के समान रहे। वे सभी इस बात की डींग मारते थे कि, 'मेरे समान कोई अन्य नही।" एक दूसरे से यही कहता था कि, 'तुझ में कौनसी विशेषता है जो मुझ में नही, और तुझ में कौनसी बात है जो मुझ में नही।" शम्सुद्दीन के पुत्रो की अनुभव-शून्यता तथा शम्सी दासो के प्रभुत्व छीन लेने के कारण उलिलअम्री की प्रतिष्ठा न रह गई थी। शम्सी राज सभा का वैभव जो सबसे अधिक था और राज्य का वह प्रभुत्व तथा गौरव, जो पृथ्वी के अन्य राजाओं से कही उच्चतर और बढ चढ कर था, क्षीण हो गया।

बल्बन के राज्य का प्रभाव

जब सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन, जिसे शासन सम्बन्धी अत्यधिक अनुभव प्राप्त था और जो मलिक से खान तथा खान से बादशाह बना था, राज सिंहासन पर विराजमान हुआ और दिल्ली के राज्य की बागडोर उस जैसे अनुभवी, तथा समय के शीतोष्ण को देखे हुये व्यक्ति के हाथ में पहुँची, तो उलिलअम्री तथा शासन नीति को फिर से सम्मान प्राप्त हो गया। शासन व्यवस्था उसकी बादशाही से स्थिर हो गई। अस्थायी कार्य और वे कार्य जिन में विघ्न पड चुका था फिर से नियमानुसार होने लगे और शासन व्यवस्था की प्रतिष्ठा में वृद्धि होने लगी। दृढ नियमो तथा सुचारु नीति द्वारा देश के सर्व साधारण एवं विशेष व्यक्ति उसके आज्ञाकारी बन गये। उसका भय तथा ऐश्वर्य देश वासियों के हृदय पर भली-भाँति बैठ गया। न्याय एवं उदारता के कारण हिन्दुस्तान की प्रजा का हृदय उसकी शासन व्यवस्था तथा राज्य की ओर आकर्षित होने लगा।

(२९) सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् ३० वर्ष में सर्व साधारण-जन शम्सुद्दीन के पुत्रो की अनुभव शून्यता तथा शम्सी दासो के प्रभुत्व छीन लेने के कारण अभिमानी,

१ कुतुबुद्दीन ऐबक के दास होने के कारण सहदास थे।

अवज्ञाकारी तथा उद्दंड हो गये थे। इधर-उधर लोगों का सहारा ढूंढते, प्रत्येक सहायक का आश्रय लेते और अपने स्वार्थ के अनुसार जीवन व्यतीत करते थे। उलिलअम्री का भय, जिसके आधार पर ससार की व्यवस्था तथा राज्य की शोभा निर्भर है, उनके हृदय से निकल चुका था। देश में अराजकता फैल चुकी थी परन्तु वे सब बल्बन के राज्य-काल के प्रथम वर्ष में ही आज्ञाकारी, सतुष्ट तथा निष्ठावान हो गये और उन्होंने अभिमान, तथा अवज्ञा का परित्याग कर दिया। निर्भीकता एव अवज्ञा का अन्त हो गया।

बल्बन का नये सैनिक तथा कर्मचारी नियुक्त करना

सुल्तान बल्बन ने अपने अनुभव तथा अपनी बुद्धिमत्ता के अनुसार राजसी ठाटबाट को, जिस पर शासन का आधार है, स्थिर बनाना राज्याभिषेक के प्रथम वर्ष में ही समस्त कार्यों से महत्व-पूर्ण समझा। प्राचीन तथा नवीन सवार एव पयादों को अनुभवी मलिकों और प्रतापी सरदारों के अधीन बना कर राजभक्त तथा आज्ञाकारी बना लिया। कल्बे आला[1] में कई हजार ऐसे चुने तथा परखे हुये सवार और बढा दिये जिन के पूर्वज भी बडे अच्छे घुड सवार थे और जिन पर कभी किसी ने विद्रोह तथा षड्यन्त्र का आरोप न लगाया था। उसने उनको वेतन के स्थान पर उपजाऊ तथा धन-धान्य सम्पन्न गाँव प्रदान किये। अपने राज्य और देश में ऐसे व्यक्तियों को अपना सहायक और मित्र बनाया, जिनकी महानता, नेतृत्व, वीरता तथा दान-शीलता में कोई सन्देह न था। राज-दरबार में ऐसे सहायक, मित्र, प्रतिष्ठित व्यक्ति, कुलीन, बुद्धिमान और शुद्ध स्वभाव वाले लोगों को मान प्रदान किया जो पूर्ण आज्ञाकारी तथा राज-भक्त थे। किसी तुच्छ, अयोग्य, कजूस, लालची और नीच को कोई ऊँचा पद या सरदारी न प्रदान की। यदि उसने अपने किसी निकटवर्ती अथवा सम्बन्धी को उन्नति दी, तो वे लोग ऐसे थे जो अपने समय में अपनी कीर्ति, सेना, तथा प्रजा की सेवा के लिये प्रसिद्ध थे।

(३०) उसन अपने सम्पूर्ण राज्य-काल में किसी तुच्छ, नीच, कमीने, कायर और चरित्र-हीन एव दुष्ट को कोई पद न दिया अपितु अपने राज-दरबार के निकट भी न फटकने दिया। जब तक किसी व्यक्ति के मूल तथा वश का पता न चल जाता, उसे कोई राजकीय सेवा न मिल सकती थी और न उसे कोई कार्य ही दिया जा सकता था। दुष्टों को उच्च पद तथा चरित्र-हीनों को प्रतिष्ठा प्रदान करने से उसे स्वाभाविक घृणा थी।

सुल्तान बल्बन की सवारी

सुल्तान बल्बन ने अपने राज्य-काल के प्रथम एव द्वितीय वर्ष में अपने ठाटबाट बढाने, वैभव को उन्नति देने, राज सभा तथा सवारी की शान तथा ऐश्वर्य को आकाश पर चढाने का प्रयत्न किया। अनेक सीसतानी पहलवानों का साठ-साठ और सत्तर-सत्तर हजार जीतल वेतन निश्चित किया। वे नगी तलवारें अपने कधों पर रखे हुये उसके घोडे के साथ साथ चलते। उसकी सवारी के समय एक ओर उसका चमकदार मुखडा अपनी चमक दमक दिखाता और दूसरी ओर नगी नगी तलवारें चमचम चमचम करती। सूर्य के प्रकाश में नगी तलवारों की चमक से उसके मुख की शोभा तथा ज्योति सौ गुनी बढ जाती थी। दर्शकों की आँखों में आँसू भर आते और वे चकाचौंध हो जाती, उसकी सवारी के ठाट-बाट तथा वैभव की प्रशसा प्रत्येक व्यक्ति करने लगता।

---

१ देहली की सेना को इसमे कल्ब, अफवाजे कल्ब अथवा कल्बे आला कहते थे। इनका सम्बन्ध सीधे बादशाह से हुआ करता था।

सुल्तान बल्बन का दरबार

दरबारे आम को प्रबन्धको, हाजिबों[1] सिलाहदारों[2], जानदारों[3], सहमुलहश्मों[4], उनके नायबो, चाऊशों[5], नकीबो[6] और पहलवानों से उत्तम रूप से सुशोभित किया जाता था। हाथी और आभूषणों से सुसज्जित घोडे बायें व दायें खडे किये जाते थे। सुल्तान अपने सूर्य के समान मुख तथा कपूर की भांति श्वेत दाढी के साथ राज सिंहासन पर इस वैभव के साथ विराजमान होता था कि उसके वैभव से लोगों के हृदय काँप उठते थे। दरबार के समय उसके निकटवर्ती तथा सम्बन्धी सिंहासन के पीछे, शहनगाने पील[7], सरजानदारान, सरसिलाहदारान, आखुरबकान[8], व अमीरे गिलमान[9] दाय बायें और उनके नायब अपने अपने उचित स्थानों पर खडे रहते। सहमुलहश्म, चाऊश और नकीब इस प्रकार चिल्लाते कि उनकी चिल्लाहट दो-दो कोस तक सुनाई देती और दर्शकों में कपकपी पैदा कर देती थी।

(३१) इस अवसर पर यदि दूसरे देशों के राजदूत तथा अन्य स्थानों के राय व रायजादे[10] एव मुकद्दम[11] आ जाते तो उन्हें दरबार में खाक बोस करना पडता। अधिकांशत व चकित होकर मूर्छित हो जाते और उनको कुछ सुध-बुध न रहती थी। बिस्मिल्लाह[12] की आवाज दूर-दूर तक कानों में जाती। सौ-सौ दो-दो सौ कोस के लोग हिन्दू तथा मुसलमान बल्बन की सवारी के दर्शन के लिये पहुँचा करते थे और स्तब्ध रह जाते थे। सुल्तान का दरबार तथा सवारी के वैभव के समाचार सुन कर दूर-दूर के विरोधी आज्ञाकारी बन जाते थे। यद्यपि सुल्तान शम्सुद्दीन सुल्तान बल्बन का स्वामी था और उसके अधीन राजा, महाराजा, अमीर, सेना, खजाना तथा अन्य साधन हाथी घोडे कही अधिक थे, परन्तु बल्बन के समय में दरबार का जो वैभव था या सवारी का जो ठाटबाट एव ऐश्वर्य था, वह देहली

---

१ अमीरे हाजिब अथवा बारबक दरबार के नियमों तथा रीति रिवाजों के पालन कराने का जिम्मेदार होता था। अमीरों तथा अन्य अधिकारियों को उचित स्थानों पर खडे करने का प्रबन्ध करता था। उसके अधीन कर्मचारी हाजिब कहलाते थे। वे दरबारे आम में बादशाह और सर्व साधारण के बीच में खडे होते थे जिससे सर्व साधारण बादशाह तक सीधे न पहुँच जायें। हाजिब बादशाह की सवारी के साथ भी रहते थे। अमीरे हाजिब अथवा बारबक का पद केवल बडे प्रतिष्ठित व्यक्तियों तथा सैनिकों को मिल सकता था।

२ सुल्तान के दरबार तथा सवारी के समय जो सैनिक सुल्तान के निकट उपस्थित रहते थे उन्हें सिलाहदार कहते थे। इनका सरदार सर सिलाहदार कहलाता था।

३ सुल्तान के अङ्ग रक्षक जानदार कहलाते थे। केवल राज भक्त तथा वीर सैनिक ही इस पद पर नियुक्त हो सकते थे। इनका सरदार सरजानदार कहलाता था।

४ सेना की पंक्तियों को ठीक रखना सहमुल हश्मान तथा नायबाने सहमुल हश्मान का कार्य होता था।

५ चाऊश—निम्न वर्ग का एक कर्मचारी।

६ यह लोग सुल्तान की सवारी के आगे आगे सुल्तान की उपस्थिति की सूचना उच्च स्वर में दिया करते थे। दरबार के समय भी इनका यही कार्य था। इनका सरदार नकीबुलनुकबा कहलाता था।

७ गजाधीश। यह लोग हाथियों की सेना की देख भाल करते थे।

८ आखुरबक शाही घोड़ों की देख रेख करता था।

९ दासों का अफसर।

१० हिन्दू राजे, महाराजे तथा उनके पुत्र।

११ गाँव का मुखिया मुकद्दम कहलाता था।

१२ अल्लाह के नाम से।

के सिंहासन पर किसी अन्य सुल्तान को प्राप्त न हुआ। उसके दरबार का अत्यधिक भय दर्शकों के हृदय पर कई-कई दिन तक बैठा रहता।

दरबार के ऐश्वर्य के विषय मे बल्बन के विचार

सुल्तान बल्बन बहुधा कहा करता था कि "मैंने मलिक अइज्जुद्दीन सालारी, मलिक कुतुबुद्दीन हसन गोरी तथा अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियो से, जोकि मेरे स्वामी सुल्तान शम्सुद्दीन के समय में आदर-पूर्वक उच्च पदो पर विद्यमान थे, सुना है, कि उन्होने अनेक बार सुल्तान से उसकी सभा में निवेदन किया था, कि यदि कोई सम्राट् अपने सम्मान तथा प्रतिष्ठा की रक्षा के लिये, अपनी राज-सभा और सवारी का वैभव बढाना, उठने, बैठने के नियमो का पालन कराने और अकासिरा की भाँति व्यवहार करने की चेष्टा नही करता, तो उसकी सभी चीजो, वचन तथा कार्य और चाल ढाल से बादशाही का ऐश्वर्य नही प्रकट हो पाता[१]। उसका भय उसके देश के शत्रुओं के दिल से उठ जाता है। उसकी आज्ञाओ का भय उसकी प्रजा के हृदय पर नही बैठ पाता। बादशाह जो कुछ बादशाही के सम्मान तथा वैभव की रक्षा करके, अपने दरबार और सवारी के ऐश्वर्य को उन्नति देकर, सर्व साधारण को अपने वश में करके तथा विरोधियो पर अधिकार जमाकर प्राप्त कर लेता है, वह दण्ड और दया से नही प्राप्त कर पाता।"

(३२) 'जिस समय तक बादशाह का भय तथा ऐश्वर्य सर्व साधारण एव विशेष व्यक्तियों, निकट तथा दूरस्थ देश वासियो के हृदय पर नही बैठता, राज्य और शासन व्यवस्था यथा-योग्य नही रह पाती। जो बादशाह अपनी राज्य व्यवस्था के सम्मान की रक्षा में उदासीनता दिखाता है उसके वैभव तथा ऐश्वर्य से निकटस्थ व दूरस्थ लोग भय-भीत नही रहते, राज्य व्यवस्था में विघ्न पड जाता है, सर्व साधारण अकडने लगते हैं, प्रजा द्वारा आज्ञा उल्लघन के कारण शासन प्रबन्ध शिथिल हो जाता है।" सुल्तान बल्बन ने सुल्तान सजर तथा सुल्तान मुहम्मद ख्वारज्म शाह, जो सिकन्दर द्वितीय कहलाता था, के जश्न की प्रशसा उन मलिको से सुन रखी थी जो कि सुल्तान शम्सुद्दीन के मित्र थे। उनकी बातें उसने अपने हृदय में रख छोडी थी।

दरबार का प्रबन्ध

वह अपने जश्न की सभाओ की सजावट के लिए अमूल्य काम के फर्श, वस्त्र, रग-बिरगे ख्वान, चाँदी सोने के बर्तन, जरबफ्त के पर्दे, नाना प्रकार के भाड फानूस, शरबत, पान आदि के एकत्र करने पर बहुत जोर देता था। जुहर[२] तथा असर[३] की नमाज के बीच में जश्न का समय निश्चित किया गया था। खान, मलिक तथा मन्त्री अपने-अपने उपहार भेंट करते। जिनको उपहार भेंट करने का सम्मान प्रदान किया जाता, उनको राज सभा में बडा आदर एव सम्मान प्राप्त होता था। उपहार की सूची भी उसी समय पेश हो जाती।

हिजाबते फस्ल[४] अपने समय के विश्वासपात्र तथा ज्ञान-सम्पन्न पुरुषो को प्रदान करता था। जश्न की सभाओ में सगीत होता। कवि सुल्तान की प्रशसा में कवितायें पढते।

---

१ फतावाये जहाँदारी पृ० १०० अ।

२ दोपहर के पश्चात् की नमाज।

३ सन्ध्या पूर्व की नमाज।

४ हाजिबे फस्ल उन उपहारों की सूची बनाता था जोकि बादशाह की सेवा म पेश किये जाते थे। वही उसे पढ़ता भी था।

सुल्तान के जश्न की सजावट की चर्चा लोग एक दूसरे से बड़े आश्चर्य से कई-कई दिन तक करते थे। इस तारीखे फ़ीरोज़शाही के संकलन-कर्त्ता ने अपने नाना से जोकि बड़े ही बुद्धिमान, योग्य, प्रभावशाली व्यक्ति थे, तथा सुल्तान बल्बन की राजसभा में जिनका बड़ा मान और आदर सत्कार होता था, सुना है कि वे अपने मित्रों से कहा करते थे कि ऐसा प्रतीत होता है कि बादशाही वस्त्र सुल्तान ग़यासुद्दीन बल्बन के शरीर पर सिये गये हैं।

(३३) अपने दरबार की सजावट और मान बढ़ाने तथा अपनी राज सभा एवं प्रतिष्ठा की उन्नति के लिए वह जो भी प्रबन्ध करता उसके विषय में उस काल के सभी बुद्धिमानों का यह कथन था कि, "इसी प्रकार होना चाहिये" और "इससे उत्तम कोई और दूसरा कर भी नहीं सकता"। उसके ऐश्वर्य तथा यश के विषय में यदि एक पुस्तक लिखी जाय तो भी पूरी होनी सम्भव नहीं।

बल्बन के दरबार का अनुशासन

संक्षेप में, सुल्तान बल्बन ने अपने बीस वर्ष के राज्य-काल में बादशाही की प्रतिष्ठा, उसके ऐश्वर्य, वैभव और सम्मान की इस प्रकार रक्षा की कि उससे अधिक कोई अन्य न कर सकता था। अनुशासन की रक्षा के लिए वह इस सीमा तक बढ़ गया था कि उसने फ़र्राशों[1], तश्तदारों[2] ख़्वाजा-सराओं[3] और अपने निज के उन कर्मचारियों के लिये, जोकि एकान्त में भी उसकी सेवा करते थे, कड़े नियम बना दिये थे। वे भी बिना टोपी, मोज़े और पूरे वस्त्र पहिने उसके सम्मुख न जा सकते थे। चालीस वर्ष के समय में, जब तक वह ख़ान और स्वयं बादशाह रहा, उसने किसी साधारण कर्मचारी, बाज़ारी, तुच्छ, कमीने, चरित्रहीन, नर्तकी तथा विदूषक को मुँह न लगाया। उसने न अपने जानने वालों और न दूसरों के सम्मुख कोई ऐसा कार्य या कोई ऐसी बात चीत की जिसके कारण बादशाही के सम्मान को किसी प्रकार का धक्का पहुँचता। अपनी बादशाही के समय में उसने किसी से हँसी दिल्लगी नहीं की और न दूसरे ही उसके सामने मज़ाक़ कर सकते थे। न तो वह किसी सभा में ठट्ठा मार कर हँसता और न दूसरे ही उसके सामने ठट्ठा मार कर हँस पाते।

कमीनों को पद देने के विषय में बल्बन के विचार[4]

उसके राज्य-काल में फख़र बाऊनी नामक एक प्रसिद्ध रईस था। उसने अपने अधिकार के समय इस बात का विशेष प्रयत्न किया कि किसी प्रकार सुल्तान उससे बात करले परन्तु यह सम्भव न हो सका। सुल्तान से वार्तालाप की लालसा में उसने उसके निकटवर्ती तथा बड़े-बड़े कर्मचारियों को अनेक अमूल्य उपहार भेंट किये। रईस के वर्षों के विनय तथा निवेदन को निष्फल देख कर उन लोगों ने सुल्तान की सेवा में उसकी आकांक्षा प्रकट की।

(३४) सुल्तान ने उन लोगों का निवेदन स्वीकार न किया और उस रईस से बात न की अपितु यह कहा कि "बादशाही सम्मान, वैभव तथा प्रतिष्ठा पर निर्भर है। लोगों से मिलने के कारण, यह वैभव, प्रतिष्ठा तथा सम्मान नष्ट हो जाता है। रईस, बाज़ारियों[5] व सर्व साधारण

१ फ़र्शों तथा बैठने की सामग्रियों का प्रबन्ध करने वाला।
२ तश्तदार सुल्तान के हाथ मुँह धुलवाता तथा उसे स्नान करवाता था।
३ अन्तःपुर की रक्षा करने वाले नपुंसक।
४ फ़ताबाये जहाँदारी पृ० ५७, ५९, ६२, २०७, २०८, २११, २१८।
५ बाज़ार वाले व्यापारी तथा सर्व साधारण।

का अफसर होता है। सुल्तान बाजारियो के अफसर से कैसे मिल सकता है या इस बात की आज्ञा दे सकता है कि वह बादशाह से वार्तालाप करे। यदि बादशाह, कमीनों, तुच्छ, चरित्रहीनो, मुफरिदो,[1] सरहगो,[2] अयोग्य, अनुचित लोगों, बाजारियो, नर्तकियो, मसखरो और अन्य निम्न श्रेणी के लोगो से वार्तालाप करने लगे और राज सिंहासन का अधिकारी उच्च पदाधिकारियो एव अन्य विश्वासपात्र अधिकारियो के अतिरिक्त सर्व साधारण को मुँह लगाने लगे तो उलिलअम्री का वैभव, सम्मान तथा उसकी प्रतिष्ठा अपने हाथो से नष्ट कर देगा। अपने देश वासियो को स्वय अपने ऊपर (धृष्ट) गुस्ताख कर देगा। प्रजा की धृष्टता से बादशाही का सम्मान नष्ट हो जायगा। जब कभी बादशाह सर्व साधारण की दृष्टि से गिर जाता है तो उसे अपनी आज्ञाओ का पालन कराना कठिन हो जाता है। यदि किसी बादशाह की बादशाही सर्व साधारण की दृष्टि में हल्की पड जाती है तो फिर सभी लोगो के हृदय में बादशाही की, जोकि बडा ही उत्तम व उच्च कार्य है, लालसा पैदा होने लगती है। इस से अपार हानियाँ पहुँचती हैं। बादशाह का अपनी आज्ञाओ का पालन कराना अपने वैभव और प्रतिष्ठा पर आधारित है। आज्ञा का पालन कराना, जोकि बादशाही का कर्त्तव्य है, बादशाह के भय और ऐश्वर्य के कारण जिस प्रकार लोगो के हृदय पर बैठ जाता है, दण्ड स वह सम्भव नही। छिछोरे कार्य करने और अपने आपको देश वासियो की दृष्टि में हल्का कर देने से बादशाही स्थापित नही रह पाती। आज्ञा-दाता का भय यथा-रूप नही रह पाता। अलकृत भाषा में, बादशाही ईश्वर का प्रतिनिधित्व है[3]। ईश्वर के प्रतिनिधित्व का सम्मान तुच्छ तथा छिछोरे कार्य करने से सम्भव नही।'

वंश-परम्परा के विषय मे बल्बन के विचार

(३५) "यदि बादशाह के पूर्वज बादशाह होते हैं और वशानुक्रम बादशाही के अधिकारी होते हैं तो लोगों के हृदय में उसके ऐश्वर्य एव वैभव की वृद्धि हो जाती है। चाहे उसने कभी किसी को दण्ड अथवा भय स प्रभावित न किया हो लोग उसके आज्ञाकारी बन रहते हैं। यदि उसके पूर्वज बादशाह नही होत तो बादशाहों के गुण और उनकी विशेषताये उसके द्वारा स्थापित नही हो पाती। बादशाह की प्रतिष्ठा, साधारण तथा विशेष व्यक्तियो, दूर व निकट बाहरी व भीतरी लागो पर यथा-रूप स्थापित नही रहती। उसका आदर और सम्मान किसी के हृदय में नही रह पाता। बादशाह बिना ऐश्वर्य, वैभव, सम्मान और भय के बादशाह नही रह पाता, केवल मीर हज़ारा[4] मीर तमन्नी[5] अथवा किसी विलायत का वाली[6] बन कर रह जाता है। बादशाह के ऐश्वर्य तथा वैभव के बिना उसके काल में सर्व साधारण, जिन्दीक बन जाते हैं, षड्यन्त्र एव विद्रोह होने लगते हैं, हिन्दू आज्ञा उल्लघन करने लगते हैं, मुसलमान भ्रष्टता तथा दुष्टता की अधिकता, वेश्यागमन, गुदाभाग से, मदिरा पान तथा चरित्रहीन कार्य करने के कारण अभागे

१ वे सैनिक जो किसी सेना से सम्बन्धित न होते थे अपितु लड़ाई के अवसर पर भर्ती कर लिये जाते थे।
२ निम्न वर्ग का एक कर्मचारी जो किसानों और मुद्दईयों के पास सरकारी आदेश पहुँचाया करता था।
३ फतावाये जहाँदारी पृ० १६७ अ।
४ हजार सवारों का अफसर।
५ तुमन का अफसर। एक तुमन में दस हजार सैनिक होते थे।
६ शासन की सुविधा के लिये देहली के सुल्तान अपने राज्यों को इक्लीमों, विलायत और अक्ता में विभाजित करते थे। इक्लीम का स्वामी इक्लीमदार कहलाता था। वह नाम मात्र को सुल्तान के अधीन होता था। विलायत में बड़े बड़े भाग होते थे जोकि सुल्तान के अधीन होते थे। इनका स्वामी वाली कहलाता था।

बन जाते हैं। ऐसी बादशाही से, जिसका आधार वंश-परम्परा पर नहीं होता या जिसके डर, भय, क्रोध तथा वैभव से लोगो के हृदय काँपते नही रहते, यह सम्भव नहीं, कि वह दीन पनाही अथवा दीन परवरी कर सके, क्योंकि ऐसे बादशाह उन कार्यों को न करा सकेंगे जिनकी आज्ञा ईश्वर ने दी है और न उन कार्यों का निषेध ही कर सकेंगे, जिनकी आज्ञा ईश्वर की ओर से नही मिली है। उस बादशाह, जिसका वैभव और ऐश्वर्य लोगों में नही रहता और जो दीन की रक्षा नही करता, का भय और यश लोगो के हृदय मे उठ जाता है। कुछ समय तक तो वह राज सिंहासन पर विद्यमान रहता है परन्तु इसके कारण सत्य और धर्म में विघ्न पडता रहता है तथा अन्य धर्मों को मान प्राप्त हो जाता है और वे जोरो से चलने लगते हैं। मुसलमानो के विषय में ऐसे अन्याय होने लगते हैं, जोकि काफ़िरों के देश में भी नही होते।"

फ़खर बाउनी की सिफारिश पर चेतावनी

बल्बन ने मलिक अलाउद्दीन किशली खाँ से जो उसका बार्बक था कहा कि "मैंने इस समय जो कुछ वार्त्ता की वह मैंने उन बुजुर्गों से सुनी थी, जो मेरे स्वामी सुल्तान शम्सुद्दीन के मित्र थे। वे लोग उपर्युक्त बातें अपनी गोष्ठियों में बहुधा कहा करते थे।"

(३९) "मैं नही चाहता कि तुम लोगो में से फिर कोई रईस के विषय में सिफारिश करे क्योंकि मैं किसी की सिफारिश से बादशाही का ऐश्वर्य नष्ट करने के लिये तैयार नही हूँ।"

इस पुस्तक के सकलन-कर्त्ता ने ख्वाजा ताजुद्दीन मकरानी से जोकि एक बुजुर्ग ख्वाजा[1] थे और सुल्तान बल्बन जिनका बडा आदर व विश्वास करता था सुना है कि बल्बन के सिंहासनारोहण के प्रथम वर्ष में ही अमरोहे की अक्ता[2] मलिक अमीर अली सरजानदार को प्रदान की गई। सुल्तान ने दरबार के उच्च पदाधिकारियो को आदेश दिया कि वे एक सदाचारी मुतर्सरिफ[3] जोकि कुलीन और योग्य हो, अमरोहे की अक्ता की ख्वाजगी के लिए चुन कर उपस्थित करें। उस समय मलिक अलाउद्दीन किशली खाँ अमीर हाजिब तथा मलिक निजामुद्दीन बुज़गाला नायब वकीलदर[4] थे। इन लोगो ने कमाल महियार को इस कार्य के लिए चुना और अमरोहे की ख्वाजगी के लिए राज सिंहासन के सम्मुख उपस्थित किया जिस समय कमाल महियार ने खाकबोस किया बल्बन ने अपने पदाधिकारियो से कहा कि उससे पूछें कि महियार शब्द का क्या अर्थ है और उसका सूत्र क्या है। उसने उत्तर दिया कि 'महियार मेरा पिता और एक हिन्दू दास था।' ज्यों ही यह शब्द सुल्तान के कान में पडे वह दरबार से उठ खडा हुआ और एकान्त में चला गया। उसके क्रोध से अधिकारियों ने समझ लिया कि सुल्तान का स्वभाव गर्म हो गया है। पता नही कि क्या हो जाय। उन्ह अपने हाथ पैर की भी सुध बुध न रही।

कुछ समय पश्चात् आदिल खाँ शम्सी अजमी,[5] तिमुर खाँ, मलैकुल-उमरा, फखरुद्दीन

---

१ ख्वाजा को सुल्तान वजीर की सिफारिश से नियुक्त करता था। वह हिसाब किताब के कार्य में बड़ा दक्ष होता था। प्रत्येक अक्ता में एक ख्वाजा रक्खा जाता था। वह अक्ता के स्वामी के अधीन होता था किन्तु बादशाह द्वारा नियुक्त होने के कारण एव हिसाब किताब पर नियत्रण रखने के कारण उसे विशेष अधिकार प्राप्त थे।

२ शासन की सुविधा के लिये देश की भूमि को छोटे बड़े भिन्न भिन्न टुकड़ों में विभाजित किया जाता था। यह टुकड़े अक्ता कहलाते थे।

३ मुतसर्रिफ़ हिसाब किताब की देख भाल करता था।

४ वकीलदर सुल्तान के राज भवन के प्रबन्ध-कर्त्ता होते थे। नायब वकीलदर उसके अधीन होता था। दोनों ही राज प्रबन्ध के जिम्मेदार होते थे।

५ ईरानी

कोतवाल, तथा एमादुलमुल्क रावते अर्ज[1] को एकान्त में बुलवाया। तत्पश्चात् मलिक अलाउद्दीन किशली खाँ, मलिक निजामुद्दीन बुजगाला और नायब अमीर हाजिब नायब वकीलदर तथा खास हाजिब एसामी, पाँचो व्यक्तियो को बुलवाया और आदेश दिया कि पाँचो पदाधिकारी बैठ जायें। उन लोगो के सामने उन चारो व्यक्तियो से जिन्हे इसके पूर्व ही बुलवा लिया गया था सुल्तान ने कहा कि "मैने आज अपने इस भाई के पुत्र को जो हाजिब है, इस निजामुद्दीन बुजगाला को जोकि वकीलदर है ऐसी बात करते देख कर सहन कर लिया है जोकि यदि मेरा पिता भी करता तो मैं महन न करता।"

(३७) "यह लोग एक मौला[2]-जादे तुच्छ तथा नीच को मेरे पास चुनकर लाये और उसे अमरोहे की ख्वाजगी प्रदान करने की सिफारिश की और कहा कि यह बडा ही योग्य एव अनुभवी पुरुष है।" तत्पश्चात् आदिल खाँ और तिमुर खाँ से कहा कि "तुम दोनो मेरे बडे मित्र तथा ख्वाजा ताश हो। यह खूब कान खोल कर सुन लो और भली भाँति समझ लो कि मै अफरासियाब[3] के वश मे हू, और मेरे पूर्वजों का सम्बन्ध अफरासियाब तक पहुचता है। मुझे विश्वास है कि ईश्वर ने मुझे वह विशेषता प्रदान की है जिसके कारण मै किसी तुच्छ, कमीने और चरित्रहीन को अपने राज्य में कोई पद अथवा कार्य नही सौंप सकता। जब इन लोगो का समूह दृष्टिगोचर होता है तो मेरे शरीर की नसे फड़कने लगती हैं। जब मेरी यह दशा है जैसा कि मैने तुमसे कहा तो मै यह नही चाहता कि किसी कमीने, नीच तथा चरित्रहीन को अपने राज्य के मुख्य कार्यों में जिसे ईश्वर ने मुझे सौंपा है, सम्मिलित करूँ और उन्हे कोई पद, कार्य अथवा अक्ता प्रदान करूँ। आज मैने इन दोनो पदाधिकारियो की बात सहन करली। तुम चारो व्यक्ति इस बात के साक्षी रहना कि इसके पश्चात् किसी अधिकारी ने कोई ऊँचा पद अथवा अक्ता, ख्वाजगी मुशरिफी[4] मुदब्बरी[5] आदि किसी कमीने, नीच तथा चरित्रहीन को, चाहे वह कितना भी योग्य क्यो न हो, प्रदान करने के लिए मेरे सम्मुख निवेदन किया तो मै उसको ऐसा कठोर दण्ड दूँगा जिससे कि ससार वाले भी शिक्षा ग्रहण कर सकेंगे"। सुल्तान ने इस विषय मे चेतावनी देकर उन पदाधिकारियो को लौटा दिया। वे लोग भयभीत हो कर काँपते हुये उसके सामने से लौट आये।

जब तक सुल्तान बल्बन जीवित रहा, किसी भी पदाधिकारी अथवा विश्वासपात्र को सुल्तान के सम्मुख किसी कमीने, तुच्छ तथा नीच को कोई ऊँचा पद प्रदान करने अथवा किसी विशेष कार्य में सम्मिलित करने के लिये निवेदन करने का साहस न हो सका।

सुल्तान शम्सुद्दीन तथा नीच कर्मचारी

(३८) सुल्तान बल्बन ने अपने दरबार में भी आदिल खाँ तथा तिमुर खाँ से पूछा कि तुम्हे यह बात क्यों याद नही कि जिस समय मेरे स्वामी सुल्तान शहीद सुल्तान शम्सुद्दीन ने अपने ज्येष्ठ पुत्र शाहजादा नासिरुद्दीन को कन्नौज की अक्ता प्रदान की तो कन्नौज की नियाबत बहरोज वजीर के पुत्र ख्वाजा अजीज को प्रदान की। निजामुलमुल्क जुनैदी को कन्नौज की

१ सेना विभाग का अध्यक्ष आरिज, जाइवे दीवाने अर्ज अथवा रावते अर्ज कहलाता था। उसका कार्य सेना की भर्ती तथा सेना का प्रबन्ध करना होता था। यह आवश्यक न था कि वह स्वयं बहुत बडा सैनिक तथा रण क्षेत्र में युद्ध करे किन्तु सेना की रसद तथा अन्य मामलों का प्रबन्ध वही करता था।

२ लौंडी-बच्चा।

३ तूरान का एक पौराणिक बादशाह।

४ मुशरिफ अथवा मुशरिफे ममालिक राज्य की आय की देख भाल करते थे।

५ राजकीय पत्र व्यवहार मे सम्बन्ध रखने वाले।

ख्वाजगी पर नियुक्त किया, जमालुद्दीन मरजूक को टकसाल का अधिकारी बनाया और जब नायब और कन्नौज के ख्वाजा को खिलअत प्रदान की और पाबोस[1] की आज्ञा दी तो उस समय ख्वाजा अजीज बहरोज मन्त्री ने सुल्तान के सम्मुख उच्च स्वर में यह छन्द पढे

किसी कमीने के हाथ में कलम मत दो, क्योंकि इसके आकाश को इस बात का साहस हो जाता है।

काबे में जो काला पत्थर है उसे इस्तिन्जे[2] का पत्थर बना दे।

यह छन्द पढे और जमाल मरजूक कन्नौज के मुत्सरिफ की ओर संकेत किया। सुल्तान शम्सुद्दीन समझ गया कि ख्वाजा अजीज ने उपर्युक्त छन्द नीच जमाल मरजूकके विषय में पढे हैं। उसने तत्काल निजामुलमुल्क जुनैदी मन्त्री को अपने सम्मुख बुलाया और जमाल मरजूक के विषय में पूछताछ कराई। ज्ञात हुआ कि वह कुलीन नहीं। मन्त्री ने उसकी सिफारिश में कहा कि वह मुनेख में दक्ष है तथा लिखने पढने में भी बडा योग्य है। सुल्तान शम्सुद्दीन मन्त्री से रुष्ट हो गया और उसने कहा कि नीच लोगो को उनकी योग्यता के कारण पद देकर मेरे राज्य में उच्च पदों को इनके द्वारा नष्ट करते हो। उस दिन सुल्तान शम्सुद्दीन बडा अप्रसन्न रहा और कोई काय न कर सका। उसने आज्ञा दी कि इस बात की पूछताछ की जाय कि देश के समस्त कार्यालयो के पदाधिकारियो अर्थात् ख्वाजगान, मुत्सरिफान, मुशरिफान और बरीदो[3] में कितने तुच्छ तथा नीच हैं। बडी पूछताछ के पश्चात् ३३ व्यक्तियो का पता चल सका। उनके नाम सुल्तान के सम्मुख प्रस्तुत किये गये। उन्हे तुरन्त पदच्युत कर दिया गया।

निज़ामुलमुल्क जुनैदी के वंश की जाँच

(३६) जिस समय इस विषय की पूछताछ हो रही थी। मलिक अइज्जुद्दीन सालारी तथा मलिक कुतुबुद्दीन हसन गोरी ने, जिनमें प्रथम बार्बक और द्वितीय वकीलदर था, शम्सी राज सभा में निवेदन किया कि "आदेशानुसार पूछताछ करने पर मुत्सरिफो और मुशरिफो को, जाकि नीच वंश के थे, पूर्ण रूपेण दण्ड दे दिया गया और उन्हे पदच्युत कर दिया गया। खुदावन्दे आलम[4], मन्त्री के मूल वंश की पूछताछ की भी आज्ञा प्रदान करें। यदि उसकी नसो में नीचता का रक्त न होता तो वह कदापि नीच वंश वालो को पद प्रदान न करता, न उन्हे किसी कार्य अथवा शासन के लिये नियुक्त करता। कुलीनता, प्रतिष्ठा तथा उच्च वंश से सबन्धित होने की परीक्षा यह है कि कुलीन, कमअसलो तथा नीच वंश वाला का वैभव देख ही नही सकता। वह किस प्रकार यह सहन कर सकता है कि वे (नीच) उच्च पद तथा राज्य व्यवस्था में मान पाकर राज सभा में सम्मान प्राप्त करें।" जब मन्त्री के वंश की वास्तविकता की पूर्णतया पूछताछ की गई और उस पर सोच विचार किया गया तो ज्ञात हुआ कि निजामुलमुल्क जुनैदी के पूर्वज वास्तव में जुलाहे थे। नीचो तथा अयोग्य लोगो को पद प्रदान करने के कारण इतना बडा पदाधिकारी अपमानित हुआ और जुलाहा प्रसिद्ध हो गया।

अफ़रासियाब का वंशज होने पर बल्बन का गर्व

बल्बन ने कहा कि मैं, जो अपने आपको अफरासियाब का वंशज कहलवाता हूँ, यदि अयोग्य तथा नीच वंश वालो को राज्य के उच्च पद प्रदान करने लगूँ, तो इस बात को मैं

१ पैर चूमने।

२ मूत्र के पश्चात् अपने आप को शुद्ध करने के लिये जिस मिट्टी का प्रयोग होता है वह इस्तिन्जे की मिट्टी कहलाती है।

३ राज्य के समस्त समाचारों को सुल्तान तक पहुँचाना बरीदों का कर्त्तव्य होता था।

४ अन्नदाता।

स्वय ही सिद्ध कर दूँगा कि मैं भी कमग्रसल हूँ'। (बरनी कहता है) मुझे अपने पूर्वजों तथा अन्य विश्वस्त सूत्रो से जिन्होने बल्बन के गुणों का अवलोकन किया था, ज्ञात हुआ है कि सुल्तान बल्बन में देहली के अन्य बादशाहों की अपेक्षा परस्पर विरोधी गुण पाये जाते थे। उसके क्रोध तथा दया, आतक तथा नम्रता, तेजी तथा नर्मी के चिह्न भिन्न भिन्न अवसरों पर प्रकट हुआ करते थे। प्रसन्न-चित्त होते हुये भी वह विरोधियो, आज्ञा का उल्लघन करने वालो, षड्यन्त्र कारियो, दुष्टो तथा चरित्र हीनों से आतक, क्रोध, सख्ती और कठोरता के साथ व्यवहार करता था। राजभक्तो, अच्छे स्वभाव वालों, सदाचारियो तथा उससे भय करने वालो से वह दया कृपा एव उदारता का व्यवहार करता था। सन्तोष की मुद्रा में वह न तो अयोग्य तथा आज्ञा का उल्लघन करने वालो से दया का व्यवहार करता और न क्रोध तथा गुस्से में राजभक्तों एव योग्य लोगो से कठोरता और गर्मी से काम लेता[१]।

बल्बन का राज्य

(४०) इन्साफ और न्याय करने में वह अपने भाइयो, पुत्रो, निकटवर्तियों तथा विश्वास पात्रो का भी पक्षपात न करता था। यदि उसका कोई भी निकटतम सम्बन्धी कोई अत्याचार करता और न्यायाधीश उसे क्षमा कर देते तो उसके हृदय को उस समय तक शान्ति न मिलती जब तक कि वह, जिस पर अन्याय किया गया है, उसका बदला अपने विश्वासपात्र से न ले लेता। न्याय करते समय उसकी दृष्टि इस बात पर न रहती कि अपराध उसके सम्बन्धी या मित्र ने किया है अथवा किसी अन्य ने[२]। पीडितो तथा असहायो का तो वह माता पिता था। चूँकि उसके पुत्रो, निकटतम सम्बन्धियो, विश्वासपात्रो, पदाधिकारियो, वालियो और मुक्तो को सुल्तान के न्याय के विषय में पूर्णतया जानकारी थी अत उन्हे इस बात का साहस न होता कि वे अपने किसी दास, दासी अथवा सवार या पयादे पर कोई अत्याचार कर सकें।

मलिक बकबक़ की हत्या

मलिक कीरां बेग के पिता मलिक बकबक ने जोकि सुल्तान बल्बन का सरजानदार तथा विश्वासपात्र एव चार हजार सवारो का जागीरदार और बदायूँ की अक्ता का स्वामी था बदायूँ में मदिरा के नशे में निर्भीक होकर फर्राश को इतने कोडे लगवाये कि वह मर गया। कुछ समय पश्चात् बल्बन को बदायूँ जाना पडा। उस फर्राश की विधवा ने न्याय की याचना की। उसी समय सुल्तान बल्बन ने आज्ञा दी कि मलिक बकबक मुक्तेदार बदायूँ को फर्राश की विधवा के सामने कोडे लगवा कर मार डाला जाय। बदायूँ के बरीद को, जिसने सुल्तान तक मुक्ते का पक्ष लेकर यह समाचार न पहुँचाया था, बदायूँ द्वार में फाँसी दे दी गई।

हैबत खाँ को दण्ड

इसी प्रकार मलिक कीरां अलाई के पिता हैबत खाँ ने, जोकि सुल्तान बल्बन का कुराबेग[४] और अवध की अक्ता का स्वामी था, एक मनुष्य को नशे में मार डाला। जिसकी हत्या की गई थी उसके सम्बन्धियो ने सुल्तान से न्याय की याचना की। सुल्तान ने अपने सामने हैबत खाँ के पाँच सौ कोडे लगवाये और उसे, जिसकी हत्या की गई थी, उसकी विधवा को सौंपते हुये कहा कि हत्यारा मेरा दास था, अब मैं इसे तुझ को देता हूँ, इसकी हत्या अपने हाथ से छुरी से करदे।

१ फतावाये जहाँदारी पृ० १६४।
२ फतावाये जहाँदारी पृ० ४६ ब।
३ अक्ता का स्वामी।
४ कुराबेग सुल्तान के अस्त्र शस्त्र का प्रबन्ध करता था।

(४१) ऐबत खाँ ने कुछ लोगो को बीच में डाल कर बडे विनय-पूर्वक तथा नम्रता से रो पीट कर बीस हज़ार तनके उस मन्त्री को दिये और अपने आप को उस स्त्री के हाथ से मुक्त किया। इस दुर्घटना के पश्चात् वह जीवन पर्यन्त घर के बाहर न निकला।

दीन पनाही के विषय मे नूरुद्दीन मुबारक गज़नवी के विचार

मैने सिपहसालार हुसामुद्दीन से, जोकि मेरे नाना सुल्तान बल्बन के वकीलदर एव बारबक थे, सुना है कि सुल्तान बहुधा एकान्त में अपने पुत्रो तथा अपने विश्वासपात्रों से कहा करता था कि 'मैने दो बार सैयिद नूरुद्दीन मुबारक गज़नवी से सुल्तान शहीद[1] की राजसभा में वह उपदेश सुने हैं जोकि सुल्तान शम्सुद्दीन को सैयिद दिया करते थे।' उनका कथन है कि बादशाह शासन व्यवस्था के विषय में जो आवश्यक कार्य करते हैं, जिस प्रकार वह खाते पीते, वस्त्र धारण करते, सवार होते, उठते-बैठते या गज सिंहासन पर विराजमान होते तथा लोगो को अपने सम्मुख बैठाते और सिज्दा कराते हैं, वह सब ईश्वर के विरोधी, पथ-भ्रष्ट अकासिरा के नियम हैं जिनका वे हृदय से पालन कर रहे हैं, सर्व साधारण से वे अपने आपको सभी विषयो में श्रेष्ठ समझते हैं। यह नियम मुहम्मद की सुन्नत के विरुद्ध हैं। यह शिर्क है इसका उन्हें कयामत में दण्ड भोगना[2] होगा। बादशाह की मुक्ति उन कार्यों के पालन से सम्भव नही है जिनकी आज्ञा खुदा की ओर से नही मिली और जो मुहम्मद साहब की सुन्नत के विरुद्ध हैं।

दीन पनाही चार कार्यों पर निर्भर है।

दीन पनाही तथा दीन परवरी

१—इस्लाम के सम्मान तथा प्रतिष्ठा को, जोकि खुदा के बन्दों की बन्दगी के गुण के विरुद्ध है, सत्य की उन्नति, इस्लामी नियमो को ऊँचा उठाने, शरा की आज्ञा का पालन करने तथा अम्रे मारूफ की शोभा बढ़ाने एव निहीये मुनकिर[3] को रोकने में सच्चे विश्वास से लगाया जाय। दीन पनाही यथा-रूप उस समय तक सम्भव नही जब तक कुफ्र काफिरी, शिर्क, बुतपरस्ती बन्द न हो जाय और रसूल अल्लाह के दीन के सम्मान में वृद्धि न हो[4]।

(४२) यदि शिर्क तथा कुफ्र जड पकड गये हो और सभी काफ़िरो और मुशरिको को पूर्णतया उखाड फेंकना सम्भव न हो तो कम से कम यह तो होना ही चाहिये कि इस्लाम के कारण और दीन पनाही के लिये मुशरिक तथा बुतपरस्त (मूर्तिपूजक) हिन्दुओ को अपमानित, कलंकित तथा तुच्छ बनाने का विशेष प्रयत्न करते रहें, क्योकि वे खुदा और रसूल के घोर शत्रु हैं। बादशाहो की दीन-पनाही का सबसे बडा चिन्ह यह है कि वे जब किसी हिन्दू को देखें तो उनका मुँह लाल हो जाय और इच्छा हो कि उसे जीवित नष्ट कर दें। ब्राह्मणो का, जोकि कुफ्र के इमाम (नेता) हैं और जिनके कारण कुफ्र और शिर्क फैलता है और कुफ्र की आज्ञाओ का पालन कराया जाता है, समूल उच्छेदन कर दिया जाय[5]। इस्लाम के सम्मान और दीने हकीकी[6] के सम्मान के लिये यह आवश्यक है कि किसी काफिर और मुशरिक को आदर-पूर्वक जीवन व्यतीत न करने दिया जाये और मुसलमानों के मध्य में

१ सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश।

२ फ़तावाये जहाँदारी पृ० १५ ब, पृ० १०० अ।

३ वे कार्य जिन की शरा द्वारा आज्ञा मिली है तथा वे कार्य जिनकी शरा से मनाही है।

४ फ़तावाये जहाँदारी पृ० ७ व ८।

५ फ़तावाये जहाँदारी पृ० ११८ ब, १२१ ब,

६ सच्चे धर्म।

सुल्तान का असहायों की सहायता करना

सुल्तान बल्बन की आदत थी और उसका यह नियम था कि जिस स्थान पर वह पड़ाव करता वहाँ निर्बल, रोगी, असहाय और दीनो को पार कराने के लिए वह स्वयं बड़ी-बड़ी नदियों, नालो और पुलो के किनारे बैठ जाता। राज्य के कर्मचारियो को आज्ञा दे देता कि वे डण्डे लेकर कीचड़ में घुस जायें, बूढ़ो, निःसहाय लोगो, स्त्रियो, बच्चो, निर्बल व्यक्तियो, पशुओं आदि की सहायता करें। यदि कोई नदी ऐसी मिल जाती जहाँ नाव का प्रबन्ध न होता तो दस बारह दिन तक वही ठहर जाता, जिससे सर्व साधारण सुगमता एवं सुविधा-पूर्वक निकल जायें, किसी का सामान नष्ट न हो और किसी मनुष्य को कोई हानि न पहुँचे। सुल्तान के पास हाथी भी लोगो को पार करने में लगा दिये जाते। जिस समय वह मलिक और खान था, उस समय भी शम्सी प्रतिष्ठित व्यक्तियों में वह प्रजा के पालन-पोषण, असहाय लोगो की सहायता करने तथा बरबाद लोगो को आबाद करने के लिए प्रसिद्ध था। मलिक और खानी के समय में भी जो विलायत उसके अधिकार में होती थी उसे वह पूर्णतया आबाद और समृद्धिशाली कर दिया करता था।

(अपनी) खानी के समय मे सुल्तान बल्बन की विलासिता

(४६) जिस समय सुल्तान बल्बन मलिक और खान था, उस समय वह मदिरा पान तथा सभायें करने के लिए प्रसिद्ध था। वह सप्ताह में दो तीन दिन जश्न किया करता। बड़े-बड़े खान, मलिक तथा प्रतिष्ठित एवं गण्यमान्य व्यक्ति उसके अतिथि होते। वह जुआ खेलता था परन्तु जुए से जो धन प्राप्त होता उसे दान कर देता। आदर के योग्य लोगों (सतों) को घोड़े, बहुमूल्य वस्त्र आदि उपहार में देता, अपने सहकारियो को भी वस्त्र और घोड़े आदि प्रदान करता।

धर्म मे सुल्तान की रुचि

अपनी विलासपूर्ण सभाओं की शोभा के लिए वह मीठी मीठी बातें करने वाले मित्रो, नदीमो, अच्छे स्वर में किताब पढ़ने वालो और नर्तकियो को नौकर रखता। इन लोगो को पर्याप्त आश्रय देता परन्तु सिंहासनारोहण के पश्चात् वह शरा के विरुद्ध किसी कार्य के निकट भी न फटका। नशा करने से तोबा करली, मदिरा पान की सभायें त्याग दी, और मदिरा पान का नाम भी न लिया। एबादत एवं ईश्वर की आज्ञाकारिता, रोज़े नमाज मे विशेष रुचि लेने लगा। जुमे और जमाअत[१] की नमाज़ में उपस्थित रहता। नमाज़े इशराक[२], नमाज़े चाश्त[३], अव्वाबीन[४], तहज्जुद, में उसे एकायक बड़ा आनन्द आने लगा। हज के महीनो में समस्त रात्रि नमाज पढ़ता। यात्रा या राज भवन में अवराद[६] पढ़ने में उसे कोई बाधा न होती। बिना वज़ू[७] के कभी न रहता। आलिमो की उपस्थित के बिना भोजन न करता, भोजन के समय आलिमो से धर्म इस्लाम की समस्याओ के विषय में प्रश्न किया करता। भोजन की सभाओ

---

१ सामूहिक नमाज।
२ प्रातःकाल की नमाज जो सूर्य निकलने के पहले की नमाज के पश्चात् पढ़ी जाती है।
३ नाश्ते के पश्चात् की नमाज।
४ अन्य एबादतें।
५ आधी रात के बाद की नमाज़। उपर्युक्त नमाज़ें अनिवार्य नहीं।
६ कुरान के भिन्न भिन्न भाग जो दिन व रात मे पढ़े जाते हैं।
७ नमाज़ के लिए क्रमानुसार हाथ मुँह धोना। प्रत्येक समय नमाज के अतिरिक्त भी वज़ू करते रहने में बड़ा पुण्य बताया गया है।

में विद्वान् उसके सामने वाद विवाद किया करते। उलमाये आख़ेरत[1] तथा मशायख़ (सतो) को प्रत्येक स्थान पर सम्मान प्राप्त था। वह धर्म (इस्लाम) के बुज़ुर्गों के दर्शनार्थ उनके निवास स्थान पर जाया करता था। जुमे की नमाज़ के पश्चात् बड़े ऐश्वर्य तथा वैभव से सवार हो कर मौलाना बुर्हानुद्दीन बल्ख़ी के निवास स्थान पर जाया करता। भगवान् का ज्ञान रखने वाले उस आलिम का वह बड़ा सम्मान करता। क़ाज़ी शर्फुद्दीन वलवलजी, मौलाना सिराज उद्दीन सजरी तथा मौलाना नज्मुद्दीन दमिश्की का, जो उलमाये आख़ेरत थे, बड़ा सम्मान करता। प्रत्येक जुमे की नमाज़ के पश्चात् बुज़ुर्गों के रौज़ो[2] के दर्शन के लिए जाता।

(४७) यदि नगर में कोई सैयिद, सत या आलिम परलोक को सिधार जाता था तो सुल्तान उसके जनाज़े[3] के साथ उपस्थित रहता। उसके जनाज़े की नमाज़ पढ़ता और उसके तीजे[4] में सम्मिलित होता। उसके भाइयों तथा पुत्रों को वस्त्र प्रदान करता और उनको आश्रय देता। बाप की रोटी (सहायता), गाँव तथा वज़ीफ़ा पुत्रों और भाइयों के लिये जारी कर देता। यद्यपि उसकी सवारी बड़े वैभव, ऐश्वर्य और ठाटबाट से निकलती, किन्तु यदि वह देखता कि मस्जिद में लोग एकत्रित हैं और कोई योग्य मुज़किर तज़्कीर कर रहा है तो कुछ समय के लिये उतर पड़ता। सर्व साधारण के साथ बैठ कर तज़्कीर सुनता। मुज़किरों के उपदेश तथा नसीहतें सुनकर फूट-फूट कर रोता। सेना के क़ाज़ियों को हर्मान[5] की उपाधि प्राप्त थी। वे अपनी पवित्रता और धर्म निष्ठता के लिए प्रसिद्ध हुआ करते थे। बादशाह उनका बड़ा आदर सम्मान किया करता था। वे जिसकी सिफ़ारिश करते बादशाह अवश्य उसे स्वीकार करता।

सुल्तान बल्बन और उसके विरोधी

मैंने उन लोगों से, जो बल्बन के समय का वर्णन और वृत्तान्त दोहराया करते थे, सुना है कि सुल्तान बल्बन दया, कृपा, न्याय, इन्साफ़ और रोज़े नमाज़ के बावजूद भी, जिनके विषय में बहुत कुछ कहा जा चुका है, विरोधियों तथा विद्रोहियों को अत्यधिक दण्ड देता था। विद्रोहियों के विषय में किसी बात पर ध्यान न देता था। विद्रोह के दण्ड में सैनिकों के साथ-साथ नगर निवासियों तक का विनाश कर डालता था। दण्ड देने में निरंकुश और निर्दयी शासकों का अनुकरण करने में सुई की नोक के बराबर भी कमी न करता था। क्रोध और बादशाही के ऐश्वर्य के समय ईश्वर का भय भी त्याग देता था। विद्रोहियों तथा आज्ञा का उल्लंघन करने वालों की हत्या और दण्ड के समय धर्म को भी भूल जाता था। जैसा अपने राज्य के लिये उचित समझता, चाहे शरा के अनुकूल हो अथवा प्रतिकूल तुरन्त कर डालता था। विरोधियों को दण्ड देते समय केवल अपने राज्य का हित सामने रखता था।

अनेक शम्सी ख़ानों तथा मलिकों को, जिन्हें उसने अपने राज सिंहासन का शत्रु और प्रतिद्वन्द्वी समझा, उसने शरबत या शराब में विष दिलवा कर मरवा डाला क्योंकि खुल्लम खुल्ला उनकी हत्या से उसे बदनामी का भय एवं विश्वास के कम हो जाने की चिन्ता थी।

(४८) क्षणिक राज्य के लोभ में वह यह भी भूल जाता था कि मुसलमानों की इन

---

१ भगवान् के ध्यान के अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु से सम्बन्ध न रखने वाले आलिम।

२ समाधि स्थानों।

३ शव यात्रा

४ मरने के तीसरे दिन, मरे हुए व्यक्ति की आत्मा के लिए जो प्रार्थना आदि की जाती है।

५ मक्के तथा मदीने के पवित्र नगरों को हर्मान कहते हैं।

हत्याओ के लिये उसे कयामत में उत्तरदायी होना पडेगा, चाहे वह हत्या तलवार से हो या विप से, चाहे गुप्त रूप से हो, चाहे मार पीट से, चाहे बहाने से हो या भूखा प्यासा रख कर, चाहे किसी ऊँचे स्थान से भूमि पर फेंक कर हो अथवा पानी में डुबा कर, और चाहे आग में जला कर।

अपने समकालीनों की इतिहास से रुचि न होने पर ज़ियाउद्दीन बरनी का पश्चाताप

इस समय जब मैं तारीखे फीरोजशाही की रचना कर रहा हूँ, सुल्तान बल्बन की मृत्यु को ७० वर्ष हो चुके हैं, ढाई करन[१] व्यतीत हो गये हैं। न तो उसके खानो में, न पुत्रो में, न मित्रो और न सम्बन्धियो में, जो इतनी बडी सख्या में थे, कोई शेष रहा है। सुबहान अल्लाह[२]! इतिहास से अनभिज्ञ तथा जानकारी न रखना, इस सीमा तक पहुँच चुका है कि उस समय के आलिमो अथवा सैनिको में से कोई भी ऐसा दिखाई नही पडता जोकि सुल्तान बल्बन की राज्य व्यवस्था के वृत्तान्त अथवा वर्णन पर प्रकाश डाल सके। ऐसे व्यक्ति भी नही पाये जाते जिन्हें उसका इतिहास जानने या सुनने की इच्छा हो, या उन प्राचीन सुल्तानो के हाल जानने की अभिलाषा हो, जो दिल्ली के सिंहासन पर आरूढ रहे। विद्वानो को प्राचीन खलीफाओ, अन्य देश के बादशाहो तथा ससार के भिन्न-भिन्न भागो के सम्राटो का इतिहास जानने की इच्छा रहा करती है। कुरान शरीफ में आया है "शिक्षा ग्रहण करो और विश्वास करो, पिछले अच्छे और बुरे कार्यों द्वारा'। जब प्राचीन लोगो का इतिहास और उनके विषय में जानकारी ही स्पष्ट नही तो शिक्षा किस चीज से ग्रहण की जा सकती है। भगवान् की आज्ञा का किस प्रकार पालन किया जा सकता है। प्राचीन इतिहास से अनभिज्ञ लोगो के विषय में दूसरी आश्चर्यजनक बात यह है कि वे जिस नगर के निवासी हैं, जहाँ उनके जन्म हुये और जहाँ रहते रहते वे वृद्ध हो गये, वहाँ के विषय में वे यह भी नही जानते कि वह नगर किस प्रकार हाथ आया, कितने वर्ष पूर्व वह विजय किया गया।

(४६) (वे यह भी नही जानते कि) वहाँ के सम्राट् प्रजा के साथ किस प्रकार का व्यवहार करते थे, उनके रहन सहन का क्या ढग था, किस प्रकार ससार से वे उठ गये और समय ने उनकी स्त्रियो, बच्चो, कर्मचारियो और अधीनो के साथ किस प्रकार का व्यवहार किया, ससार ने उन्हे किस प्रकार पीठ दिखाई और किस प्रकार उनके अवशेष भी विद्यमान नही रहे। यदि अयोग्य और तुच्छ लोगो तथा उनकी सन्तानो को इतिहास के ज्ञान की आकाक्षा न हो तो कोई आश्चर्य की बात नही किन्तु आश्चर्य-जनक बात तो यह है कि इस काल के आलिमो और शासको में भी इतिहास तथा भिन्न-भिन्न काल की दशा के जानने की इच्छा दृष्टिगोचर नही। जब मैं शासको में इतिहास तथा बुजुर्गों का हाल जानने की इच्छा नही पाता तो फिर मेरी जो कुछ भी दशा या हालत हो जाय थोडी है, क्योकि मुझे इस विद्या का पूरा ज्ञान है। उसको प्राप्त करने में मैने कष्ट भोगे हैं। मेरा आदर और सम्मान कौन कर सकता है। यदि मैं यह न देखता कि मेरे समकालीन मनुष्यो को इतिहास पढने और सुनने में रुचि नही है, तो मेरी अभिलाषा यह थी कि मै आदम से लेकर अपने समकालीन बादशाह तक का वर्णन तथा इतिहास क्रमानुसार समस्त नबियो, खलीफाओ और सुल्तानों के साथ लिपि-बद्ध करता।

१ एक करन में दस वर्ष होते हैं। कुछ लोग बीस वर्षो का, कुछ तीस वर्षों का करन भी मानते हैं। कुछ लोगों का विचार है कि दस वर्ष से १२० वर्ष के बीच के किसी भाग का एक करन हो सकता है।

२ प्रशंसा के योग्य भगवान् है।

उनकी राज्य-व्यवस्था और शासन प्रणाली के विषय में भी लिखता, उनके चरित्र की अच्छाइयों और उनकी महान कीर्ति का वर्णन करता। इस संक्षिप्त इतिहास की विशेषता, जिसमें इतिहास सम्बन्धी दुनिया भर की बातें लिख दी गई हैं, और संकेत तथा स्पष्ट रूप में शासन व्यवस्था के गुण बताये गये हैं, जिनकी जानकारी और जिनका अनुसरण करने से बादशाहों, मलिकों और प्रतिष्ठित व्यक्तियों को उच्च श्रेणी तथा मुक्ति प्राप्त हो सकती है, केवल पाठकगण ही समझ सकते हैं। उन्हें चाहिये कि वे इसमें बताई हुई बातों का पालन करें और उन्हें अपने दैनिक कार्य-क्रम में सम्मिलित करलें।

अन्य देशों को विजय करने के सम्बन्ध में सुल्तान के विचार

(५०) अब मैं सुल्तान बलबन की राज्य व्यवस्था तथा शासन प्रबन्ध का हाल पुन: आरम्भ करता हूँ। सुल्तान बलबन को सम्पत्ति, हाथी, घोड़े, जिन पर बादशाही का आधार है, उन देशों से प्राप्त होते थे जोकि उसके अधीन थे। अत्यधिक खराज में से जो कुछ भी प्राप्त होता, सेना और कर्मचारियों का वेतन अम्लाक[१], इनाम[२], मलिकों और अमीरों की अक्ता के शासन प्रबन्ध का खर्च, जोकि उनकी सेना और कर्मचारियों के वेतन के लिये प्रदान की जाती थी, कारखानों[३] का खर्च, अनुचरों का तथा अन्य खर्च निकाल कर जो कुछ शेष रहता, वह राज कोष में जमा हो जाता।

बलबन उस अत्यधिक धन से, जो राज कोष में जमा होता था, सन्तुष्ट न था। उसकी आकांक्षा थी कि (सुल्तान) महमूद की परम्परा और (सुल्तान) सजर की विजय को फिर से जीवित किया जाय, खुरासान तथा मावराउन्नहर पर अधिकार जमाये। सुल्तान के ख्वाजा-ताशों में से आदिल खाँ, तिमुर खाँ और अन्य प्राचीन शम्सी दासों ने अनेक बार निवेदन किया कि "क्या कारण है कि बादशाह, सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐबक और सुल्तान शम्सुद्दीन की भाँति, जोकि हमारे स्वामी थे, झायन, मालवा, उज्जैन, गुजरात और दूर दूर के स्थानों को विजय नहीं करता। वहाँ के राजाओं महाराजाओं से उनके राज-कोष, सम्पत्ति, हाथी, घोड़े क्यों नहीं प्राप्त करता। यद्यपि सुल्तान के पास इतनी बड़ी सुसगठित और वीर सेना है, फिर भी दूरस्थ स्थानों पर आक्रमण करने का प्रयत्न क्यों नहीं करता। अन्नदाता किस कारण राज्य के बाहर नहीं निकलते और अन्य राज्यों पर आक्रमण नहीं करते"। सुल्तान बलबन ने उत्तर दिया कि "आक्रमण तथा विजय के विषय में जो तुम लोग निवेदन करते हो, मेरी हार्दिक आकांक्षा उससे कहीं अधिक है, परन्तु क्या तुमने नहीं सुना कि चंगेज़ खाँ मुग़ल के तुमन[४] मेरे राज्य के स्त्री, बच्चों, सम्पत्ति और अन्य वस्तुओं पर हाथ साफ करने का प्रयत्न किया करते हैं। उन्होंने गज़नी, तिर्मिज़ और मावराउन्नहार में अपने अड्डे स्थापित कर लिये हैं। चंगेज़ खाँ के पोते हलाकू ने अपने मुग़ल तुमनों की सहायता से ऐराक़ पर अपना अधिकार जमा लिया है और बगदाद में विराजमान है। उन दुष्टों ने हिन्दुस्तान की अत्यधिक धन-सम्पत्ति और माल आदि का हाल सुन रखा है। हिन्दुस्तान के तहस नहस कर देने की इनकी बड़ी अभिलाषा है। मेरे देश की सीमा पर छापे मार मार कर लाहौर को नष्टभ्रष्ट

१ अम्लाक अथवा मिल्क धर्म सम्बन्धी तथा अन्य दान के कार्यों के लिए प्रदान होती थी। यह अधिकतर भूमि के रूप में होती थी और पिता से पुत्र को पहुँचती रहती थी।

२ वह भूमि जो बादशाह किसी से प्रसन्न होकर उसे प्रदान करता था।

३ राज भवन तथा राज्य की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सामग्री एकत्र करने हेतु कारखाने हुआ करते थे। प्रत्येक कारखाना एक मलिक अथवा खान के अधीन होता था। एक मुश्रिफ़ कारखाने के हिसाब किताब की देख रेख करता था। समस्त कारखानों के लिए एक मुख्य मुश्रिफ़ होता था।

४ दस हज़ार सैनिकों का दल तुमन कहलाता था।

करते रहते हैं। कोई साल ऐसा व्यतीत नहीं होता कि वे हमारे राज्य पर आक्रमण करके उसे तहस नहस न कर देते हों।

(५१) वे यह सुनने की प्रतीक्षा कर रहे हैं, कि 'मैंने सेना लेकर किसी दूर के स्थान पर आक्रमण किया और दूसरे देश अथवा स्थान की ओर ध्यान दिया।' यह सुनते ही वे मेरे नगरों पर चढ़ आयेंगे, समस्त दोआबा को तहस नहस कर देंगे और दिल्ली की बरबादी की भी सामग्री एकत्र हो जायेगी। मैं अपने राज्य के समस्त अधीन भागों की आय सेना पर व्यय करता हूं, सेना को तैयार तथा सुव्यवस्थित रखता हूं और उन लोगों के आक्रमण की प्रतीक्षा किया करता हूं। अपने राज्य से बाहर नहीं निकलता और कहीं दूर नहीं जाता। मेरे राज्य-काल के पहले, मेरे पूर्वगामी सुल्तान, मुग़लों की रोक टोक न करते थे। वे निश्चय होकर अपनी सेना लेकर चढ़ आते थे। हिन्द के राज्य तथा समस्त भागों को विध्वस कर देते थे। यहां की सम्पत्ति और सेना लूट ले जाते थे। इस बात का प्रयत्न किया करते थे कि साल में या दूसरे साल राजधानी पर भी धावा बोल दें।

यदि मुझे मुसलमानों और मुसलमानों के नगरों की रक्षा के विषय में उपर्युक्त चिन्ता न होती तो मैं एक दिन भी राजधानी में अथवा उसके पास न रहता। दूसरे स्थानों पर आक्रमण करता, दूर-दूर के राजाओं और महाराजाओं की सम्पत्ति, कोष, हाथी, घोड़े शेष न छोड़ता। मैं सुसगठित तथा सशस्त्र सेना इस कारण रखता हूं कि धर्म (इस्लाम) के शत्रुओं और विरोधियों को नष्ट कर सकूं और उनसे बदला ले सकूं, अन्यथा मैं दूसरे देश और हिन्दुओं के राज्य अवश्य अपने अधीन बना लेता। यदि मैं दूसरे देशों को जीतने तथा उन पर अपना अधिकार जमाने का प्रयत्न करूं तो मेरे राज्य को भी हानि पहुँचने का भय है।

दूसरे कारण, जिससे सुल्तान दूसरे देशों को जीत कर अपने अधिकार एवं आधिपत्य में न लाता था, के विषय में वह कहा करता था कि 'यदि मैं उन राज्यों के अतिरिक्त कोई ऐसा राज्य जीत लूं जो सुव्यवस्थित न हो तो उनकी राज्य व्यवस्था ठीक करने का मुझे प्रयत्न करना पड़ेगा। मुझे एक ऐसे प्रतिष्ठित 'वाली' को ढूंढना पड़ेगा जिसमें बादशाही के गुण हों और जो सरदारी तथा नेतृत्व के योग्य हो। वहां मुझे अमीर, कर्मचारी, बुद्धिमान, योग्य मुतसर्रिफ, और चुनी हुई सेना रखनी पड़ेगी।"

(५२) "अपनी सेना में से बारह हज़ार चुने हुये योग्य सवार सपरिवार उन देशों में भेजने पड़ेंगे। यदि इतने व्यक्ति अपने नगरों से वहां न भेजूं तो वह राज्य कदापि सुव्यवस्थित तथा दृढ़ न हो सकेगा। यद्यपि एक लाख आदमी उस वाली के साथ जिनमें अमीर, अधिकारी वर्ग, अन्य कर्मचारी, सवार और प्यादे सम्मिलित होंगे, दिल्ली के राज्य से उस राज्य में चले जायेंगे और वहां निवास करने लगेंगे, तो मैं यहां रह कर क्या करूंगा, क्योंकि मेरे दृढ़ राज्य से एक लाख योग्य आदमी कम हो जायेंगे। अपने राज्य को अपने आज्ञाकारियों तथा भक्तों से दूसरे राज्य के लिये केवल इस कारण कि वे दूर हैं खाली कर देना पड़ेगा। उस विजित राज्य के विषय में यह भी कहना कठिन ही है कि वह मेरे अधिकार में सदैव रहेगा भी अथवा नहीं। यदि उस राज्य में जिसमें मेरे इतने आदमी पहुँच चुके हैं, किसी दुर्घटना के कारण शान्ति भंग हो जाय अथवा विद्रोह या कोई अन्य गड़बड़ हो जाय और उनमें से सब मेरे विरोधी बन बैठें, तो फिर मुझे पहिले भेजी हुई अपनी ही सेना पर आक्रमण करना पड़ेगा, और अपने प्राचीन दासों से युद्ध करना पड़ेगा। यदि मुझे उन पर विजय प्राप्त हो जायगी तो दूसरों को उचित चेतावनी देने के लिये उनमें से प्रत्येक को अपनी राज सभा में मरवा डालना पड़ेगा। मुसलमानों के रक्त से खून की नदी बह निकलेगी। यदि मैं यह चाहूँ कि तुच्छ, अयोग्य

और असन्तुष्ट व्यक्तियो द्वारा दूर के देशो पर अधिकार जमा सकूं तो समस्त बुद्धिमान मेरे इस विचार का परिहास उडायेंगे। उस राज्य से ऐसी अशान्ति उठ खडी होगी कि उसे दबाना कठिन हो जायगा।

यदि मुगलो के आक्रमण का भय न होता तो फिर मै अन्य देशो को विजय करने का कौशल दिखाता। गुजरात, सोमनाथ, समुद्र तट के स्थान, झायन, मालवा, उज्जैन मेरे हाथ से बच कर कहाँ जा सकते थे। मै भली भाँति जानता हूं कि देहली की सेना पर कोई भी हाथ उठाने का साहस नही कर सकता। हिन्दू राजे महाराजे चाहे लाख दो लाख हो किन्तु मेरी सेना का सामना करने का साहस नही कर सकते। उनके विनाश के लिये ६-७ हजार दिल्ली के सवार पर्याप्त हैं।

सुल्तान की हाथी घोड़ों से रुचि

(५३) मुझे विश्वस्त सूत्रो से ज्ञात हुआ है कि सुल्तान बल्बन को दो क़रन के शासन का अनुभव था। वह बहुधा अपने निकटवर्तियो से कहा करता था, कि हिन्दुस्तान के राज्य की शोभा हाथी घोडो पर निर्भर है। हिन्दुस्तान में प्रत्येक हाथी ५०० सवारो के बराबर होता है। मैंने सिन्ध प्रदेश अपने ज्येष्ठ पुत्र को प्रदान कर दिया है। वहाँ से भरची और तातारी चुने हुए घोडे बहुत बडी सख्या में आते रहते हैं। सिवालिक प्रदेश, सिलम, सामाना, भटिंडा, भटनीर, खुक्खुरो के अधिकार के स्थानो पर, चिटवान (जाटो) तथा मन्दाहरान के अधिकार के स्थानों में चुने हुये और उत्तम हिन्दी (हिन्दुस्तान के घोडे) घोडे बडी सख्या में मिलते हैं। मेरी सेना को इन स्थानो से बहुत बडी सख्या में सस्ते घोडे मिल जाते हैं और वे मेरे लिये पर्याप्त होते हैं। मुझे इस बात की आवश्यकता नही होती कि मुगलो के राज्य से घोडे मँगवाऊँ। मैंने लखनौती तथा बगाल की इकलीम (का राज्य) अपने कनिष्ठ पुत्र को दे रक्खा है। वह राज्य वर्षों पूर्व दृढ हो चुका है। मेरे गजशाले को वही से गज प्राप्त होते हैं। मेरी राजधानी अगणित हाथियों तथा असख्य घोडो से भरी रहती है। मुझ से पूर्व अनुभवी तथा समय के शीतोष्ण का आस्वादन किये हुये व्यक्ति (अनुभवी लोग) कह गये हैं कि यह कहा अच्छा है कि दूसरे राज्यों पर, जिनकी व्यवस्था करने में असमर्थ हो, छापा मारते रहने से अपने राज्य को दृढ और सुव्यवस्थित रखो। दूसरे राज्यो को प्राप्त करने की लालसा में अपने राज्य में अशान्ति और गडबड न पडने दो। राज्य व्यवस्था के यह गुण, जिनका सुल्तान बल्बन ने वर्णन किया है, ऐसे हैं जिनके विषय में बुद्धिमान तथा अनुभवी लोगो का यह विचार है कि इनसे पर्याप्त लाभ हैं। ६६२ हिजरी[1] में जब कि सुल्तान बल्बन राज सिंहासन पर बैठा तो ६३ हाथी लखनौती से असरलाँ खाँ के पुत्र ततर खाँ के भेजे हुए देहली पहुँचे।

(५४) हाथियो के पहुँचने से बल्बन के सिंहासनारोहण के प्रथम वर्ष में ही प्रजा सन्तुष्ट हो गई और बल्बन के राज्य की दृढता के चिह्न दिखाई देने लगे। नगर में कुब्बे[2] सजाये गये। लोगों ने खुशियाँ मनाई। सुल्तान बल्बन ने बदायूं दरवाज़े के सामने मैदान में दरबारे आम किया। मलिको अमीरों, सद्रो[3], नगर के प्रतिष्ठित तथा गण्यमान्य लोगो और अन्य कर्मचारियो ने सुल्तान को बधाई दी। सुल्तान ने लोगो को भिन्न भिन्न पद तथा घोड़े आदि प्रदान किये। प्रत्येक खान और मलिक को नाम ले लेकर सम्मानित किया गया।

इस दरबार की सजावट से सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के ३० वर्ष पश्चात् अकासिरा की परम्परा पुन जीवित हो गई। उस दरबार का ऐश्वर्य, वैभव तथा उसकी सजावट आदि

१ ६६४ हि० होना चाहिये।

२ एक प्रकार के द्वार, गुम्बद आदि जो खुशी के अवसर पर सजाये जाते हैं। नोरथ

३ धार्मिक कार्यों की व्यवस्था करने वाले।

बहुत दिनो तक सर्व साधारण के हृदय से न मिट सकी। यह सुल्तान बल्बन का प्रथम दरबार था। इसी प्रथम दरबार के वैभव तथा ऐश्वर्य का सिक्का वर्षों तक लोगो के हृदय पर बैठा रहा। इस प्रकार राजधानी के विशेष तथा साधारण व्यक्तियो के दिल पर बादशाही का आतक छाया रहा।

शिकार से बल्बन की रुचि

सुल्तान बल्बन नाना प्रकार के कार्यों में तथा धर्म-पालन में एव राज्य व्यवस्था करने में सलग्न होते हुये भी शिकार को विशेष महत्व देता था। शिकार की अत्यधिक लालसा होने के कारण जाडे के दिन उसे बडे ही प्रिय थे। शीतकाल की वह सर्वदा प्रतीक्षा किया करता था। उसने आज्ञा दे दी थी कि हवालिये[१] शहर के दस बीस कोस तक की शिकार-गाहो और मैदानो की रक्षा की जाये, वहाँ कोई शिकार न खेलने पाये। वह खानी और सुल्तानी के समय में भी शिकार पर विशेष ध्यान देता था। खासादारों[२] और बडे-बडे शिकारदारो[३] को बडा सम्मान प्राप्त था। उनके दिन फिर आये थे। सुल्तान के शिकरेखान[४] में अनेक दक्ष शिकरे थे। उसने बहुत बडी सख्या में शिकरेदार[५] और चिडीमार नौकर रख छोडे थे। सुल्तान बल्बन जाडे के दिनों में रात के अन्तिम पहर में कुश्के-लाल[६] से सवार होता और प्रति दिन रेवाडी या उसके आगे तक निकल जाता, शिकार खेलता और शिकरे उडाता। तिहाई रात गये ढोल पीटता नगर में प्रवेश करता। आधी रात तक किले के द्वार खुले रहते।

(५५) सुल्तान बिला नागा जाडे के दिनो में शिकार खेलने जाता परन्तु रात को बाहर न रहता। कभी तिहाई रात गये कभी आधी रात गये शहर में प्रविष्ट होता। उसकी खानी के समय एक हज़ार पुराने सवार जिनमें से प्रत्येक से सुल्तान परिचित था और एक हजार प्राचीन दास जिनमें पायक तथा धनुर्धारी सभी सम्मिलित थे और जो सुल्तान के विश्वासपात्र थे, मृगया में उसके साथ रहते थे। सभी को पक्का तथा बिना पक्का भोजन सुल्तान के दस्तर-ख्वान से मिलता था।

बल्बन के शिकार के विषय मे हलाकू खाँ के विचार

जब सुल्तान की शिकार में विशेष रुचि तथा उससे सम्बन्धित प्रयत्नो का वृत्तान्त दुष्ट हलाकू खाँ के पास पहुचा तो हलाकू ने कहा कि "बल्बन अनुभवी बादशाह है। उसने राज्य व्यवस्था का गहरा अध्ययन किया है। देखने में तो वह शिकार के लिए जाता है किन्तु इस असख्य सवारी का ध्येय यह है कि खानो, मलिकों, और हश्मेहाशिया[७] को अधिक से अधिक अभ्यास होता रहे, घोडे पसीने पसीने होते रहे जिससे घमासान युद्ध तथा सख्त लडाई में उनसे काहिली और असावधानी न प्रकट हो। जब सेना को दौड धूप की आदत रहती है और घोडे दौडने में पसीने-पसीने होते रहते हैं, तो रण-क्षेत्र में शत्रु उन पर विजय प्राप्त नही कर सकते। बादशाह अर्थात् बल्बन शिकार नही खेलता अपितु अपने राज्य की रक्षा करता

---

१ देहली के आस पास के क़स्बे।
२ सुल्तान की व्यक्तिगत सेवा करने वाले।
३ शिकार का प्रबन्ध करने वाले।
४ वह स्थान जहाँ शिकरे अथवा बाज रखे जाते हों। ऐसा पता चलता है कि उस समय में बाज द्वारा शिकार पर विशेष ध्यान दिया जाता था।
५ शिकारों का प्रबन्ध करने वाले।
६ लाल राज भवन।
७ राजधानी की सेना।

रहता है" जब सुल्तान को यह समाचार मिला कि हलाकू इस प्रकार कहता है, तो वह बडा प्रसन्न हुआ। हलाकू की बात की प्रशंसा करते हुये कहा कि राज्य व्यवस्था के भेद वही जान सकता है, जिसने स्वयं शासन प्रबन्ध किया हो अथवा अन्य देशों पर विजय प्राप्त की हो। अनुभव-शून्य लोग अनुभवी लोगों की नीति नही समझ पाते।

मेवों का विनाश

मैने लोगो से सुना है कि बल्बन अपने सिंहासनारोहण के प्रथम वर्ष के अन्त में देहली के निकट के जंगलों को कटवाने और मेवो[1] का विनाश करने में संलग्न हो गया[2]।

(५६) सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् मेवो के उपद्रव को समाप्त करने का कार्य किसी ने न किया था। उसने इस कार्य के लिये नगर छोड कर सेना का पडाव बाहर डाल दिया। राज्य के समस्त कार्यों में मेवो के विनाश का कार्य, जिनके कारण बडी अशान्ति फैल चुकी थी सर्वोपरि समझा। ऐसा हुआ कि शम्सुद्दीन के ज्येष्ठ पुत्रो की युवावस्था, असावधानी, मदिरा पान, और भोग विलासिता एवं सुल्तान शम्सुद्दीन के लघु पुत्र सुल्तान नासिरुद्दीन की, जोकि बीस वर्ष तक देहली के राज सिंहासन पर आरूढ रहा, अयोग्यता तथा निर्बलता के कारण देहली के निकट के मेव बडे शक्तिशाली बन बैठे थे। अधिकतर तो यह होता कि वे रात को नगर पर धावा बोल देते और घरो को तहस-नहस कर डालते; वे सर्व साधारण को बडा कष्ट पहुँचाते। लोगो को मेवों के उत्पातो के भय से रात में नींद न आती। शहर (देहली) के निकट के घर मेवो ने विध्वंस कर डाले थे। सुल्तान शम्सुद्दीन के पुत्रो की अयोग्यता, शासन प्रबन्ध से अनभिज्ञता और धैर्य के अभाव से राज्य व्यवस्था के सभी कार्यों में विघ्न पड गया था। प्रजा में अनुशासन और आज्ञा पालन करने की इच्छा न रह गई थी। इस कारण देहली के निकट मेवों की संख्या बहुत बढ गई थी। वे बडे साहसी बन गये थे। देहली के निकट बहुत बडे-बडे जंगल उग आये थे। दोआब के विरोधी और हिन्दुस्तान के अन्य दिशाओ के फसादी, उपद्रवकारी, डकैती और लूट-मार किया करते थे। चारो ओर के मार्ग बन्द हो चुके थ। कारवानो (बनजारो) और व्यापारियो को आने जाने का साहस न रह गया था। शहर (देहली) के आसपास के मेवो की लूट-मार के भय से किबला[3] दिशा के द्वार सन्ध्या की नमाज़ के पश्चात् बन्द हो जाते और किसी को इस बात का साहस न था कि शाम की नमाज़ के पश्चात् निकल सके, किसी बुजुर्ग के दर्शन हो सकें, आमोद प्रमोद के लिये कोई हौज़ सुल्तान[4] तक जा सके। बहुत से मेव शाम की नमाज़ के समय ही हौज़ के निकट पहुँच जाते। भिश्तिया, पानी भरने वाली दासियो को परेशान करते और उन्हे नंगा कर देते। उनके वस्त्र छीन लेते। आसपास के मेवों के भय के कारण देहली में हलचल मच गई थी।

सुल्तान बल्बन ने मेवों के उपद्रव का दमन अपने राज्याभिषेक के प्रथम वर्ष से ही सभी कार्यों की अपेक्षा अत्यावश्यक समझा।

(५७) वह पूरे एक साल तक मेवो के विनाश और आसपास के जंगलो के कटवाने में संलग्न रहा। सभी जंगल पूर्णतया कटवा डाले गये। मेवो की बहुत बडी संख्या कत्ल करा

१ यह लोग देहली के दक्षिण मे मथुरा, गुड़गावाँ अलवर और भरतपुर के निवासी थे।

२ तारीखे मुबारकशाही लेखक यहिया बिन अब्दुल्ला सरहिन्दी ने बल्बन की प्रारम्भिक विजयों का हाल इस प्रकार लिखा है।

३ पश्चिम दिशा।

४ सुल्तान शम्सुद्दीन का बनवाया हुआ शम्सी हौज़। इसे हौज़े सुल्तानी भी कहते थे। (खलजी कालीन भारत पृ० १५७)

दी गई। उसने गोपालगीर[1] में एक किला बनवाया। शहर (देहली) के निकट के स्थानों पर थाने बनवाये। वहा अफगानो को नियुक्त किया। थाने की भूमि को मफरूज[2] कर दिया। इस युद्ध में सुल्तान के एक लाख खाम आदमी मारे गये। सुल्तान ने अपनी तलवार के बल से अनेक मनुष्यों को मेवों की लूट-मार और कत्लोगारत से बचा लिया। उस तिथि से प्रजा मेवो के भय से मुक्त हो गई।

दोआबे मे शान्ति

सुल्तान ने मेवो के विनाश के पश्चात् नगर के निकट के सभी जगल कटवा दिये। दोआबे के कस्बे और विलायत धन धान्य सम्पन्न मुक्तों को दिये और आज्ञा दी कि विरोधियो के गाँव के गाँव विध्वन्स कर दिये जायँ, विद्रोहियो का विनाश करा दिया जाय, उनकी स्त्रियों और बच्चों को बन्दी बना लिया जाय, जगलों को पूर्णतया कटवा डाला जाय, उपद्रव मचाने वालो के उपद्रव का अन्त कर दिया जाय। बडे-बडे अमीरों में से कुछ लोग बडी-बडी सेनायें लेकर इस कार्य में सलग्न हो गये और उन लोगो ने दोआबा के उपद्रवियो के बुरे स्वभाव तथा उपद्रव का अन्त कर दिया। उनके जगल काट डाले गये और विद्रोह करने वालो को छिन्न भिन्न कर दिया गया। दोआबा की प्रजा को आज्ञाकारी और राजभक्त बना लिया गया।

मार्गों की रक्षा का प्रयत्न

दोआबा की विजय के पश्चात् सुल्तान बल्बन हिन्दुस्तान के भिन्न-भिन्न मार्गों को उपद्रव-कारियो से मुक्त करने के लिये दो बार दिल्ली के बाहर गया। कम्पिल[3] और पटियाली[4] में पहुँचा। पाँच पाँच तथा छ छ महीने वहाँ रहा और विरोध तथा विद्रोह करने वालो को तलवार के घाट उतरवा दिया। हिन्दुस्तान के मार्ग साफ कर दिये। बनजारे और व्यापारी आने जाने लगे। उन प्रदेशो को अधीन कर लेने से दिल्ली में अत्यधिक सम्पत्ति पहुच गई। दास, पशु तथा मवेशी सस्ते हो गये। कम्पिल पटियाली और भोजपुर[5] में, जोकि हिन्दुस्तान के मार्गों के डाकुओ के बहुत बडे अड्डे थे, मजबूत किले और बडी-बडी खुली मस्जिद बनवाई।

(५८) सुल्तान ने उपर्युक्त तीनो स्थानो के किले अफगानों को सौंप दिये। उन किलो की कृषि योग्य भूमि को 'मफरूज' कर दिया। उन कस्बो को अफगानों और मफरूजी मुसलमानो से इतना दृढ बना दिया कि हिन्दुस्तान के मार्गों म डाकुओ और लुटेरो के भय का अन्त हो गया। आज तक जब कि इन किलो तथा थानो के निर्माण को लगभग तीन करन व्यतीत हो चुके हैं, हिदुस्तान के माग चालू हैं और लूट-मार का अत हो चुका है।

जलाली का किला

इन्ही स्थानो पर धावे के समय जलाली का किला बनवाया गया। उस किले को भी उसन अफगानो को सौंप दिया। इस स्थान पर भी, जो चोरो और डाकुओं का अड्डा बन चुका था, किलो का निर्माण किया। जलाली की भूमि को भी मफरूज कर दिया। जलाली, जोकि लुटेरो और डाकुओ का अड्डा बना हुआ था और हिन्दुस्तान के लिये जिस ओर से गुजरने

१ तबकाते अकबरी में कबालकर लिखा है (तबकाते अकबरी कलकत्ता पृ० ८४)। यह स्थान जयपुर के आस पास हो सकता है।

२ सम्भवतया वह भूमि जो कि किलों की सेना के खर्च के लिये अलग कर दी जाती थी।

३ आधुनिक फर्रुखाबाद जिले में।

४ एटा जिले में।

५ फर्रुखाबाद जिले में है।

वाले सदा लुट जाया करते थे, वहाँ मुसलमान बसा दिये गये। सड़कों की रक्षा होने लगी और और वे आज तक उसी प्रकार सुरक्षित हैं[1]।

कटिहेर[2] में विद्रोह

सुल्तान बलबन जिस समय हिन्दुस्तान के मार्गों को साफ़ करने, थानों को मज़बूत बनाने तथा किलों के निर्माण में संलग्न था, उसे कटिहेर से निरन्तर यह समाचार प्राप्त होते रहते थे, कि वहाँ असंख्य विद्रोही पैदा हो गये हैं जो प्रजा के ग्रामों को विध्वंस कर रहे हैं, जिन्होंने बदायूँ और अमरोहे की विलायत में गड़बड़ी पैदा कर रखी है और जो खुल्लम खुल्ला उपद्रव करते रहते हैं, वे इस प्रकार शक्तिशाली बन गये हैं कि बदायूँ और अमरोहे के मुक्तों की चिन्ता भी नहीं करते, उनकी शक्ति और ज़ोर के कारण आसपास के थानों भी उनका मुकाबला नहीं कर सकते।

सुल्तान कम्पिल और पटियाली से लौट पड़ा। दिल्ली में प्रविष्ट हुआ। नगर में कुब्बे सजाये गये। खुशियाँ मनाई गईं। कटिहेर के विरोधियों के विनाश के लिये सुल्तान ने आदेश दिया कि हश्मे क़ल्ब[3] को तैयार किया जाये, सर्व साधारण में घोषणा कराई जाय कि सुल्तान कोहपाया[4] की ओर शिकार खेलने जा रहा है। सुल्तान ने राजसी साज़ो सामान, ख़ेमे, पर्दे आदि के निकलने के पूर्व तक निश्चित स्थान का पता न बताया। शहर (देहली) के बाहर निकल खड़ा हुआ।

(५६) हश्मे क़ल्बे आला के साथ दो रात और तीन दिन का धावा करके गंगा पार करने के पश्चात् कटिहेर में प्रविष्ट हुआ। ५००० धनुर्धारी उसके साथ थे। उसने आज्ञा दी कि समस्त कटिहेर को तीर का निशाना बना डालें तथा विध्वंस कर दें, समस्त पुरुषों का का वध करा दिया जाय और स्त्रियों और बालकों के अतिरिक्त किसी को जीवित न छोड़ा जाय, आठ नौ वर्ष तक के बालकों को भी क़त्ल कर डालें। कुछ दिनों वह कटिहेर में ठहर गया और भीषण संहार कराता रहा, यहाँ तक कि कटिहेर के विद्रोहियों के रक्त की नदी ज़मीन पर बहा दी, प्रत्येक ग्राम, जंगल और खेत के सामने लाशों के ढेर लगा दिये। उनकी दुर्गन्ध गंगा के तट तक पहुँचती थी। कटिहेर के भीषण संहार से समीप के विरोधी भी काँप उठे और असंख्य विरोधी भक्त बन गये। कटिहेर के सभी ग्रामों को सेना ने लूट-खसूट कर तहस नहस कर दिया। लूटमार के आधिक्य से सुल्तानी सेना भी धनी बन गई। बदायूँ के निवासी भी मालामाल हो गये। कुल्हाड़े चलाने वालों और बदायूँ के सैनिकों ने घने जंगलों के मार्गों को कुल्हाड़ों से काट काट कर साफ़ कर दिया। वे सेना के लिये मार्ग बनाते जाते थे और लुटेरों से बदला लेते जाते थे। उस तिथि से, जबकि विरोधी एक साथ छिन्न-भिन्न कर दिये गये, जलाली[5] काल के अन्त तक किसी विरोधी को कटिहेर में सिर उठाने का साहस न हुआ। बदायूँ, अमरोहा, सँभल और कानूरी[6] की विलायत कटिहेर निवासियों के उपद्रव से सुरक्षित हो गई। सुल्तान बलबन ने उन जैसे उपद्रवियों का, जिन्होंने इतनी जड़ पकड़ ली थी, पूर्णतया विनाश कर दिया। तत्पश्चात् विजय प्राप्त करके सफलता-पूर्वक शहर (देहली) में प्रविष्ट हुआ। कुछ समय तक शहर में रहा।

१ इब्ने बतूता ने जलाली के खतरनाक मार्ग का बड़ा विशद वर्णन किया है।
२ आधुनिक रुहेलखण्ड।
३ दहली की सेना।
४ हिमालय पर्वत के नीचे के तराई के भाग।
५ जलालुद्दीन फ़ीरोज़शाह खलजी।
६ इस स्थान का ठीक पता नहीं है। सम्भवतः सम्भल के निकट की कोई कस्बा हो।

जूद पर्वत[1] की विजय

सिंहासनारोहण के प्रारम्भ के वर्षों में, जब कि बल्बन के हृदय को विद्रोहियों के विनाश होने के पश्चात् शान्ति प्राप्त हो गई, राजधानी में सब दिशाओं के मार्ग साफ हो गये और लुटेरों का भय समाप्त हो गया, सुल्तान बल्बन ने जूद पर्वत पर आक्रमण करने का संकल्प किया। एक लश्कर तैयार करके जूद पर्वत की ओर प्रस्थान किया।

(६०) उस पर्वत तथा निकटस्थ स्थानों को विध्वस कर डाला। सुल्तान की सेना को पहाड़ियों की सेना से असंख्य घोड़े प्राप्त हुये। लूट के घोड़ों की अधिकता से सेना में घोड़ों का मूल्य ३०-४० तन्के तक पहुँच गया।

वृद्ध अक्तादार

जिस समय सुल्तान बल्बन जूद पर्वत पर आक्रमण करने के लिये प्रस्थान कर रहा था, सुल्तान के कानों तक कई बार यह बात पहुची कि शम्सी हश्मे कल्ब के अधिकांश अक्तादार बड़े वृद्ध हो चुके हैं और सेना के साथ नहीं चल सकते, जो चल भी सकते हैं वे दीवाने[2] अर्ज के मुशियों को घूँस देकर घर बैठ रहते हैं और उन गाँवों का कर व्यर्थ जाता है। जब उस आक्रमण से सुल्तान सफलता-पूर्वक जीत कर आया तो प्रथा के अनुसार कुब्बे सजाये गये और खुशियाँ मनाई गई। उसके समय में यह प्रथा हो गई थी कि जब सुल्तान आक्रमण करके लौटता तो शहर के प्रतिष्ठित एवं प्रसिद्ध व्यक्ति दो तीन मंजिल[3] तक उसके स्वागतार्थ जाते। शहर (देहली) में कुब्बे सजाये जाते और खुशियाँ मनाई जाती। प्रजा को निसारे चत्र[4] (छत्र का न्योछावर) प्रदान किया जाता था।

आक्रमणों का गुप्त रखना

तारीखे फीरोजशाही के संकलन-कर्त्ता ने अपने पूर्वजों से अनेक बार सुना है कि सुल्तान बल्बन जिस स्थान पर भी आक्रमण करना चाहता तो प्रस्थान करने का संकल्प करने से पूर्व पर्याप्त सोच विचार करता और यदि उस पर अपने आप को दृढ पाता तो सन्तुष्ट हो जाता कि आक्रमण अवश्य सफल होगा। उसी समय उस आक्रमण के लिये प्रस्थान करता। आक्रमण करने का संकल्प करने के पूर्व दीवाने विजारत[5] और दीवाने अर्ज में फरमान[6] भेज देता कि "हमने इस वर्ष एक स्थान पर आक्रमण करने का दृढ संकल्प कर लिया है। कारखानों में तैयारी प्रारम्भ कर दी जाय और सेना को सुव्यवस्थित किया जाय।' प्रस्थान करने के दिन तक किसी को आक्रमण का स्थान अथवा दिशा न ज्ञात होती। जिस दिन प्रस्थान करना होता उससे पूर्व रात में बड़े-बड़े खानों और मलिकों को अपने सम्मुख बुलाता और उनको बतलाता कि "मुझे इस दिशा में आक्रमण करना है। कल प्रस्थान करूँगा।" उसी समय लोगों को उस स्थान के विषय में ज्ञात होता जिस पर सुल्तान के हृदय में आक्रमण करने का विचार होता।

(६१) मैंने अपने नाना से, जोकि मलिक बारबक बेक्तर्स सुल्तानी के वकीलदर थे,

---

१ साल्ट रेन्ज। नमक की पहाड़ियाँ।

२ युद्ध सम्बन्धी प्रबन्ध करने वाला विभाग, जिसका अध्यक्ष आरिज होता था।

३ पड़ाव, विश्राम स्थान। मध्य काल में यात्रा को मंजिलों में विभाजित किया जाता था। जितनी दूर तक मनुष्य एक दिन में सुगमता पूर्वक चल कर विश्राम करता था, उस दूरी को मंजिल कहते थे।

४ तबकाते अकबरी में निसारे खैर (कुशलता का न्योछावर) है। (तबकाते अकबरी पृ० ८६)।

५ मुख्य मंत्री वजीर कहलाता था। उसका विभाग दीवाने विजारत कहलाता था।

६ आज्ञा पत्र।

सुना है, कि सुल्तान बल्बन का मलिक बेक्तर्स अमीर हाजिब से अधिक कोई अन्य विश्वासपात्र और खास आदमी न था, परन्तु उसे भी सुल्तान के गुप्त विचारो का पता न रहता था।

लाहौर की ओर प्रस्थान

जूद पर्वत के आक्रमण से नगर में लौटने के दो वर्ष पश्चात् सुल्तान ने लाहौर की ओर प्रस्थान किया। लाहौर का किला, जिसे मुगलो ने सुल्तान शम्सुद्दीन के पुत्रो के राज्य-काल में विध्वस कर दिया था, पुन निर्मित कराया। लाहौर, उसके कस्बे और ग्राम जिन्हें मुगलो ने नष्ट भ्रष्ट कर दिया था, फिर से आबाद किये। वहाँ गुमाश्ते और मैमार[1] नियुक्त किये।

शम्सी अक्तादार

उस समय भी उसके कानो तक यह बात पहुँचाई गई कि शम्सी काल के अक्तादार या तो मर चुके हैं या बेकार हो गये हैं, सेना की नामजदगी (एकत्रीकरण) के समय उपस्थित नही होते हैं, दीवाने अर्ज के मुन्शियो की सहायता के कारण अपने गाँवों को सुरक्षित रखे हुये हैं, वे अपने घरों में पडे रहते हैं और विलास-प्रिय हो गये हैं। उस वर्ष जब सुल्तान लाहौर से लौटा और शहर में आया तो दीवान अर्ज को आदेश दिया कि शम्सी अक्तादारों के कागजात पेश किये जायें, उनके विषय में पूछताछ आरम्भ कर दी जाये तथा उनके विषय में राज-सिंहासन द्वारा फिर से आज्ञा प्राप्त की जाये।

अक्तादार की परिभाषा

ऐसा था कि सुल्तान शम्सुद्दीन के क़ल्बे (हश्म) के लगभग दो हजार सवारो को दिल्ली के आसपास के तथा दोआबे के गाँव वेतन में बाँट दिये गये थे। सुल्तान शम्सुद्दीन के पुत्रो के समय में उपर्युक्त सवारो में से कुछ की मृत्यु हो गई थी। बहुतो ने उन गाँवो के ऊपर जोकि उन्हे अक्ता के रूप में प्राप्त थे अधिकार जमा लिया था। इन सैनिको को अक्तादार तथा सवारे कल्ब कहा जाता था। चूंकि उन सैनिको को तीस चालीस वर्ष अपितु इससे अधिक व्यतीत हो चुके थे, अत उनमें से बहुत से सवार वृद्ध तथा शक्तिहीन हो चुके थे, बहुतो की मृत्यु हो गई थी। उनके पुत्र, उनके गाँवो को अपने बाप की मीरास[2] की भाँति अपने अधिकार में रखे थे। अपने नाम दीवान अर्ज में लिखवा लिये थे।

(६२) जिन पिताओ के पुत्र नाबालिग (अल्पवयस्क) थे, उनके गाँव उनके दासो ने अपने नाम लिखा लिये थे। ऐसे अक्तादार, उनके पुत्र तथा दास गाँवो को अपनी मिल्क और इनाम समझते थे। वे कहा करते थे कि 'सुल्तान शम्सुद्दीन ने यह गाँव हमें इनाम में दिये हैं।' शम्सी काल तथा उसके पुत्रों के समय में इन अक्तादारो में से कुछ से एक, कुछ से दो और कुछ से तीन सशस्त्र सवार बादशाह के दीवाने अर्ज द्वारा मागे जाते थे और यदि इनमें से कोई किसी कारण-वश या और किसी बहाने से सवार दीवान में न भेजता और सेना के नामजद (संग्रह-करण) के समय न पहुँचता तो उनके गाँव छीने न जाते और उनके बहाने तथा उनकी विवशता दीवाने अर्ज में स्वीकार हो जाती थी। दो करन तक गाँव उनके अधिकार में रहे। अन्त में तो यह प्रथा हो गई कि कुछ अक्तादार बिना तैयारी के सेना में पहुच जाते और अधिकाश अपने घरो और गाँवो में बहाने बना कर बैठे रह जाते। नायब अर्जे ममालिक और कार्यालय के कर्मचारियो को यथा-शक्ति शराब, बकरे, मेंढे, चिड़ियाँ, कबूतर, घी, तेल और अनाज अपने गाँव से भेजते रहते। दीवाने अर्ज में नायबे अर्ज से लेकर सहमुल हश्मान और नकीबो तक को अक्तादारों से बड़ा लाभ प्राप्त होता रहता था। सुल्तान शम्सुद्दीन के पुत्रों के राज्य-काल में देश सुशासित

१ भवन निर्माण कराने वाले, इन्जीनियरों को भी मैमार कहा जाता था।

२ उत्तराधिकार।

तथा सुव्यवस्थित न रह सका था। क़ल्ब के अक़्तादारों के विषय में कोई भी पूछताछ न की जाती थी।

अक़्तादारों का प्रबन्ध

जब सुल्तान बल्बन का राज्य सुव्यवस्थित हो गया और उस वर्ष जबकि वह लाहौर से शहर देहली में पहुँचा तो शम्सी क़ल्ब के अक़्तादारों का प्रश्न सुल्तान के सम्मुख लाया गया। सुल्तान ने अक़्तादारों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया। प्रथम श्रेणी में वे लोग थे जो पूर्णतया वृद्ध तथा निर्बल हो चुके थे एवं युद्ध के योग्य न रह गये थे। उनके लिये चालीस से पचास तन्के इदरार (वज़ीफ़ा) निश्चित किया गया। उनके गाँव को ख़ालसा में सम्मिलित कर लिया गया। दूसरी श्रेणी में जवान और युवक सम्मिलित थे। उनका वेतन उनकी योग्यता के अनुसार निश्चित किया गया और आज्ञा दे दी गई कि द्वितीय श्रेणी के लोगों के पास जो गाँव हैं, उनके कर में से वेतन निकाल कर जो शेष[1] रहे उसे प्रत्येक वर्ष दीवान द्वारा वसूल कर लिया जाय, परन्तु उनके गाँव जब्त न किये जायें। तीसरी श्रेणी में अनाथ बच्चे तथा वे सम्मिलित थे जिनके पास गाँव थे और जो अपने दासों के द्वारा घोड़े अस्त्र शस्त्र आदि जो कुछ हो सकता था दीवाने अर्ज़ में पेश कर देते थे। उनके विषय में आदेश दिया कि अनाथों तथा विधवाओं के भोजन एवं वस्त्र का प्रबन्ध उनके गाँवों से करा दिया जाय। उनके ग्रामों का कर भी दीवान (कर विभाग) में जमा कर दिया जाय और गाँव उनसे ले लिये जायें।

सुल्तान बल्बन के अक़्तादारों के विषय में इस आज्ञा से क़ल्बे शम्सी के अक़्तादारों में जोकि बहुत बड़ी संख्या में थे करुणामय कोलाहल मच गया। शहर (देहली) के प्रत्येक मुहल्ले में विलाप प्रारम्भ हो गया। बूढ़े और प्रसिद्ध अक़्तादार एकत्र हुए। मलेकुल-उमरा फ़ख़रुद्दीन कोतवाल की सेवा में कुछ दुम्बे और मिस्री के तश्त (थाल) लेकर उसके महल में गये। उसके सामने विलाप करते हुये कहा कि 'शम्सी काल से आज तक जिसे पचास वर्ष के लगभग हो रहे हैं दोआबा और उसके आस पास की अक़्ता के हम स्वामी थे। हम लोग इन गाँवों को, जिन्हें बादशाह ने हमें प्रदान किया था, इनाम समझते थे। हमारा और हमारे परिवार का जीवन निर्वाह उसी पर निर्भर था। हमसे जो कुछ हो सकता था, अस्त्र-शस्त्र, सवार, घोड़े, दीवाने अर्ज़े ममालिक में पेश कर देते थे। बादशाह के दरबार में सेवा किया करते थे। हममें से, जिनसे हो सकता था और जो सेना में सम्मिलित होने की योग्यता रखते थे, सेना में भी सम्मिलित हो जाते थे। हमें यह न ज्ञात था कि वृद्धावस्था में हम निकाल दिये जायेंगे। सिपहसालारों और प्रतिष्ठित व्यक्तियों की विधवाओं और अनाथ बच्चों को बीस बीस और तीस तीस तन्के मिलने लगेंगे। जवानों और युवकों से इतलाक़ी[2] सेना की भाँति घोड़े अस्त्र शस्त्र माँगे जायगे और दो करन पश्चात् सुल्तान शम्सुद्दीन के प्रदान किये हुये गाँव ख़ालसे[3] में चले जायेंगे। हमको गली-गली की ठोकरें खानी पड़ेंगी।'

(६४) इस प्रकार अनुरोध करके मलेकुल-उमरा से सिफ़ारिश की प्रार्थना की। मलेकुल-उमरा को इनकी दशा पर दया आ गयी। आँखों में आँसू डबडबा कर अक़्तादारों के उपहार लौटाते हुये कहा कि 'यदि मैं तुम से कुछ लेकर सुल्तान के समक्ष तुम्हारी सिफ़ारिश करूँगा तो उसका कोई प्रभाव न पड़ेगा।"

---

१ इसे फ़ाज़िलाते हासिल कहते थे।

२ वह भूमि जिसका प्रबन्ध सुल्तान अपने नियुक्त किये हुए कर्मचारियों द्वारा करवाता था।

३ वह भूमि जिसका प्रबन्ध सुल्तान स्वयं करता था।

उसी करुणावस्था में वस्त्र पहिन कर उसने राज-भवन की ओर प्रस्थान किया और अपने स्थान पर सुल्तान बल्बन के समक्ष दुखी होकर सोच विचार की दशा में खड़ा हो गया। सुल्तान ने जब मलेकुल-उमरा कोतवाल की ओर देखा तो समझ लिया कि उसे कोई कष्ट है। प्रश्न किया कि 'फखरुद्दीन क्यों दुखी तथा सोच में पड़ा है ?" मलेकुल-उमरा ने उत्तर दिया कि "मैंने सुना है, कि दीवाने अर्ज़े ममालिक से वृद्धों को रद्द किया जा रहा है, उनके जीवन निर्वाह का साधन दीवान में वापस लिया जा रहा है। मुझे इसके कारण भय तथा शोक है और मै सोच में पड़ा हूँ कि यदि भविष्य में कयामत के दिन सभी बूढ़े रद्द कर दिये जायेंगे और स्वर्ग में उन्हे कोई स्थान प्राप्त न होगा तो मेरी क्या दशा होगी, क्योंकि मैं अब पूर्णतया वृद्ध हो चुका हूँ।" सुल्तान बल्बन समझ गया कि कोतवाल अक्तादारों की सिफारिश कर रहा है। सुल्तान को उसकी बात पर बड़ा दुख हुआ और वह फूट-फूट कर रोने लगा। दीवाने अर्ज़ के पदाधिकारियों को बुलवाया। समस्त अक्तादारों के पास जो जो गाँव थे वे उनको पूर्णतया दे दिये गये और आज्ञा दी गई कि वह आदेश जोकि अक्तादारों को तीन श्रेणियों में विभाजित करने के लिये दिया गया है, वृद्ध तथा प्रसिद्ध अक्तादारों और उनके सरदारों के सामने रद्द कर दिया जाय। उनके विषय में वह आज्ञा लागू न समझी जाय। इस इतिहास के सकलनकर्ता को याद है कि इन अक्तादारों में से बहुत से जलाली राज्य-काल के अन्त तक विद्यमान थे और सुल्तान के सामने दरबारे आम में उपस्थित होकर सेवा किया करते थे। वे सर्वदा सुल्तान बल्बन तथा मलेकुल-उमरा फखरुद्दीन कोतवाल के लिये शुभ कामनायें किया करते थे।

शेर खाँ की हत्या

(६५) सुल्तान बल्बन के सिंहासनारोहण के चार पाँच वर्ष पश्चात् उसके चचेरे भाई शेर खाँ की, जोकि बहुत बड़ा खान था, मृत्यु हो गई। वह सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के उपरान्त तीस वर्ष तक मुग़लों के लिये चीन की दीवार बन गया था। मैंने कुछ विश्वसनीय लोगों से सुना है कि यह देहली में नहीं आता था। सुल्तान बल्बन ने उसके फुकाई[1] के द्वारा उसे फुक़ा में विष दिलवा दिया। उस शेर खाँ ने भटनीर में एक बहुत बड़ा गुम्बद बनवाया था। भटिंडा तथा भटनीर के किले उसी के बनवाये हुये हैं। शम्सी दासों में उसे बड़ा सम्मान प्राप्त था। चहलगानियों में, जिनमें से प्रत्येक ने खान की उपाधि धारण करली थी, उसे बड़ा ही मान प्राप्त था और वह उन्हीं में से एक था। नासिरुद्दीन के राज्य-काल से बाद सुनाम लाहौर, दीपालपुर तथा मुग़लों के मार्ग की सभी अक्तायें उसके पास थीं। कई हज़ार सुसगठित तथा योग्य सवार उसके अधीन थे। वह अनेक बार मुग़लों पर धावे करके विजय प्राप्त करके लौटा था। मुग़लों को उसने तहस-नहस और छिन्न-भिन्न कर दिया था। सुल्तान नासिरुद्दीन के नाम का ख़ुत्बा[2] उसने ग़ज़नी में पढ़वा[3] दिया था।

---

१ फ़ुक़ा भोजन के पश्चात् पीने का एक प्रकार का पदार्थ। इसका प्रबन्ध करने वाला फ़ुकाई कहलाता था।

२ वह भाषण जो जुमे तथा ईद और बकरीद के नमाज़ के अवसर पर पढ़ा जाता है। इसके भिन्न भिन्न भाग निश्चित हैं। ख़ुदा की प्रशंसा एवं मुहम्मद साहब तथा उनके सबंधियों और सहाबियों के प्रति शुभकामनाओं के पश्चात् उस समय के सुल्तान का नाम लिया जाता है और उसके लिये भगवान् से प्रार्थना की जाती है। बादशाह के अतिरिक्त किसी अन्य के नाम का ख़ुत्बा उसके राज्य में नहीं पढ़ा जा सकता।

३ इसका कोई प्रमाण नहीं।

उसकी वीरता, पौरुष, पराक्रम, वैभव तथा विशाल सेना के कारण मुगलो को इस बात का साहस न होता था कि वे हिन्दुस्तान की सीमा को पार कर सकें, परन्तु शेर खाँ इस भय से देहली न जाता था कि प्रतिष्ठित शम्सी दासो की किसी न किसी बहाने हत्या करा दी जाती थी। जब सुल्तान बल्बन बादशाह हुआ तो भी वह उसके पास न गया। यद्यपि शेर खाँ सुल्तान बल्बन का चचेरा भाई था किन्तु उसे भी सुल्तान ने उसके फुकाई से मिल कर फुका में विष दिलवा दिया। उसकी मृत्यु के पश्चात् सामाना और सुनाम की अक्ता तिमुर खाँ को प्रदान कर दी। वह भी शम्सी चहलगानी दास था। अन्य अक्ता दूसरे अमीरों को प्रदान की गई।

शेर खाँ ने जटवान (जाटो) खुल्खरो, भट्टियो, मीनियो, मदाहिरो और अन्य दूसरे समूहो का विनाश करके उन्हे चूहो के बिल में भगा दिया था, मुगलो से टक्कर ले रक्खी थी, किन्तु दूसरे मुक्तो तथा अमीरो को वह बात न प्राप्त हो सकी। मुगल उन स्थानो पर भी छापा मारने लगे जहाँ बल्बन के रक्षक नियुक्त होते थे, वहाँ की विलायत (प्रदेश) छिन्न भिन्न कर देते थे। शेर खा ने जो कुछ एक वरन में प्राप्त कर लिया था, वह किसी मुक्ते को प्राप्त न हो सका।

मुहम्मद की नियुक्ति

सुल्तान बल्बन ने देश के भिन्न भिन्न स्थानो पर अपना आधिपत्य जमा कर विद्रोहियो तथा विरोधियो को नष्ट-भ्रष्ट करके एव शेर खाँ के स्थान पर अपने विश्वासपात्र मलिको को नियुक्त करने के पश्चात् अपने ज्येष्ठ पुत्र को, जिसे लोग खाने शहीद कहते हैं, चत्र प्रदान किया। अपना वलीअहद (उत्तराधिकारी) बना कर सिन्ध और उससे सम्बन्धित एव उसके अधीन समस्त प्रदेश उसको प्रदान कर दिये। उसे बहुत से अमीरो, प्रतिष्ठित व्यक्तियो तथा विशाल सेना के साथ मुल्तान की ओर भेजा। उस समय उसे मुहम्मद सुल्तान कहते थे। सुल्तान बल्बन ने अपने इस पुत्र को "कआने मलिक" की पदवी प्रदान कर रखी थी। बल्बन के सिंहासनारोहण के आरम्भ के वर्षों में यह खान, जो सुल्तान का ज्येष्ठ पुत्र था, कोल और उसके निकटवर्ती स्थानो की अक्ता का स्वामी था। उसने इनकी व्यवस्था तथा प्रबन्ध करने का विशेष प्रयत्न किया था। राज्य करने की यथा-रूप योग्यता एव दक्षता उसके मुख से टपकती थी, शम्सी दासो ने जोकि बहुत बडे बडे खान थे अपने पुत्रो के नाम मुहम्मद रख छोडे थे। उनमे से प्रत्येक मुहम्मद, लोगो में अपनी योग्यता के लिये प्रसिद्ध हो गया था। उदाहरणतया मुहम्मद किशलू खाँ की बराबरी धनुर्विद्या में खुरासान तथा हिन्दुस्तान का कोई व्यक्ति न कर सकता था। मुहम्मद किशली खाँ, जो मलिक अलाउद्दीन के नाम से प्रसिद्ध था, दान पुण्य में हातिमताई से बढ गया था। मुहम्मद अरसलान खाँ जिसे ततर खाँ कहते थे, लखनौती का बादशाह हो गया। उसका साहस, त्याग, उसकी दानशीलता तथा वीरता बडी प्रसिद्ध हैं। सुल्तान बल्बन का पुत्र मुहम्मद सुल्तान दूसरे मुहम्मदो की अपेक्षा, जिनका वर्णन किया गया है, कही अधिक सभ्य तथा कुशल था। सुल्तान बल्बन को यह पुत्र अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय था।

सुल्तान मुहम्मद की राज सभा

(६७) मुहम्मद सुल्तान की राज सभा बुद्धिमानो, विश्वासपात्रो, योग्य पुरुषो, कलाकारो स भरी पडी थी। उसके नदीम शाहनामा, दीवाने सनाई[१], दीवाने

१ अबुल मज्द मजदूद बिन आदम सनाई गजनवी की मृत्यु ११३१ ई० से ११५० ई० के बीच में हुई। इनकी सर्व प्रसिद्ध रचना "हदीकतुल हकीकत व शरीयतुत्तरीकत" के नाम से प्रसिद्ध है। इसमे १० अध्याय हैं और यह पद्य म है। समस्त पद्यों मे तसव्वुफ सम्बन्धी बातों का उल्लेख है।

खाक़ानी[1] और शेख निज़ामी का खमसा[2] पढ़ा करते थे। उपर्युक्त व्यक्तियों के छन्दों पर विद्वान् उसके सम्मुख वाद-विवाद किया करते थे। अमीर खुसरो और अमीर हसन भी उसके सेवक थे। उन्होंने मुल्तान में उसकी पाँच वर्ष तक सेवा की थी और शाहज़ादे के नदीमों के साथ वेतन और इनाम प्राप्त किये थे। शाहज़ादे ने अपनी योग्यता के कारण कुछ ही गोष्ठियों में इन दोनों कवियों की योग्यता, कुशलता एवं कला तथा रचना शैली को पूर्णतया समझ लिया था। अपने सभी नदीमों से उन्हें अधिक सम्मानित किया करता था। इन दोनों सुदक्ष साहित्यकारों के गद्य तथा पद्य से बड़ा प्रसन्न होता था और दोनों को अपना विश्वासपात्र समझता था। दूसरे नदीमों की अपेक्षा इन पर विशेष कृपा-दृष्टि रखता था। इनको सबसे उत्तम इनाम तथा वस्त्र प्रदान करता था।

मुहम्मद द्वारा विद्वानों का आदर

इस इतिहास के सकलन-कर्त्ता ने अमीर खुसरो तथा अमीर हसन से खाने शहीद की प्रशंसा अनेक बार सुनी है। खाने शहीद जितना सभ्य और व्यवहार-कुशल शाहज़ादा था, उतना व्यवहार कुशल शाहज़ादा बहुत कम देखा गया है। यदि पूरी रात और समस्त दिन राज्य तथा शासन की गद्दी पर बैठना पड़ जाता, तो जानू न बदलता। हमने उसे बिना सम्मान और वैभव के कभी बैठे हुये नहीं देखा। शराब पीते समय अथवा अन्य समय उसकी ज़बान से कोई गन्दी, बुरी अथवा अश्लील बात न निकलती। इस सावधानी से मदिरापान करता कि बेहोश तथा बदमस्त न होना था।

वह हक़्क़ा[3] कह कर शपथ लेता था। शेख उस्मान नामक एक प्रतिष्ठित सत, जो बड़े बुज़ुर्ग थे, जब मुल्तान पहुँचे तो खाने शहीद ने उनकी बड़ी श्रद्धा तथा आदर भाव से सेवा की। उन्हें अत्यधिक फुतूह[4] प्रदान किये। उस बुज़ुर्ग को मुल्तान में रोक लेने का विशेष प्रयत्न किया। उनके लिए एक खानक़ाह[5] बनवाई और उन्हें ग्राम प्रदान किये। (फिर भी) शेख उस्मान रुक न सके।

(६८) एक दिन खान शहीद ने शेख उस्मान तथा हज़रत बहाउद्दीन ज़करिया[6] के

१ अफ़ज़लुद्दीन बदील इब्राहीम बिन अली नज्जार खाक़ानी शिरवानी की मृत्यु ११८६ से ११९९ ई० के बीच में हुई। इसकी कवितायें बड़ी प्रसिद्ध हैं।

२ जमालुद्दीन अबू मुहम्मद इलियास बिन यूसुफ़ बिन मुअैयद निज़ामुद्दीन गनवी (निज़ामी) की मृत्यु १२०२ से १२११ ई० के बीच में बताई जाती है। इन्होंने ५ प्रसिद्ध कविताओं की रचना की, जो खमसा कहलाती है। वे निम्नलिखित हैं।

१ मखज़नुल असरार—इसकी रचना ११७६ ई० से ११७८ ई० के बीच में हुई।
२ लैला व मजनूं—इसकी रचना ११८८ ई० में हुई।
३ खुसरो व शीरीं—इसकी रचना ११८० व ८१ के बीच में हुई।
४ हफ़्त पैकर—इसकी रचना ११९७ ई० में हुई।
५ सिकन्दर नामा—इसकी रचना १२०० ई० तथा १२०१ ई० के बीच में हुई।
बाद के बहुत से फ़ारसी कवियों ने इन्हीं की नक़्ल की है।

३ हे भगवान्

४ वह उपहार जो सूफ़ियों तथा आलिमों को भेंट किया जाता है।

५ वह स्थान जहाँ सूफ़ी निवास करते हैं। प्राय प्रत्येक बड़े सूफ़ी के पास छोटे छोटे बहुत से सूफ़ी भी शिक्षा आदि के लिए रहा करते हैं।

६ प्रसिद्ध सुहरवर्दी सूफ़ी जो मुल्तान में निवास करते थे। इनकी मृत्यु १२६६ ई० में हुई।

पुत्र शेख कदवा को अपनी सभा में बुलवा कर समा[1] कराया, जिसमें अर्बी गजलें गाई गईं। वे और दूसरे दरवेश मस्ती में नाचने लगे। जब तक समा होता रहा खान शहीद हाथ बाँधे खड़ा रहा, और फूट-फूट कर रोता था। यदि खान शहीद की सभा में उसके नदीम पिछले कवियों के छन्द जिनमें कोई उपदेश होता पढ़ते तो वह उस समय अन्य कार्य छोड़ कर उन बुजुर्गों के उपदेश बड़ी श्रद्धा से सुनने लगता और फूट-फूट कर रोता। जितने लोग उपस्थित होते, वे उसकी बुद्धिमत्ता तथा रोदन पर आश्चर्य करने लगते और चकित रह जाते।

शेख़ सादी को निमंत्रण

खान शहीद ने अपनी अत्यधिक बुद्धिमत्ता के कारण दो बार शेख सादी[2] को बुलाने के लिये दूत और यात्रा व्यय शीराज भेजा। उसकी तीव्र इच्छा थी कि शेख मुल्तान आ जायें। वह चाहता था कि शेख के लिए मुल्तान में खानकाह बनवाये और उस खानकाह के व्यय के लिये गाँव वक्फ कर दे। ख्वाजा सादी वृद्धावस्था के कारण न आ सकते थे। दोनों अवसरों पर अपने हाथ से लिखी हुई अपनी गजलों की पुस्तक खान को भेजी और अपने न आने के लिए अपने कलम से क्षमा चाही। उपर्युक्त वृत्तान्त का ध्येय यह है कि चूँकि खान शहीद स्वयं विद्वान् था अतः विद्वानों को हृदय से अपनाता था। जो कि स्वयं विद्वान् नहीं होता उसके निकट विद्या, कला तथा वंश और कुल जैसी बातें तुच्छ तथा व्यर्थ होती हैं। वे मोती और सीपी को एक ही दृष्टि से देखते हैं।

छन्द

उसके निकट बुद्धिमत्ता नहीं सोती पाई जाती
जो जंगल के शेर को दिखावे का शेर समझता है।

भाग्य से बरनी की शिकायत

मैंने अमीर खुसरो तथा अमीर हसन को शोक एवं दुख से उस समय को स्मरण करके यह कहते हुये अनेक बार सुना है कि "यदि हमारा और अन्य कलाकारों का सौभाग्य होता तो खान शहीद जीवित रहता, बल्बन के राज सिंहासन पर आरूढ़ होता, हमें तथा अन्य कलाकारों को सोने में डुबो देता, परन्तु (खेद है कि) बड़े-बड़े कलाकारों के पास भाग्य की कमी होती है।"

(६९) "समय न्याय की दृष्टि से कलाकारों की ओर नहीं देखता। विद्वान् तथा कलाकार सन्तुष्ट और धन धान्य सम्पन्न नहीं रह पाते। दुष्टों तथा क्षुद्रों का आदर सम्मान करने वाले आकाश में इतनी क्षमता कहाँ है कि इस प्रकार के धन धान्य सम्पन्न कला प्रेमी तथा कला के आश्रयदाता को राज सिंहासन पर विराजमान देख सके। आकाश का कार्य तथा उसका व्यवसाय निरर्थक है। जो अद्वितीय हो अथवा जिसके समान कोई न हो वह दीन तथा दरिद्र रहता है। अयोग्य, निकम्मे तथा अनभिज्ञ व्यक्ति भाग्यशाली होते हैं। दुनिया भर के अयोग्य लोगों, जिनके मुँह में पीने के लिये नाली का पानी और खाने के स्थान पर गोबर भी न डालना चाहिये, को आकाश बड़े आदर एवं सम्मान, प्रसन्नता तथा समृद्धि के साथ पालता है। सुअर और रीछ को जड़ाऊ और सुनहरे काम के वस्त्र पहिनवाता है। बुलबुल को अनादर तथा अपमान के पिंजड़े में बन्दी दुखी एवं अपमानित रखता है।

---

१ सूफियों का ईश्वर के भजन के लिये संगीत।

२ शेख मुस्लेहुद्दीन सादी शीराजी फारसी के बड़े प्रसिद्ध सूफी कवि थे। गुलिस्ताँ तथा बोस्ताँ इन्हीं की कृति हैं। इनकी मृत्यु १२९२ ई० में लगभग १२० वर्ष की अवस्था में हुई।

यदि मै वह सब सविस्तार लिखूं जोकि तुच्छ, पतित तथा अधम आकाश ने इस इतिहास के सकलनकर्त्ता के साथ किया है तो इस शिकायत की दो पुस्तकें तैयार हो जायेंगी। अतः आकाश की नाना प्रकार की वैमनस्यता के उल्लेख को छोड कर मैं सुल्तान बल्बन का इतिहास आरम्भ करता हूँ।

बल्बन की वसीअत.

जब बल्बन का राज्य सुव्यवस्थित हो गया तो मुल्तान शहीद प्रत्येक वर्ष मुल्तान से खजाना और साजो-सामान लेकर अपने पिता की सेवा में उपस्थित हुआ करता था। कुछ रोज सेवा करता और अन्त में बादशाह उसे बडे सम्मान से विदा करता। उस वर्ष, जिसके पश्चात् पिता तथा पुत्र की फिर भेंट न हुई, खाने शहीद सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ। पूर्व की भाँति सेवा की। एक दिन खाने शहीद को सुल्तान ने एकान्त में बुलवाया और कहा कि 'हे पुत्र, मै वृद्ध हो चला हूँ। तुझे ज्ञात है कि मुझे मलिकी, खानी और बादशाही करते दो करन व्यतीत हो चुके हैं। इस दीर्घकाल में मुझे अनेक अनुभव प्राप्त हुये हैं। मै चाहता हूँ कि आज वह वसीअतें जिन पर राज्य व्यवस्था निर्भर है, तुझे इस कारण कि तू मेरा उत्तराधिकारी है, करदूं। तेरे विषय में अपना वसीअतनामा[१] तुझ ही से लिखवाऊँ। जब तू राज सिंहासन पर विराजमान होगा, तब तू अपने पिता की इस वसीअत, जो मै इस समय तुझे कर रहा हूँ, का मूल्य और महत्व समझ सकेगा।"

(७०) यह कह कर आदेश दिया कि दवात कलम और कागज लाया जाय। उनको खाने शहीद के हाथ में दे दिया गया। सुल्तान ने कहा कि "हे पुत्र! जान ले और सावधान हो जा। मैं तेरे लिए दो प्रकार की वसीअतें करता हूँ। प्रथम प्रकार की वसीअतें ऐसी हैं जोकि मैं सुल्तान शम्सुद्दीन की राज सभा में उन बुजुर्गों से सुन चुका हू, जिनके समान मुझे फिर कोई न दिखाई पडा। मैं यह समझता हू कि इन वसीअतो पर आचरण करना मेरे और तेरे वश में नहीं है परन्तु पितृ प्रेम के कारण इन वसीअतो को तुझे लिखवा रहा हूँ, क्योकि इनके द्वारा बादशाहों को उच्च श्रेणी प्राप्त होती है। दूसरे प्रकार की वसीअतें ऐसी हैं जिनके द्वारा हमें और हमारे जैसे दासो को सम्मान प्राप्त होता है। यदि उन वसीअतो का पालन न करूँ तो थोडे ही समय में मेरे राज्य में विघ्न पड जायगा और उसका उत्तरदायित्व लोक तथा परलोक में मुझ पर होगा।"

पहले प्रकार की वह वसीअतें हैं जिन पर आचरण करके प्राचीन काल के सुल्तान वर्तमान काल के सुल्तानो की अपेक्षा मुहम्मद साहब के धर्म में पादशाहाने इस्लाम की उपाधि से प्रसिद्ध हुये हैं। सुल्तान बल्बन ने खाने शहीद को इस सम्बन्ध में जो वसीअतें सिखाई, वे इस प्रकार हैं—

बादशाही के लिये प्रथम प्रकार की वसीअतें

'हे पुत्र! मैंने तुझे अपना उत्तराधिकारी बनाया है। तुझे चाहिये कि जब तू बादशाह हो और देहली के राज सिंहासन पर विराजमान हो तो राज्य व्यवस्था तथा शासन प्रबन्ध को सरल एव साधारण कार्य न समझना, क्योंकि बादशाह का हृदय ईश्वर का प्रतिबिम्ब होता है। यह प्रतिबिम्ब बडा ही आश्चर्यजनक है। आदम के पुत्रों को जो कुछ भी दृष्टिगोचर होता है उसमें और इस प्रतिबिम्ब में कोई सम्बन्ध नही।[३] जिस समय तक भगवान् इस प्रतिबिम्ब में

१ वह बातें जो अपनी मृत्यु के समय कोई व्यक्ति दूसरों के लिए कहता है।
२ वसीअत का पत्र।
३ इस विषय पर बरनी ने फतावाये जहाँदारी में भी अपने विचार व्यक्त किये है।

और खुदा की एबादत में, सच्चाई और ईमानदारी से सलग्न रहे। यदि वे राज्य के समस्त कार्यों में भगवान् के भय, ईमानदारी और सच्चाई पर ध्यान देने की अपनी आदत बना लें, तो उसके देश के समस्त निवासी बुद्धिमान और बुजुर्ग हो जायेंगे, स्त्री-पुरुष, बूढे जवान सभी न्यायवादी, इन्साफ पसन्द, दानशील, सदाचारी, भगवान् की आज्ञा का पालन करने वाले, तथा एबादत करने वाले बन जायगे और ईमानदारी सच्चाई तथा अन्य सदाचार सम्बन्धी कार्य होने लगेंगे।'

(७४) 'यदि बादशाह उसके मित्र, सम्बन्धी, काजी हाकिम, वाली, कर्मचारी, पदाधिकारी अत्याचार, जुल्म, भगवान् से न डरना, बेईमानी, दुराचार, व्यभिचार, पाप, गुनाह, मक्कारी, चालाकी, बनावट और अपराध करना प्रारम्भ कर देते हैं और नीच तथा बुरे कार्य करना अपनी आदत बना लेते हैं, तो प्रजा भी उसी मार्ग पर चलने लगती है। फिर सभी भ्रष्ट एव अत्याचारी हो जाते हैं। हे मेरे प्रिय पुत्र! जमशेद, जोकि सभी बादशाहों में सवश्रेष्ठ था, यह बहुत कहा करता था, कि प्रजा बादशाह का अनुसरण, अनुकरण तथा उसकी आज्ञाओ का पालन करती है। वह बादशाह की रुचि जिस वस्तु में देखती अथवा पाती है, उसी वस्तु में रुचि लेना प्रारम्भ कर देती है, चाहे वे अच्छी हो या बुरी, आज्ञाओ का पालन करने से सम्बन्धित हो अथवा पाप से। बादशाह की रुचि की विशेषतायें प्रजा में भी पैदा हो जाती हैं।'

'बादशाही जैसी ईश्वर की देन के प्रति वही बादशाह अपने कर्तव्यो का पालन करता है, जो स्वय और जिसके सम्बन्धी, मित्र, सहायक, काजी, पदाधिकारी, वाली, कर्मचारी, अपनी आत्मा को उज्वल बनाना, बाह्य रूप को सुन्दर बनाने से अधिक श्रेष्ठ समझते हैं, यह बात भली भांति जानते हैं कि लोक तथा परलोक में मुक्ति और उन्नति अपनी आत्मा को उज्वल बनाने पर निर्भर है। बाह्य रूप को उज्वल बनाने का प्रयत्न सभी कुलीन, कमअसल मुसलमान, हिन्दू, मुशरिक, मोवाहिद्द[1], शरीफ, कमीने, आलिम, जाहिल, बुद्धिमान, मूर्ख, गुणी, अवगुणी, स्वतत्र और दास करते हैं। यदि बादशाह, उसके मित्र, सम्बन्धी, सहायक, काजी और हाकिम आत्मा को उज्वल बनाने का प्रयत्न किया करें तो वे बादशाही जैसी ईश्वर की अनुपम देन के प्रति अपने कर्तव्यो का पालन कर लगे। हे प्रिय पुत्र! बादशाही जैसी देन के प्रति अपने कर्तव्यो का पालन उमर इब्ने खत्ताब और उमर इब्ने अब्दुल अजीज[2] कर सके थे। हम दासो में इतना सामर्थ्य कहाँ कि हम इस देन के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन कर सकें।'

बादशाही के लिये दूसरी प्रकार की वसीअतें

(७५) 'राज्य व्यवस्था के सम्बन्ध मे दूसरे प्रकार की वसीअतें हम दासों के सम्मान से सम्बन्धित है, क्योकि हम लोग मुसलमानो के धर्मनिष्ठ बादशाहो के गुलाम हैं और उन्ही लोगो ने बादशाही के प्रति उचित प्रकार से अपने कर्तव्यो का पालन किया था। उन लोगो ने इस्लाम के नियमो का सम्मान उन्नति के शिखर पर पहुँचा दिया था। हम गुलामो की प्रतिष्ठा के लिये जो बातें आवश्यक है वे तुम्हें इस प्रकार लिखवा रहा हूँ। हे पुत्र! तुझे चाहिये कि बाह्य अथवा आतरिक, एकान्त में अथवा सभा में, बादशाही के वैभव अथवा ऐश्वर्य की रक्षा करे, तथा बादशाही के सम्मान का ध्यान रखे, क्योकि वह खुदा की नायबी है। बादशाही के ऐश्वर्य पर स्त्री, बच्चो, मित्रो, दासो और दासियो से व्यवहार करते हुये ध्यान

१ एक भगवान् को मानने वाले।

२ उमर इब्ने अब्दुल अजीज—उमय्या वश का ९ वाँ खलीफा जो बड़ा सदाचारी था। उसकी मृत्यु ७२० ई० में हुई। उसने दो वर्ष से कुछ ही अधिक महीनों तक राज्य किया।

रखें। तू ने यह कहावत सुनी होगी कि जो अपने घर में तुच्छ हो जाता है वह बाहर उससे अधिक तुच्छ हो जाता है। तुझे चाहिये कि तू अपना उठना बैठना, बातचीत, मिलना-जुलना केवल प्रतिष्ठित, कुलीन, विश्वासपात्र, असील, नेक, राज-भक्त, बुद्धिमान, कलाकार, अपना अधिकार पहिचानने वाले, भगवान् की देन पर कृतज्ञता प्रकट करने वाले एवं साहसी लोगों के साथ रख। अपनी दया, कृपा, मेहरबानी और उदारता उन्ही लोगों तक सीमित रख, जिससे तू अपनी कृपा और दान के कारण लोक और परलोक में सम्मान प्राप्त कर सके। इनको आश्रय देने से ससार में तेरी प्रतिष्ठा बढ़ जायगी। नेको और कुलीन लोगो पर दया तथा कृपा करने से लोक अथवा परलोक कहीं भी तुझे किसी बात का पश्चाताप नही हो सकता।[1] यह कदापि न हो, हरगिज़, हरगिज़ न हो कि कमीने, अधम, पतित उनकी सन्तान, गुणहीन, मूर्ख, अशिष्ट, तुच्छ, अत्याचारी, कठोर, भ्रष्ट, अपहरणकर्त्ता, ईश्वर की देन पर कृतज्ञता न प्रकट करने वाले, खुदा से न डरने वाले तेरे मित्र बन जायें।'

(७६) 'उनका आदर तथा उनकी इच्छाओं की पूर्ति अपने दरबार मे मत होने दे। बुरे, बदअसल लोगों पर दया करके कमीनो तथा भगवान् से डरने वालो को आश्रय देकर इस लोक में कुप्रसिद्ध और परलोक में दण्ड और सज़ा का पात्र मत बन। कमीनी हरकत करने वालो और नीच बातो में ग्रस्त लोगों को सुख और आराम पहुँचा कर अपने गुणों को नष्ट मत कर[2]। हे प्रिय पुत्र! विश्वास रख, विश्वास रख, विश्वास रख, कि किसी अधम, कमीने, तुच्छ, पतित और ईश्वर का भय न रखने वाले के द्वारा उसके स्वामी को कोई लाभ नहीं पहुंच सकता। चरित्रहीन और उनकी सन्तान को आश्रय देकर अथवा उन पर कृपा करके बदनामी एवं पछतावे के अतिरिक्त कुछ प्राप्त नही होता। यदि किसी पतित तथा तुच्छ ने तेरी कभी कोई सेवा की हो, तो उसकी सेवा के अनुसार उसके साथ नेकी और मुरव्वत करदे, किन्तु उनको अपना मित्र और सहायक न बना। यदि तू किसी कमीने, अधम, तुच्छ और पतित को उच्च पद प्रदान करेगा अथवा किसी कमीने, तुच्छ अत्याचारी तथा पतित को प्रतिष्ठा प्रदान करेगा या उनसे कोई काम लेगा तो खुदा तुझ से अत्यन्त रुष्ट होगा। अपनी बादशाही का सम्मान तथा राज्य व्यवस्था का वैभव, कमीनो, बदअसलो, अयोग्य और उनकी सन्तान को उन्नति देकर नष्ट-भ्रष्ट न कर। अपने देश तथा राज्य की उन्नति उपर्युक्त समूह से घृणा करने में समझ। जब तू इस समूह को अपने राज भवन के निकट फटकने भी न देगा तो परलोक में मुक्ति और इस लोक में यश की आशा कर सकता है[3]।

'इसके अतिरिक्त हे पुत्र! तू यह जान ले कि राज्य व्यवस्था तथा साहस जुड़वाँ बच्चे की भाँति हैं, अपितु बादशाही केवल साहस का दूसरा नाम है। बे-हिम्मत आदमी बादशाह नही हो सकता। हिम्मत बादशाही के लिये परमावश्यक है। बादशाह की हिम्मत को उच्च स्थान प्राप्त होना चाहिये[4]।'

(७७) 'यदि बादशाह वही सब प्रदान करता है जो अन्य प्रजा करती है, उसी प्रकार के उच्च कार्य करता है जिस प्रकार अन्य मनुष्य करते हैं, तो उसमें और उसकी प्रजा में विशेष अन्तर नही रह पाता, वह उलिलअम्री की प्रतिष्ठा की रक्षा नही कर पाता। वे बादशाह जो कि उलिलअम्री का मान तथा गौरव नहीं समझते, उलिलअम्री के योग्य

---

१ फतावाये जहाँदारी पृ० ५६ ब, २०८ अ।

२ फतावाये जहाँदारी पृ० ५९ ब, २०८ अ।

३ फतावाये जहाँदारी पृ० ५६ ब, ६२ अ, २११ अ, २१८ ब।

४ फतावाये जहाँदारी पृ० ५० ग।

नही होते । बादशाही के विशेष गुण अर्थात् न्याय, दान, वीरता, उच्च विचार विषय में बादशाह को अपना जीवन प्रजा से पृथक् रखना चाहिये । उसके कार्य इ के होने चाहिये और उसकी खैरात, कृपा एव उच्च विचारो से ऐमा प्रकट होना चाहि लोग अनुभव करें कि बे-हिम्मत व्यक्ति बादशाह कदापि नही हो सकता । हे पुत्र ! कि बादशाही कुछ वस्तुओ पर निर्भर है । यदि उन वस्तुओ में विघ्न पड जाय तो द में विघ्न पड जायगा और वह स्थापित न रह सकेगी । वे चीजें यह हैं —न्याय और साज व सामान, खजाना दफीना,[1] प्रजा का विश्वास तथा उसका बादशाह की ओर चुने हुये अगणित मित्र तथा सहायक[2] । यदि बादशाही में न्याय और नेकी न हो राज्य में जुल्म और अत्याचार होने लगेगा । बादशाह क अत्याचार और जुल्म के बादशाही दृढ नही रह सकती । बादशाही के दो पक्ष हैं—खजाना और साज व सा इनके बिना बादशाह बादशाह नही रहता । यदि प्रजा का झुकाव घृणा में बदल जाए प्रजा को बादशाह पर विश्वास न रहे, तो उसका राज्य छिन्न भिन्न तथा ग्रस्त-व्य जाता है । प्रजा के ग्रस्त-व्यस्त हो जाने से बादशाही में विघ्न पड जाता है । बिना पर्याप्त तथा सम्बन्धियो के बादशाही करना सभव नही । यदि सहायक तथा मित्र चुने हुये और उत्त हो तो कमीने, तुच्छ, दुराचारी और बुरे कार्य करने वालो द्वारा बादशाहों का लोक परलोक दोनों में मुँह काला हो जाता है और उन्हे बडी कठिनाई का सामना करना पडता

'हे पुत्र ! इसे भली भांति समझ ले कि पहले मनुष्य के आचरण और गुणो सावधानी से निरीक्षण करके उसके वश तथा कुल का पता लगा कर अपमानित करना अ सम्मान प्रदान करना चाहिये ।'

(७८) 'यदि किसी को सम्मान प्रदान करदे तो छोटी-छोटी बातो अथवा त्रुटियो अनादरित मत कर । जिस किसी को दड दे तो उसके लिए शरण का स्थान सुरक्षित रर निष्कपट हितचिन्तको को व्यर्थ में दुख तथा पीडा पहुँचा कर अपना शत्रु और बुरा चा वाला न बना ले । कुलीन तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियो को अपमानित करने के लिए छिछोरे प न कर । यदि कुलीन तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति अपमानित हो जायेंगे तो इससे जो दुःख उ पहुँचेगा उसकी पूर्ति किसी प्रकार नही हो सकेगी । यदि कुलीन तथा प्रतिष्ठित लोगो क अनादर करेगा तो तेरे राज्य में खराबी पैदा हो जायगी । दूसरो पर आलोचना करने वा तथा अन्य लोगो के कार्य में त्रुटियाँ ढूँढने वालो को कोई उच्च पद न प्रदान कर, उ अपने निकट न फटकने दे । चुगली खाने वालो और दूसरो की त्रुटि निकालने वालो के विश्वास पात्र होने से राज-भक्त और आज्ञाकारी लोग भयभीत हो जाते हैं । बादशाह के रक्षक हो पर विश्वास, जोकि राज्य व्यवस्था के सभी विषयो से बढ कर है, उनके हृदय से उठ जाता है जिस कार्य का सकल्प करे, उसकी पूर्ति के विषय में खूब सोच समझ ले, क्योकि उन काय का बादशाह को सकल्प ही न करना चाहिये जिनकी पूर्ति सम्भव ही न हो, अन्यथा उनक सम्मान लोगो के हृदय पर भली भांति न बैठ सकेगा । बादशाही सम्मान पर ही निर्भर[3] है तुच्छ एव पतित हो जाने से उसे सम्मान नही प्राप्त होता । प्रत्येक वह कार्य या बात जिस निरादर प्राप्त होने की सम्भावना हो, उसे कदापि और कभी भी न करना चाहिये । उस पूर्णतया बचने और दूर रहने का प्रयत्न करता रह ताकि लश्कर वाले तेरी बराबरी कर

१ जमीन में गड़ा धन ।

२ फतावा ये जहाँदारी पृ० १६१ ब, १६७ अ ।

३ फतावाये जहाँदारी पृ० ३२ ब, ३५ ब, ३७ अ ।

की न सोच लें। प्रत्येक कमीने तथा पतित के मुकाबले के लिये उस पर चढ़ाई करने की न ठान ले। ऐसे कार्य, जिन्हें दूसरे भी कर सकते हों, के लिए स्वय न जा[1]। जहाँ तक सम्भव हो अपने आपको जिद्दी प्रसिद्ध न होने दे। अच्छी राय देने वालों से परामर्श किये बिना कोई कार्य प्रारम्भ न कर। जब तक किसी को निष्ठावान, योग्य, अनुभवी, ज्ञान सम्पन्न, बुद्धिमान एव दूरदर्शी न पाले, उस समय तक उसे अपने राज्य तथा देश का परामर्श-दाता न बना; उसे अपने राज्य की गोपनीय बातो को भी मत बता। अपने पुत्रो, भाइयों, सम्बन्धियो, मित्रो मुक्तो, वालियों, कर्मचारियों, पदाधिकारियो, लावलश्कर तथा प्रजा के विषय में असावधान और बे-खबर मत रह।'

(७९) 'राज्य व्यवस्था का सब से उत्कृष्ट कार्य सावधान रहना तथा सर्वसाधारण की अच्छी और बुरी बातो की जानकारी रखना है। प्रत्येक कार्य से जानकारी होने के कारण बादशाही को वह सम्मान प्राप्त होता है जो असावधानी से नही हो पाता।'

'तू अपने राज्य के आय व्यय के विषय में जानकारी रख[2]। व्यय, आय का आधा होना चाहिये। शेष धन खजाने में सुरक्षित रख, जिससे कि आवश्यकता पड़ने पर काम आये और आवश्यक मदों पर व्यय किया जा सके। अपव्ययता न कर, क्योंकि "ईश्वर अपव्ययी को अपना मित्र नही रखता।" धन एकत्र करने के लिये विशेष प्रयत्न कर। अत्यधिक धन तथा *विलायत प्राप्त होने के कारण शरई कार्यों, सेना, प्रजा और व्यापार में उन्नति होती रहती* है। शान्ति को परमावश्यक समझ। शरई आज्ञाओं तथा कार्यों को प्रचलित रहने दे। उन कार्यों को रोकने का प्रयत्न करता रह जिनकी भगवान् की ओर से मनाही की गई है। कामाग्नि को दबाता रह। समस्त प्रजा, कर्मचारियो, सैनिकों, नेक और पवित्र जीवन व्यतीत करने वालो और एहसान करने वालो को अपना मित्र समझ और अपने आपको उनमें से एक समझ। प्रजा से व्यवहार के विषय में मध्य का मार्ग ग्रहण कर। उन पर सर्वदा तेजी, कटुता, गुस्सा तथा क्रोध न करते रहना चाहिये, क्योंकि इससे सर्व साधारण तुझ से घृणा करने लगेंगे उनसे सदैव नर्मी, नेकी भी न करता रह। सुगमता तथा सरलता से कार्य लेने से आज्ञाकारी विरोधी तथा विरोधी विद्रोही बन जाते हैं।[3] दुराचार, व्यभिचार तथा धोखेबाजी करना लोगों के पेशे बन जाते हैं। व्यभिचार तथा दुराचार की अधिकता से लोग जिन्दीक और मुलहिद हो जाते हैं। मुझसे पूर्व बुजुर्ग लोग कह गये हैं कि अमीर को इतना मीठा भी न होना चाहिये कि चीटियों को चाटने की लालसा पैदा होती रहे क्योंकि कहा गया है कि बहुत मीठे हो जाने से सर्व साधारण सिर पर चढ़ आते हैं। इतना कड़ुवा भी न हो कि लोग तेरे पास से भागने लगें। सर्वदा सम्मान तथा धैर्य से जीवन व्यतीत कर। राज्य व्यवस्था में हल्कापन और छिछोरी बातें न कर।

(८०) 'हे पुत्र! तुझे चाहिये कि अवज्ञाकारी तथा निर्भीक लोगो से अपनी रक्षा करता रह, क्योंकि वे लोभ एव अपनी दुष्टता तथा कमीनेपन की अधिकता से अपने आपको नदी तथा जलती हुई आग में डाल देते हैं। इसको भली भाँति जान ले और *समझ ले और उस पर* आचरण कर। अपने राज-भवन तथा दरबार को दरबानो, रक्षा करने वालों तथा निष्कपट द्वारपालो से परिपूर्ण रख। बादशाही को बहुत बड़ा समझ। उसे बड़े सम्मान तथा पूर्ण अधिकार द्वारा इस लोक में नाम तथा परलोक में गौरव प्राप्त करने का प्रयत्न कर। अपयश और क़्यामत के दंड से बच।'

१ फ़तावाये जहाँदारी पृ० १०६ ब।
२ फ़तावाये जहाँदारी पृ० ८० अ, ८३ अ।
३ फ़तावाये जहाँदारी पृ० १८९ ब।

'अपने छोटे भाई पर कृपा दृष्टि रख, उसके विषय में किसी की चुगली न सुन, उसे अपना हाथ पैर समझ। मैंने जो राज्य उसे प्रदान किया है, वह उसके पास सुरक्षित रहने देना। तू जानता है कि तुम दोनो के अतिरिक्त मेरे कोई अन्य पुत्र नही है। तुझे चाहिये कि तू अपने भाई के साथ इस प्रकार जीवन व्यतीत करे कि मेरा वश नष्ट न हो।'

सुल्तान बल्बन ने अपने ज्येष्ठ पुत्र पर उपर्युक्त वसीअतो पर आचरण करने के विषय में बहुत जोर दिया। तत्पश्चात् बडे सम्मान, वैभव एव साज व सामान के साथ मुल्तान की ओर प्रस्थान करने की आज्ञा दी।

बुगरा खाँ को वसीअत

जिस वर्ष सुल्तान बल्बन ने अपने ज्येष्ठ पुत्र को राज्य व्यवस्था के विषय में अनेक वसीअते की और बडे सम्मान से मुल्तान की ओर भेजा, उसी वर्ष उसने अपने कनिष्ठ पुत्र बुगरा खाँ को, जिसकी उपाधि नासिरुद्दीन थी, सामाने तथा सुनाम एव उनसे मिले हुय, उनके अधीन तथा निकटवर्ती स्थानो की अक्ता प्रदान करके सामाने भेजा। बुगरा खाँ भी बडा योग्य सुपुत्र था, परन्तु गुणो तथा नैतिकता मे उसकी तथा उसके बडे भाई की कोई तुलना न हो सकती थी। सुल्तान ने उससे कहा कि "सामाने पहुँच कर अपनी पुरानी सेना एव कर्मचारियो का वेतन बढा दे। जितनी पुरानी सेना तथा कर्मचारी हैं, उनसे दुगुनी नई सेना तथा कर्मचारी नियुक्त करे। अपने राज्य के हितैषियो को उचित अमीरी और सरदारी प्रदान कर, उन्हें अक्तायें दे।"

(८१) "सामाने की सेना को अनुभवी, तजुर्बेकार तथा समय के शीतोष्ण का आस्वादन किये हुये लोगो के अधीन बनाकर सुव्यवस्थित और तैयार रख। मुगलो का मुकाबला करने के लिये तैयार रह।" चूँकि बुगरा खाँ में ज्येष्ठ पुत्र के समान बुद्धि न थी, अत सुल्तान ने उसे आदेश दिया कि "किसी कार्य में शीघ्रता न कर। अपने कर्मचारियों तथा विलायत के प्रबन्ध के लिये अपने विश्वास पात्रो से परामर्श किया कर। जिस किसी कार्य के करने में तुझे कठिनाई हो उसके विषय में मुझ से परामर्श लेता रह। उस कार्य के प्रबन्ध के लिये जैसी मेरी आज्ञा हो, उसी प्रकार उसकी व्यवस्था करता रह। उससे अधिक या कम न कर।"

सुल्तान ने बुगरा खाँ को मदिरापान से मना किया और उससे कहा कि, "सामाने की अक्ता बहुत बडी अक्ता है। वहाँ बहुत ही योग्य सैनिक तथा कर्मचारी विद्यमान हैं। यदि तू अपने स्वभाव के अनुसार अधिक मदिरापान करने लगेगा, तथा व्यर्थ के कार्यो में सलग्न हो जायगा तो अपनी अक्ता एव साज व सामान का प्रबध न कर सकेगा। तू इस बात को भली भाँति विश्वास से समझ ले, कि यदि ऐसा हुआ तो मैं तुझे पदच्युत कर दूँगा। तुझे कोई अक्ता न दूँगा और बेकार लोगो में सम्मिलित कर दूँगा।" सुल्तान ने उस पुत्र के ऊपर बरीद नियुक्त किये। उसके प्रत्येक कार्य की पूछताछ विशेष रूप से करता था। इस प्रकार वह भी सुधर गया और उसने अनुचित बातो को त्याग दिया।

मुगलो की पराजय

उस समय अधिकाश मुग़ल सवार ब्याह (व्यास) नदी को पार कर लिया करते थे। सुल्तान बल्बन खाने शहीद को मुल्तान से, बुग़रा खाँ को सामाने से तथा मलिक बारबक बेक्तर्स को देहली से नियुक्त करता था। वे व्यास नदी तक पहुँच कर मुगलो के आक्रमण का अन्त करते थे। (उन्होंने) अनेक बार उन पर विजय प्राप्त की। मुगलो को फिर उस नदी पर

आक्रमण करने का साहस न हो सका। इन तीनों सेनाओं का सामना ७० तथा ८० हज़ार सवार भी न कर सकते थे। इस प्रकार १५, १६ वर्ष में बल्बनी राज्य के कस्बे तथा भिन्न भिन्न भाग दृढ और सुव्यवस्थित हो गये, देश के विद्रोही एवं विरोधी क्षीण हो गये, अक्ताओं का प्रबन्ध और शाहजादों की सेना एवं साज सामान का प्रबन्ध भली भाँति होने लगा, इस के नगरों पर उसके प्रतिष्ठित सम्बन्धी, विश्वासपात्र मित्र और सहायक नियुक्त हो गये।

तुगरिल का विद्रोह[1]

इसके पश्चात् तुगरिल, काफिरे नेमत (कृतघ्न) के विद्रोह की सूचना लखनौती से देहली पहुँची। यह तुगरिल तुर्क बच्चा था। अपनी चतुराई, वीरता और योग्यता, साहस, दान तथा विशेषताओं के लिये बडा प्रसिद्ध हो गया था।

(८२) सुल्तान बल्बन ने उसे लखनौती तथा बगाले की इक्लीम का वाली बना दिया था। बुद्धिमान तथा अनुभवी लोग लखनौती को बलगाकपुर कहते थे, क्योंकि पिछले समय से जब से कि सुल्तान मुइज्जुद्दीन मुहम्मद साम ने देहली विजय की, जिस वाली को भी देहली के बादशाह ने लखनौती प्रदान की, लखनौती के दूर तथा एक विशाल राज्य होने के कारण और देहली से वहाँ पहुचना कठिन होने की वजह से अधिकांश ऐसा होता था कि वह वाली विद्रोह और बगावत कर देता था। यदि कोई वाली विद्रोह न करता तो दूसरे लोग बगावत

१ तारीखे मुबारक शाही में तुगरिल के विद्रोह तथा बल्बन के प्रारम्भिक प्रबन्ध का हाल इस प्रकार लिखा है—

इसी बीच में सुल्तान रोग ग्रस्त रहा और फलस्वरूप प्रजा ने जब बहुत दिनों तक उसके दर्शन नहीं किये तो उनमें सन्देह उत्पन्न होने लगा। यह समाचार सभी स्थानों में फैल गया। जिस समय यह समाचार लखनौती पहुँचा उस समय तुगरिल और अमीन खाँ में शत्रुभाव उत्पन्न हो गये थे। दोनों ही एक दूसरे के विरुद्ध युद्ध में सलग्न थे। तुगरिल को विजय प्राप्त हुई और अमीन खाँ उसके हाथों बन्दी हुआ। तुगरिल ने बादशाही चिह्न धारण करके मुइज्जुद्दीन की उपाधि धारण की।

कुछ समय पश्चात् राज्य की ओर से चार आदेश अमीन खाँ, तुगरिल, जमालुद्दीन, कुन्दुजी और एतगीन मूसा को इस आशय से भेजे गये कि सुल्तान के शत्रुओं को कुछ दिनों तक कष्ट पहुँचा है, किन्तु परमात्मा ने शीघ्र ही उसे स्वस्थ कर दिया है। इसलिए खुशी के ढोल बजायें जायँ, बंदियों को मुक्त कर दिया जाय और आलिमों को खुश कर दिया जाय। यदि किसी को दीवाने वक्फ द्वारा कर्ज अदा न करने के कारण बन्दी बनाया गया हो, तो राज कोष से नक्द धन देकर उसे मुक्त कर दिया जावे। जब यह राजाज्ञा प्रसारित हुई और तुगरिल तक पहुँची तो वह अपनी सेना लेकर बिहार की ओर गया। उसने अल्तगीन (एतगीन) जमालुद्दीन, कुन्दुजी, तथा अमीन खाँ को नारकीलाह में बन्दी बना लिया।

तुरमती का तुगरिल के विरुद्ध भेजा जाना व तुरमती का पराजय

तुगरिल के विद्रोह का समाचार जब सुल्तान तक पहुँचा तो उसने मलिक तुरमती को तुगरिल के विद्रोह का दमन करने के लिये भेजा। तुगरिल तुरमती से प्रत्यागमन करते हुये घात लगाये हुए था। तुरमती ने बहुत असावधानी से तुगरिल का पीछा किया। अकस्मात् ही तुगरिल ने अपनी सेना को एकत्र करके शत्रु की मध्यस्थ सेना पर आक्रमण करते हुए उसे पहले ही आक्रमण में छिन्न भिन्न कर दिया। तुरमती अवध की ओर भाग गया।

शिहाबुद्दीन का तुगरिल के विरुद्ध भेजा जाना

तत्पश्चात् सुल्तान ने अवध के अमीर मलिक शिहाबुद्दीन को सेना का नेतृत्व सौंपा और कजलू तिमुर खाँ को शिहाबुद्दीन के आधीन नियुक्त करते हुए उसे आदेश दिया कि वह सरयू नदी के तट पर मलिक तुरमती को पाँनी दे और तुगरिल पर आक्रमण करे। सुल्तान का आदेश कार्यान्वित किया गया। जब वे लखनौती के निकट पहुँचे, तुगरिल बाहर आया और उन का मुकाबिला किया और उस युद्ध में उनको अपने विरोधियों को पराजित किया। (पृ० ४१ ४२)

करके उसकी हत्या कर देते थे और उसके राज्य पर अपना अधिकार स्थापित कर लेते थे। वर्षों से वहाँ के निवासी विद्रोह करने के आदी बन चुके थे। जो वाली भी वहाँ नियुक्त होता, वहाँ के विद्रोही और बलगाकी (षड्यन्त्रकारी) उसे अपने स्वामी का विरोधी बना देते थे।

तुग़रिल के विद्रोह के कारण

जब तुग़रिल लखनौती पहुँचा और उस प्रदेश में कुछ स्थानों पर विजय प्राप्त करली तब जाजनगर[1] पर भी अपना अधिकार जमा लिया, अत्यधिक धन सम्पत्ति एव हाथी एकत्र कर लिये। वहाँ के विद्रोही और बलगाकी (षड्यन्त्रकारी) उस काफिरे नेमत (कृतघ्न) के पास एकत्र होने लगे। उसे समझाया कि 'सुल्तान बल्बन वृद्ध हो चुका है। उसके दोनो पुत्र मुग़लो से युद्ध में तल्लीन हैं। कोई साल ऐसा व्यतीत नही होता जब कि मुग़ल हिन्दुस्तान पर आक्रमण न करते हो और उसके राज्य के कस्बो पर धावा न मारते हो। मुग़लो के भगाने का कार्य देहली के बादशाहो के लिए बडा महत्वपूर्ण कार्य बन चुका है। सुल्तान और उसके पुत्र मुग़लो को भगाने का कार्य त्याग कर लखनौती तक नही पहुँच सकते। हिन्दुस्तान के अमीरो में न तो इतनी योग्यता है और न इतनी सेना और साज सामान, हाथी धन सम्पत्ति आदि हैं कि लखनौती पर आक्रमण कर सकें और आपका सामना कर सकें। चत्र धारण कीजिये और बादशाह बन जाइये। सुल्तान बल्बन की ओर से मुँह फेर लीजिये।' तुग़रिल उन अशुभ चिन्तको की बातो में आ गया। वह उस समय युवक, निर्भीक तथा अपनी मनमानी करने पर आरूढ था।

(८३) वर्षों से उसके सिर में ऐश्वर्य का अभिमान अण्डे दे रहा था[2]। उसने बल्बन के क्रोध और बदला लेने की भावना पर ध्यान न दिया। जाजनगर में जो कुछ भी हाथी, धन सम्पत्ति आदि प्राप्त की थी उसे अपने पास रख लिया और देहली न भेजी। उसके अभिमान पर चत्र धारण कर लिया। अपनी उपाधि सुल्तान मुग़ीसुद्दीन निश्चित की। अपने खुत्बे और सिक्के पर अभिमानी हो गया। चूँकि वह बडा दानी था और इससे पूर्व बहुत दान कर चुका था, अत उस नगर के सर्व साधारण, जो वहाँ निवास करते थे, उसके मित्र बन गये। धन सम्पत्ति ने उन लोगो की दूर-दर्शिता की आँखें बन्द कर दी, लोभ ने आगा पीछा सोचने की शक्ति को कोने में डलवा दिया। बल्बन का क्रोध, जिसका अनुमान लश्कर वालो और शहरो के निवासियो को था, उनके हृदय से निकल गया। उनमें से प्रत्येक, हृदय से उसका (तुग़रिल का) मित्र हो गया। सुल्तान बल्बन को विद्रोह तथा विरोध इस कारण और भी बुरा मालूम हुआ, कि उसी ने उसको इतना सम्मान प्रदान किया था। क्रोध और चिन्ता के कारण खाना पीना, उठना बैठना, अप्रिय हो गया। तुग़रिल के खुत्बे, सिक्के, दान आदि के समाचार देहली में निरतर पहुँचते रहते थे। सुल्तान को और भी क्रोध तथा गुस्सा चढता। तुग़रिल के विद्रोह के कारण सुल्तान का क्षोभ इस सीमा तक पहुच गया था कि किसी का उसके सम्मुख कुछ निवेदन करने का साहस न हो सकता था। सुल्तान रात दिन तुग़रिल के समाचार सुन सुन कर घुलने लगा।

अमीन खाँ की पराजय

सुल्तान ने पहली बार एतगीन मूयेदराज़[3] को, जिसे अमीन खाँ भी कहते थे, और

१ टिपरा नोआखाली के समीप
२ पैदा हो चुका था।
३ लम्बे बालों वाला। पुस्तक में अफ्तगीन है।

जो सुल्तान बल्बन का दास तथा वर्षों से अवध की अक्ता का स्वामी था और जिसने लश्कर के सरदारों में प्रतिष्ठा प्राप्त करली थी, सेनापति बनाया। तिमुर खाँ शम्सी तथा कुतलुग खाँ शम्सी के पुत्र मलिक ताजुद्दीन को हिन्दुस्तान के अमीरों के साथ, लखनौती के लिये नियुक्त किया।

अमीन खाँ हिन्दुस्तानी सेना के साथ सरयू पार करके लखनौती की ओर युद्ध करने के लिये अग्रसर हुआ। दूसरी ओर से तुग़रिल एक बहुत बड़ा लश्कर, दृढ़ हाथी तथा प्रसिद्ध सवारों को लेकर बाहर निकला और देहली के लश्कर को भगाने के लिये चल खड़ा हुआ। दोनो सेनायें एक दूसरे के सामने उतर पड़ी। काफ़िरे नेमत (कृतघ्न) तुग़रिल के पास बहुत बड़ी सेना एकत्र हो गई थी।

(८४) उसकी दान शीलता के कारण उस प्रदेश के निवासी तथा देहली के पुराने सिपाही हृदय से उसके मित्र हो गये थे। वे लोग उसके राज्य से प्रभावित थे। ज्यों ही दोनो लश्कर एक दूसरे के आमने सामने हुये, तुग़रिल ने अमीन खाँ को पराजित कर दिया। देहली की सेना हार गई। हिन्दुस्तानी एक ओर को भाग खड़े हुये और हार कर भागने में हिन्दुओं के हाथो से बुरी तरह नष्ट हो गये। तुग़रिल तथा उसकी सेना को विजय प्राप्त हुई। बहुत से अभागे, लालची, सुल्तान बल्बन के क्रोध तथा दण्ड को भली भांति जानते हुये भी अमीन के लश्कर से फिर कर तुग़रिल से मिल गये। तुग़रिल से खूब धन सम्पत्ति प्राप्त की।

अमीन खाँ की पराजय के समाचार से सुल्तान का क्रोध और उसकी लज्जा सौ गुना बढ़ गई। उस लज्जा तथा क्रोध में भगवान् का भय भी उसके हृदय से निकल गया। व्यर्थ में बड़े आवेश का प्रदर्शन करने लगा। उसने आदेश दिया कि अवध के मुक्ता अमीन खाँ को अवध के द्वार पर फाँसी दे दी जाय। ऐसे कठोर दण्ड से उस काल के बुद्धिमान इस परिणाम पर पहुच गये कि बल्बनी राज्य का अन्त निकट है और उसका राज्य छिन्न-भिन्न होने वाला है।

दूसरे सेनापति की पराजय

सुल्तान बल्बन ने दूसरे वर्ष दूसरा सेनापति नियुक्त किया और उसे हिन्दुस्तान के लश्कर के साथ लखनौती की ओर भेजना निश्चय किया। अमीन खाँ के लश्कर की पराजय ने तुग़रिल को अन्धा बना दिया था। उसकी शक्ति तथा ऐश्वय और भी बढ़ गया था। इस समय उसने बहुत बड़ी सेना और साज व सामान के साथ लखनौती से निकल कर देहली के लश्कर से युद्ध किया। देहली के लश्कर को हराकर छिन्न-भिन्न कर दिया। इस लश्कर में से भी अनेक अपना आगा पीछा न सोचने वाले उस काफ़िरे नेमत (कृतघ्न) से मिल गये और उससे बहुत धन सम्पत्ति प्राप्त की।

सुल्तान का देहली से प्रस्थान

दूसरी बार जब देहली के लश्कर की पराजय के समाचार सुल्तान बल्बन तक पहुँचे तो उसकी लज्जा तथा क्रोध की सीमा न रह गई थी। उसका जीना दूभर हो गया। वह क्रोध की अधिकता से अपना हाथ चबाता था। अन्त मे उसने स्वय तुग़रिल के विनाश का दृढ़ सकल्प कर लिया और निर्णय किया कि स्वय प्रस्थान करेगा।

(८५) कूच के पूर्व आज्ञा दी कि यमुना तथा गगा में बजरे नौकायें एकत्रित तथा तैयार की जायें। लखनौती पर आक्रमण करने के लिये सुल्तान सामाना और सुनाम की ओर इस प्रकार चल खड़ा हुआ मानो शिकार खेलने जा रहा हो। सामाना तथा सुनाम की विलायत

को भिन्न-भिन्न शिकों[1] में विभाजित किया। उनको सामाना और सुनाम के सैनिकों तथा अमीरों को प्रदान किया। सामाने की नियाबत मलिक सौंज[2] सरजानदार को प्रदान की। उसे सामाना के लश्कर का सेनापति भी बनाया। बुगरा खाँ को आज्ञा दी कि अपने खासे के लश्कर को तैयार करके सुल्तान की सेना के पीछे-पीछे प्रस्थान करे।

मुल्तान और देहली का प्रबन्ध

सुल्तान सामाने से निकल कर दोआबे मे प्रविष्ट हुआ। गगा पार करके लखनौती की राह ली। अपने ज्येष्ठ पुत्र को मुल्तान में सूचना भिजवाई कि, 'मैं लखनौती जा रहा हू, तू जाने और तेरी ओर के प्रदेश। जिस प्रकार सम्भव हो मुगलो का मुकाबिला करते रहना। सामाने का लश्कर तेरे सिपुर्द कर दिया है।" मलेकुल उमरा कोतवाल देहली को जिसे सुल्तान ने विशेष उन्नति दी थी और जो उसका भक्त था, अपनी अनुपस्थिति में देहली में अपनी नियाबत का फरमान भिजवाया। उसको लिखा कि, "मैं तुगरिल का पीछा करने के लिये निकला हूँ। जहाँ भी वह भागेगा मैं उसका पीछा न छोड़ूँगा। जब तक कि उससे तथा उसके मित्रो से अपने अपमान का बदला न ले लूँगा, उस समय तक वापस न आऊँगा। देहली तेरे सिपुर्द कर दी है, इसलिये तू जान और जिस प्रकार उचित समझ मेरी अनुपस्थिति में देहली का प्रबन्ध कर। दीवाने विजारत और दीवाने अर्ज़ के कर्मचारियो से तथा जो कोई भी उनके अधीन हो, काम लेता रह, अमीरो के प्रार्थना पत्रो पर, और उस ओर के पदाधिकारियों को जैसा उचित समझ उत्तर लिखता रह। मेरी इस अनुपस्थिति में राज्य सचालन के विषय में मुझ से पूछने की प्रतीक्षा मत करना। सर्व साधारण के कार्य रुकने न पायें। किसी को पदच्युत करने एव नियुक्त करने का कार्य सुरक्षित[3] रखना।"

अर्ज़े आम[4]

सुल्तान ने चारो ओर से सेनायें एकत्रित करके लखनौती की ओर प्रस्थान आरम्भ कर दिया। लज्जा तथा क्रोध में वर्षा के प्रारम्भ होने पर भी ध्यान न दिया। जब अवध में पहुँचा तो अर्ज़े आम कर दिया।

(८६) दो लाख आदमी, सवार, प्यादे, पायक[5], धानुक[6], कहार, किबानी[7], खुदअस्पा[8], तीर चलाने वाले, दास और नौकर चाकर, व्यापारी, बाजारी भरती हुए। सुल्तान ने लश्कर के साथ साथ अगणित नौकायें रवाना कीं। बहुत बड़ा लश्कर लेकर सरयू नदी पार की।

१ मोरलैन्ड ने लिखा है कि १४ वीं सदी ई० में शिक़ शब्द का प्रयोग प्रान्तों के लिये किया जाता था किन्तु बरनी के उपर्युक्त वाक्य से पता चलता है कि शिक़ शब्द का प्रयोग सरकार अथवा जिलों के लिये किया गया है। बलबन के समय में इस शब्द का प्रयोग प्रान्त के लिये नहीं होता था अपितु विलायत के छोटे छोटे भागों को शिक़ लिखा गया है। (डब्ल्यू, एच मोरलैंड, दी एग्रेरियन सिस्टम ऑफ मुस्लिम इण्डिया, कैंमब्रिज १६२६, पृ० २५, २७७)

२ मलिक सिराज, पुत्र नामदार तारीखे फरिश्ता पृ० ८०)

३ मत करना।

४ आम भरती।

५ पैदल सैनिकों को पायक कहते थे। इनकी श्रेणी सवारों से नीचे होती थी।

६ धनुर्धारी

७ बोझ ढोने वाल।

८ सवार जो अपने घोड़े स्वय लाते थे। सैनिकों की एक श्रेणी पायक या अस्प कहलाती थी। इन लोगों को सुल्तान की ओर से युद्ध के लिए घोड़े प्रदान किये जाते थे किन्तु वेतन केवल पैदल सैनिकों को मिलता था।

जब सुल्तान ने प्रस्थान किया, वर्षा ऋतु प्रारम्भ हो गई। यद्यपि सुल्तान के साथ असख्य नौकायें थीं, परन्तु सेना के उतरने के स्थानो पर पानी भर जाने, मनुष्यो की अधिकता, कीचड की ज्यादती और निरतर वर्षा के कारण लश्कर को दस दस और बारह बारह दिन रुकना पडता था।

जाजनगर की ओर तुग़रिल का प्रस्थान

सुल्तान के लखनौती की ओर प्रस्थान करने का समाचार मिलने के पूर्व तुग़रिल अपने प्रतिष्ठित तथा निष्कपट मित्रो से राज भवन में कहा करता था कि "सुल्तान के अतिरिक्त जो कोई भी मेरा मुकाबिला करने आयेगा, मैं उससे युद्ध करूँगा, परन्तु यदि सुल्तान क्रोध की अधिकता से देहली की राज व्यवस्था को त्याग कर स्वय आयेगा तो मैं उससे युद्ध न कर सकूँगा।" और उसके मुक़ाबिले में लश्कर न खडा कर सकूँगा। जब तुग़रिल ने यह सुना कि सुल्तान बल्बन ने अपनी सेना सहित सरयू पार कर लिया है, तो भागने की तैयारी करने लगा। सुल्तान को वर्षा के कारण बहुत रुकना पडा। तुग़रिल को समय मिल गया। सर्व साधारण बहुत बडी सख्या में बल्बन के दड के भय से भाग निकले। इससे पूर्व कि शुभ सितारा चमके[1], तुग़रिल धन सम्पत्ति, हाथी, चुनी हुई सेना प्रतिष्ठित व्यक्तियो और अपने सहायको एव सम्बन्धियो के साथ उन के परिवार सहित चल दिया। लखनौती के उपयोगी लोगो में से सभी को सुल्तान के भय से डरा कर और धन सम्पत्ति का लोभ दिला कर अपने साथ ले लिया। इस प्रकार जाजनगर की ओर चल खडा हुआ। लखनौती से स्थल के मार्ग से एक मज़िल निकल कर उतर पडा।

(८७) चुने हुये धनी और उपयोगी लोगो को लखनौती रहने न दिया। लोग सुल्तान के भय तथा उसकी (तुग़रिल की) कृपा-दृष्टि की लालसा से उसके साथ हो गये।

सुल्तान लखनौती के तीस चालीस कोस के निकट पहुँच चुका था किन्तु वह (तुग़रिल) अपने साथियो के साथ पहले ही निकल गया। जाजनगर पर अपना अधिकार स्थापित करके अपना अड्डा वही जमाने के विचार से वह जाजनगर की ओर निरन्तर कूच करने लगा। लोगो को इस धोखे में रखा कि 'मैं जाजनगर की सीमा[2] में कुछ दिन व्यतीत करूँगा। सुल्तान लखनौती में अधिक न टिक सकेगा। यह सुन कर कि सुल्तान लौट गया है, मैं जाजनगर से धन सम्पत्ति लूट कर लखनौती लौट आऊँगा। सुल्तान जिस किसी को भी वहाँ नियुक्त करेगा, वह मुझ से युद्ध न कर सकेगा। जब वह सुनेगा कि हम लोग लखनौती के निकट आगये हैं, तो वह शहर (देहली) लौट जायगा।' इस धोखे और बहकावे से उसने असख्य व्यक्तियों को अपने साथ ले लिया।

बल्बन का तुग़रिल का पीछा करना

सुल्तान बल्बन कुछ दिनो तक लखनौती में ठहरा और उसने लोगो को नये अस्त्र शस्त्र तथा साज व सामान प्रदान किये और जितना शीघ्र हो सका जाजनगर की ओर तुग़रिल का पीछा करने के लिये प्रस्थान किया।

मेरे नाना सिपहसालार हुसामुद्दीन को, जोकि मलिक बारबक के वकीलदर थे, लखनौती की शहनगी[3] प्रदान की। उसे आज्ञा दी कि प्रत्येक सप्ताह में तीन चार बार शहर देहली के समाचार तथा देहली के मलिको एव अमीरो के प्रार्थना-पत्र लश्कर की ओर भेजता रहे।

१ सुल्तान पहुँचे।

२ हुदूद, परिधि।

३ प्रबन्ध, शहना अधिकतर भिन्न भिन्न कारखानों के अध्यक्ष होते थे।

जिस समय सुल्तान ने अजमुल[1] मुल्क से काम लेना निश्चय कर लिया और यह घोषणा कर दी कि चाहे जो कुछ हो जाय जब तक मैं तुगरिल से बदला न ले लूँगा वापस न आऊँगा। इस विचार से बराबर धावे मारता हुआ उसके पीछे रवाना हुआ। शीघ्र ही सुनार[2] गाँव पहुँच गया। वहाँ के राजा दिनौज राय[3] ने सुल्तान से भेंट की। सुल्तान ने सुनार गाँव के दिनौज राय से यह इकरारनामा लिखवा लिया कि जहाँ कहीं भी तुगरिल जाय और यदि वह जल के मार्ग से भागने के लिये अपने आपको समुद्र में भी डाल दे तो वह उसका पीछा करेगा।

(८८) सुल्तान ने अपने लश्कर के सामने अनेक बार सभी लोगों से कहा था कि मैं तुगरिल का पीछा छोड़ने वाला नहीं। देहली की शासन व्यवस्था का मैं प्रबन्ध कर लिया है। यदि वह समुद्र के मार्ग से भी भागेगा तो मैं उसका पीछा न छोड़ूँगा। जब तक उसका एवं उसके मित्रों का रक्त न बहा दूँगा देहली की ओर वापस न लौटूँगा और न देहली का नाम ही लूँगा। चूँकि लश्कर वाले सुल्तान के स्वभाव से भली भाँति परिचित थे और उसके दृढ़ संकल्प के विषय में पूर्णतया जानकारी रखते थे अतः सभी लौटने की ओर से निराश हो गये। बहुत से लोगों ने लश्कर से अपने घरों को वसीयत नामे लिख लिख कर भेज दिये। लश्कर के लोग और शहर दिल्ली के लोग एक दूसरे के वियोग में दुःखी रहने लगे। दोनों ओर से लोग समाचार लेजाने वालों तथा उलागों[4] के द्वारा वियोग पत्र भेजने लगे।

लश्कर के कूच का नियम

सुल्तान बल्बन कूच पर कूच करता हुआ जाजनगर के साठ सत्तर कोस निकट तक पहुँच गया। कोई भी मनुष्य तुगरिल के विषय में यह न बताता था कि उसने किस ओर प्रस्थान

१ वह संकल्प जो कि बादशाह किसी कार्य के लिये कर लेते थे। बरनी ने इस का बड़ा महत्व बताया है (फतावाय जहाँदारी पृ० ३३ ब ३७ अ)

२ ढाका के निकट

३ शायद राय भोज। इस राजा के स्वागत तथा अन्य घटनाओं से सम्बन्धित हाल तारीखे मुबारक शाही में इस प्रकार लिखा है :

[इस पराजय के समाचार को पाकर सुल्तान को बहुत ही कष्ट हुआ और उसने सेना का नेतृत्व स्वयं करने का संकल्प किया। यह समाचार पाते ही कि सुल्तान स्वयं सेना लेकर उसके विरुद्ध आ रहा है तुगरिल एक रात में नारकीलाह की ओर भाग गया। सुल्तान ने मलिक इख्तियारुद्दीन बेकतमर को एक शक्तिशाली सेना के साथ तुगरिल को पकड़ने के लिये भेजा। इसी बीच में दिनौज राय ने इस आशय का एक पत्र भेजा कि वह सुल्तान की सेवा में जमीन बोस करने के लिये स्वयं आ रहा है और उससे प्रार्थना की कि वह (सुल्तान) राय के पहुँचने पर खड़े होकर उसका स्वागत करे। इस बात से कि एक मुसलमान सुल्तान को एक काफिर के प्रति उचित सम्मान नहीं प्रदर्शित करना चाहिये, सुल्तान को चिंतित किया। मलिक बेकतमर ने जो उस समय उपस्थित था सुल्तान को चिन्तित रहने से मना किया और उसे परामर्श दिया कि सुल्तान राय के दरबार में पहुँचने से पूर्व ही सिंहासन पर अपने हाथ में एक बाज लेकर विराजमान हो जायें और राय के आने एवं जमीन बोस करने के पश्चात् सुल्तान खड़े हो जायें और हाथ से बाज को उड़ा दें। इस पर उपस्थित जन यह समझेंगे कि सुल्तान ने बाज को उड़ाने के उद्देश्य से अपना स्थान छोड़ा था और इस प्रकार सुल्तान राय की प्रार्थना के अनुसार आचरण करेगा। सुल्तान ने मलिक बेकतमर के इस परामर्श की सराहना करते हुए उसी के अनुसार आचरण किया। उसने मलिक को बहुमूल्य उपहार प्रदान किया। राय ने वचन दिया कि वह हर साधन से तुगरिल को सुल्तान के सम्मुख लायेगा। (पृ० ४२)

४ डाक से घोड़े पर दूर से आने के जो उलाग कहलाते थे।

किया और वहाँ है। सुल्तान ने मलिक बारबक बेक्तर्स सुल्तानी को आदेश दिया कि सात आठ हजार वीर सवारों को सुल्तानी लश्कर का मुकद्दमा[1] बनाया जाय। यह लोग दस बारह कोस आगे आगे चलें। प्रत्येक दिन कुछ सवार जबाँगीरी[2] के तरीके से मुकद्दमे के लश्कर से दस बारह कोस आगे भेजे जाते थे। वे लोग तुगरिल का पता लगाते थे। मलिक बेक्तर्स मुकद्दमे के नियम के अनुसार आगे आगे चलता था। सुल्तानी सेना कुछ कोस पीछे कूच करती थी। मुकद्दमे की सेना मे जो यजकी[3] नियुक्त होते थे और कुछ कोस आगे चलते थे, वे आगे पीछे, दायें बायें तुगरिल के लश्कर के विषय में पूछताछ करते जाते थे परन्तु उसका कोई चिह्न न मिलता था।

बंजारों द्वारा तुग़रिल का पता लगाना

• एक दिन मुकद्दमे की सेना से मलिक मुहम्मद शेरअन्दाज कोल का मुक्ता, उसका भाई मलिक मुकद्दिर और तुगरिलकुश, जो कि शेर बबर की भाँति वीरता में प्रसिद्ध थे, तीस-चालीस सवारों के साथ जबाँगीरी के लिए नियुक्त हुये। उपर्युक्त सवार मुकद्दमे की सेना से दस बारह कोस आगे आगे चले जाते थे और तुगरिल के विषय में खोज एवं पूछताछ करते जाते थे।

(८६) अचानक उन्होंने देखा कि कुछ बंजारे तुगरिल की सेना के हाथ कुछ बेच कर अपने ग्रामों को वापस जा रहे हैं। उन लोगों ने बंजारों को पकड़ लिया। मलिक शेरअन्दाज ने आदेश दिया कि उन बंजारों में से दो की गर्दन मार दी जाय। अन्य बंजारे भयभीत हो गये। उन लोगों ने सवारों से कहा कि, "तुम में और तुगरिल की सेना में आधे कोस से कम दूरी रह गई है। तुगरिल एक पत्थर के हौज के किनारे उतरा है। आज वहीं निवास करेगा, और कल जाजनगर की ओर प्रस्थान करेगा।" मलिक शेरअन्दाज ने इनमें से दो बंजारे, दो तुर्क सवारों के साथ मलिक बारबक, मुकद्दमे की सेना के सेनापति के पास रवाना किये, और कहला भेजा कि 'तुगरिल की सेना का हम लोगों ने पता लगा लिया है। मलिक बारबक शीघ्र पहुँच जायें। ऐसा न हो कि वे हरामखोर[4] भाग जायें।'

यजकी सवारों द्वारा तुग़रिल पर छापा

यजकी सवार[5] आगे की ओर चल दिये। एक बाँध पर पहुँचे। देखा कि तुगरिल की बारगाह (शिविर) लग चुकी है। उसकी सेना ने उसके शिविर के चारों ओर डेरे लगा दिये हैं और उतर पड़े हैं। प्रत्येक निश्चिन्त और असावधान है। सेना के कुछ मनुष्य उस पत्थर के हौज़ पर कपड़े धो रहे हैं, कुछ मदिरा पान कर रहे हैं और कुछ गा रहे हैं। हाथी पेड़ों से टहनियाँ तोड़ तोड़ कर खा रहे हैं। घोड़े और चौपाये चरागाह में पहुँच चुके हैं। तुगरिल की सेना अपने आप को सुरक्षित तथा भय-रहित समझे हुई है। उन यजकी अमीरों ने एक दूसरे से परामर्श किया कि 'यदि तुगरिल की सेना में से कोई हमें देख लेगा तो उस कृतघ्न को सूचना हो जायगी और वह भाग जायगा। चाहे उसके सभी हाथी और पूरा खजाना हाथ आ जाय, किन्तु वह भाग निकला तो फिर हम किस प्रकार सुल्तान के सम्मुख लौट सकेंगे। राज सिंहासन के समक्ष क्या उत्तर दे सकेंगे, अतः हमारे लिये यही उचित है कि जान से हाथ धो लें और उसके लश्कर पर धावा बोल दें। उसके खेमों पर टूट पड़ें।

१ वह सेना जो कि मुख्य सेना के आगे आगे चलती थी।
२ पूछताछ करने हेतु
३ वे सैनिक जोकि मुकद्दमे की सेना के आगे पूछताछ एवं मार्ग का पता लगाने के लिये चलते हैं।
४ दुष्ट।
५ पुस्तक में तुर्की है।

सम्भव है कि वह हमारे हाथ लग जाय। जब हम उसका सिर काट लेंगे तो उसके लश्कर में से किसी को हमारा सामना करने का साहस न हो सकेगा।'

(६०) 'इस समय उसकी सेना भाग रही है। उन्हे यह अनुमान भी न होगा कि हम लोग तीस चालीस सवारो से अधिक नही हैं, अपितु वे यही समझेंगे कि सुल्तान की सेना पहुच गई है। सभी लोग भाग निकलेंगे।'

यजकियों ने यह सोचकर अपनी तलवारें म्यान से निकाल ली और वे वीर, सिंह की भाँति लश्कर का सहार करने वाले, 'तुगरिल' चिल्लाते हुये उसकी सेना पर टूट पड़े। उसके शिविर में घुस गये। तुगरिल भयभीत होकर तश्त-खान[1] की ओर से बाहर निकल भागा। एक नगी पीठ के घोडे पर सवार होकर एक नदी की ओर, जोकि सेना के निकट थी, भागा। उसकी सेना सुल्तानी सेना के भय से भाग निकली। उसकी सेना पर अत्यन्त भय तथा आतंक छा गया। मुकद्दिर तथा तुगरिलकुश ने तुगरिल का पीछा किया। तुगरिल घोडा भगाता कुदाता उस नदी के निकट पहुचा। तुगरिलकुश ने एक कटार उसकी बगल में मार कर उसे घोडे से नीचे गिरा दिया। मुकद्दिर घोडे से नीचे उतरा, उसका सिर काट लिया और उसके मृतक शरीर को पानी में फेंक दिया। उसका कटा शीश अपने पल्लू (दामन) में छिपा कर नदी के किनारे हाथ मुँह धोने लगा। तुगरिल के जानदार तथा सिलाहदार "खुदावन्दे[2] आलम, खुदावन्दे आलम" चिल्लाते हुये उसे नदी के किनारे ढूँढते फिरते थे। इतने में मलिक बारबक अपनी सेना लेकर वहाँ पहुँच गया। तुगरिल की सेना छिन्न भिन्न हो गई। मलिक मुकद्दिर तथा तुगरिलकुश, तुगरिल का कटा शीश मलिक बारबक के सामने ले गये। तत्काल तुगरिल के शीश और विजय की बधाई को सुल्तान बलबन की सेवा में भिजवा दिया गया। तुगरिल की स्त्री, पुत्र तथा पुत्रियाँ, खजाना, हाथी, विश्वासपात्र पदाधिकारी और उनका परिवार सुल्तानी लश्कर के हाथ आये। मुकद्दमे की सेना को इतना धन, सम्पत्ति घोडे अस्त्र शस्त्र, दास और दासियाँ प्राप्त हुई कि वर्षों तक वे उनको और उनके पुत्रों के लिये पर्याप्त थे। दो तीन हजार स्त्री तथा पुरुष सैनिको द्वारा बन्दी बनाये गये।

सुल्तान की प्रसन्नता और पारितोषिक वितरण

(६१) सुल्तान उसी स्थान पर, जहाँ विजय की सूचना तथा तुगरिल का कटा शीश मिला था, रुक गया। मलिक बारबक समस्त प्राप्त धन सम्पत्ति तथा तुगरिल की सेना के बन्दियो को लेकर सुल्तान की सेवा में पहुँचा। प्रत्येक ने राज सिंहासन के सम्मुख विजय का वृत्तान्त दिया। सुल्तान ने मलिक मुहम्मद शेरअन्दाज के ऊपर गर्म होते हुये कहा कि 'तुमने बहुत बडा अपराध किया था, परन्तु मेरे भाग्य तथा देहली के लश्कर के परिश्रम से वह अपराध अच्छाई में बदल गया, खेद प्रकट करने के पश्चात् समस्त यजकियो को उनकी योग्यता तथा श्रेणी के अनुसार खिलअत और इनाम दिये। मलिक शेरअन्दाज को सम्मानित किया। यजकियों में से प्रत्येक को उन श्रेणियो की अपेक्षा, जोकि उन्हें प्राप्त थी, कई गुनी ऊँची श्रेणियाँ प्रदान की। कटार मारने वाले को तुगरिल-कुश[3] की पदवी प्रदान की। मलिक मुकद्दिर को जिसने उसका सिर काटा था खिलअत और इनाम दिये। सैनिक जोकि लौटने मे निराश हो चुके थे खुशियाँ मनाने लगे। किवामुद्दीन दबीरे खास ने देहली की ओर विजय

१ गुसल खाने। वह स्थान जहाँ स्नान किया तथा हाथ मुँह धोया जाता है।

२ अन्नदाता

३ तुगरिल का हत्यारा

का सूचना-पत्र लिखा। विजय का सूचना-पत्र लिखना तभी से दबीरो[1] की परम्परा हो गई। लखनौती की विजय की सूचना पहुँचते ही देहली के घर घर में खुशी मनाई जाने लगी। सुल्तान का प्रताप तथा ऐश्वर्य राज्य के लोगो पर सौगुना बढ गया।

विरोधियों को दंड

सुल्तान उस पड़ाव से जहाँ तुगरिल का सिर लाया गया था लौट पडा। लखनौती में पहुँचा, आज्ञा दी कि लखनौती के बडे बाजार में जोकि एक कोस से अधिक लम्बा है दोनो ओर फाँसी लटकाई जाय। तुगरिल के पुत्रों, जमाइयों, पदाधिकारियो, कर्मचारियो, दासो, विश्वास-पात्रो, सेनापतियो, जानदारो, सिलाहदारो तथा प्रसिद्ध पायको की हत्या करदी। सभी को फाँसी दे दी गई, यहाँ तक कि एक कलन्दर[2] को भी उसके मित्रों सहित फाँसी दे दी गई, क्योकि वह तुगरिल का मुँह लगा हुआ था। तुगरिल उसका बडा आदर करता था और सुल्तान उसे दरवेश कहा करता था। तुगरिल ने उसे तीन मन सोना प्रदान किया था, और वह तथा उसके मित्र सोने के बने हुये कलन्दरी के यन्त्र धारण करते थे, जब कि अन्य लोग लोहे के पहनते थे।

(९२) सुल्तान बल्बन ने तुगरिल पर विजय पाकर लखनौती लौटने के पश्चात् दो तीन दिन के भीतर जो दण्ड दिये, उसके भय से अनेक दर्शको ने अपने प्राण छोड दिये और उनकी मृत्यु हो गई। इस इतिहास के सकलनकर्त्ता ने अनेक वृद्ध सरदारो से सुना है कि सुल्तान बल्बन ने जो दड लखनौती मे दिये वह देहली के अन्य किसी बादशाह ने कभी न दिये थे। *किसी को इस बात की भी स्मृति न थी कि हिन्दुस्तान में इस प्रकार के दड कभी दिये गये* थे। सुल्तान ने आदेश दिया कि उन बन्दियों को देहली तथा उसके निकट के स्थानो के निवासी हैं, बडी कैद में रख कर सेना के साथ ले जाया जाय जिससे कि उन लोगों को देहली में दड दिया जाये।

बुग़रा खाँ की नियुक्ति

सुल्तान बल्बन दड के काम से निवृत्त होकर कुछ दिन लखनौती रुका। लखनौती की इक्लीम अपने लघु पुत्र बुगरा खाँ को प्रदान की। उसे चत्र, दूरबाश तथा बादशाही के चिह्न प्रदान किये। पदाधिकारी और अक्तादार अपने सामने नियुक्त किये। तुगरिल के कारखानो मे जो कुछ हाथी तथा सम्पत्ति प्राप्त हुई थी बुगराखाँ को प्रदान की। उसे अपने पास एकान्त मे बुलाया। उसे शपथ दिलाई कि बगाले की इक्लीम मिल जाने पर उसके सुशासित रखने का प्रयत्न करता रहेगा, किसी दिन कोई महफिल न करेगा, मदिरा पान न करेगा, भ्रष्टाचार में न पडेगा।

जिन दिनो सुल्तान बल्बन विरोधियो को दड दे रहा था, उसने बुगरा खाँ से पूछा कि तू कहाँ ठहरा है। उसने उत्तर दिया कि बडे बाजार के निकट, लखनौती के पुराने मलिको मे से एक मलिक के घर में। बुगरा खाँ का नाम महमूद था। सुल्तान ने उससे पूछा कि 'हे महमूद! तूने देखा?' बुगरा खाँ उसके प्रश्न को जो स्पष्ट न था समझ न सका और आश्चर्य में पड गया। कोई उत्तर उसकी समझ मे न आया।

---

१ दबीर राजकीय पत्र विभाग व व्यवहार से सम्बन्धित होते थे। इस विभाग का अध्यक्ष दबीरे खास होता था।

२ स्वतन्त्र विचार के दरवेश। इन लोगों के विचार एव वेषभूषा अन्य सूफ़ियों से पृथक् होते हैं। यह लोग हाथ पैरो मे लोहे के कड़े और गर्दन में लोहे की हसली तथा लोहे की जंजीरें पहनते हैं। इन वस्तुओं को आलाते कलन्दरी अथवा कलन्दरी के यन्त्र लिखा गया है।

सम्भव है कि 'वह हमारे हाथ लग जाय। जब हम उसका सिर काट लेंगे तो उसके लश्कर में से किसी को हमारा सामना करने का साहस न हो सकेगा।'

(६०) 'इस समय उसकी सेना भाग रही है। उन्हें यह अनुमान भी न होगा कि हम लोग तीस चालीस सवारों से अधिक नहीं हैं, अपितु वे यही समझेंगे कि सुल्तान की सेना पहुच गई है। सभी लोग भाग निकलेंगे।'

यजकियों ने यह सोचकर अपनी तलवारें म्यान से निकाल ली और वे वीर, सिंह की भाँति लश्कर का सहार करने वाले, 'तुगरिल' चिल्लाते हुये उसकी सेना पर टूट पड़े। उसके शिविर में घुस गये। तुगरिल भयभीत होकर तख्त-खाने[1] की ओर से बाहर निकल भागा। एक नंगी पीठ के घोड़े पर सवार होकर एक नदी की ओर, जोकि सेना के निकट थी, भागा। उसकी सेना सुल्तानी सेना के भय से भाग निकली। उसकी सेना पर अत्यन्त भय तथा आतंक छा गया। मुकद्दिर तथा तुगरिलकुश ने तुगरिल का पीछा किया। तुगरिल घोड़ा भगाता कुदाता उस नदी के निकट पहुचा। तुगरिलकुश ने एक कटार उसकी बगल में मार कर उसे घोड़े से नीचे गिरा दिया। मुकद्दिर घोड़े से नीचे उतरा, उसका सिर काट लिया और उसके मृतक शरीर को पानी मे फेंक दिया। उसका कटा शीश अपने पल्लू (दामन) में छिपा कर नदी के किनारे हाथ मुँह धोने लगा। तुगरिल के जानदार तथा सिलाहदार "खुदावन्दे[2] आलम, खुदावन्दे आलम" चिल्लाते हुये उसे नदी के किनारे ढूँढते फिरते थे। इतने में मलिक बारबक अपनी सेना लेकर वहाँ पहुँच गया। तुगरिल की सेना छिन्न-भिन्न हो गई। मलिक मुकद्दिर तथा तुगरिलकुश, तुगरिल का कटा शीश मलिक बारबक के सामने ले गये। तत्काल तुगरिल के शीश और विजय की बधाई को सुल्तान बल्बन की सेवा में भिजवा दिया गया। तुगरिल की स्त्री, पुत्र तथा पुत्रियाँ, खजाना, हाथी, विश्वासपात्र, पदाधिकारी और उनका परिवार सुल्तानी लश्कर के हाथ आये। मुक़द्दमे की सेना को इतना धन, सम्पत्ति घोड़े, अस्त्र शस्त्र, दास और दासियाँ प्राप्त हुईं कि वर्षों तक वे उनको और उनके पुत्रों के लिये पर्याप्त थे। दो तीन हजार स्त्री तथा पुरुष सैनिकों द्वारा बन्दी बनाये गये।

सुल्तान की प्रसन्नता और पारितोषिक वितरण

(६१)सुल्तान उसी स्थान पर, जहाँ विजय की सूचना तथा तुगरिल का कटा शीश मिला था, रुक गया। मलिक बारबक समस्त प्राप्त धन सम्पत्ति तथा तुगरिल की सेना के बन्दियों को लेकर सुल्तान की सेवा में पहुँचा। प्रत्येक ने राज सिंहासन के सम्मुख विजय का वृत्तान्त दिया। सुल्तान ने मलिक मुहम्मद शेरअन्दाज के ऊपर गर्म होते हुये कहा कि 'तुमने बहुत बड़ा अपराध किया था, परन्तु मेरे भाग्य तथा देहली के लश्कर के परिश्रम से वह अपराध अच्छाई में बदल गया, खेद प्रकट करने के पश्चात् समस्त यज़कियों को उनकी योग्यता तथा श्रेणी के अनुसार खिलअत और इनाम दिये। मलिक शेरअन्दाज़ को सम्मानित किया। यज़कियों में से प्रत्येक को उन श्रेणियों की अपेक्षा, जोकि उन्हें प्राप्त थी, कई गुनी ऊँची श्रेणियाँ प्रदान की। कटार मारने वाले को तुगरिल-कुश[3] की पदवी प्रदान की। मलिक मुकद्दिर को जिसने उसका सिर काटा था खिलअत और इनाम दिये। सैनिक जोकि लौटने से निराश हो चुके थे खुशियाँ मनाने लगे। किवामुद्दीन दबीरे खास ने देहली की ओर विजय

[1] गुसल-खाने। वह स्थान जहाँ स्नान किया तथा हाथ मुँह धोया जाता है।

[2] अन्नदाता

[3] तुगरिल का हत्यारा

का सूचना-पत्र लिखा। विजय का सूचना-पत्र लिखना तभी से दबीरो[1] की परम्परा हो गई। लखनौती की विजय की सूचना पहुँचते ही देहली के घर घर में खुशी मनाई जाने लगी। सुल्तान का प्रताप तथा ऐश्वर्य राज्य के लोगो पर सौगुना बढ गया।

विरोधियों को दंड

सुल्तान उस पडाव से जहाँ तुगरिल का सिर लाया गया था लौट पडा। लखनौती में पहुँचा, आज्ञा दी कि लखनौती के बडे बाजार में जोकि एक कोस से अधिक लम्बा है दोनो ओर फाँसी लटकाई जाय। तुगरिल के पुत्रो, जमादयों, पदाधिकारियो, कर्मचारियो, दासों, विश्वास-पात्रो, सेनापतियो, जानदारो, सिलाहदारों तथा प्रसिद्ध पायको की हत्या करदी। सभी को फाँसी दे दी गई, यहाँ तक कि एक कलन्दर[2] को भी उसके मित्रो सहित फाँसी दे दी गई, क्योकि वह तुगरिल का मुँह लगा हुआ था। तुगरिल उसका बडा आदर करता था और सुल्तान उसे दरवेश कहा करता था। तुगरिल ने उसे तीन मन सोना प्रदान किया था, और वह तथा उसके मित्र सोने के बने हुये कलन्दरी के यन्त्र धारण करते थे, जब कि अन्य लोग लोहे के पहनते थे।

(६२) सुल्तान बल्बन ने तुगरिल पर विजय पाकर लखनौती लौटने के पश्चात् दो तीन दिन के भीतर जो दण्ड दिये, उसके भय से अनेक दर्शको न अपने प्राण छोड दिये और उनकी मृत्यु हो गई। इस इतिहास के सकलनकर्त्ता ने अनेक वृद्ध सरदारो से सुना है कि सुल्तान बल्बन ने जो दड लखनौती मे दिये वह देहली के अन्य किसी बादशाह ने कभी न दिये थे। किसी को इस बात की भी स्मृति न थी कि हिन्दुस्तान में इस प्रकार के दड कभी दिये गये थे। सुल्तान ने आदेश दिया कि उन बन्दियो को देहली तथा उसके निकट के स्थानो के निवासी हैं, कडी कैद में रख कर सेना के साथ ले जाया जाय जिससे कि उन लोगो को देहली में दड दिया जाये।

बुगरा खाँ की नियुक्ति

सुल्तान बल्बन दड के काम मे निवृत्त होकर कुछ दिन लखनौती रुका। लखनौती की इक्लीम अपने लघु पुत्र बुगरा खाँ को प्रदान की। उसे चत्र, दूरबाश तथा बादशाही के चिह्न प्रदान किये। पदाधिकारी और अक्तादार अपने सामने नियुक्त किये। तुगरिल के कारखानो मे जो कुछ हाथी तथा सम्पत्ति प्राप्त हुई थी बुगराखाँ को प्रदान की। उसे अपने पास एकान्त म बुलाया। उसे शपथ दिलाई कि बगाले की इक्लीम मिल जाने पर उसके सुशासित रखने का प्रयत्न करता रहेगा, किसी दिन कोई महफिल न करेगा, मदिरा पान न करेगा, भ्रष्टाचार में न पडेगा।

जिन दिनो सुल्तान बल्बन विरोधियो को दड दे रहा था, उसने बुगरा खाँ से पूछा कि तू कहाँ ठहरा है। उसने उत्तर दिया कि बडे बाजार के निकट, लखनौती के पुराने मलिको में से एक मलिक के घर में। बुगरा खाँ का नाम महमूद था। सुल्तान ने उससे पूछा कि 'हे महमूद! तूने देखा?' बुगरा खाँ उसके प्रश्न को जो स्पष्ट न था समझ न सका और आश्चर्य में पड गया। कोई उत्तर उसकी समझ में न आया।

---

१ दबीर राजकीय पत्र विभाग व व्यवहार से सम्बन्धित होते थे। इस विभाग का अध्यक्ष दबीरे खास होता था।

२ स्वतन्त्र विचार के दरवेश। इन लोगों के विचार एव वेषभूषा अन्य सूफियों से पृथक् होते हैं। यह लोग हाथ पैरों म लोहे के कड़े और गर्दन में लोहे की हसली तथा लोहे की जजीरें पहनते हैं। इन वस्तुओं को आलाते कलन्दरी अथवा कलन्दरी के यन्त्र लिखा गया है।

(९३) सुल्तान ने फिर उस समय यह कहा कि 'हे महमूद ! तूने देखा ?' बुगरा खाँ फिर आश्चर्य में पड गया। कोई उत्तर उसकी समझ में न आया। सुल्तान ने तीसरी बार फिर खोल कर कहा कि, 'मैंने जो कुछ दड बाजार में दिये, तूने देखे ?" बुगरा खाँ ने धर्ती चुम्बन करके कहा कि, 'देखा।" सुल्तान ने कहा, 'जिस दिन कोई हरामखोर विरोधी तुझ से यह कहे कि देहली के बादशाह के विरुद्ध विद्रोह करना चाहिए तो तू उसकी बात पर ध्यान न देना। इस दड और हत्या को जो तूने बडे बाजार में देखी याद कर लेना। तू यह बात समझ ले और मेरी बात मत भूलना, कि यदि हिन्द, सिन्ध, मालवे, गुजरात, लखनौती तथा सुनार गाँव के इकलीमदारो में से कोई भी देहली के बादशाह के विरुद्ध विद्रोह करेगा और तलवार खींचेगा तो उसको, उसके स्त्री बच्चों, मित्रों, सम्बन्धियो कर्मचारियो, तथा आज्ञाकारियो को यही दड होगा, जोकि तुगरिल, उसके पुत्रो और उसके कर्मचारियो को दिया गया।

बुगरा खाँ को चेतावनी

लौटते समय फिर एक दिन सुल्तान बल्बन ने बुगरा खाँ को उसके कुछ अन्य विश्वासपात्रो के साथ एकान्त में बुलाया और उन लोगो के सम्मुख उससे कहा कि "हे महमूद, यद्यपि मैंने तुझ में उलिलअम्री की योग्यता चाहे देखी अथवा न देखी, किन्तु पुत्र प्रेम के कारण उलिलअम्री तथा अपने राज्य का हित इसी में पाता हू कि लखनौती और बगाले की इक्लीम, जिसको प्राप्त करने में मैं ने इतना रक्त-पात किया है, और जिस राज्य के लिये इतनी फिरऔनी[1] की है इतने मनुष्यो को फाँसी दी है, तुझे प्रदान कर दूँ। दुनिया और दुनिया का हित जो लोगो को इतना प्रिय है अवश्य क्षणिक तथा समाप्त होने वाला है। प्रत्येक कठिनाई, जो उसके प्राप्त करने में आती है, इस कारण कि उसका समाधान हो जाता है, अति सरल है, परन्तु कयामत का कार्य बडा ही कठिन है। सभी को कयामत में अपने कार्यों के विषय में उत्तर देना पडेगा। यदि कयामत में मुझ से प्रश्न किया गया कि "जब तू जानता था कि, तेरा पुत्र व्यभिचार और दुराचार, मदिरापान, सगीत, नृत्य तथा मनोविनोद को किसी प्रकार त्याग नही सकता, तो फिर इतनी बडी इकलीम का प्रबन्ध और इतन दूर के स्थानो की बादशाही उसे क्यो प्रदान की। एक भ्रष्टाचारी को सर्व साधारण के ऊपर क्यों नियुक्त कर दिया, तो फिर मैं ईश्वर के सिंहासन के समक्ष क्या उत्तर दूँगा।"

(९४) 'मै जानता हूँ कि मैं जैसे ही लखनौती से पाँच छ मजिल दूर पहुच जाऊँगा वैसे ही तू भोग विलास में मस्त हो जायगा। तू और तेरे समस्त मित्र तथा सहायक, तेरे लावलश्कर, कर्मचारी, और पदाधिकारी भ्रष्टाचार तथा व्यभिचार में पड जायगे। इस प्रदेश के निवासी, यदि बादशाह उसके मित्रो, सहायको तथा लावलश्कर को मदिरापान एव भोग विलास में सलग्न पायेंगे, तो सभी छोटे बडे, स्त्री-पुरुष, हिन्दू मुसलमान उपद्रव आरम्भ कर देंगे। इस प्रदश के हिन्दुओ के कुफ्र और शिर्क के कारण मुसलमानों में भी दुराचार तथा व्यभिचार एव जिन्दिका और इबाहत फैल जायेगी। जिस प्रकार मूर्ति-पूजक हिन्दू तथा मुशरिक खुदा को भूल चुके हैं, इसी प्रकार मुसलमान भी उसे भूल जायेंगे। खुदा का नाम विश्वास तथा श्रद्धा स कोई भी न लेगा। इस कारण मै और तू सर्वदा दण्ड ग्रस्त रहेगे।"

तत्पश्चात् सुल्तान ने कहा कि, 'हे महमूद ! तूने उन आलिमो, सूफियो और बुजुर्गों को नही देखा है जिन्हे मैं अपने स्वामी सुल्तान शम्सुद्दीन की सेवा में देख चुका हू और जो वाज और नसीहतें मैं सुन चुका हू, तूने नही सुनी हैं। इस समय आलिम तथा सूफी इतने

१ अत्याचार, निरकुशता।

धर्मनिष्ठ और भगवान् का भय रखने वाले नहीं हैं जो बादशाहों के सम्मुख खुल्लम खुल्ला कुछ कह सकें और बादशाहों को ऐसे उपदेश दे सके जो उन्हें रुचिकर न हों। मैं दूसरी इक्लीम में हूँगा और तू दूसरी इक्लीम में निश्चिन्त सोया करेगा। तुझे कौन जगायेगा या जगा सकेगा।" सुल्तान बल्बन ने उपर्युक्त बातें बुग़रा खाँ से कहीं और उसकी आखों में आँसू डबडबा आये। आज्ञा दी कि कूच का नक्कारा बजा दिया जाय और देहली की ओर सेना वापस हो। बुग़रा खाँ सुल्तान को कुछ मंजिल तक पहुचाने गया।

बुग़रा खाँ को सुल्तान की नसीहतें

(९५) उस दिन जिसके पश्चात् बुग़रा खाँ विदा होने वाला था, सुल्तान बल्बन रुक गया। नमाजे इशराक के पश्चात् कोई कार्य न किया। एकान्त में कुछ वृद्ध तथा अनुभवी अमीरों को बुलवाया। बुग़रा खाँ से कहा कि 'अपने शम्स दबीर को दावात कागज कलम देकर मेरे सम्मुख बुलवा, ताकि तेरे विषय में उसे कुछ नसीहतें लिखवा दूं।' जब शम्स दबीर को बुग़रा खाँ सुल्तान के समक्ष ले गया तो सुल्तान ने बुग़रा खाँ और शम्स दबीर को अपने सामने बैठ जाने की आज्ञा दी। सुल्तान ने उपस्थित जनों की ओर मुँह करके कहा कि, "मैं जानता हूँ कि राज्य व्यवस्था के विषय में जो भी उपदेश मै इस पुत्र को दूँगा उन पर वह विलासप्रियता तथा कामाग्नि के वश में होने के कारण कान न धर सकेगा और उन कार्यों को न करेगा, किन्तु पितृ-प्रेम से विवश होकर चाहता हू कि तुम लोगों के सामने कुछ नसीहतें इस पुत्र के लिये लिखवा दूँ, क्योंकि तुम लोग वृद्ध और अनुभवी हो। कदाचित् खुदा उसे इस बात की योग्यता प्रदान करे, कि वह मेरी नसीहतों पर आचरण कर सके।" यह शब्द उन लोगो के सम्मुख कहे और शम्स दबीर को आज्ञा दी कि वह लिखता जाय।

राज्य व्यवस्था के सम्बन्ध में महमूद के लिये उसकी प्रथम नसीहत इस प्रकार थी। जब लखनौती की इक्लीम उसके सिपुर्द हो तो वह देहली के बादशाह का आज्ञाकारी रहे। उसका विरोध न करे। उससे सम्बन्ध विच्छेद न करे, चाहे देहली का बादशाह उसका सम्बन्धी, भाई या कोई अन्य व्यक्ति हो। लखनौती के शासक के लिये देहली के बादशाह का विरोध करना या विद्रोह करना उचित नहीं। यद्यपि लखनौती बहुत दूर पर स्थित है किन्तु वह देहली के मुजाफात[1] में से है। जिस तिथि से देहली विजय हुआ सर्वदा लखनौती के वाली देहली के बादशाह द्वारा नियुक्त होते रहे।

(९६) जिन लोगो ने भी देहली के बादशाह का विरोध किया उन्होंने वह सब कुछ देख लिया जो देखना था। 'हे महमूद! विश्वास रख कि लखनौती का शासक देहली के बादशाह से युद्ध में कदापि सफल नहीं हो सकता। हे महमूद! यदि तू देहली न जा सके और तुझे देहली के बादशाह से जान का भय हो तो यह समझ ले कि दो मनुष्यों का खुत्बा और सिक्का एक स्थान पर नहीं चल सकता, अतः तेरे हित के लिये यह परमावश्यक है कि देहली के बादशाह के साथ किसी न किसी युक्ति से जीवन निर्वाह करता रहे। उसकी सेवा में तोहफे, उपहार, विश्वासपात्र और योग्य दूत, जो तेरे भेदों को सुरक्षित रख सके, भेजता रहे ताकि वह लखनौती पर आक्रमण करने के विचार को अपने आक्रमणों की योजना में विशेष स्थान न दे सके। कभी-कभी कुछ हाथी देहली भेज दिया करे। देहली के बादशाह के द्वारा उसके घोड़े पहुँचाने का मार्ग बन्द न हो[2]। यदि ऐसा हो कि देहली का बादशाह लखनौती पर

---

१ अधीन।
२ घोड़े पहुँचते रहें।

आक्रमण करदे, तो उससे कदापि युद्ध न करना और किसी बहुत दूर के स्थान पर अपने हाथी धन सम्पत्ति, उपयोगी लोगों और उनके परिवार को लेकर प्रस्थान कर जाना[1], किसी ऐसे दूर के स्थान पर चले जाना जहाँ देहली की सेना कठिनाई से पहुँच सके। अपनी रक्षा करते रहना और अपनी धन सम्पत्ति की देख भाल करते रहना। देहली के बादशाह से युद्ध न करना। उससे युद्ध की लालसा अपने हृदय में न पैदा करना, क्योंकि देहली का बादशाह एक धावे में लखनौती पर विजय प्राप्त कर सकता है। लखनौती के शासकों को छिन्न-भिन्न कर सकता है। देहली के बादशाह लखनौती के स्वामी को अपने अधीन समझते हैं।'

'लखनौती का शासन प्रबन्ध प्रत्येक मनुष्य को नहीं सौंपा जा सकता, क्योंकि लखनौती की इक्लीम पर केवल कुशल और ऐश्वर्य वाले बादशाह ही राज्य कर सकते हैं और उसे सुव्यवस्थित कर सकते हैं। जब यह सुन लेना कि देहली का बादशाह लौट गया, तो फिर हे महमूद! तू लखनौती लौट जाना और लखनौती पर अधिकार जमा लेना, क्योंकि देहली के बादशाह के अतिरिक्त कोई अन्य, महमूद, तेरा मुकाबिला नहीं कर सकता। मुझे यह सब बातें अनुभव द्वारा ज्ञात हुई हैं।'

(७) 'महमूद तेरे विषय में दूसरी नसीहत यह है कि तू यह भली भाँति समझ ले कि विलायतदारी के नियमों और इक्लीमदारी के नियमों में विशेष अन्तर है। यदि किसी मुक्ते से विलायतदारी के कार्यों में कोई असावधानी या त्रुटि हो जाती है और विलायतदारी यथाशक्ति सम्पन्न नहीं हो पाती, तो बादशाह उसे उस त्रुटि और असावधानी के कारण पदच्युत कर देता है या उससे हिसाब किताब लिया जाता है और बादशाह अपने क्रोध के कारण उस पर जुरमाना करके उसकी धन सम्पत्ति छीन लेता है परन्तु उसको प्राण का भय नहीं होता। उसके फिर क्षमा कर दिये जाने की आशा भी समाप्त नहीं होती। उसके स्त्री, बालक, नौकर चाकर उसकी भूल से तहस नहस नहीं होते, परन्तु यदि इक्लीमदारी में इक्लीमदार से कोई त्रुटि या भूल हो जाय और वह कोई अनुचित कार्य कर बैठे, तो उसकी त्रुटि, भूल एवं असावधानी का प्रभाव समस्त इक्लीम पर पड़ेगा। इक्लीम की प्रजा कष्ट में पड़ कर छिन्न-भिन्न हो जायगी। उसका लावलश्कर सुरक्षित नहीं रहेगा। ऐसी त्रुटि का, जिसके कारण समस्त इक्लीम कष्ट में पड जाती है, कोई न्याय नहीं, और न उसका समाधान ही हो सकता है, न उसे शान्ति प्राप्त हो सकती है और न उसका कार्य फिर से बन सकता है।'

'इक्लीम की परेशानी और इक्लीमदारी के कार्य की परेशानी का प्रभाव इक्लीमदार के प्राण, पुत्रों, बच्चा, सम्बन्धियों, मित्रों और उससे सम्बन्धित सभी व्यक्तियों पर पड़ता है। हे महमूद! इक्लीमदारी में इस बात का ध्यान रखना और इक्लीमदारी से सम्बन्धित सभी अच्छे और बुरे विषयों पर अपने राज्य के अच्छी राय रखने वालों से परामर्श करते रहना, क्योंकि कोई भूल या त्रुटि न हो जाय। हे महमूद! जान ले कि यदि अपनी इक्लीमदारी से सम्बन्धित कोई कार्य भाग्य और ज़िम्मत से, बुद्धिमानों के परामर्श के विरुद्ध आचरण करने के बावजूद सफल हो जाय, त्रुटि का समाधान हो जाय और बादशाह की असावधानी और भूल के कारण राज्य को कष्ट न उठाना पड़े तथा बादशाह की इच्छानुसार सभी कार्य होते रहें, तब भी बादशाह को इसे अपना दुर्भाग्य समझना चाहिये और उन कार्यों को निष्फल समझना चाहिये। उस रौनक पर जो त्रुटि और अनुचित कार्य करने पर भी दिखाई पड़े गर्व न करना चाहिये। ऐसे कार्य करने से जिसने टेढ़ी वस्तु सीधी हो जाये और त्रुटि ठीक दिखाई दे, उसके लिये अपने आप से खिन्नचित्त रह सहानुभूति प्रकट करते रहना चाहिये और समझना चाहिये कि

१ बम्बई संस्करण पृ० १२० क।

यदि टेढे कार्य का भी परिणाम सीधा और अनुचित बात का फल उचित दिखाई देता है, तो यह ईश्वर की ओर से ढील देने और कुछ समय के लिये छोड देने का एक उदाहरण है। ऐसा भी सम्भव हुआ है कि बहुत मे बादशाहो ने आजीवन टेढे कार्य किये और जब कुछ किया तो बुराई ही की और उनके आजीवन सब कुछ ठीक ही होता गया, और जो कुछ भी भूल की वह ठीक ज्ञात हुई। ऐसे बहुत से बादशाह हुए हैं, जो भ्रष्टाचार, दुराचार, भोग विलास, असावधानी और व्यर्थ की बातें आजीवन करते रहे और सर्व साधारण भी उनका अनुकरण करते रहे। सर्व साधारण के व्यभिचार और शिर्क के कारण जो कुफ्र तथा पाप होते रहे और वे कार्य जोकि शरा के विरुद्ध तथा विलासिता के रूप में होते रहे, उसके विषय में वह लज्जित नही होते थे। उन्हे इस बात का ज्ञान नही था कि इस्लाम का सम्मान किस प्रकार होता है। उन्हे दीन पनाही और दीन परवरी के विषय में कोई सूचना नही थी। वे अम्रे मारूफ और नेहीये मुनकिर के विषय में कोई ध्यान नही देते थे। इस समाचार से वे प्रसन्न होते थे कि सर्व-साधारण भोग विलास, आराम, व्यभिचार, भ्रष्टाचार, जिन्दिका और इलहाद में ग्रस्त हैं। सर्व साधारण के इस भ्रष्टाचार को अपने न्याय, नेकी, लोगो को दुख न देने और प्रजा का ध्यान रखने का परिणाम समझते थे। उनके हृदय में साधारण तथा विशेष व्यक्तियों की मक्कारी, शिर्क और कुफ्र की आज्ञाओ का पालन, दुराचार, व्यभिचार, भ्रष्टाचार, ख्यानत, धोखेबाजी, नफा-खोरी, लालच, बनावट पर घृणा नही उत्पन्न होती। वे यह नही समझते थे कि किन चीजो द्वारा उनकी मुक्ति और किन चीजो द्वारा उनका विनाश सम्भव है। अपने विनाश की वस्तुओ को मुक्ति की वस्तुयें और मुक्ति की वस्तुओ को विनाश की वस्तुयें समझते थे। अपने राज्य तथा युवावस्था से बदमस्त और असावधान रहने वाले बादशाहो को यह नही ज्ञात होता, कि सत्य का पालन करने एव शरा के मार्ग पर चलने से ही बादशाह की मुक्ति तथा उन्नति सम्भव है। यह कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं कि प्रजा के समस्त वचनो तथा कार्यों को स्वीकार कर लिया जाय।'

(९९) 'उपर्युक्त घृणा के योग्य समस्त कार्यों के करने के बावजूद यदि किसी का राज्य सुरक्षित रह गया और उस पर कोई आपत्ति या दुर्घटना नही पडी, उसका लावलश्कर, सेना, खज़ाना, धन सम्पत्ति, हाथी घोडे बढते ही रहे तो वह यह समझते रहे कि यह सब उनकी सदभावना तथा दूसरों को न सताने का फल है। दीन तथा राज्य के विषय में जानकारी रखने वालो के निकट उन असावधान बादशाहो के देश एव राज्य का सुरक्षित रह जाना खुदा के ढील देने और टाल जाने का परिणाम होता है। मुझे अर्थात् बल्बन को, जोकि सुल्तान शम्सुद्दीन का दास है, तेरे अर्थात् महमूद के विषय में जोकि मेरा पुत्र है, यह भय है कि तू अपने देश की प्रजा के साथ इस प्रकार जीवन व्यतीत न करेगा जिस प्रकार मैंने नसीहतो में लिखवाया है। चूँकि तुझको धर्म (इस्लाम) और अपनी मुक्ति की चिन्ता नहीं अत तू अपने राज्य वालो के दीन तथा उनकी मुक्ति की परवाह न करेगा। कुछ झूठे तुझको जिस प्रकार बहका देंगे और मूर्ख बना कर तेरे सम्मुख यह कहेगे कि ऐसा योग्य बादशाह प्रशसा का पात्र है, जिसके राज्य तथा शासन में प्रजा को आराम, चैन, भोग-विलास, कामाग्नि की शान्ति और अपनी मनमानी करने की सुविधा प्राप्त है, लोग दिन रात अपनी इच्छाओं की पूर्ति करते रहते हैं और बादशाह के लिए दुआ करते रहते हैं, कहा करते है कि इस प्रकार भोग विलास की खास व आम को सुविधा किसी समय और किसी काल में न थी। वे इसी प्रकार की बातें बनायेंगे, और तू उनके बहकाने पर फूल कर बहक जायगा। ऐसी दशा में शैतान भी तुझे इसी प्रकार बहकायेगा और तू सोचने लगेगा कि यद्यपि मैं भोग विलास में ग्रस्त हू तो क्या हुआ, किन्तु मेरे राज्य और मेरी बादशाही के कारण देश के इतने हजार लोग भोग-

[illegible]

(१००) [illegible]

[illegible] बढ़ाना। न ही उन्हीं कार्यों के विषय में आज्ञा देता रहे जिन्हें पिछले बादशाह भी देते आये हैं। स्वयं नये कार्य और नई आज्ञायें जारी और उन्हें प्रचलित न करना। प्रजा के विषय में यही मार्ग अपनाना चाहिये कि न तो बहुत कड़े हों और न बिल्कुल ही सरल। इसी प्रकार खिराज के संग्रह करने में भी मध्यम मार्ग ग्रहण करना। न तो इतना ले लेना कि प्रजा दरिद्र हो जाय और न इतना कम लेना कि वह सम्पत्ति की अधिकता से विरोधी बन जाय। यदि प्रजा के पास आवश्यकता से अधिक माल हो जायगा, तो वह विरोधी बन जायगी, क्योंकि धन सम्पत्ति की अधिकता से मनुष्य व्यर्थ कार्य करने लगता है। लोग धन सम्पत्ति के विषय में अचेत हो जाते हैं और उनके हृदय में आज्ञा उल्लंघन की भावना उत्पन्न होने लगती है। लाव-लश्कर और प्रजा में इस प्रकार पारस्परिक सम्बन्ध रहना चाहिये कि प्रत्येक वर्ष प्रथम को वेतन और द्वितीय को पर्याप्त अनाज मिल जाय और किसी को कोई कष्ट न हो। लोग न तो दरिद्र रहें और न अवज्ञाकारी। प्रजा और लावलश्कर के विषय में उपर्युक्त बातें सन्तुलित रहनी चाहियें। प्रत्येक वर्ष उन्हें इतना वेतन मिल जाय और इतनी कृषि हो जाय कि लोग निश्चित होकर जीवन व्यतीत कर सकें, न तो दरिद्र हो जायें और न विरोधी। यही राज्य व्यवस्था का महत्वशाली कार्य तथा शासन व्यवस्था की अत्यन्त सफल नीति है। इसे सुलेमानी और सिकन्दरी जैसी उत्कृष्ट वस्तुओं में गिना जा सकता है। इस प्रकार शासन व्यवस्था करना कि लावलश्कर को वेतन मिल जाय और प्रजा कृषि की आय से जीवन व्यतीत कर सके। इसमें कमी या ज्यादती न हो।

(१०१) यह केवल उन्हीं लोगों द्वारा सम्भव है जो अपने काल तथा समय के अरस्तू और बुजुर्चमेहर है। जिस समय तक बादशाह विलासिता का परित्याग नहीं करता और जब तक उसके पास ऐसे बुद्धिमान मन्त्री नहीं होते जो अपनी आत्म प्रेरणा से लौहे[1] महफूज की इच्छा का पता चला सकें, उपर्युक्त कार्य, जोकि शासन व्यवस्था से सम्बन्धित कार्यों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं, उसके राज्य में सफलता-पूर्वक सम्पन्न नहीं हो सकते। हे महमूद ! तू यह समझ ले कि उपर्युक्त वसीअतों में अनेक बातें पैदा हो सकती हैं। अपने परामर्श-दाताओं को सभा में तथा एकान्त में बुलाकर आज्ञा दे कि इस वसीअत पर तेरे सम्मुख वाद विवाद करते रहें।'

'महमूद तेरे विषय में दूसरी वसीअत यह है कि अपने परामर्श-दाताओं को आज्ञा दे कि राज्य व्यवस्था से सम्बन्धित सभी कार्यों के लिये दृढ़ नियम बनायें। महमूद, तू यदि राज्य व्यवस्था सम्बन्धी कार्य के लिये उपर्युक्त प्रकार के अधिनियम नहीं बनायेगा और (आचार) विचार और इच्छानुसार एक दिन प्रातः में एक आज्ञा, दिन के अन्त

१ वह पट्ट जिस पर खुदा ने फैसला कर लिया है और जो उसकी इच्छा के अनुकूल है।

आज्ञा, रात्रि में कोई अन्य आज्ञा और दूसरे दिन फिर कोई और आज्ञा देगा, तो तेरा राज्य स्थापित नहीं रह सकता, क्योंकि आज्ञाओं के क्षणिक और अस्थायी होने के कारण अनेक कार्य बादशाह और वाली की इच्छा के विरुद्ध होते रहेंगे। ऐसा न हो कि महमूद शैतान तुझ पर विजय और सफलता प्राप्त कर ले और तेरे हृदय में यह डाल दे कि मैं बादशाह हूँ, सभी का शासक हूँ, जो मेरी इच्छा हो और जो मेरे हृदय में आये उसे करता रहूँ, क्योंकि यह शैतान का दिखाया हुआ मार्ग है। इसी के द्वारा बड़े बड़े आतंककारी बादशाह और फ़राइना पाताल तक पहुंच गये और स्थाई नरक में पड़ चुके हैं[1]।'

'महमूद तेरे विषय में तीसरी वसीअत यह है, कि कोई दिन भी ऐसा न व्यतीत होना चाहिये जब तू अपने लावलश्कर के विषय में पूछताछ न करे, क्योंकि प्रजा से कार्य तथा आवश्यकता वर्ष में एकाध बार ही पड़ती है और लावलश्कर से काम और आवश्यकता बराबर रहती है। जो राज्य लावलश्कर के कार्य में असावधान रहता है, वह सफल नहीं रह सकता। हे महमूद! तुझे चाहिये कि लावलश्कर के कार्य के विषय में विलम्ब न होने दे।'

(१०२) 'जो लावलश्कर को दान देने और उसके हेतु कार्य करने के विरुद्ध कोई अन्य बात बताये और अपने को हितैषी और राज्य का शुभचिन्तक कहे तो उसे अपने राज्य का शत्रु समझ। अपनी बादशाही को लावलश्कर की अधिकता और उसको सुव्यवस्थित रखने पर निर्भर समझ। दीवाने अर्ज़ को चाहिये कि पुराने सैनिकों के पालन-पोषण और नये सवारों तथा प्यादों की भर्ती के कार्य तथा उनकी उन्नति में तल्लीन रहे। नित्य लावलश्कर के विषय में उसे पूर्ण जानकारी होती रहे[2]।'

'हे महमूद! राज्य व्यवस्था और शासन सम्बन्धी चौथी वसीअत यह है कि तुझे इस बात की जानकारी और विश्वास होना चाहिये कि बादशाही और दासता एक दूसरे के विरुद्ध हैं। बादशाही ऐश्वर्य और वैभव का नाम है। इस्लामी आदेश ऐश्वर्य तथा स्वार्थ के विरुद्ध हैं। यदि मैं तुझ से यह कहूँ कि बादशाहत की देन की कृतज्ञता के लिये तू दासता की भूमि पर अपना माथा रगड़ा कर और इस देन के लिये नाना प्रकार के बन्दगी के कार्य किया करे तो तुझ से यह न हो सकेगा। वही बादशाह इस कार्य को कर सके हैं, जिन्हें भगवान् की सहायता प्राप्त थी। यदि तू अपने आपको खुदा का बन्दा और उसका पैदा किया हुआ समझता है तो चाहे जो भी हो पाँचों समय की फ़र्ज़ नमाज़[3] जमाअत के साथ पढ़ते रहना क्योंकि नबी की यह सुन्नत मुवक्किदा[4] है। हदीस में आया है कि जमाअत की नमाज़ सुन्नतों में से एक सुन्नत है। उसे मुनाफ़िक़ के अतिरिक्त कोई नहीं त्यागता। यह भी हदीस है कि जमाअत का त्यागने वाला मलऊन (घृणित) होता है। पहली तकबीर (अल्लाहोअकबर) इमाम के साथ कहना लोक तथा परलोक के समस्त कार्यों से उत्तम है।'

'यदि किसी कारण से तू कोई नमाज़ न पढ़ सके तो रात्रि में चाहे दिन में क़ज़ा[5] पढ़ लिया कर, इसमें असावधानी मत करना ताकि क़यामत में तेरा अन्त अच्छा हो।'

---

१ फ़तावये जहाँदारी पृ० २२ ब, २५ अ।

२ फ़तावये जहाँदारी पृ० १५ अ ६८ ब।

३ अनिवार्य नमाज़ें जो सूर्य निकलने के पूर्व, दोपहर पश्चात, सन्ध्या से पूर्व, सायंकाल तथा अर्द्धरात्रि के पश्चात् रात्रि में पढ़ी जाती हैं।

४ अनिवार्य सुन्नत।

५ अनिवार्य नमाज़ों के छूट जाने के उपरान्त उन्हें बाद में समय पर पढ़ने को 'क़ज़ा नमाज़' पढ़ना कहते हैं।

उपर्युक्त नसीहतो के पश्चात् सुल्तान ने बुगरा खाँ से कहा कि, 'हे महमूद ! मैं ने तुझे जो नसीहतें की वे तेरी योग्यता के अनुसार थी, परन्तु तेरे लिये धर्मनिष्ठ (इस्लामी) बादशाहो के कर्तव्यो के विषय में भी कुछ नसीहतें (जो नही कर सका) इस प्रकार हैं —सर्वदा अपने विचार तथा आकांक्षायें कुफ्र के विनाश में लगाये रख। मुशरिको तथा बुतपरस्तो को तुच्छ, पतित और अपमानित रख, जिससे नबियों के मध्य में स्थान प्राप्त हो। तू ब्राह्मणो को जड से उखाड फेंक क्योकि उनके द्वारा कुफ्र को उन्नति होती है।'

(१०३) 'मुहम्मद साहब की सुन्नत पर आचरण करता रह। बादशाही के कार्य के आडम्बर को सुन्नत के विरुद्ध तथा प्रतिकूल समझ। अपनी बादशाही के लिये अब्बासी खलीफा से आज्ञा प्राप्त कर। अपना राज्य प्रत्येक प्रकार के आलिमो, सूफियो, सैयिदो, मुफस्सिरो,[1] मुहद्दिसो[2], हाफिजो, मुज़क्किरों[3] तथा अन्य कलाकारो से भर दे ताकि तेरी राजधानी सभी प्रकार से परिपूर्ण रहे। जुमे की नमाज खलीफा की आज्ञा से पढ। यह सब वसीअतें ऐसी हैं जिनके ज्ञान तथा सुनने से मुझ को लाभ हो सकता है न कि तुझ जैसे विलास-प्रिय को, परन्तु अन्तिम वसीअत तुझ जैसे विलासप्रिय के लिये भी करना चाहता हूं। इससे तुझे भी, यदि तू उस पर आचरण करेगा, इस लोक में उन्नति तथा परलोक मे मुक्ति मिलेगी।'

'अन्तिम वसीअत यह है कि, यदि तू बहुत दौड धूप कर एव विनय तथा प्रार्थना से किसी ऐसे की शरण में चला जाय, जिसने देखने में दुनिया से मुँह फेर रखा हो और अपने आपको पूर्णतया खुदा की बन्दगी के लिये वक्फ कर दिया हो, तो यह अवश्य ही देखले कि यदि वह तुझ से या मेरे अतिरिक्त किसी और से कुछ माँगता हो या किसी प्रकार ससार तथा ससार प्रेमियो से मिलता जुलता हो तो उसमें श्रद्धा मत रख। उसे न तो ससार का प्रेमी ही समझा जा सकता है और न सत्य का उपासक। मै बल्बन जो कि शम्सी दास हूँ, काज़ी जलालुद्दीन से जोकि बहुत बडे काज़ी थे यह सुन चुका हू कि जब वे दूत बन कर बगदाद से देहली आये थे, तो यह उपदेश सुल्तान शम्सुद्दीन के लिये जिन पर हारुनुर्रशीद आचरण करता था, उपहार स्वरूप लाये थे। सुल्तान इस बात पर काजी जलालुद्दीन से इतना प्रसन्न हुआ कि उसकी इच्छा थी कि अपना आधा राज्य उसे प्रदान कर दे। वह उपदेश, जोकि काजी जलालुद्दीन सुल्तान शम्सुद्दीन के लिये उपहार स्वरूप लाये थे, उन्होने बगदाद में अमीरल मोमिनीन मामून[4] का हस्तलिखित देखा था और उसे खलीफा से प्राप्त कर लिया था। वह इस प्रकार है —

(१०४) 'अमीरुल मोमिनीन मामून ने किताबे सफीनतुल खुल्फा में अपने हाथ से लिखा था कि मेरे पिता अमीरुल-मोमिनीन हारुनुर्रशीद इतना ऐश्वर्य तथा वैभव रखते हुये भी दाऊद ताई और मुहम्मद समाक की सेवा में, जोकि बगदाद के ज़ाहिदो (साधको) में सर्वश्रेष्ठ थे, कुछ सेवकों को लेकर पैदल जाया करते थे और एक घडी उन लोगों के द्वार के समक्ष भूमि पर अकेले बैठे रहते थे। वे लोग मेरे पिता के लिये द्वार न खोलते और मेरे पिता को भीतर न बुलवाते। खलीफा बार बार उन दरवेशो के द्वार पर जाता और लज्जित न होना और न इसमें अपना अपमान ही समझता। उनके प्रति उसकी श्रद्धा बढती जाती और उनके विषय में उसकी भक्ति में वृद्धि होती रहती। उसकी इच्छा थी कि कोई उन लोगो से मेरी भेंट करा दे। इस कार्य के लिये उसने बहुत से लोगों को धन सम्पत्ति प्रदान करने का

१ कुरान की व्याख्या जानने वाले।
२ हदीसवेत्ता।
३ तज़्कीर करने वाले।
४ अब्दुल्लाह अल मामून सातवाँ अब्बासी खलीफा था। वह ८१३ ई० से ८३३ ई० तक खलीफा रहा।

आश्वासन दे रखा था। हमें और दूसरे विश्वासपात्रों को खलीफा का उन भिखारियो के द्वार पर जाना और विनय करना बड़ा आश्चर्यजनक दिखाई देता था। वे लोग भिखारियो तथा दरिद्रो को अपने घर में बुला लेते और अमीरुल मोमिनीन को न बुलवाते। एक दिन मैं खलीफा की सेवा में उपस्थित था कि अबू यूसुफ़ क़ाज़ी आये। अमीरुल मोमिनीन ने कहा कि 'क्या कोई उपाय ऐसा हो सकता है कि दाऊद ताई से मेरी भेंट हो जाय। मैंने सुना है कि तुमने और उन्होने एक साथ अबू हनीफा से शिक्षा पाई थी।" अबू यूसुफ काजी ने खलीफ़ा को उत्तर दिया कि, "जब तक मैं फ़क़ीर था वे मुझे अपने घर के भीतर बुलवा लेते थे। जब से मैं काज़ी हुआ, बीसियो बार उनके दर्शनार्थ उनके द्वार पर गया, किन्तु मुझे भीतर न बुलाया।" खलीफा ने कहा कि 'तेरे इस वचन से मेरी श्रद्धा उनके प्रति और बढ़ गई।' अबू यूसुफ क़ाज़ी ने खलीफा की सेवा में निवेदन किया कि, "उल्मा और मशायख जिन्हे मुहम्मद साहब के धर्म पर विश्वास है ससार के चारों ओर से खलीफा की सेवा में उपस्थित होते रहते हैं। उम्मत (मुसलमानो) को खलीफा के दर्शन का भी आदेश प्रदान किया गया है, मुहम्मद साहब के चाचा के पुत्र[1] अपना भाग्य (उनकी भेंट) में कैसे समझते हैं?'

(१०५) "बगदाद के यह दो फकीर जबकि बादशाही तथा रसूल के सम्बन्धी होने एव खलीफा की प्रतिष्ठा पर भी ध्यान नही देते, तो खलीफा उनके द्वार पर क्यो जाय। यह समाचार कि खलीफा आज रात को दाऊद ताई तथा मुहम्मद समाक के द्वार पर गया और उन्होने प्रविष्ट होने की आज्ञा भी न दी, बगदाद में प्रसारित हो चुका है।" खलीफा ने उत्तर दिया कि, "मैं इसी कारण उन लोगो के प्रति अधिक श्रद्धा रखने लगा हू कि वे न तो मुझे भीतर आने की आज्ञा देते हैं और न मेरी ओर ध्यान ही देते हैं। इसी कारण मैं उनका भक्त हो गया हू। मुझे उनकी बातो से ज्ञात होता है कि उन्होने ससार को, देखने में तथा यथार्थ में, त्याग दिया है। ईश्वर की भक्ति के कारण ससार को अपना शत्रु समझ रखा है। आजकल मैं सिर से पैर तक सासारिक व्यक्ति बन चुका हू। दुनिया का ऐश्वर्य तथा समस्त दुनिया मेरे चारो ओर एकत्र हो गई है। इन लोगो ने, जबकि दुनिया को सच्चे हृदय से शत्रु समझ लिया है, तो मुझको क्यो न शत्रु समझें, और किस प्रकार मुझे घर में आने दें और बात चीत करें, क्योंकि मैं देखने तथा यथार्थ में सासारिक जीव बन चुका हूँ। चूंकि मैंने दुनिया एकत्र कर ली है और उसको पकड रखा है अत वे भगवान् के लिये मेरे शत्रु बन गये हैं। मैं उन लोगो को, चूंकि वे दुनिया के शत्रु तथा भगवान् के भक्त हैं, भगवान् के लिये अपना मित्र बनाना चाहता हू और उन पर श्रद्धा रखता हूँ। उन्हें मुझ को अपना शत्रु समझने में पुण्य होगा और मुझे उनको मित्र समझने में पुण्य होगा। मैं इस बात का प्रयत्न करता हू कि यह लोग जिन्होंने ससार त्याग दिया है, यदि किसी प्रकार मुझे अपनी शरण में ले लें तो मैं दुनियादारी के सभी कष्टों से मुक्त हो जाऊँगा। जो लोग ससार के कारण तथा ससार के सम्मान, लोभ, धन सम्पत्ति और उपहार हेतु मेरे पास आते हैं और अपने दीन की प्रतिष्ठा दुनिया में बेच देते हैं, वे कल क़यामत में मुझ से भी अधिक दरिद्र होंगे। मैं उनसे क्या प्रार्थना करूँ। मेरा उनकी शरण और उनकी सहायता प्राप्त करने का प्रयत्न कुछ भी लाभप्रद न होगा। केवल सासारिक सम्मान और बढ जायगा।" अमीरुल मोमिनीन ने यह लाभ बता कर रोना आरम्भ कर दिया और कहने लगे कि, 'मैं अपने कार्य, वचन तथा कर्तव्य मुहम्मद साहब की सुन्नत के विरुद्ध पाता हू। मुझे ज्ञात नही कि कल क़यामत में हजरत मुस्तफा को क्या मुँह दिखाऊँगा; दुनिया में किस की शरण में जाऊँ, जिससे क़यामत के हिसाब किताब तथा कष्टों से मुक्त हो सकूँ।"

१ अब्बासी खलीफा मुहम्मद साहब के चाचा के पुत्र थे।

(१०६) अबू यूसुफ काजी ने उपर्युक्त बातें सुन कर खलीफा के जानूं चूमे और कहा कि, "मैं इतनी विद्या प्राप्त कर चुका हूँ किन्तु खुदा की मारेफत (ज्ञान) के विषय में मैंने आज सब कुछ खलीफा से सीख लिया है।"

देहली की ओर बल्बन की वापसी

बल्बन ने कहा कि इस आख्यान के कथन का उद्देश्य यह है कि पितृ-प्रेमवश मैं यह चाहता हूं कि, 'हे महमूद! तू जो कुछ भी करे या कहे उससे क़यामत के कष्ट से मुक्त हो सके।' सुल्तान बल्बन ने अपनी नसीहतें और वसीयतें अपनी ज़बान से भी कही और उसके दबीर को भी लिखवा दीं। उसको खिलअत प्रदान किया। उसकी आंखें तथा कपोल चूमे। कुछ रोया। तत्पश्चात् उसे विदा कर दिया। इस मंजिल से बुगरा खां को लखनौती की ओर लौटा दिया और स्वयं निरंतर कूच करता हुआ देहली की सेना के साथ सरयू तट तक पहुँच गया, वहाँ कुछ दिनों ठहरा। लोगों को सचेत कर दिया और फरमान भेजा कि जो कोई भी देहली से सम्मानित ध्वजा के साथ लखनौती की इक्लीम में आया हो, वह बिना आज्ञा लखनौती में न रहे और लखनौती की इकलीम से बिना आज्ञा देहली की ओर प्रस्थान न करे। सर्व साधारण के विषय में पूछताछ करने के पश्चात् सुल्तान ने सरयू नदी पार की और देहली की ओर विजय तथा सफलता प्राप्त करके प्रस्थान किया। जिस खित्ते[1] या कस्बे में उसकी पताकायें पहुचती, वैसे ही उस स्थान से तथा अन्य स्थानों से विजय की बधाई देने के लिये एवं स्वागतार्थ काजी, आलिम, मशायख, गण्य-मान्य तथा प्रतिष्ठित लोग, पदाधिकारी, मुतसर्रिफ, मालकियान, मफरूजी, राय, चौधरी और मुकद्दम आते। उसकी सेवा में उपहार और तोहफे तथा कर पेश करते थे। उन्हें खिलअत प्रदान होती। उनका आदर सत्कार किया जाता। इस प्रकार समस्त हितैषी और शुभ-चिन्तक वापस लौट जाते। बड़े बड़े खित्तों तथा कस्बों में कुब्बे सजाये जाते और खुशियाँ मनाई जाती।

बल्बन का देहली पहुँचना और देहली मे समारोह

(१०७) जब बदायूँ से होकर गुज़रा तो घिघौर के स्थान पर गंगा को पार किया। देहली के प्रत्येक स्थान के सैयिद, काजी, आलिम, सद्र, प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध लोग तथा वृद्ध लोग स्वागत के लिये आते थे, तोहफे और उपहार भेंट करते थे। सुल्तान उनको खिलअत प्रदान करता था। देहली में बड़े सुन्दर कुब्बे सजाये गये। सुल्तान ने तीन वर्ष के पश्चात् शहर (देहली) में प्रवेश किया। प्रत्येक घर में उनके सम्बन्धियो के पहुच जाने के कारण खुशियां मनाई जाने लगी और दावतें होने लगी। गाना बजाना आरम्भ हो गया। सुल्तान ने आज्ञा दी कि 'दरिद्र लोगों को न्योछावर दिये जायँ।' सुल्तान ने समस्त बुजुर्गों की जियारत किबले की ओर की[2]। उलमाये आखेरत में जो लोग जीवित थे, सुल्तान उनके घरों पर गया। सब की सेवा में फुतूह पेश की। माल के बन्दियो के विषय में आज्ञा दी कि उन्हें बन्दीगृह से मुक्त कर दिया जाय। उनके ऊपर जो कुछ शेष हो उसे क्षमा कर दिया जाय। बकाये (शेष) के विषय में आज्ञा दी कि उन्हें कागजों से निकाल दिया जाय। जिस दिन सुल्तान ने शहर में प्रवेश किया तो देश के प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने न्योछावर की वर्षा की।

फ़खरुद्दीन कोतवाल को सम्मानित करना

सुल्तान राज भवन में उतरा। जिस केबा[3] को पहने था उसे मलेकुल-उमरा देहली के कोतवाल को प्रदान कर दिया। उसकी अनुपस्थिति में जिस प्रकार उसने राज्य को

१ प्रदेश या भू भाग।
२ किबले की ओर (काबे की ओर) मुँह करके बुजुर्गों के लिये खुदा से दुआ की।
३ अचकन के समान वस्त्र जोकि सब कपड़ों के ऊपर पहना जाता है।

सुव्यवस्थित रखा, उसके लिये उसे इतना सम्मानित किया कि लोगों को उसकी अधिकता से ईर्ष्या तथा द्वेष होने लगा। उसने लखनौती से मलेकुल-उमरा के विषय में एक फरमान भेजा था कि उसे बिरादर मलेकुल-उमरा[1] लिखा जाया करे। इस प्रकार मलेकुल-उमरा ने सर्वोच्च श्रेणी प्राप्त करली। सर्व साधारण उसकी सेवा में उपस्थित रहने लगे। उसकी प्रतिष्ठा तथा गौरव के कारण सुल्तान के पुत्रों एवं भतीजों को भी ईर्ष्या होने लगी। बल्बन के शहर में पहुंचने के कुछ दिन उपरान्त लोग अपने अपने घरों में निवास करने लगे, खुशियां और दावतें समाप्त हो गईं।

लखनौती के विद्रोहियों को फांसी

जब कुब्बों पर लिपटे हुये कपड़े उतार लिये गये, तो बादशाह ने आज्ञा दी कि बदायूं द्वार से तिलपट तक दोनों ओर दार[2] का प्रबन्ध किया जाय। देहली और समीप के स्थानों के उन निवासियों के विषय में जो लखनौती पहुंच कर तुग़रिल के मित्र हो चुके थे और अब बन्दी बनाकर सेना के साथ लाये गये थे, बल्बन ने आदेश दिया कि उन्हें दण्ड देने के लिये दार पर लटका दिया जाय।

(१०८) इस घातक समाचार को सुनकर शहर के निवासी बड़े दुखी हुए क्योंकि बंदियों में इन लोगों के अनेक सम्बन्धी और रिश्तेदार सम्मिलित थे। इन लोगों के लिये शहर के कुछ निवासी बड़े दुःखी और पीडित थे। बन्दियों के हा हाकार तथा रोने चिल्लाने से शहर के मुसल्मानों की आंखों से आंसू के स्थान पर रक्त बहने लगा।

विद्रोहियों के विषय में सेना के क़ाज़ी की सिफ़ारिश

यह समाचार काजिये लश्कर को, जो अपने समय का बड़ा ही धर्मनिष्ठ तथा पूज्य व्यक्ति था, मिला। उससे निवेदन किया गया कि 'कल इतने मुसलमानों का बध होगा और उनको दार पर खींचा जायगा।' काजिये लश्कर को उपर्युक्त समाचार सुनने की शक्ति न रही। जुमे की रात्रि में सुल्तान के पास पहुंचा। सुल्तान के सामने ऐसी बातें करने लगा जिससे प्रभावित होकर सुल्तान ने रोना प्रारम्भ कर दिया। उसने सुल्तान को रोते और आंसू बहाते देखा तो एक पैर पर खड़े होकर, उन बन्दियों की जिन्ह बध करने का आदेश हो चुका था, सिफारिश की। सुल्तान ने उसकी सिफारिश स्वीकार कर ली। आज्ञा दी कि उन दारों को उतार कर पृथक् कर दिया जाय। उन बन्दियों में से अधिकांश अप्रसिद्ध और साधारण व्यक्तियों को मुक्ति प्रदान कर दी गई। कुछ प्रतिष्ठित लोगों को समीप के कस्बों में भेज दिया गया। बन्दियों में से शहर के कुछ भूतपूर्व गण्यमान्य व्यक्तियों को बन्दीगृह में रखा गया। कुछ के विषय में आदेश हुआ कि उन्हें भैंसा पर सवार करके दण्ड के लिये शहर में घुमाया जाय। कुछ समय पश्चात् क़ाज़ी की सिफारिश से उनमें से प्रत्येक को मुक्त कर दिया गया।

लखनौती की विजय का प्रभाव

जब सुल्तान बल्बन के सफलीभूत एवं विजयी पताकाओं के लौटने की सूचना देश में चारों ओर प्रसारित हो गई तो सभी मुसलमान, हिन्दू, तुर्क, ताजीक, प्रतिष्ठित एवं प्रसिद्ध व्यक्ति और मिल्क तथा इनाम की भूमि के स्वामी विजय की बधाई देने के लिये दरबार में आये और पाबबोस किया। घोड़े, ऊँट तथा उपहार एवं कर भेंट किया। सुल्तान ने उनको खिलअतें दी और सम्मानित किया। देश के सभी नगरों में निसारे[3] चत्र बाँटी गईं। इस कारण खजानों में बहुत सा धन एकत्र हो गया।

[1] भाई मलेकुल उमरा।
[2] फांसी।
[3] न्यौछावर।

(१०६) सुल्तान का ज्येष्ठ पुत्र, जिसे मुल्तान का खानकहते थे और जिसको सिन्ध की अक्ता भी प्राप्त थी, सुल्तान की ३ वर्ष की अनुपस्थित में बहरजो और तातारी घोड़े तथा जो कुछ धन सम्पत्ति एकत्रित कर सका था देहली लाया। उन्हें सुल्तान के कारखानों में भिजवा दिया गया। इनमें जो विशेष वस्तुयें थी, उन्हें उसने अपने पिता के सम्मुख पेश किया। सुल्तान ने यह बहुत पसद किया। सुल्तान की जो कुछ भी कृपा तथा दया इस पुत्र के विषय में थी वह दस गुनी बढ गई। सुल्तान ने कुछ समय तक उसे अपने समक्ष रखा और एकान्त में राज्य व्यवस्था की विधि बताता रहा। कुछ समय उपरान्त सुल्तान ने इस पुत्र को जिससे अधिक प्रिय सुल्तान के लिए कोई अन्य न था, बड़े आदर और सम्मान से मुल्तान की ओर विदा किया। लखनौती की विजय, तुगरिल की हत्या और उस दण्ड के फलस्वरूप, जो सुल्तान ने लखनौती में दिया, उसका सम्मान, वैभव, प्रतिष्ठा साधारण तथा विशेष व्यक्तियों एवं हिन्द और सिन्ध वासियों के हृदय में बहुत बढ गई। लखनौती की विजय और तुगरिल के विनाश के पश्चात् बल्बन का राज्य और भी दृढ हो गया। सुल्तान देश के प्रत्येक भाग पर आक्रमण करने से निश्चित हो गया। कोई विरोधी और विद्रोही शेष न रहा और उसकी इच्छायें पूरी हो गई।

खाने शहीद की मृत्यु

६८४ हि० (१२८५-८६ ई०) में मुल्तान के खान को जो सुल्तान का ज्येष्ठ पुत्र, उत्तराधिकारी और उसके राज्य का सहायक था, लाहौर और दीपालपुर में दुष्ट तिमुर खाँ से, जोकि चगेजखानी कुत्तो में एक विचित्र कुत्ता था, युद्ध करना पडा। भगवान् की इच्छा ऐसी हुई कि मुल्तान का खान अमीरो, सरदारो और सेना के विश्वासपात्रों के साथ इस युद्ध में शहीद हो गया। बल्बनी राज्य में बहुत बड़ी दुर्घटना हुई। बहुत से योग्य सवार इस युद्ध में मारे गये। मुल्तान में एक कोलाहल मच गया। प्रत्येक घर में रोना पड गया। सभी ने नीले वस्त्र धारण कर लिए। उनके रोने चिल्लाने का शोर आकाश तक पहुँचने लगा। उस तिथि से मुल्तान के खान को खाने शहीद कहने लगे।

(११०) अमीर खुसरो भी इस युद्ध में मुगलो के हाथ बन्दी बना था। किसी न किसी युक्ति से वह उनके हाथ से मुक्त हो सका। उसने खान शहीद के मरसिये[१] में दो छन्द लिख कर एक जादू कर दिया है।

'छन्द'

जिस दिन उस राज्य के सूर्य का अवसान हो गया।
दिन की क्या गणना, क्योकि उस सूर्य का अन्त हो गया॥

मुहम्मद की मृत्यु का बल्बन पर प्रभाव

जब खाने शहीद की मृत्यु तथा मुल्तान के लश्कर की, जो अतिसुव्यवस्थित था, पराजय की सूचना सुल्तान बल्बन को प्राप्त हुई तो सुल्तान पूर्णत हताश हो गया। सुल्तान इस पुत्र को अपने प्राणो से प्रिय रखता था। राज्य व्यवस्था के अनेक गुणो से, जो उसमें विद्यमान थे, उसने खाने शहीद को परिचित करा दिया था। खाने शहीद में राज्य व्यवस्था चलाने के अनेक गुण थे। जिस समय उसकी मृत्यु हुई सुल्तान की आयु ८० वर्ष से अधिक हो चुकी थी।

---

१ करुण रस की कविता। अमीर हसन ने भी इस विषय पर एक मरसिया लिखा था जो बड़ा प्रसिद्ध है। यहया ने तारीखे मुबारक शाही में उस पूरे मरसिये को नक़्ल किया है।

इस पुत्र की मृत्यु के पश्चात् यूँ तो वह बड़ा प्रयत्न करता और यह प्रकट न होने देता कि पुत्र की मृत्यु से उसकी शक्ति किसी प्रकार कम हो गई है, किन्तु वह दिन प्रति दिन निर्बल होने लगा। दिन को दरबार करता, राज्य व्यवस्था में संलग्न रहता और ऐसा दिखाता कि पुत्र की मृत्यु के शोक का उस पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ा है परन्तु वह रातों को रोता चिल्लाता, अपने वस्त्र फाड़ डालता और सिर पर धूल डालता।

मुल्तान एवं सिन्ध का प्रबन्ध

सुल्तान ने खाने शहीद की मृत्यु की सूचना पाने के पश्चात् जो अक्ता, छत्र, दूरबाश और बादशाही के चिह्न खाने शहीद को दे रखे थे, वे उसके पुत्र कैख़ुमरो को प्रदान किये। कैख़ुमरो, यद्यपि नवयुवक था परन्तु उसका पालन-पोषण सुल्तान के संरक्षण में हुआ था। देहली से मुल्तान की ओर नये अमीर, मन्त्री तथा पदाधिकारी भेजे। उस तिथि से दिन प्रति दिन बल्बनी राज्य में विघ्न पड़ने लगा और सुल्तान पुत्र के शोक में निर्बल होने लगा।

सुल्तान बल्बन के राज्यकाल के प्रतिष्ठित व्यक्ति

(१११) इस तारीखे फीरोज़शाही के सङ्कलन-कर्त्ता ने कुछ विश्वासपात्रों से सुना है कि बल्बन के राज्य-काल में शम्सी प्रतिष्ठित लोगों में कुछ लोग शेष रह गये थे। सुल्तान बल्बन के राज्य-काल में ऐसे मलिकों में से कुछ चुने हुए और सर्वश्रेष्ठ मलिक, सम्बन्धी और सहायक एकत्र हो गये थे। उन बुज़ुर्गों और उन सहायकों के कारण सुल्तान बल्बन का राज्य-काल सुव्यवस्थित और सर्वश्रेष्ठ हो गया था। सभी उस पर विश्वास करने लगे थे। सैयिदों में, जोकि उम्मत (मुसलमानों) के बुज़ुर्गों में सबसे बुज़ुर्ग हैं, बदायूँ के काज़ियों के आदरणीय पूर्वज कुतुबुद्दीन शाहर के शेखुल इस्लाम थे। सैयिद मुबारक के पुत्र सैयिद मुन्तखबुद्दीन तथा सैयिद जलालुद्दीन, सैयिद अज़ीज़ और सैयिद मुईनुद्दीन सामाना (निवासी) गर्देज़ के सैयिद छज्जू के पूर्वज, कैथल के बड़े बड़े सैयिद, जजीर के सैयिद, ब्याने के सैयिद, बदायूँ के सैयिद और अन्य कुछ सैयिद जोकि दुष्ट चंगेज़ खाँ द्वारा उत्पन्न दुर्घटना के कारण इस देश में आगये थे, वर्त्तमान थे। जहाँ तक इनके वंश तथा कुल का प्रश्न है इनके समान कोई अन्य न था। यह लोग अपनी पवित्रता तथा धर्मनिष्ठता के लिये प्रसिद्ध थे और इनमें से प्रत्येक जीवित था। जिस काल में इतने सरदार उपस्थित हों, तो वह काल किस प्रकार समस्त युगों में उच्च कोटि का नहीं कहा जा सकता। सुल्तान बल्बन के राज्य-काल में भी अनेक प्रतिष्ठित आलिम जोकि अपने समय के विद्वान् गुरुओं में गिने जाते थे, लोगों को शिक्षा प्रदान किया करते थे।

बल्बन के राज्य-काल के आलिम

मौलाना बुरहानुद्दीन मलख, मौलाना बुरहानुद्दीन बज़ाज़, मौलाना फखरुद्दीन काज़ी के चेले मौलाना नज्मुद्दीन दमिश्की, मौलाना सिराजुद्दीन मजरी, मौलाना शर्फुद्दीन वलवलजी, सद्रे जहाँ मिनहाजुद्दीन जूरजानी, काज़ी रफीउद्दीन गाज़रूनी, क़ाज़ी शम्सुद्दीन मराज़ी, काज़ी रुक्नुद्दीन सामाना (निवासी), काज़ी कुतुब काशानी के पुत्र काज़ी जलालुद्दीन काशानी, क़ाज़िये लश्कर काज़ी सदीदुद्दीन, क़ाज़ी ज़हीरुद्दीन, काज़ी जलालुद्दीन और अनेक गुरु, मुफ्ती और अन्य प्रतिष्ठित लोग तथा शम्सी काल के उलमा के शिष्य एवं पुत्र विद्यमान थे। वे शिक्षा प्रदान करते तथा फतवों के उत्तर लिखवाने में बड़े प्रसिद्ध थे।

बल्बनी राज्य के मशायख़

(११२) बल्बनी राज्य-काल में ऐसे कार्य कुशल तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति विद्यमान थे, जिनमें

से प्रत्येक एक एवं इकलीम या राज्य सँभालने के योग्य था। ऐसे मशायख से जिनके समान पुरुष विरले ही उत्पन्न होते हैं, बल्बनी काल के कार्यों को बड़ी शोभा प्राप्त हो गई थी। उनके राज्य-काल के प्रारम्भिक वर्षों में शेखुलइस्लाम फरीदुद्दीन मसऊद थे जो कि ससार के कुतुब[1] और दुनिया के आधार थे। इस देश के निवासी उनकी सरक्षता में थे। सर्वदा उनके चमत्कार प्रदर्शित हुआ करते थे। सर्व साधारण उनके निकट एवं मध्य में रहने के कारण लोक तथा परलोक के कष्टों से मुक्ति प्राप्त करते थे। उस समय के योग्य व्यक्ति उनके शिष्य बनकर उच्च श्रेणी को प्राप्त हो गये थे। उस समय शेखुल इस्लाम बहाउद्दीन जकरिया के पुत्र शेख सद्रुद्दीन, शेख कुतुबुद्दीन बख्तियार के खलीफा, शेख बद्रुद्दीन गजनवी, शेख मलिक यार पर्रा, देवीसाम, सीदी मौला और कुछ अन्य सन्त जीवित थे। इन लोगों के आशीर्वाद के कारण सुल्तान बल्बन के राज्य काल में इस देश पर आकाश से भगवान् की दया तथा दान की सर्वदा वर्षा हुआ करती थी।

बल्बन के राज्य-काल के तबीब (चिकित्सक) तथा दार्शनिक

इसी प्रकार बल्बन के राज्य काल के दार्शनिकों और तबीबों (चिकित्सकों) के समान कोई अन्य न था। मौलाना हमीदुद्दीन मुतरिज अपने समय के ज्योतिषवेत्ता और तिब (चिकित्सा शास्त्र) में बुकरात और जालीनूस थे। मौलाना बद्रुद्दीन दमिश्की के समान तिब में कोई न था। वे धर्मनिष्ठता तथा पवित्रता म भी सब से बढ़े चढ़े थे। मौलाना हुसामुद्दीन मारीगला और कुछ अन्य दक्ष तबीब उस काल की शोभा थे।

बल्बन के राज्य के गण्यमान्य व्यक्ति

सुल्तान बल्बन के राज्य-काल में अनेक योग्य मत्री, प्रतिष्ठित, प्रसिद्ध तथा गण्यमान्य व्यक्ति विद्यमान थे। उसका राज्यकाल विद्वानों, ज्ञानियों, कलाकारों कार्यकुशल लोगों, विश्वासपात्रों, कव्वालों तथा अद्वितीय गायकों से परिपूर्ण था, उसके राज्य-काल में विश्वासपात्र लोगों की अधिकता के कारण राज्य की धाक ससार के चारों ओर बैठ गई थी। उसकी बादशाही के वैभव तथा राज्य-व्यवस्था के नियमों का अन्य बादशाह भी अनुसरण करने लगे थे।

(११३) बल्बनी राज्य-काल में कुछ ऐसे मलिक पैदा हो गये थे, जिनके समान उस युग में कोई न था। वे लोग उसके राज्य के सहायक तथा हितैषी थे।

मलिक अलाउद्दीन किशली खाँ

उस काल के इन प्रतिष्ठित मलिकों में सुल्तान का चचेरा भाई मलिक अलाउद्दीन किशली खाँ भी था, जो अपनी दानशीलता एवं उदारता के कारण हातिमताई से भी बढ गया था। मैंने अनेक विश्वस्त सूत्रों विशेषकर अमीर खुसरो से सुना है कि मलिक अलाउद्दीन किशली खाँ के समान दान तथा उदारता म कोई भी न था। बाण फेंकने, गेंद खेलने और शिकार खेलने में ऐसे व्यक्ति कम जन्म पाते हैं। जिस समय वह अपने पिता किशली खाँ के स्थान पर जोकि सुल्तान का भाई था, बारबक नियुक्त हुआ और कोल की अक्ता और चौगानेजर[2] प्राप्त किया, ख्वाजा शम्स मुईन नदीमे खास तथा मलिक कुतुबुद्दीन हसन गोरी, जिन्होंने उसकी प्रशसा और गौरव के विषय म अनेक पुस्तकों की रचना की है, जीवित थे। उन्होंने मलिक अलाउद्दीन की प्रशसा म कविता लिखी और गाने के लिये एक गजल की रचना की। उन्हें बल्बन के दरबार के गायकों को दे दिया, जिन्होंने गजल और कविता कठस्थ कर ली। तत्पश्चात् गायकों को

१ बहुत बड़े बड़े सूफी कुतुब अथवा ससार के आधार कहे जाते हैं।

२ तलवार।

उपहार देकर विदा कर दिया गया। जिस समय सुल्तान के दरबार में नौरोज[1] के जश्न (समारोह) के दिन समस्त खानों तथा मलिकों के उपहार पेश किये जा रहे थे और प्रत्येक के नाम से फस्ली पुकारे जा रहे थे, मुल्तान के गायकों ने मंच पर सुल्तान के सम्मुख यह कविता गजल के साथ गा दी।

कविता

अलाउद्दीन शह उलुग कुतलुगे मुअज्जम बार्बक
किशली खाँ मुअज्जम का पुत्र तथा पृथ्वी का बादशाह

मलिक अलाउद्दीन ने अपने पायगाह के समस्त घोड़े ख्वाजा शम्स मुईन को प्रदान कर दिये। गायकों को दस हजार तन्के इनाम दिए। इस इनाम से उसकी दानशीलता का अनुमान किया जा सकता है। दानशीलता, उदारता, गेंद खेलने तथा शिकार खेलने में मलिक अलाउद्दीन किशली खाँ हिन्दुस्तान तथा खुरासान में प्रसिद्ध था। सुल्तान बलबन को यद्यपि वह उसका चाचा था इससे लज्जा आती थी। वह उसके दान की अधिकता से रुष्ट रहा करता था।

(११४) मैंने बल्बन के मन्त्री हसन बसरी के भानजे ख्वाजा जकी से सुना है, कि बल्बन के राज्य-काल में मलिक अलाउद्दीन किशली खाँ के तीर चलाने, गेंद खेलने और शिकार खेलने के समाचार बगदाद में दुष्ट हलाकू को मिले। हलाकू ने मलिक अलाउद्दीन के पास एक कटार यादगार के तौर पर भेजी। बल्बन के वकीलदर बुजुर्गाला कटार लाया था। हलाकू ने उसे सूचना भेजी कि "मलिक अलाउद्दीन से मेरी ओर से कहदे कि मैंने तेरे गेंद और शिकार खेलने की प्रशंसा सुन रखी है। मेरी इच्छा है कि तुझे देख भी लूँ। यदि मेरे पास चला आये तो मैं एराक के राज्य में से आधा तुझे प्रदान कर दूँगा।" सुल्तान बल्बन को इस सन्देशे का पता लग गया। वह अपने दिल में और भी रुष्ट हुआ। उसे यह बात अच्छी न लगी और मलिक अलाउद्दीन से उसकी ईर्ष्या और बढ़ गई। मलिक अलाउद्दीन में अनेक गुण और विशेषतायें थीं। वह सुल्तान बल्बन का अमीर हाजिब था। दान तथा वीरता में, जोकि सरदारी और नेतृत्व के लिए परम आवश्यक हैं, उसके समान कोई न था। अनेक बार अपनी यादगाह एवं इमलाक नष्ट कर चुका था और मिल्क तथा धन सम्पत्ति में पहनने के वस्त्र के अतिरिक्त अपने पास कुछ अधिक न रखा। दुख और हजार दुख हैं कि समय के हाथों ऐसे दानियों का अन्त हो गया। आकाश ने ऐसे अपने समय के महत्वपूर्ण व्यक्तियों को भी भूमि के नीचे कर दिया।

मैं, जोकि दानियों का मर्सिया लिख रहा हूँ, उन कलाकार वृद्धों में हूँ जोकि पीले सूर्य के समान शेष रह गये हैं। आकाश मेरे साथ ऐसी लीलायें कर रहा है जोकि उसने किसी वृद्ध के साथ न की होंगी। दानियों और कलाकारों से पृथक् होकर उनकी स्मृति में रोता हूँ।

एमादुल-मुल्क रावते अर्ज

सुल्तान बल्बन के मलिकों में दूसरा प्रतिष्ठित मलिक एमादुल-मुल्क रावते अर्ज था।

१ ईरान में इस्लाम से पूर्व भी नौरोज का त्योहार बड़े समारोह के साथ मनाया जाता था। यह त्योहार २१ मार्च को होता था। मुसलमान भी ईरान की विजय के पश्चात् इस समारोह को मनाने लगे। अब्बासी काल में नौरोज बड़ी धूम से मनाया जाता था। बल्बन ने भारतवर्ष में ईरानी राज्य दरबार की सभी बातों का अनुसरण किया। इस कारण नौरोज हिन्दुस्तान में बड़ी धूम से मनाया जाने लगा।

यह एमादुल-मुल्क शम्सी दास था। शम्सी राज्य-काल में अर्जे शिकरा से अर्जे ममालिक के पद पर पहुँचा था। शम्सी पुत्रो के तीस वर्षीय राज्य-काल में भी वही अर्जे ममालिक रहा।

(११५) सुल्तान बल्बन ने अपने राज्य-काल में अर्जे ममालिक का पद रावते अर्ज को दे दिया। शम्सी राज्य-काल मे रावते अर्ज सुल्तान बल्बन के घनिष्ठ मित्रो में से एक था। इस समय तक जब कि करन अर्थात् ६२ वर्ष व्यतीत हो चुके है दीवाने अर्जे ममालिक का सचालन रावते अर्ज की आज्ञा तथा आदेश से होता है। सुल्तान बल्बन रावते अर्ज के ऐश्वर्य तथा सम्मान का बडा ध्यान रखता था। उसने आदेश दे दिया था कि उस पद पर बहुत बडे-बडे बल्बनी खान और मलिक नियुक्त किये जायें। दीवाने अर्ज में उन्हे पूर्ण अधिकार प्राप्त[1] हो। जो सवार भी अर्ज के समय रावत को योग्य तथा सुव्यवस्थित दृष्टिगोचर हो, उसका वेतन पहले की अपेक्षा बढा दिया जाय, उसे खिलअत प्रदान की जाय और उसका सम्मान किया जाय। यदि हश्मे हजरत के किसी सवार पर कोई दुर्घटना पड जाती और वह एमादुल मुल्क रावते अर्ज से निवेदन करता कि मुझ पर ऐसी आफ्त आ पडी है कि मेरा घोडा और अस्त्र-शस्त्र किसी दुर्घटना में नष्ट हो चुके हैं, तो रावते अर्ज उसकी सहायता करता था। अपने पास से उसकी सहायता और मदद प्रदान करता और कहता, 'मै हश्म का सरदार हू और यदि मैं हश्म के कष्टो का निवारण न करूँ तो मेरी सरदारी घृणास्पद एव व्यर्थ है। रावते अर्ज को समस्त सेना के प्रति माता-पिता के समान कृपा-दृष्टि रखनी चाहिये।" यदि किसी सवार का घोडा दुर्बल पाता तो उसके विषय में पूछताछ करता कि वह दुराचारी और शराबी तो नही है। यदि उसे दुराचारी न पाता तो उसे अपनी पायगाह से मोटा ताजा घोडा प्रदान कर देता, या उसके हाथ पर पचास तन्के रखता और कहता कि अपना घोडा इससे मोटा कर लो।

रावते अर्ज प्रत्येक वर्ष दीवाने अर्ज (के कर्मचारियों) को अपने निवास स्थान पर बुलवाता था और कार्यालय के सभी कर्मचारियो को वस्त्र प्रदान करता, उनको मेहमान रखता और अपने पास से बीस हजार तन्के दान करता था ताकि वह कर्मचारियो के पद के अनुसार उनमें वितरित किया जाय।

(११६) कर्मचारियो को अपने सम्मुख बुलवाता, प्रत्येक से हाथ मिलाता धन्यवाद एव कृतज्ञता प्रकट करते हुये कहता कि, 'मैं तुमसे निवेदन करता हू कि तुम लोग बादशाह का, जो कि हश्म का स्वामी है, मेरा क्योकि मै हश्म का आरिज हू, और हश्म का, क्योकि वे देश के नगरो के रक्षक है, विशेष ध्यान रखो। हश्म से किसी वस्तु की रिश्वत या अन्य तरीके से कोई आशा मत रखो। यदि तुम लोग नायबाने अर्ज मलिको और अमीरो से किसी कार्य की पूर्ति हेतु कुछ ले लोगे तो नायबाने अर्ज उसका दुगुना, तीन गुना हश्म से वसूल कर लेगे। जो कुछ व्यय करेंगे वह उनके वेतनो से निकाल कर पूरा कर लेंगे। एक तिहाई या चौथाई तुमको दे देंगे और दो तिहाई या तीन चौथाई बीच ही से उडा देगे। इस प्रकार हश्म का विनाश हो जायगा।" वह इस बात को उचित न समझता था कि हश्म के वेतन में से किसी प्रकार एक जीतल भी कम हो जाय या हश्म को किसी कारण दुख अथवा कष्ट पहुँचे। अनेक बार अर्ज की गद्दी पर से बैठे बैठे उसने घोषणा की थी कि "सभी उपस्थित जन सुनलें कि राज्य व्यवस्था एव शासन प्रबन्ध का रक्षक और सहायक, "मैं हूँ', क्योंकि हश्म मेरे हाथ में दे दी गई है। इसका प्रबन्ध और इसकी कठिनाइयो तथा क्लेश को दूर करने का कार्य-भार मेरे ऊपर है। यदि मै हश्म के कार्य में असावधानी करता हू और रात दिन

१ फतावाये जहाँदारी पृ० ६७ ब ६८ ब।

उनकी उन्नति की चिन्ता नहीं करता, हरम को अपने भाइयों और पुत्रों से बढ़कर नहीं समझता तो इस लोक में हरामखोर प्रसिद्ध हो जाऊँगा और कयामत में भगवान् के सिंहासन के सम्मुख लज्जित रहूँगा।"

दीवाने अर्ज में लोग एमादुल-मुल्क रावते अर्ज का भोजन खाते थे। भोजन के पचास साठ थाल दीवान में लाये जाते जिनमें मैदे की रोटियाँ, भेड़ का उत्तम माँस, कबूतर और मुर्गी के चूजे,[1] सेंकी हुई और तली हुई टिकियाँ, अनेक प्रकार के शर्बत, फुका और पान होते थे। सभी नवीसिन्दों (मुंशियों), सहमुल हश्मान तथा उनके नायब, चाउश, नकीब, नायबे अर्जे ममालिक, प्रतिष्ठित अमीर और वे जिन्हें दीवाने अर्ज में कोई विशेष स्थान प्राप्त होता, दस्तरख्वान[2] पर बैठते और भोजन करते थे। जो भोजन शेष रह जाता वह दरवेशों (भिखारियों) को दे दिया जाता था। बहुत से ऐसे व्यक्ति जो दस्तरख्वान पर न बैठ सकते थे, उन्हें भी एमादुल-मुल्क के दस्तरख्वान से भोजन भेजा जाता था।

(११७) रावते अर्ज पान खाने के लिये प्रसिद्ध था, उसकी आदत थी कि वह जल्द-जल्द पान माँगा करता था, जितनी बार भी उसको पान दिया जाता, उतनी बार उसी प्रकार के पान समस्त लोगों को, जो उसके निकट बैठे अथवा खड़े होते, चाहे उन्हें कोई पहचानता हो या न पहचानता हो, पान दिये जाते थे। जिस समय तक वह दीवान में बैठता, पचास साठ पान बनाने वाले दास उसे पान देने में लगे रहते। रावते अर्ज में प्राचीन मलिकों तथा बड़े बड़े खानों का ठाट बाट तथा ऐश्वर्य पाया जाता था। वह लोगों को अत्यधिक दान-पुण्य किया करता था। दान के लिये उसने अनेक गाँव वक्फ कर दिये थे। इस समय, जब कि उसकी मृत्यु को कई करन व्यतीत हो चुके हैं, गाँव वर्त्तमान हैं और उन गाँवों की आय उन लोगों को प्रदान की जाती है, जिन्हें अधिक आवश्यकता होती है। उनसे उसकी आत्मा की शान्ति के लिये भोजन वितरण होता है और कुरान पढ़ा जाता है।

फखरुद्दीन कोतवाल

सुल्तान बल्बन के राज्य-काल के मलिकों में तीसरा विशेष प्रतिष्ठित मलिक, मलेकुल-उमरा फखरुद्दीन कोतवाल था। वह अपने दान पुण्य के लिये शहर में बड़ा प्रसिद्ध था। बारह हजार कुरान पढ़ने वालों को वह वजीफे[3] दिया करता था। वे लोग दिन के बारह घंटे कुरान पढ़ा करते थे और उनमें से कुछ लोग पूर्ण कुरान पढ़ डालते थे। वह साल के तीन सौ साठ दिन में प्रतिदिन ग्रीष्म, शीत तथा वर्षा ऋतुओं में नया वस्त्र (कबा, यक्ता, पीराहन, इजार, दस्तारचा[4]) धारण करता था। जिस वस्त्र को एक बार पहन लेता उसे दुबारा न पहनता। जो कपड़ा उतारता उसे न्योछावर और दान में दे देता। इसी प्रकार उसकी चारपाई और फर्श भी नया होता था। यह सब एकत्रित होता रहता और अनाथ कन्याओं तथा निर्धनों की कन्याओं को दहेज में दिया जाता था। प्रत्येक वर्ष एक हजार निर्धन कन्याओं के विवाह के अवसर पर दहेज दिया जाता था। जो कोई किताबें नक़ल करने वाला कोई कुरान नक़ल करके लाता, उसके लिये उपहार भेंट करता और कुरान ले लेता और

१ बच्चे।

२ वह कपड़ा जिस पर खाना रख कर खाया जाता है।

३ आर्थिक सहायता।

४ भिन्न भिन्न प्रकार के वस्त्र। (यक्ता अथवा यक्तदी-गर्मी के मौसम में पहनने का कपड़ा, पीराहन-कमीज। इजार पाजामा अथवा मिरजाई। दस्तारचा छोटी पगड़ी अथवा रूमाल।

किसी ऐसे को दे देता जोकि कुरान पढना जानता था या उसको याद करने की इच्छा रखता था।

(११८) जो कुछ वृत्तान्त दिया गया है, उससे उसके दान-पुण्य के विषय में भली-भाँति अनुमान लगाया जा सकता है। उसने जुमा मस्जिद के बडे द्वार के सामने अपना रौजा निर्मित कराया। लोग उसकी आत्मा की शान्ति के लिये वहाँ फातेहा पढा करते हैं।

अमीर अली सरजानदार (हातिम खाँ)

चौथा मलिक जोकि सुल्तान बल्बन के राज्य-काल के मलिकों में बडा विशेष स्थान रखता था, वह सुल्तान बल्बन का मौलाजादा मलिक अमीर अली सरजानदार था। उसके दान की अधिकता के कारण उसे हातिम खाँ के नाम से पुकारा जाता था। अमीर खुसरो के दीवान में उसकी बहुत बडी प्रशसा पाई जाती है। अमीर खुसरो उसका सेवक था और उसके नाम पर उसने अस्पनामे[1] की रचना की है। उसमें से दो तीन छद निम्नाकित हैं—

अपने समय का शाह, जिसके अधिकार में राज्य और दीन है
दीन के ऊपर वह सम्मान का सूर्य है।
उसका नाम अली है और साहस में
वह अली की भाँति दुलदुल[2] सवार सिंह है।
ससार को वह लगाम की तरह हिला देता है।
एक कोडे म सब जीत लेता है।

वह बडा दानी, उत्कृष्ट, विचित्र, और महत्वशाली मौलाजादा था। वह अपने समय का "शाह" कहलाता था। उसका नाम हातिम खाँ पड गया था। उस बादशाह का वैभव और ऐश्वर्य किस सीमा पर होगा जबकि उसके एक दास के पुत्र को उसके काल म और उसके राज्य-काल की समाप्ति के पश्चात् शाह कहा जाता है और हातिम खाँ के नाम से पुकारा जाता है। मलिक अमीर अली सरजानदार का दान हजारो तक पहुँच चुका था। अमीर खुसरो ने उसकी प्रशसा में इस प्रकार लिखा है—

(पद)

मे खान के दान के हाथ को मानो समुद्र कहूँ,
मेरा हृदय काँप उठता है क्योकि मैं इस योग्य नहीं।
कभी उसका दान हथेली पर याकूत से भरा खजाना लिये रहता है।
जोकि मेरी हथेली तक पहुँचने के लिए उसको तृण ज्ञात होता है।

जिसको कम से कम दान देता वह भी सौ से कम न पाता। जिस किसी को घोडा और वस्त्र प्रदान करता उसे बिना चाँदी के तन्को की थैली के न देता। गलियों में फिरने वाले दरवेशो को भी सोने चाँदी के तन्के प्रदान किया करता था, जीतल का शब्द उसके मुँह से न निकलता था। उसके दान के समाचार जब सुल्तान बल्बन को प्राप्त होते तो, यद्यपि वह शीघ्र रुष्ट हो जाने वाला व्यक्ति था, उसे इस पर बडी प्रसन्नता होती।

(११९) वह भगवान् को धन्यवाद देता कि 'मेरा मौलाजादा इतना दानी तथा उदार है कि इस काल के बडे-बडे दानी उसके सम्मुख अपने हाथ फैलाते हैं। अपने समकालीनों में दान के विषय में वह सबसे आगे बढा हुआ है। उसको

१ यह कविता अमीर खुसरो के दीवान गुर्रतुल कमाल में सम्मिलित है।
२ अली के घोडे का नाम दुलदुल था। अली अपनी वीरता के लिये बडे प्रसिद्ध थे।

दान द्वारा जो प्रतिष्ठा प्राप्त होती है वह वास्तव में मुझ तक पहुँचती है।' उसके दान तथा उदारता का जितना अधिक हाल वह सुनता उतना ही उस का इनाम और अक्ता बढ़ा देता।

एक दिन सुल्तान बल्बन ने उससे कहा कि 'ऐ अली! मैंने सुना है कि तू मदिरा की महफिल में मदिरा-पान करता है और नशे में लोगों को दान देता है। मैं तो यह उत्तम समझता हूँ कि चैतन्य अवस्था में दान किया कर।' जिस दिन सुल्तान ने उससे यह वचन कहे उस दिन से हातिम ख़ाँ ने मदिरा-पान त्याग दिया और चैतन्य अवस्था में पहले की अपेक्षा जबकि वह मदिरा पान की महफिलों में दान करता था, कहीं अधिक दान करने लगा। शम्सी काल के कुछ प्रतिष्ठित अमीर बल्बन के राज्य-काल में भी यादगार के रूप में शेष थे। इन लोगों की उपस्थिति के कारण उसके राज्य-काल को इतनी शोभा प्राप्त हुई कि उसके समान न किसी ने आँख से देखा और न कान से सुना।

बल्बनी राज्य-काल के अमीरों की दानशीलता

इस तारीखे फीरोजशाही के संकलन-कर्ता ने अपने नाना सिपहसालार हुसामुद्दीन वकीलदर से सुना है कि शम्सी तथा नासिरी और कुछ बल्बनी खान और मलिक एक दूसरे से अक्ता, धन सम्पत्ति, पद और सम्मान के कारण परस्पर ईर्ष्या, द्वेष तथा विरोध न करते थे, अपितु वे एक दूसरे की दानशीलता पर ईर्ष्या करते हुये बढ़ जाने का प्रयत्न करते रहते थे। यदि कोई खान अथवा मलिक यह सुन पाता कि अमुक खान अथवा अमुक मलिक के दस्तर-ख्वान से पाँच सौ मनुष्यों को भोजन प्राप्त हुआ है तो उसे इस बात से लज्जा आती थी और वह इस बात का प्रयत्न किया करता था कि उसके दस्तरख्वान से हजार मनुष्य भोजन करलें। यदि कोई उनके पास पहुच कर यह कहता कि अमुक मलिक अपनी सवारी के समय दो सौ तन्के न्यौछावर करता है तो उन्हें इससे लज्जा आती और वे इस बात का प्रयत्न करते कि अपनी सवारी के समय चार सौ तन्के न्यौछावर कर दें। यदि कोई व्यक्ति अपनी मदिरा-पान की महफिल में पचास घोड़े दान करता और दो सौ आदमियों को वस्त्र प्रदान करता तो दूसरे को यह सुनकर स्पर्धा होती और वह इस बात की व्यवस्था करता कि सौ घोड़े न्यौछावर करे और पाँच सौ मनुष्यों को वस्त्र प्रदान करे।

(१२०) उस समय के मलिक, खान तथा गण्यमान्य व्यक्ति दान-पुण्य और न्यौछावर के कारण सर्वदा ऋणी रहा करते थे। महफिलों के अतिरिक्त उनके घरों में सोने चाँदी का कोई चिह्न भी न पाया जाता। दान पुण्य की अधिकता के कारण उन्हें अपने घरों में कुछ एकत्र करने और गाड़ने की समस्या ही उत्पन्न न होती। वे एक दूसरे की बराबरी दान-पुण्य में किया करते थे। देहली के साहु और मुलतानी जो इतने धनी हो गये हैं, उसका कारण प्राचीन मलिक और अमीर हैं। वे लोग मुलतानियों और साहों से यथा-सम्भव ऋण लिया करते थे। अक्ता से ऋण-दाताओं को उनके (दिये हुये) ऋण के साथ अन्य इनाम भी देते थे। जब खान और मलिक महफिल करते और प्रतिष्ठित लोग मेहमान होते तो उनके कर्मचारी मुलतानियों और साहों के पास भागते, ब्याज पर ऋण लेते और अपने नाम से रसीद दे देते थे।

बुगरा ख़ाँ का लखनौती से बुलवाया जाना

अब मैं सुल्तान बल्बन के समकालीन प्रतिष्ठित अमीरों के वर्णन को छोड़कर, जिनमें अनेक गुण थे, बल्बन के राज्य-काल का शेष हाल लिखता हूँ। जब सुल्तान बल्बन खाने शहीद की मृत्यु के शोक एवं पीड़ा से पूर्णतया टूट गया, तो उसने अपने लघु पुत्र बुगरा ख़ाँ को लखनौती से देहली में बुलवाया। उसने कहा कि, "मुझे तेरे बड़े भाई की मृत्यु ने रोगी बना

दिया है और मै अब एक पीला सूर्य बन कर रह गया हूं। कौन जानता है कि क्या हो जाय। हे पुत्र ! अब यह समय ऐसा नही कि तू अनुपस्थित रहे। तेरे अतिरिक्त मेरा अब कोई दूसरा पुत्र नही है। तूही मेरा स्थान ग्रहण करेगा। कैखुसरो तथा कैकुबाद जोकि तुम दोनों के पुत्र हैं और जिनका पालन-पोषण मैंने ही किया है, अभी नवयुवक हैं। उन्होंने समय के शीतोष्ण का आस्वादन नही किया है। यदि मेरे पश्चात् राज्य इनको मिल जायगा तो वे अपनी विलासप्रियता और युवावस्था के कारण बादशाही के प्रति जो कर्तव्य हैं, उनका पालन न कर सकेगे और देहली का राज्य पुन उसी प्रकार बच्चो का खेल हो जायगा, जैसा कि सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् गन करन तक रहा।'

(१२१) "यदि तू लखनौती में रहता है, और देहली के राज सिंहासन पर कोई अन्य विराजमान होना है तो तुझे उसके अधीन रहना पडेगा। यदि तू देहली के राज सिंहासन पर विराजमान हो जायगा तो जो कोई भी लखनौती का शासक होगा वह तेरे अधीन रहेगा। इस बात पर ध्यान दे और मेरे निकट से दूर न हो तथा लखनौती को प्रस्थान करने की इच्छा मत कर।"

बुग़रा ख़ाँ की लखनौती को पुनः वापिसी

बुगरा खाँ बहुत ही जल्दबाज शाहजादा था और यह न जानता था कि आसमान के उलट फेर से प्रत्येक कार्य में विघ्न पड जाता है और प्रत्येक ओर से दुर्घटना उपस्थित हो जाती है। वह कुछ समय तक अपने पिता के साथ देहली में रहा और सुल्तान को उस दुख से कुछ छुटकारा मिल गया। बुगरा खाँ फिर लखनौती लौटने के प्रबल लोभ में फस गया। बहाना करके बिना पिता की आज्ञा के लखनौती की ओर प्रस्थान कर दिया।

सुल्तान की मृत्यु तथा कैख़ुसरो को उत्तराधिकारी बनाना

बुगरा खाँ के पुत्र का नाम कैकुबाद था। उसका पालन-पोषण सुल्तान के निरीक्षण में में हुआ था। वही सुल्तान के पास रह गया। बुगरा खाँ लखनौती पहुँच भी न पाया था, कि सुल्तान पुन बीमार पडा। इस बार सुल्तान का रोग बहुत बढ गया। सुल्तान ने समझ लिया कि अब अन्तिम समय आ गया और जीवन से हाथ धो लिया। इसी रोग की दशा में मरने स तीन दिन पूर्व, मलेकुल उमरा कोतवाल देहली, ख्वाजा हुसैन बसरी, मत्री और अपने कुछ विश्वासपात्र मलिकों को अपने सम्मुख बुलवाया। मलेकुल-उमरा स कहा कि, "तू वृद्ध हो चुका है और बडा अनुभवी है। राज्यो के उलट फेर का देख चुका है। तुझे ज्ञात है कि बादशाहो का अन्त किस प्रकार हो जाता है। मैं देखता हू कि मेरा अन्तिम समय निकट है। मेरे शासन का समय शेष नही। मेरे हृदय में इस विचार के अतिरिक्त अन्य भावना उत्पन्न नही होती कि ससार किसी का साथ नही देता। वह अस्थायी है। कुछ वर्ष हमारे साथ रहा और अब हमे छोड रहा है। उसने जो सभी बादशाहो के साथ किया, वही मेरे साथ भी कर रहा है।'

(१२२) "तुम लोगो को चाहिये कि मेरे पश्चात् मेरे ज्येष्ठ पुत्र खाने शहीद के पुत्र कैखुसरो को राज सिंहासन पर बैठाओ। मैंने उसे उसके पिता की मृत्यु के पश्चात् अपना उत्तराधिकारी बनाया है। वह शासन चलाने के योग्य भी है। यद्यपि वह युवक तथा अल्पावस्था का है और राज्य सचालन यथा रूप नही कर सकता तो भी मैं क्या कर सकता हू? महमूद जो इस कार्य को कुछ कर सकता था और जिससे लोग डरते भी हैं, लखनौती चल दिया है, जब तक उसको वहाँ से बुलवाया जायगा उस समय तक पता नही क्या से क्या हो जायगा। राज सिंहासन बिना बादशाह के नही रह सकता। मेरे लिये कैखुसरो के

प्रतिरिक्त किसी अन्य को बादशाह बनाने की वसीयत करने के अतिरिक्त कोई अन्य उपाय नहीं।" यह वसीयत करके मलिकों को वापस कर दिया। तीसरे दिन उसके प्राण पखेरू उड गये।

अमीरों का कैखुसरो को बादशाह न बना कर कैकुबाद को बादशाह बनाना

कोतवाल और कोतवालियान शहर में पूर्ण अधिकार वाले, प्रबन्धक और अनुभवी हो गये थे। वे लोग किसी ऐसे कारण से जिसका सम्बन्ध स्त्रियों के किसी मामले से है, खाने शहीद से द्वेष रखते थे। उन्होंने सोचा कि यदि कैखुसरो बादशाह हो जायगा तो बडी आपत्ति होगी। इसी लिये उसी दिन उन्होंने खाने शहीद के पुत्र कैखुसरो को मुल्तान की ओर रवाना कर दिया। बुगरा खाँ के पुत्र कैकुबाद की पदवी सुल्तान मुइज्जुद्दीन निश्चित की और उसे राज सिंहासन पर आरूढ कर दिया।

बल्बन का अन्तिम संस्कार

सुल्तान बल्बन का मृतक शरीर रात के पिछले पहर कूशके लाल से बाहर निकाला गया और दारुलअमान[1] में लेजा कर दफन कर दिया गया।

उस जैसा ऐश्वर्य और वैभव वाला शासक जिसने बडे वैभव तथा ऐश्वर्य से राज्य किया था, भूमि के सिपुर्द कर दिया गया और चार गज भूमि में दफन हो गया।

छन्द

बादशाह का धन पानी और आग थे। पानी चला गया और आग बुझ गई।

अब उसके लिये उसका लावलश्कर मिट्टी और राख से अधिक नही।

उस समय जबकि सुल्तान बल्बन का जनाज़ा कुशके लाल से बाहर लाया गया, समस्त मलिकों और दरबारियों ने अपने सर पर मिट्टी डाल कर वस्त्र फाड डाले। जनाज़े के पीछे नगे सिर रवाना हुये।

(१२३) जब सुल्तान का जनाज़ा दारुल-अमान में लाया गया और सुल्तान को अभी मिट्टी के सिपुर्द न किया गया था, मलेकुल-उमरा कोतवाल ने, जोकि अत्यन्त अनुभवी था, पुन अपने सिर पर मिट्टी डाली और इस प्रकार चिल्ला कर कहा कि सब उपस्थित जनों ने सुन लिया। उसने कहा कि, "इस बादशाह की मृत्यु के पश्चात, जिसने कि दो करन तक *बादशाही की थी, यह कहा जा सकता है कि अच्छे बुरे, साधारण तथा विशेष लोग* उसकी राज्य व्यवस्था के विषय में जानकारी रखते हैं। लोगो के उस पर और लोगो के उसके ऊपर अनेक अधिकार प्रमाणित हो चुके हैं। कोई भी, जो मनुष्य कहलाने के योग्य है, उसके राज्य के पूर्व पानी भी न पी सकता था और कोई वर्ष या छठा महीना ऐसा व्यतीत नही होता था, जब कि देहली निवासियों को कोई कष्ट न भोगना होता हो। प्रत्येक अयोग्य तथा अनभिज्ञ के हृदय में बादशाही की लालसा पैदा हुआ करती थी और वे शासक बन जाने की इच्छा किया करते थे। वे सब बल्बन के राज्य में शान्त हो गये थे। हम लोग जोकि इस अनुभवी बादशाह के राज्य-काल में सुरक्षित थे पुन परेशान हो जायेंगे। प्राचीन वश तथा प्रसिद्ध परिवार नष्ट हो जायेंगे।"

सुल्तान बल्बन का शोक

कोतवाल जिसका वर्णन ऊपर किया गया है, सुल्तान बल्बन की मृत्यु के शोक में छ मास तक भूमि पर शयन करता रहा। अन्य मलिक अमीर, सद्र, शहर के प्रतिष्ठित और

१ सुल्तान के समाधि स्थान का नाम।

ण्य-मान्य व्यक्ति चालीस दिन तक भूमि पर शयन करते रहे। बुद्धिमान, अनुभवी और समझदार लोग सुल्तान की मृत्यु से बडे दुखी हुये। शहर के प्रतिष्ठित लोग सुल्तान की आत्मा की शान्ति के लिये भोजन बाँटा करते थे। जिस तिथि से सुल्तान बल्बन की, जो आज्ञाकारियों, हुक्म मानने वालो और शान्ति-प्रिय लोगो के लिये माता-पिता के सदृश था, मृत्यु हो गई, सर्व साधारण के प्राणों और धन सम्पत्ति की सुरक्षा का अन्त हो गया। राज्य के प्रति विश्वास लोगों के हृदय से क्षीण हो गया। उसके पोते मलिक सुल्तान मुइज्जुद्दीन के राज्य-काल को एक साल भी न व्यतीत हुआ था कि अनेक अमीरों और मलिकों के वश का एक दूसरे की शत्रुता के कारण विनाश हो गया, अनेक प्रतिष्ठित लोगो की केवल अविश्वास और भ्रम के कारण हत्या करा दी गई। इस परेशानी और क्लेश को देखकर लोग वर्षों तक बल्बनी राज्य-व्यवस्था को फिर से देखने की इच्छा करते रहे और उस बादशाह की कीर्ति का वर्णन लोग बडे चाव से किया करते थे।

अपने इतिहास के विषय मे बरनी के विचार

(१२४) मुझ जिया बरनी ने, जोकि इस तारीखे फीरोजशाही का सकलनकर्ता है, इस इतिहास में जादू भर दिया है। इतिहास-वेत्ता जो इस समय सीमुर्ग[१] और कीमिया[२] हो चुके हैं, भली भाँति जानते हैं, कि एक हजार वर्ष से तारीखे फीरोजशाही के समान जिसमें राज्य व्यवस्था के सम्बन्ध में अनेक बातें और गुण सकलित कर दिये गये हैं, कोई इतिहास-कार कुछ नही लिख सका है। मुझे दुख है कि मैं क्या करूँ, किस के सम्मुख विलाप करूँ, किस की सेवा में निवेदन करूँ कि इस इतिहास की दूसरे इतिहासो से तुलना करें और इसे जाँच, मेरे परिश्रम के प्रति न्याय करें, क्योकि मैंने प्रत्येक पक्ति ही नही अपितु प्रत्येक वाक्याश मे सुल्तानो के राज्य-व्यवस्था और हाल के विषय में अनेक आश्चर्यजनक और उत्तम बात लिखी हैं। बादशाहो की बादशाही की अच्छाइयाँ और बुराइयाँ नाना प्रकार से स्पष्ट एव सकेत द्वारा अत्युत्तम शैली, ढग और अन्दाज से खोल कर लिख दी हैं। मेरे हृदय को इतिहासवेत्ताओ, इतिहास के मूल्याकन करने वालो और उसके प्रति अपने कर्तव्यो का पालन करने वालो के अभाव से बहुत दुख होता है। मैं कहता हूँ और शपथ लेकर कहता हूँ और मुझे अल्लाह की शपथ है कि यदि जमशेद और कैखुसरो, जोकि ससार भर के बादशाह थे, या नौशेरवाँ और परवेज़ जिन्होने विशेष प्रकार से बादशाही की है, जीवित होते तो मैं यह इतिहास उनके सम्मुख ले जाता। यदि वे अपनी बुद्धिमत्ता और इतिहास-ज्ञान तथा प्रेम के कारण इस इतिहास की दूसरे इतिहासो से तुलना कराते, तो लोग उन बादशाहो के सिंहासन के सम्मुख इस इतिहास पर गर्व करते और उन बादशाहो की कृपा और दया से मेरा सम्मान और मेरे इतिहास के गुण विशेष एव सर्व साधारण व्यक्तियो के हृदय पर अकित हो जाते। यद्यपि उपर्युक्त विचार एक अनुचित एव असम्भव विचार है, तथापि कम से कम यदि अरस्तू और बुजर्च-मेहर इस इतिहास पर दृष्टिपात करते तो वे मेरे साथ न्याय करते और मेरी प्रशसा होती। यदि इस कामना को भी पागलपन समझा जाय तो इतना तो होता कि यह इतिहास सुल्तान महमूद और सुल्तान सजर के हाथो तक पहुँच जाता जिससे इतिहास और इतिहास की रचना का सम्मान इस्लामी राज्यो में उत्पन्न हो जाता।

---

१ एक चिड़िया जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि उसने रुस्तम के पिता जाल का पालन पोषण किया था। जियाउद्दीन बरनी के कहने का तात्पर्य यह है कि इतिहासवेत्ता कहीं नहीं पाये जाते।

२ एक औषधि जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि उसके द्वारा पीतल और ताँबे को सोना बना लिया जाता था और जो अप्राप्य है।

(१२५) इस खेद से बढ़ कर जिसको मैंने उपर्युक्त पंक्तियों में प्रकट किया है, एक अति विचित्र खेद मेरे हृदय में बैठ चुका है। वह इस प्रकार है कि मेरे समकालीन बादशाह को (जिसकी आयु हज़ार वर्ष की हो) इतिहास से विशेष रुचि है। इस विद्या का उसे ज्ञान है। उसे इसमें बड़ा आनन्द आता है, परन्तु मैं क्या करूँ। मेरे शत्रुओं ने मुझे अन्नदाता से बहुत दूर कर दिया है और मैं उनके निकट नहीं पहुँच सकता। मेरा यह बस नहीं कि मैं इस इतिहास को उसकी शुभ दृष्टि तक ले जा सकूँ। यदि यह इतिहास जिसे मैंने उसके शुभ नाम से सम्मानित किया है और जिसमें उसके राज्य का इतिहास तथा नेकियों और अच्छाइयों का वर्णन किया है, उसके राज सिंहासन के सम्मुख पेश हो जाय, और वह उसका अध्ययन करके उसे सम्मानित कर दे, तो मैं समस्त दुखों से मुक्त हो जाऊँगा। मेरी जो भी कामनायें मेरे हृदय में उठती हैं वे मेरे अभाग्य के कारण दब जाती हैं। मैं अल्लाह की, जोकि सब से बड़ा और पूज्य एवं पवित्र है, शपथ लेकर कहता हूँ, कि मेरा दिल बहुत टूट चुका है और इस दशा में, मैं भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि 'हे भगवान्! मेरे क्लेश, दुखों, व्याकुलता और दरिद्रता पर दया कर और ऐसा कर कि मेरा यह इतिहास खुदावन्दे आलम, बादशाहे बनी आदम (अन्नदाता और मनुष्य जाति के बादशाह) फीरोज़शाह सुल्तान खलदल्लाहो मुल्कहू व सुल्तानहू के सामने पहुँच जाय और मैंने जो कुछ परिश्रम किया है वह व्यर्थ न हो।

अस्सुल्तानुल अकरम मुइज़्ज़ुद्दुनियां वद्दीन कैक़ुबाद

(१२६) काजी सद्रे जहाँ जलालुद्दीन काशानी, सुल्तान शम्सुद्दीन का पुत्र कयूमुर्स, खाने खुरासान, मलेकुल उमरा कोतवाल बक, हिज्ब्र ख़ाँ मलिक शाहक लश्कर खाँ, मलिक इख्तियारुद्दीन जीजू, हातिम खाँ, अमीरअली सरजानदार, शाइस्ता ख़ाँ मलिक जलालुद्दीन खलजी, मलिक निज़ामुद्दीन दादबक, मलिक क़ियामुद्दीन अला दबीर[1], मलिक इख्तियारुद्दीन तुर्की, मलिक एतिमुर कच्छन, मलिक यशर सुल्तानी, मलिक मुहम्मद बक्बक बारबक, मलिक अइज़्ज़ुद्दीन खुर्रम, मलिक नुसरत सुब्बाह, मलिक तुर्मती शहनये पील, मलिक नुसरतुद्दीन राना शहनये पील, मलिक ताजुद्दीन कूची, मलिक अलीशह कोहजूदी, मलिक फखरुद्दीन कूची, मलिक ताजुद्दीन कीरबक, मलिक अइज़्ज़ुद्दीन गोरी, मलिक सैफुद्दीन नाहजन, मलिक अलाउद्दीन ताजिर, मलिक नसीरुद्दीन उलुगची, मलिक ताजुद्दीन नाखुद्र, मलिक नुसरतुद्दीन नसरुल्लाह, मलिक ऐनुद्दीन हिरनमार, मलिक ज़ियाउद्दीन जहजी, मलिक ऐनुद्दीन बर्मश, मलिक रुक्नुद्दीन, मलिक सैफुद्दीन कीरबक, मलिक नासिरुद्दीन मक़हारी, मलिक कमालुद्दीन महियार, मलिक इख्तियारुद्दीन गाज़ी, मलिक नसीरुद्दीन सैफे[2] सुल्तानी, मलिक इज्जुद्दीन यर्गा खाँ, मलिक जैनुद्दीन शर्के शुक्र, मलिक इख्तियारुद्दीन सक्नत, हैबत खाँ का पुत्र मलिक हुसामुद्दीन, कर्लुग का नाती मलिक हिज्ब्रुद्दीन, मलिक बहाउलमुल्क हीलमी।

---

१ पुस्तक में क़लाका दबीर है किन्तु अला दबीर उचित ज्ञात होता है।
२ पुस्तक में सैफर है।

अल्लाह के नाम से जोकि रहमान और रहीम है

समस्त प्रशंसा भगवान् के लिये है जो विश्व का पालक है।

(१२७) और बहुत बहुत दुरूद और बहुत बहुत सलाम उसके रसूल मुहम्मद पर और उसकी सन्तान पर,

मुइज़्ज़ुद्दीन कैकुबाद का सिंहासनारोहण

यह तुच्छ हितैषी ज़ियाबरनी, जोकि इस तारीखे फ़ीरोज़शाही का सकलन-कर्त्ता है, इस प्रकार निवेदन करता है कि सुल्तान बल्बन के पोते सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन कैकुबाद के सिंहासनारोहण के समय यह तुच्छ अल्पावस्था में था। जो कुछ उसने इस तारीख में सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन की राज्यव्यवस्था का वर्णन या इतिहास लिखा है, वह उसने अपने पिता मुईदुलमुल्क तथा अपने गुरुजनों से, जोकि अपने समय के आचार्य थे, सुनकर लिखा है। उसने उनसे सुना है कि ६८५ हि०[1] में बुग़रा खाँ का पुत्र एव सुल्तान बल्बन का पोता, सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन कैकुबाद बल्बन के राज सिंहासन पर आरूढ हुआ। जिस समय यह बादशाह देहली के राज सिंहासन पर बैठा, उसकी अवस्था सत्रह अठारह वर्ष की थी।

(१२८) यह शाहज़ादा सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन बहुत बडा सदाचारी था। उसका चरित्र तथा स्वभाव बहुत ही पवित्र एव उत्कृष्ट था। वह बडा रूपवान था। उसके हृदय में भोग विलास, सुखभोग, काम-वासना तथा इन्द्रिय लोलुपता की इच्छा बडी प्रबल थी। बाल्यावस्था से राज सिंहासन पर पहुँचने के समय तक उसका पालन-पोषण उसके दादा सुल्तान बल्बन के नियन्त्रण में हुआ था। उसके ऊपर अनेक कठोर निरीक्षक नियुक्त थे, जो इस बात की देख रेख किया करते थे कि उस भोग विलास की रुचि तथा काम वासना से दूर रखा जाय। सुल्तान बल्बन के भय से उसके निरीक्षक इस बात की आज्ञा न देते थे कि वह किसी सुन्दरी की ओर दृष्टि पात कर सके अथवा मदिरा का प्याला पी सके। रात दिन कठोर अतालीक[2] नियुक्त रहते जोकि उसे अनुशासन में और ठीक से रखने का प्रयत्न करते रहते थे। गुरुजन उसे लिखना, पढना और अनुशासन की शिक्षा प्रदान किया करते थे। वे उसे बाण फेंकने, गेंद खेलने और भाला चलाने की शिक्षा देते तथा उसे अनुशासन से न निकलने एव कुमार्ग पर चलने और नैतिकता से गिरी बात करने का अवसर न देते थे।

---

१ ६८६ हि० (१२-७-८८ ई०) होनी चाहिए। तारीखे मुबारकशाही में कैकुबाद के सिंहासनारोहण का प्रारम्भिक हाल इस प्रकार लिखा है।

उसका सिंहासनारूढ़ होना

सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन कैकुबाद बुगराँ खाँ का पुत्र और सुल्तान ग़यासुद्दीन बल्बन का पौत्र था। शोकावह सस्कारों के पश्चात् मुइज़्ज़ुद्दीन अमीरों, मलिकों, इमामों व और क़ाज़ियों की इच्छानुसार ६८६ हि० (१२८७ ई०) में राज सिंहासन पर विराजमान हुआ। प्रजा व हर श्रेणी के लोगों ने उसके प्रति स्वामी भक्ति प्रदर्शित की। नये सुल्तान ने राज्य के पुराने पदाधिकारियों को अपने पदों पर कार्य करते रहने की आज्ञा दी और कुछ नये पदाधिकारियों की भी नियुक्ति की। इस प्रकार मलिक तुर्की को खास हाजिब नियुक्त किया। मलिक निज़ामुद्दीन को दादबक बनाया। मलिक जावरजी को सरजानदार का पद प्राप्त हुआ। ख्वाजा खतीरुद्दीन को ख्वाजाये जहाँ की पदवी मिली।

छ मास बीतने के पश्चात् सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन ने शुक्रवार के दिन किलोखडी में दरबारे आम किया। (पृ० ५२ ५३)

२ गुरु अथवा निरीक्षक।

कैंकुबाद का भोग विलास

जब ऐसा व्यक्ति जिसके हृदय में कभी यह विचार या ध्यान भी उत्पन्न न हुआ था कि यह बादशाह होगा अकस्मात् ऐसे राज सिंहासन पर विराजमान हो गया जिसको बड़ा ऐश्वर्य प्राप्त था, ऐसा राज्य पा गया जिसका एक छोर समुद्र तट पहुँचा था, जिसे ऐसी अमूल्य वस्तु प्राप्त हो गई, जिसके लिये लोग वर्षों तक प्रयत्न किया करते हैं और जिसकी आकांक्षा में अपने प्रिय प्राण तक भय में डाल देते हैं किन्तु फिर भी उसे नहीं प्राप्त कर पाते, तो जो कुछ भी पढ़ा, लिखा, सुना या सीखा था पूर्णतया भूल गया। अनुशासन एवं नैतिकता के सभी पाठ ताक पर रख दिये, भोग विलास तथा सुख भोग में मस्त हो गया। कामवासनाओं को राज्य व्यवस्था तथा शासन प्रबन्ध से बढ़ कर समझने लगा। जब वह मस्ती, कठोरता, भय आतंक तथा ऐश्वर्य जो लोगों के हृदय में बल्बन के साठ वर्ष के राज्य में बैठ गया था, उनके मध्य से निकल गया, तो सभी कार्यों में विघ्न पड़ने लगा।

(१२९) जहाँ अनुभवी वृद्ध और अति कुशल बादशाह की शासन व्यवस्था के वैभव ज्ञान, समझ दण्ड, सज़ा तथा बन्दीगृह में डाल दिये जाने की आशंका और अन्य कष्ट पहुँचने के भय से खान और मलिकों के हृदय में भोग विलासिता, इन्द्रिय-परायणता, मदिरा-पान और व्यभिचार का ध्यान भी न होता था और पदाधिकारियों तथा शासन के सहायकों की ज़बान पर भोग विलासिता, इन्द्रिय-परायणता, परिहास, विदूषकों और गायकों का नाम भी न आता था, वहाँ अब यह बात न रही। युवक तथा रूपवान बादशाह के राज सिंहासन पर आरूढ़ हो जाने से, जिसे कामवासनाओं, भोग विलास के अतिरिक्त कोई कार्य ही न था, और जिस सुख-भोग से रुचि होने के अतिरिक्त राज्य व्यवस्था से कोई सम्बन्ध न था, शासन प्रबन्ध की नीतियों तथा उसकी दुर्घटनाओं से बचने की कोई जानकारी न थी, देश का शासन छिन्न-भिन्न हो गया। आनन्द मनाने वाले, महफ़िलें करने वाले, विलास-प्रिय चुटकुले-बाज, विदूषक, जोकि हताश हो चुके थे और अपमान के कोने में व्यर्थ पड़े थे, और जिनका पूछने वाला कोई न था, अब अपने अपने काम में लग गये। प्रत्येक दीवार की छाया से कोई न कोई रमणी दृष्टिगोचर होने लगी और प्रत्येक कोठे से कोई न कोई सुन्दरी अपनी छवि प्रदर्शित करने लगी। प्रत्येक गली में सुमधुर स्वर वाले और ग़ज़ल-गायक उत्पन्न हो गये। हर मुहल्ले से गाने बजाने की आवाज़ें आने लगीं। भोगियों और विलासप्रियों के दिन फिर आये। हरीफ़ों[1] और नदीमों के भाग्य खुल गये। विदूषकों तथा मसखरों के उनके भाग्य स्वागत करने लगे। गायकों एवं सुन्दरियों के भाग्य का सितारा चमक उठा और रमणियों तथा सुन्दरियों का भाग्य चाँद की तरह चमकने लगा।

(१३०) सुल्तान मुइज्ज़ुद्दीन तथा उसके समय के खानज़ादे, मलिकज़ादे, भोगी और विलासी, विषयी तथा कामुक सब के सब भोग-विलास तथा आमोद-प्रमोद में फँस गये। देश के सर्व साधारण एवं विशेष व्यक्तियों के हृदय मदिरापान, रमणियों, गायकों और विदूषकों की ओर आकर्षित होने लगे। देश के नगरों के छोटे, बड़े, वृद्ध, युवक, मूर्ख, विद्वान्, आलिम, जाहिल, हिन्दू-मुसलमान अपने कार्यों से यह सिद्ध करने लगे कि, "राजा के धर्म का प्रजा पालन करती है"। राज्य में पहले की अपेक्षा अन्य प्रकार के कार्य तथा बातें होने लगीं। विलासिता के भवन सर्व साधारणों के लिये खुल गये।

कैंकुबाद का किलोखड़ी में निवास करना

सुल्तान मुइज्ज़ुद्दीन ने शहर में निवास करना छोड़ दिया। राजधानी के कुशके लाल

१ बादशाह की भाँति भोग विलास से रुचि रखने वाले उसके सहचर।

से बाहर निकल कर यमुना तट पर किलोखड़ी में एक अद्वितीय राज भवन तथा उपवन का निर्माण कराया। अपने मलिकों, अमीरों, विश्वासपात्रों, विशेष व्यक्तियों और दरबारी कर्मचारियों को लेकर वहीं निवास करने लगा। समस्त मलिक, अमीर, विश्वासपात्र, प्रतिष्ठित व्यक्ति और कलाकारों ने सुल्तानी राज महल के निकट अपने घर बनवा लिये। उन्होंने जब यह देखा कि बादशाह की इच्छा किलोखड़ी म निवास करने की है तो उन्होंने भिन्न भिन्न स्थानों पर अपने लिये महल और घर बनवाये। प्रत्येक समूह के सरदारों ने वहीं पहुच कर निवास करना आरम्भ कर दिया। किलोखड़ी पूर्ण रूपेण आबाद हो गई। सुल्तान और उसके दरबार के विशेष तथा साधारण व्यक्तियों के भोग विलास में सलग्न और मस्त रहने के समाचार, देश के चारो ओर फैल गये। देश के चारों ओर से गायक, रमणी, चारण, सुमधुर स्वर वाले तथा मसखरे, विदूषक भाड दरबार में पहुचन लगे और प्रत्येक दिशा में आबादी ही आबादी दिखाई पडने लगी। दुराचार और व्यभिचार प्रारम्भ हो गये। मस्जिदें नमाजियों से रिक्त हो गई। मधुशालायें भर गई। लोगों ने एकान्त वास त्याग दिया।

कैकुबाद के समकालीनों की विलास-प्रियता

मदिरा का भाव दसगुना चढ गया। लोग भोग विलास में मस्त रहने लगे। किसी के हृदय में शोक, भय, चिन्ता, कष्ट, डर और अवरोध का ध्यान भी न रहा। मसखरों, भाटों, चुटकुले बाजों, विदूषकों का सम्मान बढ गया। गायकों और रमणियों के चञ्चलपन में वृद्धि हो गई। मदिरा और नशे की वस्तुएँ बेचने वालों की थैलियाँ सोने और चाँदी के तन्कों से भरी रहने लगी।

(१३१) सुन्दरियाँ और प्रतिष्ठित मदाशाजी[1] शराब और मदिरा में डूब गये। प्रतिष्ठित तथा गण्यमान्य व्यक्तियों को मदिरापान करने, महफिलें सजाने, लोगों से बाजी लगाने, गाना सुनने, जुआ खेलने, धन नष्ट करने और अपन अमूल्य समय को आमोद प्रमोद तथा भोग विलास में नष्ट करने के अतिरिक्त कोई कार्य न रह गया। सक्षेप में, सुल्तान की महफिलें रमणियों तथा गायकों से इस प्रकार सुशोभित रहती थी कि जो कोई देखता और सुनता, वह अपने हृदय मे पुन देखने और सुनने की अभिलाषा अपने शेष जीवन में न भुला सकता। जिया जहजी तथा हुसाम दरवेश जोकि अपन समय के बहुत बड़े विदूषक और भाट थ और विचित्र नदीमों में गिने जाते थे, जो चुटकुले-बाजी और इस प्रकार की बातो में अद्वितीय थे, सुल्तान की व्यक्तिगत महफिलो के नदीम बन गये। सुल्तान के सम्मुख जो चुटकुला कहता या परिहास की बात सुनाते, उसके लिये उन्हे धन सम्पत्ति खिलअत और घोडे प्रदान किये जाते। सुल्तान मुइज्जुद्दीन रात दिन भोग विलास और आमोद प्रमोद में पडा रहता।

निजामुद्दीन की उन्नति

मलेकुल उमरा कोतवाल देहली का जामाता तथा भतीजा मलिक निजामुद्दीन, मुइज्जी राज सिंहासन के अति निकट होता गया। देखने में तो उसे दादबके हजरत और नायब मलिक नियुक्त किया गया, परन्तु राज्य व्यवस्था का सचालन वास्तव में उसी की देख रेख में होने लगा। मलिक [illegible] अला दबीर[2] जोकि अपनी रचना-शैली में

वकीलदर नियुक्त हुआ। राजनीति की देख रेख तथा शासन व्यवस्था का कार्य मलेकुल-उमरा के जामाता मलिक निजामुलमुल्क को प्रदान कर दिया गया। वह बड़ा ही चतुर सुव्यवस्थापक, कूटनीतिज्ञ और सभी बातें भली भाँति समझता था। बल्बनी मलिक जो इस समय बहुत बड़ी संख्या में थे और जिनका अधिकार एवं वैभव बड़ा प्रबल था, मुइज्जी राज्य के सहायक तथा हितैषी बन गये थे, वे सब मलिक निजामुद्दीन की उन्नति से परेशान तथा चिन्तित रहने लगे।

मलिक निजामुद्दीन को राज्य का लोभ

(१३२) मलिक निजामुद्दीन को राज्य का लोभ सताने लगा। सुल्तान मुइज्जुद्दीन भोग विलास में ग्रस्त था। प्रतिष्ठित, अनुभवी और समय के शीतोष्ण का आस्वादन किये हुए व्यक्ति समझ गये कि मलिक निजामुद्दीन उन्हें जीवित न छोड़ेगा। वे लोग इधर उधर हो गये। मलिकों की चिन्ता के कारण राजधानी के सभी कार्यों में विघ्न पड़ने लगा। बहुत से खेल खानादार[1] मलिकों को राज्य पर अधिकार जमाने की लालसा होने लगी। सुल्तान मुइज्जुद्दीन को भोग विलास में तल्लीन तथा असावधान पाकर मलिक निजामुद्दीन ने देश के राज्य पर अधिकार जमाने के लिये अपने दाँत तेज करने आरम्भ कर दिये। उसने सोच विचार कर यह बात भली भाँति समझ ली थी कि 'सुल्तान बल्बन जो एक अनुभवी वृद्ध था तथा साठ वर्ष तक देहली पर राज्य कर चुका था, जिसने देश वासियों को अनेक उपाय से अपनी मुट्ठी में कर लिया था, अब मर चुका है। उसका एक पुत्र जोकि राज्य के योग्य था, उसके जीवन काल ही में परलोकगामी हो गया है। बुगरा खाँ लखनौती में निवास करने लगा है। देश के राज्य की नीव जिसे वृद्ध ने सुदृढ कर दिया था, अब दिन प्रति दिन निर्बल होती जा रही है। सुल्तान मुइज्जुद्दीन विलास-प्रिय होने के कारण राज्य व्यवस्था की ओर ध्यान नहीं देता। यदि मैं खाने शहीद के पुत्र कैखुसरो को बीच से हटा दूँ और कुछ प्राचीन मलिकों को भी सुल्तान मुइज्जुद्दीन से पृथक् कर दूँ, तो देहली का राज्य सुगमता-पूर्वक मुझे प्राप्त हो जायगा।' उपर्युक्त ढंग के कुत्सित विचार जोकि अति निकृष्ट थे इसके मस्तिष्क में चक्कर लगाया करते थे। वह कैखुसरो की जान के पीछे पड़ गया।

कैखुसरो की हत्या

उसने सुल्तान मुइज्जुद्दीन से कहा कि 'कैखुसरो राज्य में तेरे बराबर है। उसमें बादशाही के गुण भी पाये जाते हैं। मलिकों को उससे विशेष प्रेम है। उन्हें ज्ञात है कि वही सुल्तान बल्बन का उत्तराधिकारी है।'

(१३३) 'यदि कुछ बल्बनी मलिक उसके मित्र हो जायगे तो तुझे एक दिन में राज्य से हटा देंगे और उसको देहली के राज सिंहासन पर आरूढ़ कर देंगे, अत राजनीति इसी में है कि उसे मुल्तान से बुलाया जाय और अपने मार्ग से हटा दिया जाय।' इस कुत्सित विचार से खाने शहीद के पुत्र कैखुसरो को बुलाने का फरमान भिजवाया। सुल्तान मुइज्जुद्दीन जब नशे में था तो उसी समय मलिक निजामुद्दीन ने उस जैसे बादशाह-जादे के बध के लिये आज्ञा प्राप्त कर ली। इस कार्य के लिये आदमी नियुक्त किये गये। रोहतक कस्बे में कैखुसरो की हत्या कर दी गई।

ख्वाजा खतीर को दण्ड

कैखुसरो की हत्या से समस्त बल्बनी सरदार जोकि सुल्तान मुइज्जुद्दीन के सहायक तथा हितैषी बन चुके थे, मलिक निजामुद्दीन से भयभीत रहने लगे। मलिकों की प्रतिष्ठा

१ प्रसिद्ध तुर्क अमीर

श्रौर उनका सम्मान घटने लगा श्रौर प्रत्येक भयभीत रहने लगा। मलिक निजामुद्दीन के अधिकार बढते ही गये। मुइज्जुद्दीन के मन्त्री ख्वाजा खतीर पर आरोप लगा कर यह दण्ड दिया गया कि उसे गधे पर बैठा कर अपमानित करने के लिये शहर मे घुमाया जाय। मलिक निजामुद्दीन का भय सभी प्रतिष्ठित तथा गण्य मान्य व्यक्तियो के हृदय पर बैठ गया। मलिक निजामुद्दीन सरदारो श्रौर शहर के खेल खानादारो के विनाश हेतु कटिबद्ध हो गया।

नव मुसलमानो का वध[1]

सुल्तान मुइज्जुद्दीन को एकान्त में समझा दिया गया कि "नव मुसलमान अमीर जो उच्च पदाधिकारी हैं, श्रौर जो तेरे विश्वासपात्र हैं, दलबन्दी कर चुके हैं श्रौर तू उन्हें अपना मित्र तथा सहायक समझे बैठा है। वे प्रयत्नशील हैं कि विद्रोह करके राज-भवन में घुस आयें श्रौर तुझे राज सिंहासन से हटा दे श्रौर तेरे राज्य पर अधिकार जमालें। यह मुगल अमीर अपने घरों में एक दिल हो षड्यन्त्र रचते रहते हैं श्रौर सभी एक ही समुदाय से सम्बन्धित हैं। इनके पास बडा लावलश्कर है। उन्होने यह निश्चय कर लिया है कि अकस्मात् विद्रोह कर देंगे।" इस बात को सुल्तान को समझाने के कुछ दिन पश्चात् उसने सुल्तान को बहका कर उन लोगो को बन्दी बनाने तथा उनकी हत्या करा देने की उससे आज्ञा ले ली श्रौर उनमें से सभी का राज-भवन में एकत्र किया। बहुतो की हत्या कराके उन्हे यमुना नदी में फिकवा दिया गया। उनके घर बार विध्वस कर दिये गये।

बल्बन के मौलाजादो का वध

(१३४) सुल्तान बल्बन के कुछ मौलाजादो को, जोकि बडे-बडे मलिको श्रौर नव मुसलमान अमीरो के यहाँ उठते-बैठते थे, तथा उनके सम्बन्धी थे, बंद करा दिया श्रौर दूर-दूर के स्थानो पर स्थित क़िलो में भिजवा दिया। प्राचीन खेल-खानो को जो जड पकड चुके थे, नष्ट-भ्रष्ट कर दिया।

अन्य अमीरो का वध तथा उसका प्रभाव

तत्पश्चात् मलिक शाहक का, जोकि मुल्तान का अमीर था, श्रौर मलिक तूज़की का जोकि बरन की अक्ता का स्वामी श्रौर अर्जे ममालिक था श्रौर सुल्तान बल्बन के राज्य-काल से बडा प्रभावशाली तथा अधिकार-सम्पन्न हो गया था, किसी न किसी उपाय से विनाश करा दिया। राज भवन के सभी व्यक्तियो तथा शहर के प्रतिष्ठित लोगो को मलिक निज़ामुद्दीन के

---

१ नव मुसलमानो के विनाश तथा निज़ामुद्दीन के षड्यन्त्र का हाल तारीखे मुबारक शाही म इस प्रकार लिखा है :

नव मुसलमानों के कुछ अमीरों को बन्दी बनाने के उद्देश्य से एक चातुर्य पूर्ण युक्ति निकाली गई। मुल्तान के अमीर को आदेश भेजा गया कि वह यह वर्णन करते हुए एक प्रतिवाद भेजे कि एक बडी सेना के साथ मुल्तान के निकट मे दुष्ट मुगलों के आजाने के कारण उसने शाही सेना एकत्र करली है, श्रौर शत्रुओं पर आक्रमण करके बादशाह के वैभव के आशीर्वाद से उनको भगा दिया है। संक्षेप में, विजय का समाचार प्रजा को सुनाने के पश्चात् प्रत्येक अमीर तथा मलिक बधाई देने के लिये उपस्थित हुआ। समय पर हरकत करने के लिये मलिक निज़ामुलमुल्क ने अपने पूरे साज सामान, लावलश्कर सहित महल के ऊपर स्थान ग्रहण किया। जब मलिक श्रौर अमीर सुल्तान के सम्मुख बधाई देने आये तो मलिक बेग सारिक अमीरे हाजिब, मलिक गाज़ी वकीलदर, मलिक करीमुद्दीन नायब बारबक, मलिक बहराम आखुर बक, मलिक आवरजी सरजानदार मलिक मुग़लती मुसल्लादार जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति बन्दी बना लिये गये। मुग़लती तथा आवरजी को देश छोड़ना पड़ा। दूसरे अमीर मार डाले गये। (पृ० ५३)

यह नही सुना है कि सुल्तान शम्सुद्दीन के सहायको तथा मित्रो में क्या गुण थे ? मैंने उनकी प्रशसा तुझ से की है कि वे कितनी प्रतिष्ठा, सम्मान और बुजुर्गी रखते थे। सुल्तान शम्सुद्दीन ने अनेक बार सबके सामने घोषणा की थी कि मैं किस प्रकार भगवान् के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट कर सकता हूँ क्योकि उसने मुझे ऐसे सहायक तथा मित्र प्रदान करके सम्मानित किया है, जोकि मुझ से हजार गुना अच्छे हैं। सुल्तानो के निश्चित किये हुए नियमो के अनुसार वे मेरे आगे पीछे चलते फिरते रहते हैं, मेरे सामने अपना हाथ फैलाते हैं और मेरे सामने दरबार में खडे रहते हैं। मुझे उनकी प्रतिष्ठा तथा सम्मान के कारण लज्जा आती है और मेरी यह इच्छा होती है कि राज सिंहासन से नीचे उतर कर उनके हाथ पैर छू लूँ।'

(१३८) "सुल्तान बल्बन बीस वर्ष तक मलिक और बीस वर्ष तक खान रहा। इस अवधि मे बडे परिश्रम से अनेक विश्वासपात्र, सहायक मित्र, गण्यमान्य तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति एकत्र किये। जब वह राज सिंहासन पर आरूढ हुआ तो वे विश्वासपात्र और अद्वितीय व्यक्ति उसके मित्र और सहायक बन गये। निस्सन्देह दोनो बादशाहो की बादशाही चुने हुए और उत्कृष्ट सहायको के कारण सफल रही। उन्होने बडी योग्यता से राज्य व्यवस्था, शासन प्रबन्ध और राज्य सचालन किया। लोग उन पर कयामत तक गर्व तथा उनकी प्रशसा करते रहेगे। उन पर इतिहास लिखते रहगे।" इस उपदेश के पश्चात् कोतवाल ने निज़ामुद्दीन से कहा कि, "हे बाबा! जा और अपना काम कर। व्यर्थ की बातें अपने मस्तिष्क से निकाल दे क्योकि हम से और हम जैसो से बादशाही कदापि नही हो सकती।" निजामुद्दीन ने उत्तर दिया कि, "आप जो कुछ फरमाते हैं, वह उचित है परन्तु मैंने सब लोगो को अपना शत्रु बना लिया है। सभी यह जानते हैं कि मेरी महत्त्वाकांक्षा बादशाही प्राप्त करने की है। यदि मै इस समय इसे त्याग दूँ, तो किसी प्रकार भी जीवित नही रह सकता।" मलेकुल-उमरा ने उससे कहा कि 'यदि तू अपनी महत्त्वाकाक्षा को, जिसके तू कदापि योग्य नही, अपने हृदय से नही निकाल सकता तो अपने जीवन से भी हाथ धोले और अपने लिये कोई रक्षा का स्थान निश्चित कर ले। भगवान् हम लोगो की रक्षा करे, जिससे तेरी व्यर्थ की बातो और महत्त्वाकाक्षाओ से हम लोगो का विनाश न हो।'

देहली निवासियो द्वारा मलेकुल-उमरा की प्रशंसा तथा निज़ामुद्दीन का राज्य के लिये षड्यन्त्र

मलेकुल-उमरा ने निजामुद्दीन को जो उपदेश तथा शिक्षा दी तथा ईश्वर की इच्छा से जो कुछ ऊँच नीच उसे समझाया, वह शहर के प्रतिष्ठित गण्य-मान्य व्यक्तियो और सद्रो के कानो तक पहुँच गया। सभी ने मलेकुल-उमरा की प्रशसा और तारीफ की। लोगो के उसके शान्ति प्रिय तथा भगवान् से भय रखने के विषय में जो विचार थे, उनमें सौ गुनी वृद्धि हो गई, परन्तु मलिक निजामुद्दीन को उस उपदेश से कोई लाभ न हुआ। बादशाही के लोभ ने उसके आँख और कान क्रमश अन्धे और बहरे कर दिये थे। वह बादशाही के शतरज के तख्ते से नित नई चाल चलने लगा। खलजियो के राज्य के हित में दुष्ट समय बल्बनी राज्य के सहायको का अन्त कराने लगा।

(१३९) आकाश निजामुद्दीन की अनुभव हीनता तथा अयोग्यता की मज़ाक व खिल्ली उडाता था और खलजियो को बादशाही की बधाई देता था। सुल्तान मुइज्जुद्दीन को भी ज्ञात हो गया, कि निजामुद्दीन उसे राज सिंहासन से वञ्चित करने का प्रयत्न कर रहा है।

बुगरा[1] खां का लखनौती में बादशाह होना तथा अपने पुत्र को समझाने के लिये पत्र भेजना

निज़ामुद्दीन की महत्वाकांक्षायें देहली के राज्य के समस्त विशेष तथा साधारण व्यक्तियों पर स्पष्ट हो गई। जिस समय सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन देहली के राज सिंहासन पर आरूढ़ हुआ, तो उसके पिता बुगरा खाँ ने सुल्तान नासिरुद्दीन की पदवी धारण करली और लखनौती में अपने नाम का खुत्बा और सिक्का चला दिया। पुत्र तथा पिता में पत्र व्यवहार होने लगा, पत्रवाहक तथा उलाग एक दूसरे का पत्र लेकर आने जाने लगे। सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन अपने पिता के पास लखनौती में उपहार और तोहफ़े भेजा करता था। सुल्तान नासिरुद्दीन भी पुत्र के लिये यादगार के रूप में वस्तुएँ भेजता था। सुल्तान नासिरुद्दीन को लखनौती में यह सूचना मिली कि सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन भोग विलास में व्यस्त है, निज़ामुद्दीन ने अनेक उपयोगी मन्त्रियों तथा अमीरों का सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन की आज्ञा से वध करा दिया है, वह यहाँ तक बढ़ गया है कि शीघ्र ही सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन को भी राज्य से वञ्चित कर देगा, देहली के राज्य पर अधिकार जमा लेगा। इस प्रकार के समाचारों के निरन्तर पहुँचने पर सुल्तान नासिरुद्दीन ने अपने पुत्र को उपदेश तथा परामर्श देते हुए पत्र लिखने आरम्भ कर दिये। मलिक निज़ामुद्दीन के बुरे विचारों से भी संकेत में सुल्तान को सचेत कर दिया, परन्तु सुल्तान को जवानी तथा बादशाही की मस्ती, भोग विलास तथा मदिरा के नशे ने इतना असावधान बना दिया था, कि वह अपने पिता के उपदेशों पर भी ध्यान न देता था। मलिक निज़ामुद्दीन के षड्यन्त्र की उसे चिन्ता भी न थी। भोग विलास में ग्रस्त होने के कारण राज्य के शासन प्रबन्ध तथा नीति की ओर ध्यान भी नहीं देता था। उसे रमणियों के हाव भाव, मदिरा पिलाने वालों के हाथों से मदिरा पीने, गायकों की मधुर तानों एवं युवतियों का हास्य सुनने के अतिरिक्त किसी वस्तु की चिन्ता न थी। प्रत्येक समय भोग विलास में ग्रस्त रहता और आमोद प्रमोद में डूबा रहता था।

बुगरा खाँ तथा कैकुबाद की भेंट का आयोजन

(१४०) उसके पिता सुल्तान नासिरुद्दीन को लखनौती में सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन की असावधानी तथा लापरवाही के समाचार से बड़ा दुख एवं चिन्ता होती। उसने अपने अनुभव के दर्पण

---

१ बुगरा खाँ तथा मुइज़्ज़ुद्दीन की भेंट का हाल तारीखे मुबारकशाही में इस प्रकार लिखा है। इस बीच में समाचार प्राप्त हुआ कि सुल्तान का पिता बुगरा खाँ जो नासिरुद्दीन की उपाधि धारण करके बंगाल के राज सिंहासन पर विराजमान है, एक बहुत बड़ी सेना के साथ देहली की ओर चल पड़ा। मुइज़्ज़ुद्दीन भी अपनी सेना को देश के चारों ओर से एकत्र करके बुगरा खाँ का सामना करने के लिये अवध की ओर चल दिया। सरजू नदी के बीच में आजाने से पिता तथा पुत्र नदी के दोनों तटों पर पड़ाव डाले पड़े रहे और कोई भी उस नदी को पार नहीं कर सका। तत्कालीन काल के मलिक एवं अमीर पिता तथा पुत्र के संघर्ष के बीच में पड़े और दोनों में सन्धि करा दी। सुल्तान नासिरुद्दीन अपने सेवकों सहित सरजू पार करके अवध आया। पिता तथा पुत्र दोनों ही एक दूसरे के बहुत निकट उसी चबूतरा ताबूसी के सिंहासन पर बैठे। उसके पश्चात् सुल्तान नासिरुद्दीन ने अपने पुत्र से विदा ली और अपने शिविर को वापस हुआ। अन्त में सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन ने पिता को अरबी घोड़े व अन्य बहुमूल्य उपहार भेंट किये और सुल्तान नासिरुद्दीन बदले में हीरों तथा विचित्र वस्तुओं से सुसज्जित बड़े बड़े हाथी अपने पुत्र को भेज कर लखनौती की

में अपने पुत्र की हत्या देख ली। समझ गया कि उसके पीठ पीछे लिखित उपदेशो का कुछ भी प्रभाव नही पडता, अत उसने यह निश्चिय किया कि पुत्र से भेंट करके जो कुछ कहना सुनना है, अपने सम्मुख कहे। अत पुत्र की भेंट की इच्छा के अनेक पत्र उसके पास भेजे। अन्त मे अपने हाथ से यह पत्र लिख कर भेजा कि 'हे पुत्र! तुझे बादशाही, भोग विलास और आमोद प्रमोद के कारण अवकाश न मिल सकेगा तब भी मुझ से भेंट करने का महत्व समझ। अब मुझ में वियोग की शक्ति नही रह गई है।' अन्त में यह छन्द अपने हाथ से लिखा

छन्द

'यद्यपि स्वर्ग बडा ही रमणीक स्थान है, परन्तु मेरी भेंट से उत्तम अन्य वस्तु नहीं'।

सुल्तान मुइज्जुद्दीन की अपने पिता से मिलन की इच्छा इस पत्र के पढन के उपरान्त बडी ही प्रबल हो गई। उसकी आँख मे आँसू बहने लगे। कुछ विश्वासपात्रो को लखनौती भेजा और पिता से भेंट करने के लिए पत्र लिखा।

पुत्र और पिता में यह निश्चय हुआ कि सुल्तान मुइज्जुद्दीन देहली से अवध की ओर प्रस्थान करे और सुल्तान नासिरुद्दीन लखनौती से सरयू तट पर पहुँचे और पिता तथा पुत्र की वहीं भेंट हो।

निजामुद्दीन का कैकुबाद को सेना लेकर प्रस्थान करने के विषय मे समझाना

सुल्तान मुइज्जुद्दीन की यह इच्छा थी कि वह अकेला देहली से अवध की ओर प्रस्थान करे परन्तु मलिक निजामुद्दीन ने निवेदन किया 'कि बादशाह का इतनी दूर अकेले जाना उचित नही। देहली से अवध बडी दूर है। राजसी ठाठ बाट तथा लावलश्कर लेकर उस ओर प्रस्थान करना चाहिये, क्योकि राज्य में पुत्र एव पिता का कोई सम्बन्ध नही होता।' प्राचीन विद्वान् कह गये हैं, कि "राज्य बाँझ होता है।" प्राचीन विद्वानो का इन दो अरबी शब्दो से तात्पर्य यह है, कि राज्य के लोभ में पिता पुत्र की, और पुत्र पिता की हत्या करा देता है।'

(१४१) 'राज्य के कारण पिता और पुत्र की ममता का भी भरोसा नही। इसी कारण प्रत्येक धर्म में पिता अपने स्वार्थ के लिए अपने पुत्र का बध करा देता है और पुत्र राज्य के लोभ में पिता की हत्या करा देता है। राज्य व्यवस्था में पिता तथा पुत्र के सम्बन्ध पर कोई ध्यान नही देता। बादशाह के कूच के समय अपने पिता से भेंट होगी। पिता राज्य, खुत्बे और सिक्के का वास्तविक अधिकारी है। कौन जानता है कि जब दोनों सेनायें एकत्र हों तो क्या हो जाय। अत यह उचित है कि बादशाह सेना लेकर उस ओर प्रस्थान करे। इसके अतिरिक्त बादशाही ऐश्वर्य, वैभव तथा सम्मान पर निर्भर है। बादशाह के हिन्दुस्तान की ओर प्रस्थान करने के समय (मार्ग के) स्थानो के सभी राजे महाराजे दरबार में खाकबोस के लिये आयेंगे। यदि बादशाह के सम्मुख एकान्त में खाकबोस करेंगे, तो विशेष तथा सर्व साधारण के हृदय से बादशाही का ऐश्वर्य एव वैभव कम हो जायगा। अनेक आज्ञाकारी अवज्ञाकारी हो जायेंगे।' सुल्तान मुइज्जुद्दीन को उपर्युक्त उपदेश जोकि बडे ऊँचे तथा उचित थे, अत्युत्तम ज्ञात हुये। उसने आज्ञा दी कि सेना एकत्र की जाय, कारखानो का साज व सामान दुरुस्त किया जाय। शीघ्र सब कुछ तैयार हो गया। सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने बड़े बादशाही वैभव तथा ऐश्वर्य से लश्कर सजवा कर अवध की ओर प्रस्थान किया।

बुगरा खाँ तथा कैकुबाद का सरयू तट पर पहुँचना

जब सुल्तान अवध पहुँचा और सुल्तानी शिविर सरयू तट पर पहुँचे तो सुल्तान नासिरुद्दीन को ज्ञात हुआ कि पुत्र सेना लेकर आ रहा है। उसे यह भी मालूम हुआ कि

निज़ामुद्दीन ने उसको भयभीत कर दिया है। वह भी अपनी सेना तथा हाथी लेकर लखनौती से बाहर निकला और निरंतर कूच करता हुआ सरयू तट पर पहुँच गया। सरयू के दूसरे तट पर उतरा। दोनों सेनाएँ दोनों किनारों पर इस प्रकार उतरी थीं कि एक दूसरे के शिविर दिखाई पड़ते थे।

भेंट की शर्तें

दो तीन दिन तक दोनों ओर के प्रतिष्ठित व्यक्ति पिता और पुत्र के पास आते जाते रहे और पिता तथा पुत्र अपने संदेश भेजते रहे। अन्त में भेंट के विषय में यह निश्चय हुआ कि सुल्तान नासिरुद्दीन देहली के बादशाह के सम्मान तथा प्रतिष्ठा का पूरा ध्यान रखे, सरयू नदी पार करे और पुत्र से भेंट करने जाय, पुत्र राज सिंहासन पर बैठा रहे और वह नियमानुसार दस्तबोस[1] करे।

(१४२) सुल्तान नासिरुद्दीन ने कहा कि "मेरे हृदय में पुत्र की सेवा में उपस्थित होने में कोई संकोच नहीं। यद्यपि वह मेरा पुत्र है तथापि वह मेरे पिता के स्थान पर देहली के राज-सिंहासन पर आरूढ़ है। देहली के राज-सिंहासन को बड़ा सम्मान प्राप्त है। सभी इक़लीमों के बादशाहों का कर्तव्य है कि वे देहली के बादशाह का सम्मान करें। मैं यद्यपि सुल्तान बल्बन का पुत्र हूँ और वह राज-सिंहासन मेरा ही है, परन्तु अब वह मेरे पुत्र को प्राप्त हो गया है। मैं यह समझता हूँ कि वह मुझ को ही मिल गया है। वह मेरी मृत्यु के पश्चात् उसे प्राप्त होता, परन्तु यदि वह मेरे जीवन ही में उसे मिल गया, तो मैं इससे और अधिक प्रसन्न हूँ। देहली का राज्य भी मेरे ही कुटुम्ब में है। यदि मैं देहली के बादशाह के सम्मान पर ध्यान न दूँ और अपने पुत्र की सेवा न करूँ और उसके पद की शान न बढ़ाऊँ तो देहली के बादशाह का सम्मान क्षीण हो जायगा, मुझे और मेरे पुत्र को बड़ी हानि पहुँचेगी। इसके अतिरिक्त मेरे पिता ने वसीयत की है कि मैं देहली के बादशाह का आज्ञाकारी रहूँ; देहली के बादशाह की प्रतिष्ठा का पूरा पूरा ध्यान रखूँ।"

भेंट का दिन निश्चय होना तथा बुग़रा ख़ाँ का कैक़ुबाद के दरबार में पहुँचना

उपर्युक्त योजना के अनुसार दरबार में ज्योतिषियों ने पिता और पुत्र की जन्म कुण्डली देख कर एक शुभ दिन दोनों की भेंट का निश्चित किया। उस दिन सुल्तानी शिविर दरयाई चबूतरे के निकट लगाया गया। दरबारे आम की सजावट का पूरा पूरा प्रबन्ध हुआ। सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन राज-सिंहासन पर विराजमान हुआ और दरबारे आम किया। सुल्तान नासिरुद्दीन दरबार के द्वार पर उतर पड़ा। हाजिबों के बीच में दौड़ता हुआ ज़मींबोस के स्थान पर पहुँचा। शीश धरती पर रख दिया। तीन स्थानों पर सुल्तानी नियमानुसार ज़मींबोस किया। जब राज सिंहासन के निकट पहुँचा तो सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन पिता का सम्मान सहन न कर सका।

(१४३) उसने बादशाही आतंक त्याग दिया। राज-सिंहासन से नीचे उतरा और पिता के पैरों पर गिर पड़ा। पिता ने मिलते ही तथा उसका चेहरा देखते ही बादशाही वैभव दूर कर दिया। प्रेमवश दोनों की आँखें डबडबा आईं। पुत्र और पिता ने रोना आरम्भ कर दिया। एक दूसरे को गले से लगाया। पिता ने पुत्र की आँखें चूमीं और कपोलों का चुम्बन किया। पुत्र रोता जाता था और पिता के पैर पर आँखें रख कर मलता जाता था। पिता तथा पुत्र के आर्तनाद रोदन के कारण उपस्थितगण भी रोने लगे। कुछ समय पश्चात् जब दोनों शान्त हुए तो

१ हाथों का चुम्बन। गणमान्य प्रतिष्ठित व्यक्ति केवल हाथों का चुम्बन करते थे, धरती का चुम्बन नहीं। चूँकि बुग़रा ख़ाँ कैक़ुबाद का पिता था, अतः उसे भी धरती चुम्बन पर विवश नहीं किया गया।

पिता ने पुत्र के हाथ पकडे और राज सिंहासन पर ले गया। उसकी इच्छा थी कि कुछ समय तक राज सिंहासन के समक्ष खडा रहे। पुत्र राज सिंहासन से नीचे उतरा, पिता के हाथ पकडे और राज सिंहासन पर ले गया, अपने दाहिनी ओर बैठाया। स्वय आदर-पूर्वक पिता के पास बैठ गया। अनेक सोने चाँदी की दीनारो के तबक (थाल) और सोने चांदी के तन्को के हौजक (थाल) पिता और पुत्र के सिरो पर न्योछावर किये गये। राज सिंहासन के निकट खडे हुए लोग उन दीनारो तथा तन्को को चुनते जाते थे। न्योछावर के तबक और हौजक (थाल) की सामग्री खडे हुए व्यक्तियो में दूर दूर तक फेंकी जाती थी। कवियो ने दोनो की प्रशसा में कविताय पढी। मधुर स्वर के गायको ने गान किये। सहमुल-हश्मो, चाऊशो तथा नकीबो ने अपने अपने नारे लगाये और न्योछावर सर्व साधारण में लुटाया गया। जिस समय दरबार के उपस्थित जन न्योछावर लूटने आदि में सलग्न थे, उस समय पिता और पुत्र एक दूसरे की भेंट से इतने प्रभावित थे, कि उनकी आँखो से आसू गिरते जाते थे। भेंट के आनन्द से दोनो विभोर हो गये थे। एक दूसरे से वार्त्तालाप करने की सुधबुध न थी, यहाँ तक कि सभी भोजन कर चुके। दोनो उठ खडे हुए। दरबार विसर्जित हुआ। पिता तथा पुत्र एकान्त में चले गये। कुछ देर साथ बैठे और वार्त्ता की।

बुग़रा खाँ की वापसी तथा दोनों बादशाहों का उपहार भेजना

(१४४) तत्पश्चात् सुल्तान नासिरुद्दीन वापस हुआ और नदी पार करके अपने शिविर में पहुँच गया। थोडी-थोडी देर पश्चात् पिता अच्छे-अच्छे उपहार और अपने प्रदेश के विचित्र मेवे पुत्र के पास भेजता था। पुत्र भी थोडी-थोडी देर बाद पिता के पास मिठाई, शरबत और बादशाहो के खाने के योग्य चीजें भिजवाता था। पिता और पुत्र की भेंट के दूसरे दिन सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने कहा कि, "मेरी बादशाही वास्तव में मेरे पिता की बादशाही है। दोनो में कोई वैमनस्य अथवा शत्रुता नही। दोनो ओर की सेनायें एक ही आज्ञा पर चलें। दोनो लश्कर के लोग, उनके सम्बन्धी तथा मित्र एक दुसरे से मिलें और एक दूसरे के शिविर में अतिथि हो, आयें जायें और दोनो सेनाओ के बाजारो में एक दूसरे के क्रय-विक्रय पर कोई रोक टोक न लगाई जाय।"

बुग़रा खाँ तथा कैकुबाद की नित भेंट

कुछ दिनों पश्चात् विदा का दिन भी निकट आ गया। हाथी पर से दोनो सेनाओ में घोषणा कराई गई कि देहली की सेना का कोई व्यक्ति बिना आज्ञा के लखनौती प्रदेश में न रुक जाय और न लखनौती का कोई व्यक्ति देहली की इकलीम में रहे। कई दिन बराबर सुल्तान नासिरुद्दीन अपने पुत्र के पास आता रहा। दोनो बादशाह एक साथ बैठते, महफिलें होती, और आनन्द मनाया जाता। पिछली बातें दुहराई जाती, बुजुर्गों और उनके कारनामो पर मदिरा-पान होता। दोनों एक दुसरे की भेंट से बडे प्रसन्न थे। विदा का नाम जोकि मृत्यु से भी कठोर है, कोई जबान पर न लाता था।

अपने पिता की शिक्षा के विषय में बुग़रा खाँ के विचार

उसी आनन्द के अवसर पर सुल्तान नासिरुद्दीन को अपने पिता सुल्तान बल्बन के पालन-पोषण का ढग याद आ गया। वह बहुत रोया। पुत्र से कहा कि, "जब मैं और मेरे बडे भाई शब्द बोध तथा लिखने की शिक्षा समाप्त कर चुके, तो हमारे अताबक ने सुल्तान की सेवा में निवेदन किया कि 'इसके पश्चात् शाहज़ादो को सर्फ व नह्व[1] अथवा फेक़्ह की शिक्षा प्रदान करें। कौनसा गुरु नियुक्त किया जाय इस विषय में क्या आज्ञा है?' सुल्तान ने कहा

१ व्याकरण।

कि 'लिखना सिखाने वालों को खिलग्रत और इनाम प्रदान किया जाय और मेरे पुत्रों को बुद्धिमान इतिहास वेत्ताओं के सिपुर्द किया जाय जो उन्हें किताब आदाबुस्सलातीन और मग्रासिरुस्सलातीन पढायें। यह दोनों पुस्तक मेरे स्वामी सुल्तान शम्सुद्दीन के पुत्रों के लिये बगदाद से लाई गई थी।'

(१४५) 'मेरे पुत्रों को ऐसे वृद्ध और अनुभवी लोग इतिहास की शिक्षा दें, जिन्हें हमारे बुजुर्गों का पूरा-पूरा इतिहास ज्ञात हो। तुच्छ, पतित और नीच लोग पुत्रों के पास भी न फटकने पायें। वे लोग जो बात जानते हैं और सिखाते हैं, उनसे मेरे पुत्रों को राज्य व्यवस्था सम्बन्धी कोई लाभ न होगा। जहाँ तक नमाज, रोजा, वजू और इससे सम्बन्धित बातों का सम्बन्ध है, वह इन लोगों को सिखाया जा चुका है। हम लोगों ने किताब आदाबुस्सलातीन ख्वाजा ताजुद्दीन बुखारी से, जोकि सुल्तान शम्सुद्दीन के नदीम थे, पढी हैं। हम आरम्भ से अन्त तक इस पुस्तक का अध्ययन उन्हीं की सेवा में करते रहे। जब हम किताब पढ चुके तो हमें सुल्तान की सेवा में उपस्थित किया गया। सुल्तान बल्बन ने ख्वाजा ताजुद्दीन को, जोकि वृद्ध हो चुके थे, दो गाँव और एक लाख जीतल इनाम में दिये।'

राज्य के भिन्न भिन्न पदों की परिभाषा एवं उनकी शर्तें

मैंने उस किताब के आरम्भ में पढा है कि जमशेद, जोकि बहुत बडा शासक था, अपने पुत्रों से कहा करता था कि "जिस किसी सरखेल के पास दस अच्छे तथा चुने हुए सवार न हों उसे सरखेल न कहना चाहिये। जिस सिपहसालार के पास दस सरखेल ऐसे न हों जो उसकी आज्ञानुसार अपने परिवार की भी बलि देदें, उसे सिपहसालार न कहना चाहिये। जिस अमीर के पास प्रबन्ध करने के लिये दस सिपहसालार न हों उसे अमीर न कहना चाहिये। जिस मलिक के अधीन दस अमीर न हों उस मलिक को व्यर्थ समझना चाहिये। जिस खान के पास दस मलिक न हों उसे खान नहीं कहा जा सकता। जिस बादशाह के पास दस सहायक तथा विश्वासपात्र खान न हों उसे जहाँदारी (राज्य व्यवस्था) एवं जहाँगीरी (दिग्विजय) का नाम भी न लेना चाहिये। ऐसे निस्सहाय बादशाह को किसी स्थान का जमींदार या किसी इकलीम का वाली कहा जा सकता है। बादशाह की बादशाही की यह शर्त है कि सरखेल या खान जो कोई भी हों वे बुद्धिमान, कुलीन और प्रतिष्ठित व्यक्ति हों। वे लोग तुच्छ, कमीने, अधम, नपुंसक और साधारण व्यक्ति न हों।"

(१४६) उपर्युक्त उपदेश देने के पश्चात् जमशेद ने अपने पुत्रों से कहा कि "यदि बादशाह के सहायक विश्वासपात्र, सेना और लावलश्कर वैसे नहीं हैं, जैसा कि कहा गया, तो उसकी राज्य व्यवस्था की कदापि रौनक नहीं हो सकती। उसकी बादशाही का संचालन सफलता पूर्वक नहीं हो सकता। यह उपदेश हमें हमारे पूर्वज क्यूमुर्स द्वारा वंश परम्परा के अनुसार पहुँचते हैं।[१] मन्त्रियों तथा दार्शनिकों ने क्यूमुर्स के सामने बादशाही की जो शर्तें निश्चित की हैं, वे सब की सब ऐसी शर्तें हैं कि जिनके बिना किसी को बादशाह नहीं कहा जा सकता। उसकी बादशाही व्यर्थ तथा मूल्य-रहित हो जायगी। वे शर्तें लिखली गई हैं।" जमशेद ने कहा कि "आज तक जबकि मैं बादशाह हूँ इन शर्तों का पालन हो रहा है। मेरे सम्मान, प्रतिष्ठा, ऐश्वर्य, वैभव, लावलश्कर और आचार विचार में क्यूमुर्स के कथनानुसार वृद्धि होती जा रही है। क्यूमुर्स का उपर्युक्त उपदेशों से तात्पर्य यह है, कि जितने लावलश्कर और साज व सामान का वृत्तान्त दिया गया है, यदि वे बादशाह के पास नहीं हैं, तो बादशाह,

१ फतावाये जहाँदारी पृष्ठ ७४२ ब।

बादशाह नही रह सकता। यदि कोई बादशाह इससे अधिक प्राप्त कर ले, तो फिर इससे बडी बात और क्या है? उसकी राज्य व्यवस्था और शासन नीति उत्कृष्ट हो जाती है। राज्य व्यवस्था से सम्बन्धित कोई भी कार्य छिपा नही रहता।"

राज कोष के धन सम्पत्ति का महत्त्व

जमशेद उपदेश के वर्णन के पश्चात् सुल्तान नासिरुद्दीन ने सुल्तान मुइज्जुद्दीन से कहा कि 'हे पुत्र! तू मेरी आँख का प्रकाश और मेरे घर का उजाला है। तू मेरा प्राण और मुझे सब से प्रिय है। तुझे भोग विलास से और आमोद प्रमोद से इतना अवकाश कहाँ कि प्रतिष्ठित बादशाहो के उपदेशों की ओर ध्यान दे, जो कुछ बडे-बडे शासक और बादशाह कह गये हैं, उन पर सन्नद्ध हो। मैं चाहता हू कि तू केवल एक उपदेश पर आचरण करे जिसे मैंने आदाबुस्सलातीन के पहले अध्याय में पढा है। यही सावधान और बुद्धिमान बादशाहो के लिये, जोकि आरम्भ ही से भाग्यशाली होते हैं, पर्याप्त हैं।"

(१४७) सुल्तान नासिरुद्दीन ने उपर्युक्त उपदेश के अन्त पर अपने पुत्र से कहा कि, "मैने इस उपदेश के अन्त में किताब आदाबुस्सलातीन के पहले अध्याय में पढा है, कि जमशेद ने कहा था कि उस बादशाह को शासक और प्रबन्धक नही कहा जा सकता, जिसके राज कोष में इतनी धन सम्पत्ति न हो कि किसी दुर्घटना के पड जाने और शत्रु के आक्रमण के समय वह पर्याप्त न हो सके, वह उस धन को व्यय कर सके और समस्त शत्रुओ का मुकाबिला कर सके या दुर्भिक्ष पडने पर अपने देशवासियो की सहायता कर सके। अस्तु बादशाह, जोकि अपनी प्रजा से धन सम्पत्ति लेता है, के पास इतनी धन सम्पत्ति होनी चाहिये कि वह दुर्भिक्ष तथा दुर्घटना के समय लावलश्कर तथा प्रजा की सहायता कर सके[1]। वह भी कोई बादशाह है जोकि बादशाही का दावा करता है, अपने आपको अन्नदाता, हाकिम और शासक बताता है परन्तु अपनी प्रजा के कष्ट एव दुःख के समय उसकी फरियाद नही सुनता, और प्रजा को भूख से मरने देता है। न्याय से उसी को बादशाह कहा जा सकता है या बादशाह माना जा सकता है जिसकी बादशाही में एक व्यक्ति भी भूखा या नगा न सोये। वह ऐसे नियम बनाये और उनको इस प्रकार सन्तुलित रखे, कि उन नियमो के पालन से प्रजा के किसी भी व्यक्ति का, दुःख तथा कष्ट के कारण, विनाश[2] न हो।" सुल्तान नासिरुद्दीन ने उपर्युक्त उपदेशो के कहने के पश्चात् अपने पुत्र के कान में लौटने की इच्छा प्रकट की।

कैकुबाद की अपने पिता से उपदेश पाने की याचना

(१४८) सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने उससे कहा कि 'मेरे राज्य में मेरे दादा के अनुभवी तथा बुद्धिमान हितैषियों में कोई ऐसा बुजुर्ग शेष नही रह गया जो क्षण भर मुझे उपदेश दे सके और नसीहत कर सके तथा मुझे असावधानी की निद्रा से जगा सके। यदि बादशाह पितृ-प्रेम के कारण मुझे कुछ ऐसी नसीहतें दे जिससे मेरे राज्य तथा धर्म का कल्याण हो सके तो यह बडा उचित होगा।"

सुल्तान नासिरुद्दीन ने कहा कि 'हे पुत्र! तू मेरे पिता के स्थान पर विराजमान है। और मेरा राज्य मेरे जीवन ही में तुझको मिल गया है। तू समझ और सावधान रह कि मैंने इतना कष्ट क्यो सहन किया है और तेरे पास क्यो आया हूँ। मेरा ध्येय यह है कि मैं कुछ नसीहतें तेरे कानो तक पहुँचा दूँ। नसीहत के कडवे वचनो से तेरा विलास कडवा बना दूँ। जिस दिन विदा होने लगूँगा तो जो कुछ मेरे हृदय में है तुझ से कह दूँगा।"

---

१ फतावाये जहाँदारी पृ० ७८ अ, ६४ अ

२ फतावाये जहाँदारी पृ० ६० ब, ६१ ब

बुग़रा खाँ का कैकुबाद को उपदेश

जिस दिन पिता और पुत्र का विदा होना निश्चित हुआ, सुल्तान नासिरुद्दीन सूर्योदय के पूर्व पुत्र के पास आया और उससे कहा कि "नहारी के खाने के समय से लेकर चाश्त के खाने के समय तक प्रतीक्षा की जाय, मैं तुझ से कुछ बातें कहना चाहता हूँ जो आज तुझ से एकान्त में कहूँगा। आज्ञा कर कि निज़ामुद्दीन और क़िवामुद्दीन, जोकि तेरे राज्य के विशेष प्रबन्धक हैं, उपस्थित हों, जिससे जो कुछ मैं उनके सामने कहूँ उसे वे भी सुन लें और उनके हृदय में किसी प्रकार की आशंका उत्पन्न न हो।" सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन ने आज्ञा दी कि इस वार्ता के समय कोई अन्य व्यक्ति उपस्थित न हो। मलिक निज़ामुद्दीन अमीरदाद तथा मलिक क़िवामुद्दीन अला को बुलवाया गया। आज्ञा दी गई कि दोनों बैठ जायें। सुल्तान नासिरुद्दीन उन नसीहतों को सुनाने से पूर्व, जो वह एकान्त में कहना चाहता था, फूट-फूट कर रोया और कहने लगा कि, "हे पुत्र! यद्यपि मैं तेरा पिता हूँ परन्तु आज तू मेरे पिता के स्थान पर विराजमान है। कोई भी मनुष्य यह नहीं चाहता कि कोई अन्य व्यक्ति उससे बढ़ जाये परन्तु पिता पुत्र को अपने से उत्कृष्ट देखना चाहता है। मैं तुझको अपने से सैकड़ों गुना उत्तम देखना चाहता हूँ। जिस समय मैंने सुना कि कोतवालियान ने तुझको राज सिंहासन पर आरूढ़ कर दिया और तेरे सहायक बन गये तो मैं बड़ा प्रसन्न हुआ। मैंने यह समझ लिया कि मैं लखनौती का बादशाह था ही, अब देहली का राज्य भी मेरे घर में आ गया। मेरा अधिकार तथा मेरी शक्ति हज़ार गुना बढ़ गई। मैंने तेरी बादशाही के बल पर इस प्रदेश में अपने नाम का सिक्का तथा खुत्बा चालू कर दिया।"

(१४९) "इस प्रकार दो वर्ष होने को आये और मैं बराबर तेरे भोग विलास तथा असावधानी के समाचार सुनता रहता हूँ। मुझे आश्चर्य है कि अभी तक तू किस प्रकार राज सिंहासन पर सुरक्षित है। तू अपनी बादशाही के कार्य में किस प्रकार सावधान हो सकेगा? तेरी विलायतों के कर्मचारी, लाव-लश्कर, सेना, प्रजा, राजकोष का आय व्यय किस प्रकार तेरी आज्ञानुसार एवं तथा-रूप चल रहा है? किस प्रकार सर्व साधारण तेरे आधीन हैं? तू नहीं जानता कि ईश्वर ने संसार से अधिक प्रिय तथा रुचिकर कोई अन्य वस्तु नहीं पैदा की है। भगवान् की पैदा की हुई चीज़ों में राज्य से अधिक रुचिकर और प्रिय चीज़ दूसरी नहीं है। राज्य इतना अधिक प्रिय है, कि इसमें बाप और बेटे का प्रेम भी समाप्त हो जाता है। राज्य के लोभ में पिता पुत्र की हत्या कर देता है और पुत्र पिता की गर्दन उड़वा देता है, विष दिलवा देता है और रात दिन पिता की मृत्यु की प्रतीक्षा किया करता है। संसार में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं जिसे मनुष्य कहा जा सके या समझा जा सके, और जो राज्य का लोभ न रखता हो।"

"जिस तिथि से मैंने तेरी असावधानी और भोग विलास के समाचार सुने, उसी समय से अपने पिता के राज्य के शोक में ग्रस्त हूँ। मैं देखता हूँ कि तू, तेरा राज्य और शासन सब अवनति के पथ पर हैं। जिस समय से तूने कुछ ऐसे व्यक्तियों की हत्या करा दी जोकि मेरे पिता के विश्वासपात्र एवं दास थे, उसी दिन से मेरी नींद उड़ गई, क्योंकि मैं समझता हूँ कि इनकी हत्या से दूसरे लोगों में भी तेरा विश्वास शेष न रहेगा। तू नहीं जानता परन्तु मुझे भली भाँति ज्ञात है कि मेरे पिता ने देहली के राज सिंहासन पर अधिकार जमाने के लिये कितने कष्ट भोगे थे और कितनी बार अपने प्राणों को ख़तरे में डाल दिया था, कितने वर्षों तक इस राज्य का प्रयत्न करता रहा। उन शम्सी सरदारों, प्रतिष्ठित व्यक्तियों तथा धन-धान्य सम्पन्न लोगों को अनेक उपायों से छिन्न-भिन्न कर दिया

जिन्होंने शम्सी राज्य को विभाजित करके अपने अधिकार में कर लिया था और प्रत्येक दिशा में बादशाह ही बादशाह दृष्टिगोचर होते थे। उसने राज्य को दृढ बनाया परन्तु जब राज्य तेरे हाथ में सुगमता-पूर्वक, बिना किसी परिश्रम के आ गया तो तू उसका महत्त्व नहीं समझता। इतना भी नहीं सोचता और जानता कि मेरा बड़ा भाई राज्य के योग्य था परन्तु उसकी मृत्यु मेरे पिता के जीवन में ही हो गई। तूने उसके पुत्र की हत्या करा दी। मैं लखनौती में फँसा हुआ हूँ। हम चारों के अतिरिक्त बल्बनी राज्य का अधिकारी कोई अन्य न था। अब यदि कोई तुझे राज्य से हटा देगा तो यह राज्य दूसरे वंश अथवा कुल में पहुँच जायगा। वे लोग हमारा नाम व निशान भी ज़मीन पर शेष न रहने देंगे। ईश्वर जानता है कि दूसरे वंश में राज्य पहुँच जाने के उपरान्त हमारे हितैषियों, अनुयायियों, लावलश्कर, आज्ञाकारियों तथा दास-दासियों पर उस राज्य में क्या क्या आपत्ति आ जायगी। वह लोग पता नहीं, हमारी स्त्रियों को किस प्रकार अपमानित और लज्जित करेंगे।"

'मेरे पिता जोकि मलिकी, खानी और बादशाही के अनुभव में वृद्ध हो गया था, यह बराबर कहा करता था कि, 'मैं यदि चाहूं तो अपनी स्त्रियों तथा दासियों द्वारा बहुत बड़ी संख्या में पुत्र और पुत्रियों को जन्म दे दूँ, परन्तु मैंने राज्य और दीन के बुजुर्गों से सुना है कि बादशाह के लिये यह उचित नहीं कि उसके पुत्र और पुत्रियाँ बड़ी संख्या में हों, क्योंकि यदि राज्य इनमें से एक को प्राप्त हो जाता है तो वह अन्य सभी पुत्रों, भाइयों, भतीजों को अपना शत्रु समझने लगता है और प्रत्येक की हत्या करा देता है या दूर की इकलीमों में भेज देता है। बादशाहों के जामाताओं के मस्तिष्क में भी बादशाहों की पुत्रियों से सम्बन्ध के कारण, राज्य का लोभ उत्पन्न हो जाता है। जो बादशाह विलासिता में ग्रस्त रहता है और उसके अनेक पुत्र हो जाते हैं तो यह समझना चाहिये कि वह अपने हाथ से अपने पुत्रों की हत्या करता है। यदि राज्य बादशाह के पुत्र को न प्राप्त हो और किसी अन्य को मिल जाय तो उसे उस समय तक सन्तोष नहीं होता जब तक कि वह उसके सहायकों, मित्रों, आज्ञाकारियों तथा कर्मचारियों की हत्या न करा दे।"

(१५१) 'हे पुत्र! समझ ले और सावधान हो जा कि यदि यह राज्य तेरे पास दो वर्ष तक सुरक्षित रह गया तो यह मेरे पिता के ऐश्वर्य के फलस्वरूप है, जिसने राज्य के उद्यान में बादशाही की जड़ें इतनी नीची पहुँचा दी हैं कि उन्हें साधारण हवा का झोंका नहीं हिला सकता, अन्यथा तेरे आचरण के अनुसार एक दिन भी बादशाही करना सम्भव न था। हे पुत्र! तुझ अपने आप की कोई चिन्ता नहीं। तू दर्पण में नहीं देखता कि तेरा रंग जो गुलाब के फूल से अधिक सुर्ख था अब केसर की भाँति पीला पड़ चुका है। जिसे अपनी आत्मा की चिन्ता न हो वह राजनीति तथा राज्य व्यवस्था क्या कर सकता है। जिसे अपने प्राणों की चिन्ता न हो वह दूसरे किसी की क्या चिन्ता कर सकता है। तू इस असावधानी एवं निश्चिन्त अवस्था में किस प्रकार संसार वालों की चिन्ता कर सकेगा, क्योंकि राज्य व्यवस्था दुनिया वालों की चिन्ता पर निर्भर है। मैं तेरे आचार विचार से बड़ा पीड़ित रहता हूँ। मैं तेरा पिता हूँ। इस समय चाहता हूँ कि तुझ से कड़वे से कड़वे किन्तु उचित वचन कहूं क्योंकि मेरे अतिरिक्त कोई अन्य तेरे ऊपर दया-दृष्टि अथवा कृपा-दृष्टि रखने वाला नहीं। मेरे अतिरिक्त तेरे हित की बात कोई अन्य नहीं कह सकता। मुझे ज्ञात है कि तू क्षणिक बादशाही के अभिमान में, जोकि तेरे मस्तिष्क में पैदा हो गया है, और इस कारण से कि तू सब को अपना मुहताज समझता है इन वचनों को न समझ सकेगा। परन्तु यदि तू कुछ दिन सावधान रहे और ध्यान से सोचे कि मैंने तुझसे क्या कहा तो तुझे मेरे वचन का महत्त्व ज्ञात हो जायगा।"

"हे पुत्र ! मेरा पिता मुझ से कहा करता था कि राज्य व्यवस्था पाँच बातो पर निर्भर है। यदि इन पर आचरण न किया जायगा तो बादशाही स्थापित नही रह सकती। प्रथम नेकी और न्याय करना, द्वितीय लाव-लश्कर को दृढ बनाना और प्रजा की रक्षा करना तृतीय खजाने में धन-सम्पत्ति एकत्र करना, चतुर्थ अपने राज्य के सहायको तथा विश्वासपात्रों को आश्रय देना, पञ्चम राज्य के दूर और निकट के लोगो के हाल से सावधान रहना। तुझ में राज्य व्यवस्था सम्बन्धी पाँचो बातो का कोई निशान या चिह्न नही है। तेरा राज्य किस प्रकार स्थायी रह सकता है।"

(१५२) 'हे पुत्र ! मैंने तेरा आचरण देख लिया और तेरे दो वर्ष के बादशाही के समय में उन बुरी आदतो के विषय में भी, जोकि तुझ में पड चुकी हैं, खूब सुन लिया है। मेरी बातो से रुष्ट न होना। मैंने जिन ऐयाशो, विलासियो, भोगियो और व्यर्थ बातें करने वालो को तेरी महफिल में देखा है, उनके विषय में यह कह सकता हू, कि वे तुझे इस बात का अवसर न देंगे कि तू क्षण भर के लिये भोग विलास त्यागकर बादशाही, विलायत, सेना, प्रजा तथा राजकोष को सुव्यवस्थित करने का प्रयत्न कर सके। तुझे जानना चाहिये कि समस्त आनन्द राज्य-व्यवस्था ही पर निर्भर है। मेरा पितृ प्रेम मुझे इस बात पर विवश करता है कि मै तेरे हित की कुछ बातें चाहे वे तुझे हृदय में कितनी ही बुरी क्यों न लगें तुझ बतादूँ, तुझे आलिंगन करूँ, तरो आखो और कपोलों को चूमूं और तुझे विदा करूँ।"

"तेरे पिता की पहली नसीहत यह है कि बादशाही का महत्त्व समझ और अपने प्राणो का महत्त्व उससे अधिक जान। यद्यपि तू ईश्वर तथा अन्य लोगों से भय नही करता, तो भी अपने प्राण की रक्षा के लिये कुछ क्षण के लिये भोग विलास त्याग दे। अपने मित्रो, नदीमो, रमणियो तथा गायको को जिन्होंने तुझे भोग विलास में ग्रस्त कर दिया है, अपने पास से पृथक् कर दे। अपने प्राण की रक्षा का प्रयत्न कर। उन कार्यों को, जिनका नाम लेने में भी मुझे लज्जा आती है और जिन्हे तू बडे जोरो से कर रहा है, पूर्णतया त्याग दे। अपने प्राणों पर दया कर, क्योकि मुझ से पूर्व बुजुर्गों ने कहा है, कि प्राण सबसे बढकर हैं, तत्पश्चात् ससार। यदि प्राण क्षीण हो जाय तो ससार से क्या लाभ होगा। हे पुत्र ! तेरा प्राण क्षीण हो रहा है, और तू ध्यान नही देता।"

राज्य व्यवस्था के चार स्तम्भ

"दूसरी नसीहत यह है कि जो मलिक शेष रह गये हैं, उनकी हत्या न करा। अपने सभी विश्वासपात्रों तथा सहायको का विनाश न कर। यदि तू अपने विश्वासपात्रो तथा सहायकों का विनाश करता रहेगा तो तेरे ऊपर तेरे राज्य में कोई भी विश्वास न करेगा। यदि प्रजा का बादशाह पर से विश्वास हट जाता है तो राज्य सुरक्षित नही रहता। अपने शत्रुओ को भी अपनी कृपा, दया, नेकी, बुद्धि तथा राजनीति से अपना मित्र एव हितैषी बना ले।"

(१५३) 'किसी समय असावधान न हो। तू जिस दशा में भी हो, इन दोनो के समान अर्थात् निजामुद्दीन एव किवामुद्दीन, जोकि तेरे राज्य में सब से श्रेष्ठ तथा अनुभवी एव सुव्यवस्थापक हैं, दो और व्यक्ति अपने राज्य से चुन ले और इन चारो को अपने राज्य के चार स्तम्भ बना ले। अपनी राज्य व्यवस्था के महत्त्व को इन चारों स्तम्भों से दृढ बना। राज्य नीति का सचालन इनके सिपुर्द कर। इन चारों में से एक को दीवाने विजारत का पद प्रदान कर। उसका पद दूसरो से ऊँचा रख। दूसरे को दीवाने रिसालत बना। उसकी अनुमति तथा निवेदन पर विश्वास कर। तीसरे को दीवाने अर्ज नियुक्त कर और सेना

सम्बन्धी प्रबन्ध उसको सौंप दे। चौथे को दीवाने इशा नियुक्त कर और विलायत, मुक्तो कर्मचारियो के प्रश्नो एव प्रार्थना पत्रों का उत्तर देना उसके सिपुर्द कर। इनमें से चारो को अपना विश्वासपात्र बना ले। अपने राज्य के सभी जानकारो को जिन्हें राज्य व्यवस्था सम्बन्धी कार्यों में दौड धूप के कारण जानकारी हो जाती है, राज्य व्यवस्था के कार्य में सम्मिलित न कर। एक व्यक्ति के हाथ में सभी कार्य न दे दे। इन चारो में से किसी एक को या अपने किसी अन्य विश्वासपात्र एव निकटवर्त्ती का अपने ऊपर पूर्ण अधिकार प्राप्त न करने दे और न प्रजा के ऊपर इनका पूर्ण अधिकार प्राप्त होने पाये और न ऐसा हो कि सब एक दूसरे की हत्या करने का प्रयत्न करने लगें।"

"तेरे पिता की तीसरी नसीहत यह है कि जब तू चार अनुभवी, आज्ञाकारी, सत्यवादी तथा योग्य पुरुष अपने राज्य व्यवस्था के लिये चुन ले तो उन्हे अपने राज्य की सभी गुप्त बातें बता दे। राजनीति के सिद्धान्त उनको सौंप दे। जो आदेश अथवा राय दे, या इन चारो के सिपुर्द जो कार्य करे तो राज्य की समस्त गुप्त बात सर्व प्रथम इन चारो व्यक्तियो के सम्मुख बयान कर दे। यद्यपि मत्री का पद सर्वोच्च होता है परन्तु तेरे राज्य के हित में यह उचित है कि इन राज्य के चारों स्तम्भो में से किसी एक को इतने अधिकार न दे दे कि अन्य तीन उस बुरा मानने लगें और तुझ से घृणा करने लगें।"

(१५४) "अपने पदाधिकारियो के अच्छे बुरे सभी कार्यों की जानकारी रख। जिन अधिनियमो के अनुसार तेरा दादा राज्य करता था, उन्हे मत त्याग और अपने राज्य की व्यवस्था में उन्ही आज्ञाओ का पालन कर जोकि उस समय लागू थीं। उस अनुभवी बादशाह के न्याय तथा इन्साफ करने के ढग में कमी बेशी न कर। प्रजा से इस प्रकार मीठा न बना रह कि तेरा भय, डर तथा आतक किसी के हृदय मे न रहे। यदि बादशाही ऐश्वर्य का भय तथा आतक प्रजा के हृदय मे निकल जाता है, तो राजा और प्रजा बराबर हो जाते हैं। तेरी आज्ञाओं का पालन कोई भी न करेगा। मेरे कहे हुये वचनों का पालन उस समय तक सम्भव नही जब तक कि तू अत्यधिक मदिरा पान न त्याग देगा।"

उल्माये आखेरत तथा उल्माये दुनिया

'तेरे पिता की चौथी नसीहत यह है कि मैंने सुना है तू नमाज़ नही पढता, रमज़ान का रोज़ा नही रखता और बहाना बना लेता है। कुछ विश्वासहीन विद्वान् जिन्हे मुसलमान न कहना चाहिये, तन्के तथा जीतल के लोभ में, जोकि मृतक शरीर के समान हैं, तुझे रोज़ा न रखने की आज्ञा दे देते हैं। वे कह देते हैं कि प्रत्येक रोज़े के स्थान पर कोई गुलाम आज़ाद कर दे या साठ गरीबों को भोजन करा दे। तू उन अभागो की बातें सुनकर उन पर श्रद्धा रखने लगा है। तूने नही सुना कि जो कोई रमज़ान के महीने का केवल एक रोज़ा छोड देता है वह युवावस्था में मर जाता है। हे पुत्र! तेरा दादा बहुत कहा करता था कि बादशाहो को और समस्त मुसलमानों को उल्माये आखेरत की बातों पर विश्वास तथा श्रद्धा रखनी चाहिये। बहाने बाज़ और दुराचारी आलिमो को पास न फटकने देना चाहिये। बेईमानों के बहानो तथा व्याख्यानों पर आचरण न करना चाहिये। मैंने अपने पिता से अनेक बार सुना है कि उल्मा दो प्रकार के होते हैं। उल्माये आखेरत वे हैं जिन्हे ईश्वर दुनिया, दुनिया के प्रेम तथा लोभ से सुरक्षित रखता है। उल्माये दुनिया वे हैं, जो दुनिया की लालच और लोभ मे कुत्तो की तरह गली गली मारे-मारे फिरते हैं। वे नाना प्रकार के बहाने बनाया करते हैं तथा अनक छल की बातें किया करते हैं और प्रत्येक बात की भिन्न भिन्न व्याख्या किया करते हैं।

इसी प्रकार के अनुचित कार्य करना उनका व्यवसाय होता है। बुद्धिमान तथा दीनदार (धार्मिक) वही बादशाह कहा जा सकता है जोकि उलमाये दुनिया के कहने में न आवे।"

(१५५) "वे दुनिया को अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय समझते हैं। उनके सिपुर्द तू शरा के कार्य तथा आज्ञायें न कर। हज़रत मुस्तफा की शरा को उनके हाथ में देकर लज्जित न कर। अपने दीन की समस्यायें ऐसे लालचियों से न पूछ जो दुनिया को अपना ईश्वर समझते हैं। यदि दीन तथा दुनिया में तू अपना कल्याण चाहता है तो हज़रत मुस्तफा की शरा के आदेशों का पालन कराना ऐसे उलमा के सिपुर्द कर, जिन्होने दुनिया न मुँह फेर लिया हो; तन्का और जीतल उन्हे साँप तथा बिच्छू प्रतीत होते हो। अपने दीन की समस्यायें ऐसे ही उलमा से पूछनी चाहिये। भगवान् का भय रखने वालों के वचनों पर आचरण करना चाहिये।"

सुल्तान बल्बन की नमाज़-रोज़े से रुचि

"हे पुत्र! तू अपने दादा की सेवा में रह चुका है। तू देख चुका है कि रोज़ा रखने और फर्ज़ तथा नवाफिल[1] की नमाज़ें पढने में उन्हें कितनी रुचि थी। किसी आलिम अथवा शेख को उतने रोज़े रखने और नमाज़ पढने की शक्ति न थी। तेरा दादा सुल्तान बल्बन यदि यह सुन पाता कि हम दोनो भाइयो में से किसी ने एक नमाज़ छोड दी है या सोते रह गये और प्रात काल की नमाज़ जमाअत के साथ नही पढी तो वह हमसे एक मास तक बात न करता। जिस किसी के विषय में यह सुन लेता कि उसने एक समय की भी नमाज़ छोड दी है तो वह जब भी उसकी सेवा में उपस्थित होता तो बल्बन उसकी ओर ध्यान न देता। मैंने अनेक वृद्धो से सुना है कि जो कोई रमज़ान के महीने का रोज़ा नही रखता वह युवावस्था में ही मर जाता है। जो नमाज़ नही पढता उसे मुसलमान नही कहा जा सकता अथवा समझा जा सकता। उसका रक्त बहाना उचित होता है।"

"हे पुत्र! यह जान ले कि मरना बडा कठिन है, विशेष कर बादशाह का, जिसे अनेक दैवी देन प्राप्त होती हैं। उसमे कठिन जवान बादशाह की मृत्यु है जो अपने साथ आकाश से पाताल तक के दुख ले जाता है। तेरे विषय में तेरे पिता की अन्तिम शिक्षा यह है कि रमज़ान का रोज़ा न छोड। जिस प्रकार हो सके नमाज़ पढता रह। अपने पास एक ऐसा आलिम हमेशा रख जिसे ईश्वर की विशेष भक्ति हो क्योंकि तेरी दुनिया की कठिनाइयो का समाधान कई हज़ार मनुष्य करते रहते हैं, परन्तु वह तेरे धर्म की चिन्ता रखेगा।"

बुग़रा ख़ाँ का निज़ामुद्दीन की हत्या के विषय मे संकेत

(१५६) सुल्तान नासिरुद्दीन ने उपर्युक्त नसीहत करने के पश्चात् फूट-फूट कर रोना आरम्भ कर दिया। सुल्तान मुइज़्ज़ुद्दीन को आलिंगन किया और विदा किया। जिस समय पिता पुत्र की आँखें और कपोल चूम रहा था, और बार बार गले से लगा रहा था, गुप्त रूप से उसने पुत्र से कहा कि 'निज़ामुद्दीन को अपने बीच से शीघ्र हटा दे, क्योंकि यदि इसके बाद उसे अवसर मिला तो वह तुझे एक दिन भी राज सिंहासन पर आरूढ न रहने देगा।' यह कहा और रोता हुआ वापस हुआ। वापस होते समय दो तीन बार यह छन्द पढे

छन्द

आज्ञा दे कि मैं सावन के बादल की भाँति रोऊँ
क्योंकि मित्रो के वियोग के दिन पत्थरो के भी आँसू निकल आते हैं।

---

१ ऐसी इबादतें अथवा नमाज़ रोज़े जोकि न सुन्नत है और न फ़र्ज़ ...

बुग़रा खाँ तथा कैक़ुबाद की विदा

जिन लोगो ने पिता और पुत्र के विदा के समय का विलाप, शोक तथा रोदन देखा था, वे स्वय रक्त के आँसू बहाने लगे। कई दिन तक विलाप का दृश्य उनकी आँखों के समक्ष रहा। कहा जाता है कि लौटते समय सुल्तान नासिरुद्दीन चिल्लाता हुआ घोडे पर सवार हुआ और रोता हुआ अपने शिविर तक पहुँचा। भोजन न किया। अपने निकटवर्ती एव विश्वासपात्रो से कहा कि 'पुत्र को और देहली के राज्य को आज विदा कर दिया। मैं जानता हू और भली भाँति समझता हू कि अब मेरे निकट न तो यह पुत्र रहेगा और न देहली का राज्य।'

कैक़ुबाद की देहली को वापसी तथा उसके काल के विलास-प्रिय लोग

सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने अवध से देहली की ओर प्रस्थान किया। कुछ दिनों तक अपने पिता की शिक्षा पर आचरण किया, भोग विलास के पास न फटका, मदिरापान न किया, गाना न सुना, रमणियो को अपने पास न बुलाया। चूकि दान, भोग विलास, आमोद प्रमोद और आनन्द से भरी हुई बातो में उसकी रुचि राज्य के नगरो में प्रसिद्ध हो चुकी थी और निकट तथा दूर के लोगों तक पहुँच चुकी थी, तथा उसकी इश्कबाजी और रमणियो से प्रेम, सभी लोगो को ज्ञात हो चुका था, अत प्रसिद्ध गदागाजिया और बुरे आचरण की नायिकाओ ने अपनी सुन्दर पुत्रियो को बादशाह की सेवा मे भेट करने के लिए विशेष रूप से तैयार किया था। बाँके लोच व नखरे वाली शोखी और हाव-भाव से भरी हुई युवतियो तथा सुन्दरियो को गाना बजाना और गजल पढना, चुटकुलेबाजी, शतरज, चौसर खेलना सिखाया गया।

(१५७) प्रत्येक सुन्दरी को, जोकि नगर ही में नही अपितु समस्त ससार को कष्ट में डालने योग्य थी, अनेक प्रकार से पालन-पोषण करके तैयार किया गया। इससे पूर्व कि उनके यौवन की कली युवावस्था के उपवन में प्रवेश करे, उन्हे घुड सवारी, गेंद खेलना, और भाला चलाना बडी कुशलता तथा सावधानी से सिखाया गया। ऐसी-ऐसी अनेक रुचिकर कलायें जोकि जाहिदो (सतो) को भी जुन्नार[१] बँधवादें और आबिदो (उपासको) को भी मधुशाले में पहुचा दें, उन उपद्रवकारी रमणियो को सिखलाई गई। अपनी ओर आकर्षित कर लेने वाले हिंदुस्तानी दासों, सुदर दासियो को फारसी तथा गाना सिखाया गया। उन्हे सुनहरे आभूषण तथा सुनहरे काम के वस्त्र पहनाये जाते थे। उन हृदय हारिणी रमणियों को राज दरबार के नियम, ढग और उनमें उठने बैठने का तरीका सिखाया जाता था। अद्वितीय तरुण दास[२] अपने कानो में कुण्डल लटकाये रहते थे। अद्वितीय दासियो की पुत्रियो का दुल्हिन की भाँति शृङ्गार किया जाता था। दक्ष तथा कुशल गायक फारसी एव हिंदी गाने गाते। सुल्तान की प्रशसा में गजलें, कौल, हुब तथा कीलानी लिख लिये गये थे। वह पढे जाते थे। विदूषक तथा भाँड अपने मसखरेपन से शोक-ग्रस्त लोगो को भी हँसा देते थे। हँसी क मारे विलासियो के पेट में बल पड-पड जाते थे। सुल्तान के दान के समाचार दूर-दूर तक पहुँच चुके थे। कोल और मेरठ के कलवार दो-दो और तीन-तीन साल की खिंची हुई पुरानी सुगन्धित शराबें सुराहियो में भरवा कर उपहार स्वरूप लाते थे।

---

१ एक प्रकार का पेटी अथवा धागा जोकि इस्माई अपनी कमर म बाँधते हैं। जनेऊ के लिये भी जुन्नार शब्द का प्रयोग होता है।

२ अमरद, वह युवक जिसके दाढ़ी मूँछ न निकली हों।

एक गदागाजी बच्चे द्वारा सुल्तान की प्रतिज्ञा भंग होना तथा भोग विलास में लीन होना

सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने अवध से देहली की ओर प्रस्थान किया और चार पाँच मंजिलें पार कर लीं। प्रत्येक दिन सरोक़द[1] युवतियाँ, मरोक़द रमणियाँ जोकि परहेज़गारों से भी मूर्ति पुजवा दें और दीनदारों के जुन्नार बँधवा दें, मार्ग में खड़ी हो जाती थीं। जिस समय सुल्तान की सवारी पहुँचती तो वे अपनी छवि का प्रदर्शन करती तथा गाना गातीं।

(१५८) यद्यपि सुल्तान का हृदय उन रमणियों की ओर आकर्षित होता था और उसका दिल उन युवतियों की ओर झुका जाता था किन्तु अपने पिता की शिक्षा के कारण जिसके विषय में लश्कर के सभी विशेष तथा साधारण व्यक्तियों को सब कुछ ज्ञात हो गया था, लज्जा-वश अपने ऊपर नियंत्रण कर लेता था। कटाक्ष से उन युवतियों की ओर देखना और बार-बार उन युवतियों से भेंट करने के लिये उसका हृदय उसे बाध्य करता, यहाँ तक कि एक दिन सवारी के समय एक सुन्दर चाँद का टुकड़ा गदागाज़ी बच्चा जो अपने हाव-भाव, चपलता तथा चंचलता और शोखी में सबसे बढ़ा-चढ़ा था, सुनहरी क़बा पहने, सुनहरा नियम कमर से बाँधे और उसका डोरा बाहर लटकाये, आधे कान तक शाहाना कुलाह सिर पर पहने कुम्मैत रंग के घोड़े पर सवार आखेटक की भाँति दृष्टिगोचर हुआ। घोड़े के सीने के सामने काला पताका फहराता हुआ, वह सुन्दरता के मैदान का शहसवार फ़ौजे खास से निकल कर बाहर आया। घोड़े को दौड़ाता और चक्कर देता हुआ सुल्तान की सवारी की ओर बढ़ा। निकट के लोग और फ़ौजे खास वालों ने समझा कि कोई मलक-ज़ादा[2] किसी मृगया का पीछा कर रहा है। उसके चंचलपन, हाव-भाव, शोखी, चपलता और घोड़ा दौड़ाने का ढंग देख कर दर्शकों की आँखें चका चौंध हो गई। वह प्राणों को क्लेश में डालने वाला और हृदयों को हरण करने वाला, मैदान में तीर की भाँति आगे पीछे चला जाता था। इस प्रकार सुल्तानी चत्र के समक्ष पहुंच गया। जानदार, चाऊश तथा नक़ीब, जोकि सुल्तानी सवारी के सामने चक्रमाक़ और गदा लिये चल रहे थे, उस सुन्दर बालक की सुन्दरता से ऐसे मूर्छित हो गये कि उसे चत्र के समक्ष आने से रोक भी न सके। पलक झपकाते ही वह सुन्दरता का दीपक एवं नेत्र सुल्तानी चत्र के निकट पहुँच गया। घोड़े से नीचे उतरा। सुल्तान के घोड़े के सामने भूमि पर गिर पड़ा और यह छन्द रमणियों तथा सुन्दरियों के हाव-भाव से पढ़ा।

छन्द

(१५९) यदि तू मेरे नेत्र पर अपने चरण रख देगा,

तेरे मार्ग में इस कारण मैं आँख बिछाता हूँ कि तू उन पर चले।

तत्पश्चात् सुल्तान से कहा कि 'हे शाहेजहाँ[3] इस ग़ज़ल का पहला छन्द अन्नदाता के लिये बड़ा ही उचित है परन्तु भय के कारण नहीं पढ़ सकता। सुल्तान उसे देखकर मूर्छित हो गया और उसकी वार्ता से मस्त हो गया। घोड़ा रोक लिया और उससे स्वयं कहा कि पढ़ और भय मत कर। उस परहेज़गारों की तोबा[4] तुड़वा देने वालों ने इस प्रकार कहा—

---

1. सरो की भाँति डील डौल रखने वाले, अर्थात् सुडौल या सुगठित आकार वाले।
2. फ़रिश्ते का पुत्र।
3. संसार के बादशाह।
4. किसी कार्य को न करने की प्रतिज्ञा।

छन्द

कोमल सरो जगल में जा रहा है ।
यह खूब प्रतिज्ञा है कि बिना मेरे जा रहा है ।

उपर्युक्त छन्द पढने के पश्चात् सुल्तान से बडे हाव-भाव से कहा 'कि हम जैसे न जाने कितने नाज व अन्दाज हाव-भाव वाले स्वरूपवान बादशाह की सुन्दरता को देखने के लिये कहाँ कहाँ से आये हैं, परन्तु बादशाह हम से मुँह मोड कर जा रहा है । हमारी छवि क्यों नही देखता ? सुल्तान सभी को नष्ट-भ्रष्ट कर देने वाले की सुन्दरता, सम्भाषण, हाव-भाव से व्याकुल, पागल तथा मूर्छित हो गया और उसके चचलपन एव चपलता, हाव-भाव तथा बातचीत से चकित और स्तब्ध हो गया । उस बेहोशी में उसकी छवि देखकर यह लालसा हुई कि तुरन्त घोडे से उतर कर उसे आलिगन करे । उस तौबा तुडवा देने वाले की सुन्दरता ने सुल्तान को विवश कर दिया और उसकी मधुर स्वर तथा प्रिय आवाज ने उसको पूर्णतया निर्बल कर दिया । अत्यन्त शक्तिहीन बन कर तौबा तोड डाली । उसी स्थान पर मदिरा मँगवाई । मदिरा का प्याला हाथ में लेकर उस सुन्दर सरोकद के समक्ष पिया और तौबा तोडते समय यह छन्द पढे

छन्द

रात्रि में मैंने सुन्दरियो के चचलपन के भय से मदिरा से तौबा कर ली ।
प्रात काल साकी[1] का रूप फिर अपना काम कर गया ।

इस्लाम पर आपत्ति लाने वाले ने सुल्तान के मुख से जब उपर्युक्त छन्द सुने तो पहले की अपेक्षा अधिक मधुर स्वर और प्रिय आवाज से यह छन्द पढा

छन्द

(१६०) मेरा आबिदो को धोखा देने वाला हाव भाव सैकडो वर्ष के जाहिद को
मत्थे के सामने के बाल पकड कर मधुशाले में पहुँचा देता है ।

वह छन्द पढता जाता था और हाव-भाव, शोखी तथा नाज़ व अन्दाज दिखाता जाता था । दर्शक-गण उसके दर्शन, मधुर स्वर तथा बात के ढग से चकित और स्तब्ध हो गये थे । लोगो की यह हार्दिक कामना थी कि अपने आपको उसके शीश पर से न्यौछावर कर दे । वह घोडा कुदाता हाथ में धनुष लिये और धनुष में बाण जोडे पत्थरो के बीच में चकोर ढूँढता फिरता था । उसकी सुन्दरता और कृत्रिम हाव भाव को देखकर फौजे खास वाले मूर्छित हो गये थे । उनके हाथ से लगाम छूट गई थी । उसी के ऊपर दृष्टि डाले हुये चले जाते थे । दर्शकों का प्राण तथा हृदय उस कृत्रिम भाव वाले की ओर चक्कर लगा रहा था ।

जैसे ही सुल्तान अपने शिविर में घोडे से उतर कर पहुँचा विलास की महफिल गरम हो गई । उस आपत्ति ढाने तथा व्याकुलता उत्पन्न करने वाले को बुलवाया गया । सुल्तान ने अपनी हार्दिक इच्छा उसके सामने इस प्रकार प्रकट की कि 'मै चाहता हूँ कि आज तेरे हाथ से मदिरा पान करूँ । आज की महफिल का तू साकी बन ।' उस चचल कृत्रिम हाव-भाव वाले ने सुल्तान को उत्तर दिया

छन्द

यद्यपि कि हम चाँद से भी अधिक रूपवान हैं
परन्तु शाह के दासो के दास हैं ।

१ मदिरा पिलाने वाला ।

यह छन्द पढ़ कर प्याला भरा और सुल्तान के हाथ में दिया। सुल्तान ने प्याला हाथ में लेकर उस संसार को उज्ज्वल करने वाले की सुन्दरता को निहारते हुये स्तब्ध होकर यह छन्द पढ़े.

छन्द

जब प्याले का दौर चलने लगे तो महफ़िल में बैठे हुये लोगों को दे।

मेरी चिन्ता न कर क्योंकि हे साक़ी! मैं तेरी आँखों के दर्शन से स्तब्ध रहूँ।

(१६१) उस सरोकद रजत शरीर वाले साक़ी ने कृत्रिम हाव-भाव दिखाते हुए भूमि पर अपना शीश रख दिया और बड़ी शोखी तथा चंचलता एवं चपलता से कृत्रिम हाव भाव दिखाते हुए मध्यम स्वर में दो बार कहा, 'शाहेजहाँ नोश! शाहेजहाँ नोश!' (हे संसार के बादशाह! पी, हे संसार के बादशाह! पी) सुल्तान ने कहा—

छन्द

यदि तू मेरा साक़ी बना रहे,

तो कौन कह सकता है कि मदिरा पान हराम है।

सुल्तान ने इस अवसर पर जब कि साक़ियों का बादशाह 'और पियो और पियो,' बेतार लगा रहा था, ज़िया जहज़ी की ओर देखा और मुस्करा कर कहा कि 'साक़ियों का राज्य बुरा नहीं।' ज़ियाउद्दीन जहज़ी ने सिर भूमि पर टेका और कहा :—

छन्द

साक़ियों का राज्य संसार में नहीं।

संसार यहीं है। यह लोग संसार में नहीं हैं।

सुल्तान ने आदेश दिया कि चाँदी के हज़ार तन्के लाये जायें और उस सुन्दरता के उपवन के सरो के सिर पर से न्यौछावर किये जायें। उस चंचल हाव-भाव वाले ने मुस्करा कर राज सिंहासन के समक्ष निवेदन किया कि यह न्यौछावर उन लोगों का हक़ है, जिन्होंने मुझ जैसे चन्द्रमा को तुझ जैसे सुल्तान के लिये पालन-पोषण किया है। वे लोग दरबार के द्वार पर भीतर आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। सुल्तान ने आँखें खोलते हुए पूछा कि, "तुझ जैसा उन लोगों में कौन है?" उसने उत्तर दिया, "हे शाहेजहाँ! मुझ जैसा अन्य कोई माँ जन्म नहीं दे सकती, किन्तु मेरे साथ अनेक सुन्दरियाँ सितारों की भाँति एकत्रित हैं जो कि आकाश के चन्द्रमा को घेर कर उसकी शोभा बढ़ाती हैं। वे बड़ी मधुर गायिका हैं और नृत्य में बड़ी उत्तम हैं। यदि शाहेजहाँ उन्हें अपने भव्य राज भवन में आने की आज्ञा प्रदान कर दे तो उनके संगीत से चिड़ियाँ हवा से उतर आयेंगी और दीवार तथा द्वार नाचने लगेंगे।" सुल्तान ने आज्ञा दी कि उन लोगों को पेश किया जाय। जब उनकी सुन्दरता की ओर उसने दृष्टिपात किया तो देखा कि उनमें से सभी एक से एक सुन्दर बाँकी और हाव-भाव वाली हैं। जब उन्होंने संगीत तथा नृत्य प्रारम्भ किया तो सभी उपस्थित जन, उन हूरपैकर[1] सुन्दरियों के चंचलपन और उन सरो क़ामत[2] चाँद सरीखी रमणियों के नाज़ व अन्दाज़ और शोखी से भरी एवं उन गुलाब सदृश होश हवास छीन लेने वाली और प्राण क्षीण कर देने वाली युवतियों को देखकर स्तब्ध हो गये।

(१६२) चौसर खेलते समय उन लोगों का झगड़ना, चुटकुले, रजत सदृश पिंडलियों वाली रमणियों का नृत्य एवं उन लोगों के गाने बजाने को देखकर सुल्तान अपने पिता के

१ हूर जैसी, अर्थात् अति सुन्दर।

२ सरो के समान शरीर वाले।

उपदेश भूल गया, और उसकी नसीहत का कोई ध्यान न रहा। उसके उपदेशों को कोने में डाल दिया और रात दिन उन तोबा तुड़वा देने वालियों के साथ भोग विलास में ग्रस्त हो गया।

पद

पिता का आदेश बादशाह को भोग विलास से न रोक सका।

कैकुबाद के दरबार की रमणियाँ तथा गायक एवं नर्तकियाँ

सुल्तान ने उन रमणियों से भेंट करने तथा रजत-तुल्य शरीर वाली नाज़ से पली हुई युवतियों को देखकर अपनी गर्दन में भोग विलास की जुन्नार डाल ली और मूर्त्तिपूजा आरम्भ कर दी। विलास में मस्त हो गया। आमोद प्रमोद तथा भोग में पड़ा रहने लगा। उन रमणियों से शतरंज और चौसर खेलने तथा उन सुन्दरियों के पाँसा फेंकने के अन्दाज़ पर वह मूर्छित तथा आसक्त रहने लगा। प्रत्येक दिन प्रत्येक मंज़िल पर नई महफ़िल सजाई जाती। उन लोगों को उपस्थित किया जाता। बारी बारी एक एक तायफ़ा[१] पेश होता। सुल्तान उन पर इतना आसक्त हो गया था कि उन तायफ़ों को बीसियों तीसियों हज़ार तन्के प्रदान कर देता था। वे सुन्दरियाँ जो सुल्तान के साथ उठने बैठने वाली बन गई थीं और सुल्तान तथा उसके मित्रों के साथ शतरंज एवं चौसर खेलने लगी थीं, सुल्तान के नदीमों तथा सहचरों के साथ आकर चुटकुले बाज़ी करती थीं, कुछ समय शोखी, छेड़ छाड़ और वाक् प्रहार से हृदय को व्याकुल बना देती थीं और आनन्द में वृद्धि करती थीं। उनमें से कुछ चुनी हुई और विशेष रमणियों को सुल्तान ने सोने जवाहिरात तथा मोतियों से लाद दिया था। जिस मंज़िल पर भी सुल्तान का शिविर लगता, शिविर के चारों ओर से सुन्दरियों की मधुर तानें सुनाई देने लगतीं। हृदय को आकंपित करने वाली उनकी नाज़ की आवाज़ से तीसरे आसमान पर जुहरा[२] स्तब्ध हो जाता था। आकाश उनके सिरों पर न्योछावर होता था। उन मधुर स्वर वाली रमणियों की छवि और उन रजत-तुल्य सुन्दरियों के बिनागोश[३] के दर्शन से दर्शक बेहोश हो जाते थे। चग[४] व रबाब[५] की आवाज़ें, कमाँचे[६] के स्वर, मिसक्ल[७] और बाँसुरी की आवाज़ एवं तम्बूरों[८] के बजने से चिड़ियाँ हवा से उतर आती थीं। वन के पशु मूर्छित होकर शिविर में घुस जाते थे।

सैनिकों का भोग विलास

उन मधुर गायकों के गायन तथा उन छेड़ छाड़ करने वाली नर्तकियों के नृत्य एवं उन सलावण्य रमणियों के हाव भाव और उन चुटकुलेबाज़, छल बाज़ और आपत्ति ढाने वाली युवतियों के चचलपन से सेना वाले और लश्कर के वीर, योद्धा, पागल तथा आसक्त स्वभाव के युवक और दीवाने, आशिक मिज़ाज, अपना सिर फोड़ डालते और कपड़े फाड़ डालते थे। अपने सिर के बाल नोच डालते थे। आशिक मिज़ाजों के हृदय से शान्ति तथा सन्तोष मानों उड़ गया था। आशिकों की फरियाद तथा आह आकाश तक पहुँचती थी। सुन्दरता के

१ मण्डली

२ शुक्र सितारा। इसका सम्बन्ध प्रेम तथा संगीत एवं नृत्य से बताया जाता है।

३ कान की लौर।

४ ढफ़ के आकार का एक छोटा बाजा।

५ सारंगी की तरह का एक बाजा।

६ एक प्रकार का बाजा जो कमान की तरह होता है।

७ वीणा की तरह का एक बाजा।

८ सितार की तरह का एक बाजा।

पुजारी रमणियो के लोभ में नाकूस[1] हाथ में लिये, उन्हें मूर्त्ति की भाँति पूजते थे। जो कुछ धन सम्पत्ति उन परेशान ग्राशिक मिज़ाजो के खीसे अथवा थैलियो में था, वह उन्होने उन हृदय हारिणी रमणियो के ऊपर से न्योछावर कर दिया। जब उन ग्राशिक मिज़ाजो के पास कुछ भी शेष न रह गया तो उन्होने अपने घोडे, ग्रस्त्र-शस्त्र, दास-दासियाँ, खेमे, बोझ ढाने वाले जानवर बेच डाले ग्रौर जो कुछ मिला उन रमणियो के चरणों पर न्योछावर कर दिया। जब कुछ न रह गया तो सिर की टोपी तथा कमर में बाँधने वाली पेटी जो कुछ भी उनके हाथ लगता, उन रमणियो के कुत्तों के सामने डाल देते थे। दरिद्र ग्राशिक मिज़ाजो ने उन मनुष्य जैसी सूरत रखने वाली मूर्त्तियो की लालसा मे विवश होकर ग्रौर उन सुन्दरियों की छवि देखकर अपना खाना, पीना ग्रौर सोना छोड दिया। दिन दिन भर बेहोश रहते ग्रौर रात रात भर होश न ग्राता। विदूषकों की बातों, भाडो के भाँडपन, बाजीगरो के तमाशे ग्रौर निर्लज्जो की निर्लज्जता मे, जोकि देश के चारो ग्रोर से राजसभा में पहुच गये थे, लोग चकित थे। उन लोगो ने सुल्तानी शिविर के चारों ग्रोर तमाशा दिखाकर ग्रपनी कलाग्रो का प्रदर्शन करके चुटकुले बाजी के द्वारा निर्लज्जता एव भाँडपन को चरम सीमा तक पहुचा दिया था। चारों ग्रोर से हँसी ठट्ठे की ग्रावाजें ग्राया करती थी।

धन-सम्पत्ति का विनाश

(१६४) मलिक निज़ामुद्दीन दादवक ने जो कुछ भी हिन्दुस्तान की ग्रक्ता का फ़्वाजिल[2], लूट का माल, राजे महाराजों के उपहार (खराज) ग्रौर पिछले कई वर्षों की (निसारे चत्र) न्योछावर एकत्र करके खज़ाने में जमा किया था, सुल्तान ने वह सब धन सम्पत्ति उन विलासियों तथा गायकों को बाँट दी, जिनके समूह ग्रवध से पहुँचते थे। ग्रवध से देहली तक के मार्ग के विलास-प्रिय गाना सुनने वाले शराबी तथा भोगी क़िलोखडी के महल में पहुँच गये।

देहली मे सुल्तान की वापसी का समारोह

सुल्तान के पहुँचने की खुशी में देहली में क़ुब्बे सजाये गये। पुराने ग्रौर नये गायक तथा रमणीक नर्तकियाँ सगीत तथा नृत्य के लिए कुब्बो पर पहुँच गईं। शहर वाले उनकी सुन्दरता पर ग्रासक्त ग्रौर दीवाने बन गये। महीनों तक शहर निवासी उन चन्द्रमा-तुल्य रमणियो तथा युवतियों के साथ भोग विलास में ग्रस्त रहे। उनकी मिल्क गिरवी हो गई। उनके घर, धन-सम्पत्ति ग्रादि हाथ से निकल गये। क़र्ज़ गर्दन पर चढ गया। मलिक-ज़ादे दीवाने हो गये। ख्वाजा-ज़ादे ग्रासक्त हो गये। सुल्तानी बच्चो ने ब्याज लेना देना त्याग दिया। धनी लोग दरिद्र हो गये। जो वे घर के हो गये, वे लखनौती की ग्रोर प्रस्थान कर गये। बुद्धिमान ग्रासक्त बन गये। ग्रालिम व्यभिचार में पड गये। ज़ाहिदों (त्यागियों) ने धर्म त्याग दिया। ग्राबिद (उपासक) मधुशाले में पडे रहने लगे। लज्जा ग्रौर शर्म शेष न रही। लोगो की मान मर्यादा समाप्त हो गई। कुब्बों से मदिरा वितरित की जाती थी। शराब के मटके लुटा दिये गये। कुब्बो को भोग विलास की सामग्री से इस प्रकार सजाया गया कि कुब्बों की ऐसी सजावट इससे पूर्व कभी न देखी गई थी ग्रौर न इसके पश्चात् किसी ने देखी। जो ग्रानन्द ग्रौर भोग विलास मुइज़्ज़ी राज्य के समकालीनों ने देखा वह इसके पश्चात् कोई भी न देख सका।

(१६५) इस प्रकार का भोग, विलास, ग्रानन्द, निश्चिन्तिता न तो ग्राँखो ने देखा ग्रौर न कानों ने सुना।

१ शंख—लेखक ने इस स्थान पर यह भाव प्रकट किया है कि लोगों ने इस्लाम के ग्रादेश त्याग दिये थे।

२ ग्रक्ता का वह कर जो समस्त व्यय निकाल कर शेष रहता है।

कुब्बो के सज जाने के पश्चात् सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने शहर में प्रवेश किया। कुब्बों का निरीक्षण किया। राज महल में उतरा और पुन शहर से किलोखड़ी जाकर भोग विलास में ग्रस्त हो गया।

'बरनी' का मुइज्जी समय को याद करके आँसू बहाना

मैं दो करन पश्चात् अपितु इससे भी अधिक समय उपरान्त मुइज्जी इतिहास लिख रहा हूँ और उस बादशाह के एव उसके समकालीनो के भोग विलास का वर्णन कर रहा हूँ। मैं अपना यह लेख, जोकि मैंने उस बादशाह तथा उसके समकालीनों के विषय में लिखा है और जो कुछ उस समय की रमणियो, सुन्दरियो तथा युवतियो एव विलासियों का वर्णन दिया है, उसे पढकर स्वय मूर्छित हुआ जाता हूँ। इस समय जब कि वृद्धावस्था तथा निर्बलता के फलस्वरूप मेरे मुँह में एक भी दाँत नही रह गया है और मैं सतप्त-हृदय हूँ तथा विलासिता से मुख मोड चुका हूँ शत्रुओ की ईर्ष्या और द्वेष की मार से हताश हो गया हूँ, अपनी युवावस्था मुझे पुन याद आती है और उन भोग विलास की महफिलों का ध्यान आता है जोकि मैंने उच्च विचार तथा साहस वालो के साथ व्यतीत की हैं। मेरी महफिल में अनेक रमणियाँ, चुटकुले बाज, अद्वितीय विदूषक, युवतियाँ, रजत सदृश पिण्डली वाली सुन्दरियाँ, सरोरुद साकी, मधुर होंठों वाले तरुण, चुनी हुई नर्तकियाँ, बेहतरीन गजल गाने वाले रहा करते थे। यह याद मेरे दिल में चुभती है। आज उपर्युक्त लोगो का कितना अभाव है और किस प्रकार मैं बिना पैसे कौडी के कोने में अपमानित, तुच्छ पतित अल्प-मूल्य और सम्मान-रहित पडा हूँ। मैं क्या करूँ। यह इतिहास किस के पास ले जाऊँ। किससे न्याय माँगू। यह कुछ पन्ने मुइज्जी इतिहास के सम्बन्ध में लिख डाले हैं और उसके तथा उसके समकालीनों के भोग विलास के वर्णन का नाम 'कुब्वतुत तारीख'[1] रखा है।

(१६६) उन पागल बना देने वाली गजलो[2] का अर्थ और उन रमणियो की सुदरता की प्रशसा इस कारण लिख दी है कि यदि पिछले विद्वानों के वर्णन से भविष्य में लोग इसकी तुलना करेंगे तो वे इसकी प्रशसा तथा इसके प्रति न्याय करेंगे, और जो शोक का धुआँ मेरे सीने में भरा है तथा पीडा का मोरचा जो मेरे हृदय पर लग गया है, दूर हो जायगा। उन कवियो तथा विद्वानो के समान जोकि मेरे मित्र रह चुके हैं पूरे हिन्दुस्तान में आज कोई दक्ष, कुशल कवि मुझे दृष्टिगोचर नहीं होता, जिसके सम्मुख अपनी रचनाओ को पेश करूँ और उसकी प्रशसा तथा न्याय द्वारा अपने व्याकुल हृदय को सान्त्वना तथा आश्वासन दूँ। यदि मेरी यह कामना हो कि उपर्युक्त पन्ने जिनके प्रत्येक वाक्य तथा पक्ति से भोग विलास टपकता है और प्रत्येक शब्द से ऐश व इशरत की बातें स्पष्ट होती हैं, किसी ऐसे भाग्यशाली की सेवा में भेजूँ, जिसे अच्छे स्वभाव वालो के भोग विलास, नाजुक मिजाजों की रुचि और शौक़, ऊँची हिम्मत वालो की बुजुर्गी के विषय में कुछ जानकारी हो, और वह इस विषय में कुछ अधिक ज्ञान की इच्छा रखता हो, तो ऐसा व्यक्ति मेरी दृष्टि में नही जोकि इस प्रकार अच्छे स्वभाव वाला, हिम्मत वाला, मुनासिब तबियत वाला और उच्च वश से सम्बन्धित हो। मैं वह हूँ जिसने अपना सब कुछ नष्ट भ्रष्ट कर लिया है। मैं अपनी दरिद्रता तथा इस निस्सहाय अवस्था में यह चाहूँ कि यदि कोई ऐसा खानजादा अथवा मलिकजादा मिल जाय जो कि भोगी, विलासी, एयाश, आमोद प्रमोद में रुचि रखने वाला हो और उसे अपनी उचित तबियत, स्वभाव, मिजाज और उपर्युक्त वर्णन से अपनी ओर आकर्षित करलूँ और इस प्रकार उससे सोना या नकदी की

---

१ इतिहासों में सर्वश्रेष्ठ।

२ इसका अर्थ दीवान (ग़ज़लों का सग्रह) की ग़ज़लें भी हो सकता है।

आशा रखूँ तो यह व्यर्थ है, क्योंकि मैं ऐसे लोग नही पाता, जिन्हें इस समय रमणियो, युवतियो सुन्दरियों के नाज व अन्दाज से इतनी रुचि हो। अत विवश होकर अपने समय के ऊपर विलाप करता हूँ और इस नैराश्य के कारण जोकि मेरे हृदय में उत्पन्न हो गया है अपनी आँखों से रक्त के आँसू बहा रहा हूँ। मेरे नेत्रों से निकलती हुई रुधिर की यह धारा लेखनी से टपक रही है और कागज पर मैं अङ्कित करता जा रहा हूँ।

मुइज्जी काल मे सर्व साधारण की निश्चिन्तता

(१६७) अब मैं मुइज्जी राज्य-काल के भोग विलास का वर्णन छोड़ता हूँ जोकि उसके राज्य के साधारण तथा विशेष व्यक्तियो में उत्पन्न हो गया था। उस समय समस्त देश भोग विलास में ग्रस्त था। देहली के कुशल ज्योतिषी कहा करते थे, कि यद्यपि मुइज्जी राज्य-काल तीन ही वर्ष तक वर्त्तमान रहा किन्तु उस समय भाग्य का सितारा उन्नति पर था और अभाग्य का सितारा अवनति पर। मुइज्जी काल के इतिहासकार उसके राज्य को बहराम[1] गोर के राज्य के बराबर समझते थे। मुइज्जी राज्य के तीन वर्षों में किसी को ऐश व इशरत और भोग विलास में ग्रस्त रहने के अतिरिक्त कोई कार्य न था। भोग विलास की महफिलें सजाई जाती थी, लोग मदिरा पान करते, सगीत सुनते और गाते, इश्क-बाजी करते, रमणियो से मिलते जुलते, शतरज और चौसर खेलते तथा चुटकुल बाजी किया करते थे। उस बादशाह के राज्य काल के तीन वर्ष के भीतर कोई भी दुख अथवा पीडा किसी के हृदय में उत्पन्न न हुई। कोई अकाल अथवा दुर्भिक्ष न पडा। भोगी तथा विलासी, भोग-विलास में ग्रस्त रहते और नाना प्रकार की विलासिता के कार्य किया करते थे।

बादशाह के आचार विचार का प्रजा पर प्रभाव

प्राचीन विद्वानो ने यह बडी उचित तथा उत्तम बात कही है कि प्रजा बादशाह में जो अच्छाई अथवा बुराई, आज्ञाकारिता या अवज्ञा, पुण्य या पाप, सदाचार या दुराचार देखती है, उन्ही बातो पर वह भी आचरण करने लगती है। बादशाह के आचार विचार का प्रजा पर जितना प्रभाव पडता है उतना प्रभाव किसी दण्ड, सख्ती, कठोरता और सजा से नही पडता। प्रजा बादशाह के अच्छे बुरे आचरण का विशेष रूप से अनुसरण एव अनुकरण करती है। मुइज्जुद्दीन उत्कृष्ट स्वभाव तथा उच्च विचार का सुल्तान था। वह नेक, सुगमता तथा सरलता प्रिय था। उसके हृदय में बादशाही ऐश्वर्य तथा आतक का, जोकि बडे-बडे बादशाहों *में पाया जाता है, नाम भी न था।* इसी सुगमता तथा सरलता से रुचि होने के कारण वह यह न चाहता था कि कोई तुच्छ से तुच्छ मनुष्य भी अप्रसन्न रहे। चूँकि स्वय भोग विलास में ग्रस्त रहता अत वह यह चाहता था कि सब ही भोग विलास में ग्रस्त रहे और *किसी को कोई* दुख अथवा सकट न हो।

(१६८) वह यह न जानता था कि बादशाही, वैभव, आतक एव दया के समन्वय से स्थापित होती है। बादशाह में विरोधाभास[2] के गुण वर्त्तमान होने चाहिये। केवल दया ही से, बिना क्रोध के, बादशाही नही चल सकती। राज्य तथा धर्म सम्बन्धी ज्ञान रखने वालो ने प्राचीन काल में कहा और लिखा है कि जहाँदारी वास्तव में खुदा का खलीफा[3] होना है। उलिलअम्री का सम्मान खुदा और रसूल की आज्ञाओ के पालन करने पर निर्भर है। ऐसा भव्य कार्य बिना दया तथा क्रोध, *कृपा तथा* कठोरता क्षमा, दण्ड, सहनशक्ति और

१ ईरान के सासानी वश का १४ वाँ बादशाह। उसने ४२० ई० से ४३- ई० तक राज्य किया।
२ फतावाये जहाँदारी पृ० १६४ व।
३ फतावाये जहाँदारी पृ० १६७ अ।

रोष, प्राप्ति और दान के नही चल सकता। बादशाही का सम्मान और उलिलअम्री में शोभा उस समय तक नही पैदा हो सकती जब तक कि आज्ञाकारियो तथा राजभक्तों को दया एव कृपा द्वारा शान्ति के आकाश के नीचे न रहने दिया जाय और अवज्ञाकारियो एव विरोधियों को क्रोध तथा आतक से दण्ड और सज़ा न दी जाय। बिना उलिलअम्री की प्रतिष्ठा और शरा की आज्ञाओ के पालन के इस्लामी नियम उन्नति नही कर पाते। जब तक कि इस्लाम की सभी बहत्तर शाखायें इन परस्पर विरोधाभासी गुणो को बादशाह में नही देखती उस समय तक जहाँबानी उचित प्रकार से नही हो सकती। बादशाही कार्य दृढ नही हो पाते। ससार वालो के कार्य केवल कृपा ही से सिद्ध नही होते और न केवल क्रोध से ही पूरे होते हैं। कृपा के स्थान पर कृपा तथा क्रोध के स्थान पर क्रोध करना चाहिये।

मलिक निज़ामुद्दीन

इस तारीखे फीरोजशाही के सकलनकर्त्ता ज़िया बरनी ने मलिक निज़ामुद्दीन तथा मलिक क़िवामुद्दीन के विषय मे जोबडे उत्कृष्ट मलिक थे, काज़ी शरफुद्दीन सुरपाई से सुना है कि यदि मलिक निज़ामुद्दीन दादबक तथा मलिक क़िवामुद्दीन अला दबीर न होते तो मुइज्ज़ी राज्य, सुल्तान के भोग विलास में ग्रस्त होने और राज्य के प्रतिष्ठित व्यक्तियो क विरोध के कारण एक सप्ताह भी स्थापित न रह सकता था। उपर्युक्त दोनो मलिक, शम्सी तथा बलबनी मलिको में यादगार के रूप में शेष रह गये थे। वे अपनी सूझ बूझ तथा कार्य-कुशलता में अद्वितीय थे। वे बडे कलाकार एव कलाकारो के आश्रयदाता थे। वे सर्व साधारण के विषय में भी तथा अपनी श्रेणी के व्यक्तियो क बारे में सतुलन रखते थे।

(१६६) मलिक निज़ामुद्दीन बहुत बडा साहसी था। प्रत्येक दिन दरबार में जाने के समय तथा वहाँ से लौटने के समय सौ तन्के न्योछावर देता था। शहर के प्रतिष्ठित और उत्कृष्ट आलिम फाज़िल, ज्योतिषी, तबीब, विश्वासपात्र कव्वाल प्रतिष्ठित कलाकर उसकी सभा में उपस्थित रहते। वह उनमें से प्रत्येक को उसकी योग्यतानुसार दान तथा आश्रय प्रदान करता था। उसकी आकाक्षा यह रहती थी कि प्रतिष्ठित कलाकार उसकी सेवा में उपस्थित रहे। आदमी को पहचानने में उसके समान, उसके राज्य-काल तथा कई करन मे कोई उत्पन्न न हुआ। बडा खेद है कि इन प्रकार के बुद्धिमान परामर्शदाता को जो अपने समय का आसिफ तथा बुज़र्चमेहर था, राज्य की लालसा एव सिंहासन पर अधिकार जमाने की आकाक्षा हो गई। उसमें इतनी समझ थी कि जिस किसी स भी मिलता तो पहली ही भेंट म उसके गुणो तथा अवगुणों का पता लगा लेता। यदि उसके सम्मुख दो सौ मनुष्य भी खडे होते तो वह यह समझ जाता कि इनमें से कौन किस कार्य के योग्य है और उसी के सिपुर्द वह उस कार्य को करता। किसी वस्तु में बेजोड मिलावट पसन्द न करता था। गधे को कुर्सी पर बैठाना तथा ईसा को भूमि पर फक देन का वह कायल न था। उसके निकट कोई भी व्यय पड्यन्त्रकारी, अपने आपको बहुत कुछ समझने वाला, बकवादी, न फटक सकता था। वह अपनी ज़बान से कोई अनुचित बात न कहता था। बादशाहों और सुल्तानों के अदब और सम्मान को भली भाँति जानता था।

मलिक क़िवामुद्दीन

मलिक क़िवामुद्दीन अला जोकि उमदतुलमुल्क तथा मुशरिफ भी था, रचना-शैली और दबीरी के काय में सब से बढा चढा था। वह अपने कार्य तथा उसके सचालन में बडा ही दक्ष, कुशल और प्रसिद्ध था। दबीरी और सर दबीरी में माहिर था। यदि बहाउद्दीन बुगदादी रशीद वतवात और मुईन आसिम जोकि अपने समय में बहुत बडे दबीर और मुन्शी हुए हैं,

मलिक क़िवाम के लिखे पत्र पढ़ते तो स्तब्ध हो जाते। उसने लखनौती का फतेहनामा लिखने में जादू कर दिया।

निज़ामुद्दीन की हत्या

(१७०) अब मैं मुइज्ज़ी राज्य का शेष हाल लिखता हूं जोकि इस प्रकार है। सुल्तान मुइज्जुद्दीन के अवध से देहली पहुँचने के थोड़े समय भीतर उसका शरीर रोगी हो गया। भोग की अधिकता ने उसे निर्बल तथा पीला बना दिया। उसने चाहा कि पिता की आज्ञानुसार निज़ामुद्दीन को मार्ग से हटा दे। उसने यह न सोचा कि निज़ामुद्दीन का स्थान लेने वाला कोई अन्य श्रेष्ठ उमदतुलमुल्क नहीं हो सकता। निज़ामुद्दीन को हटा देने से राज्य में विशेष विघ्न पड़ जायगा। उसने निज़ामुद्दीन को आज्ञा दी कि, "तू मुल्तान चला जा और मुल्तान के शासन की देख भाल कर।" निज़ामुद्दीन समझ गया कि उसके पिता ने उसे कुछ सिखा दिया है। इसी कारण वह मुझे अपने पास से हटा रहा है। उसे भय हुआ कि उसकी अनुपस्थिति में राज्य के प्रतिष्ठित व्यक्ति जो उसके शत्रु बन चुके हैं, उसकी हत्या करा देंगे। वह जाने में टालमटोल करने लगा। सुल्तान मुइज्जुद्दीन के विश्वासपात्रों तथा निकटवर्तियों ने समझ लिया कि सुल्तान उसे हटाना चाहता है। बस उनकी मुँह माँगी मुराद मिल गई। सुल्तान से एकान्त में जब कि वह सावधान था, निज़ामुद्दीन को मदिरा में विष दे देने की आज्ञा प्राप्त करली गई। इस प्रकार निज़ामुद्दीन को जहर दे दिया गया और दो दिन में उसकी मृत्यु हो गई। देहली के सभी लोगों ने समझ लिया कि उसे जहर दिलवा दिया गया।

सुल्तान जलालुद्दीन का अर्ज़े ममालिक नियुक्त होना

निज़ामुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् मुइज्ज़ी राज्य में जो कुछ शक्ति रह गई थी, वह भी क्षीण होने लगी। व्यर्थ के लोग दरबार में प्रविष्ट हो गये। जब कोई भी शासन व्यवस्था सम्बन्धी ज्ञान रखने वाला शेष न रह गया तो कोई भी कार्य ठीक न होता था। जिस समय निज़ामुद्दीन को बीच से हटाया गया, सुल्तान जलालुद्दीन (खलजी) सामाने का नायब तथा दरबार का सरजानदार था। उसे सामाने से बुलवा कर अर्ज़े ममालिक नियुक्त किया गया और बरन की अक्ता उसके सिपुर्द कर दी गई। उसे सियासत खाँ की पदवी प्रदान की गई।

एतिमुर कच्छन तथा एतिमुर सुर्खा की नियुक्ति

(१७१) मलिक एतिमुर कच्छन बार्बक नियुक्त हुआ। मलिक एतिमुर सुर्खा वकीलदर नियुक्त हुआ। ये दोनों सुल्तान बल्बन के दासों में से थे। दरबार के पद भिन्न-भिन्न लोगों को बाँटे गये। बल्बनी दासों में से कुछ जो निज़ामुद्दीन के शत्रु थे भिन्न-भिन्न पदों पर नियुक्त हो गये। मुइज्ज़ी राज सिंहासन के सम्मुख उन्हें सम्मान प्राप्त हो गया। राज्य के कार्यों में विघ्न पड़ने लगा। कोई भी कार्य स्थायी न रहा।

मुइज्जुद्दीन का रोग ग्रस्त होना तथा उसके पुत्र का राज सिंहासन पाना

इसी समय सुल्तान भी बीमार पड़ गया। उसे फालिज और लकवा मार गया। दिन प्रतिदिन उसका रोग बढ़ता गया। शीघ्र ही वह किसी कार्य के योग्य न रहा। राज्य के उच्च पदाधिकारी राज्य का अधिकार हड़प लेने का प्रयत्न करने लगे। सभी एक दूसरे के बराबर थे। कोई यह न चाहता था कि दूसरा उससे बढ़ जाय और उसके ऊपर स्वतंत्र शासन करने लगे। जब सुल्तान का रोग बहुत बढ़ गया और उसके अच्छे होने की आशा न रही तो बल्बनी दास जो मलिक, अमीर, प्रतिष्ठित व्यक्ति, सरखेल और सर सरोह थे, एकत्र हुए और निश्चय किया कि 'सुल्तान मुइज्जुद्दीन के पुत्र को, यद्यपि वह अल्पायु का है,

अन्तपुर से निकाल कर राज सिंहासन पर आरूढ किया जाय। सर्व सम्मति से राज्य व्यवस्था के लिये कोई नायब नियुक्त किया जाय ताकि राज्य सुल्तान बल्बन के ही वश में रहे, किसी दूसरे वश अथवा कुल में न पहुँच जाय और तुर्कों के वश से न निकल जाय।'

यह निश्चय करके सुल्तान मुइज्जुद्दीन के पुत्र को अन्तपुर से बाहर लाकर उसकी पदवी सुल्तान शम्सुद्दीन निश्चित की गई और उसे राज सिंहासन पर बैठा दिया गया। बल्बनी दास उसके मित्र तथा सहायक बन गये। प्रत्येक को कोई न कोई पदवी, पद अथवा अक्ता मिल गई। सुल्तानी दरबार नासिरी चबूतरे पर लगने लगा। सुल्तान शम्सुद्दीन को उस जगह बैठाया जाता और मलिक तथा अमीर सुल्तानी दरबार में विराजमान रहते। किलोखडी के राज भवन में रोगी सुल्तान मुइज्जुद्दीन की चिकित्सा की जाती।

सुल्तान जलालुद्दीन के विरुद्ध षडयन्त्र[1]

सुल्तान जलालुद्दीन जोकि आरिजे ममालिक हो चुका था अपने खेल खानो तथा सम्बन्धियो को भारपुर ले आया। सेना का निरीक्षण तथा अर्ज (भर्ती) आरम्भ कर दिया। वह दूसरे वश का था।

१ इस षड्यन्त्र का हाल तारीखे मुबारकशाही मे इस प्रकार लिखा है—

६८७ हि० (१२८८-१२८९ ई०) मे अत्तबर खाँ यह देखकर कि वह अब सुल्तान का कृपापात्र नहीं रहा है भयातुर होकर कोहपाया की ओर चला गया और मलिक सलाहुद्दीन, मलिक दौलतशाह तथा मलिक होशग भी उससे जाकर मिल गये। मलिक एतिमुर कच्छन को बारबक का पद प्राप्त हुआ। कुछ समय के पश्चात् अत्तबर खाँ सुल्तान मुइज्जुद्दीन से मैदाने मैरगाह मे आकर मिल गया जहाँ सुल्तान ने दरबारे आम किया था। राजादेश के अनुकूल जब खान सुल्तान के सम्मुख पहुँचा तो बिस्मिल्लाह कह कर उसका स्वागत नहीं किया गया जिससे वह बड़ा खिन्न हुआ। मलिक कोतवाल को फ़रमान हुआ कि वह अत्तबर खाँ से इन शब्दों में पूछे कि चूकि उसने इकरारनामे की पवित्रता को नष्ट किया है और निर्दिष्ट शर्तों के अनुसार कार्य नहीं किया है इस लिये उचित दण्ड क्या होना चाहिये? खान मौन रहा। (पृ० ५५) मलिक कोतवाल ने अत्तबर खाँ तथा उसके पुत्र एव भाइयों को अपने ही घर मे बन्दी बना लिया। वहीं उनकी मृत्यु हो गई। तब मलिक तुर्की को बन्दी बनाया गया और मार डाला गया। फ़ीरोज यगराश (यगरश) ख़लजी आरिजे ममालिक हुआ और शायस्ता खाँ की उपाधि प्राप्त की।

अधिकाशत सुल्तान मनोविनोद तथा विलासिता मे व्यस्त रहा। निरन्तर मदिरापान, अत्यन्त कामुकता के कारण सुल्तान को लकवा मार गया।

मलिक एतिमुर कच्छन ने दूसरे अमीरों तथा मलिकों के साथ मिलकर निश्चय किया कि शायस्ता खाँ को बन्दी बना लिया जाय। उन्हें भय था कि शायस्ता खाँ जोकि एक अनुभवी तथा अमीर व्यक्ति था, कहीं कोई गडबड न कर दे। मलिक अहमद चप जो मलिक एतिमुर कच्छन का अमीर हाजिब था शायस्ता खाँ का अधीन रह चुका था। उसने एतिमुर कच्छन के षड्यन्त्र का कुछ हाल शायस्ता खाँ को बता दिया और कहा 'कल तुम्हें दरबार में बुलाया जायगा, कदापि न जाना।' शायस्ता खाँ ने अपने चचा हुसैन हुसैन को अपना दूरगामी दूत बना कर बरन भेजा और यह कथा प्रसारित कर दी कि मुगल सेना सामाना तक आ पहुँची है और इस लिये यह आवश्यक है कि सभी (खलजी) सरदार अपने धन, सम्पत्ति तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं को लेकर रातोंरात चल पड़े और यमुना तट के घाट के उस पार बयामपुर के सम्मुख अपने डेरे लगा दें। उसका विचार यह था कि वह अपने पूरे सामान के साथ देहली से पीछे हट कर कहीं और चला जावे। उसने अपने सम्मुख अपने भाई मलिक खमोश तथा अपने भतीजे मलिक इज्जुद्दीन को बुलाया और उनसे कहा कि चूकि उसकी तबीयत ठीक नहीं है अत वे लोग उसके साथ उस रात को रहें। उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया (पृ० ५६)। दिन निकलने पर शायस्ता खाँ ने अपना शिविर फ़ीरोज कोह पर जोकि भूकम्प पहाड़ी के नाम से भी प्रसिद्ध है लगाया और कन्नौज की सेना का अर्ज आरम्भ कर दिया। मलिक दारपी जोकि कन्नौज का मुक्ता था, भी शायस्ता खाँ के निकट बैठा था। इसी समय उपर्युक्त एतिमुर ने एक सन्देश

शेष पृष्ठ २४३ पर

देहली मे उपद्रव

मलेकुल-उमरा के पुत्रो को भारपुर पकड ले गये। शहर मे गडबड मच गई। शहर के विशेष तथा साधारण व्यक्ति, छोटे बडे बारह दरवाजो[1] से सुल्तान के पुत्र की सहायता के लिये बाहर निकल कर भारपुर की ओर चल खडे हुये। सभी शहर वालो को खलजियो की बादशाही पसन्द न थी, और सभी सुल्तान जलालुद्दीन की बादशाही से घृणा करते थे। कोतवाल ने अपने पुत्रो के हित को देखते हुये शहर का आम बलवा शान्त करा दिया। शहर वासियो को लौटा लाया। बदायूँ द्वार के सामने सब लोग छिन्न-भिन्न हो गये। बहुत से मलिक तथा अमीर जोकि तुर्कों के वश से थे सुल्तान जलालुद्दीन के सहायक बन गये और उसकी सेना के शिविर में पहुँच गये। खलजियो के सहायको की संख्या बहुत बढ गई।

सुल्तान मुइज्जुद्दीन की हत्या

(१७३) इसके दो दिन पश्चात् एक मलिक को जिसके पिता को सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने हत्या करा दी थी, किलोखडी भेजा गया। उससे सुल्तान मुइज्जुद्दीन की हत्या करने के लिये कहा गया। सुल्तान मुइज्जुद्दीन की कुछ सांस शेष थी। उसे उसने एक जामखाने[2] में (कम्मल) में लपेटा और उसके कुछ लातें मारी और यमुना नदी में धक्का देकर गिरा दिया।

सुल्तान जलालुद्दीन का राज सिंहासन पाना

सुल्तान बल्बन के भतीजे मलिक छज्जू को जो राज्य का उत्तराधिकारी था, कडे की अक्ता प्रदान करके उसे उस ओर रवाना कर दिया गया। विरोधियो तथा सहायको ने सुल्तान जलालुद्दीन की बैअत करली (अधीन हो गये)। सुल्तान जलालुद्दीन बहुत बडा लश्कर लेकर भारपुर से सवार हुआ और किलोखडी में मुइज्जी राज भवन मे उतरा। वही राज सिंहासन पर आरूढ हुआ। राज्य व्यवस्था, शासन प्रबन्ध तथा अपने सम्बन्धियो को उच्च पद प्रदान करने में लग गया। शहर के सब साधारण को उसकी बादशाही अच्छी न लगी। वह शहरियो (देहली वालो) के भय से देहली न गया और प्राचीन सुल्तानो की भाँति राज भवन में पहुच कर राज सिंहासन पर विराजमान न हुआ। उसने कुछ समय तक शहर में प्रवेश न किया और शहरवाले भी हृदय से उसे बादशाही की बधाई देने न गये। शहरियो को खलजियों की बादशाही में बडी आपत्ति दृष्टिगोचर होती थी। वे उनको कोई महत्त्व न देते थे। उस समय देहली में अनेक प्रतिष्ठित गण्यमान्य घराने और प्राचीन बड़े बडे वश वाले विद्यमान थे।

सुल्तान मुइज्जुद्दीन की मृत्यु के पश्चात् राज्य तुर्कों के वश से निकल कर खलजियो के वश मे पहुँच गया। यह सभी बुद्धिमानो पर स्पष्ट हो गया कि निम्नांकित आयत कयामत तक सत्य रहेगी[3]

---

१ अमीर खुसरो ने केरानुस्सादैन मे देहली के १३ द्वार लिखे है।

२ पुस्तक मे जामखाना शब्द का प्रयोग हुआ है। जामखा ना का अर्थ, वह कमरा जहाँ शीशे जडे हों, होता है। इलियट के अनुवाद में यही अर्थ है। फरिश्ता ने इसका अर्थ कम्मल लिखा है। (तारीखे फरिश्ता पृ० ८८) अन्तिम अब्बासी खलीफा मुसतासम बिल्लाह की भी इसी प्रकार हत्या की गई थी। (तबक़ाते नासिरी पृ० ४३०)

३ जियाउद्दीन बरनी ने मुइज्जुद्दीन की हत्या तथा उसके राज सिंहासन से वंचित होने का हाल बडे संक्षेप मे लिखा है। इसका सविस्तार उल्लेख तारीखे मुबारकशाही मे इस प्रकार हुआ है-

इसी समय फ़खरुद्दीन कोतवाल अपने पुत्रों सहित सुल्तान को नये मास के आरम्भ होने पर बधाई देने जा रहे थे। शायस्त खाँ ने उन्हे देखते ही उसे बुलवाया, उसे अपने पास रोक लिया और उसके पुत्रों को दीवान मे भेज दिया। तत्काल सभी अमीर तथा मलिक शायस्त खाँ से मिल गये।

शेष पृष्ठ २४५ पर

'हे मुल्क के मालिक अल्लाह ! तू जिसको चाहता है, मुल्क प्रदान करता है और जिससे चाहता है, छीन लेता है। जिसको चाहता है, इज्जत देता है, और जिसको चाहता है जिल्लत देता है। तेरे अधिकार में अच्छी बातें हैं, और तुझे प्रत्येक वस्तु पर पूर्ण अधिकार प्राप्त है।'

अगले दिन उसने अपने सम्बन्धियों को एकत्र किया और उनको युद्ध के लिये तैयार किया। उसने अपने मँझले पुत्र हुसामुद्दीन को सेना का अग्रगामी रक्षक बनाया और युद्ध की प्रत्याशा में अपने आदमियों को किलोखड़ी के पास एकत्र किया। ग़यासी और मुइज्जी अमीर तथा मलिक भी हाथियों तथा एक बहुत बड़ी सेना के साथ युद्ध के लिये तैयार हो गये। मलिक नसीरुद्दीन शहनये पील हाथियों को लौटा कर किलोखड़ी के राज भवन के समक्ष ले गया। सुल्तान मुइज्जुद्दीन जो मदिरापान के कारण लकवे में ग्रस्त था घोड़े पर चढ़ नहीं सका। किलोखड़ी के राज भवन की चोटी पर काज़ी आलम, अमीर अली तथा ख्वाजा दाम उसे ले गये और सिर पर छत्र लगा दिया। एक शाही नौकर रज़ैनी पायक अपने आदमियों के साथ हाथियों के बीच में खड़ा हुआ। जब मलिक छज्जू ने आगे बढ़ कर उसकी ओर चिल्ला कर कहा 'हम सुल्तान मुइज्जुद्दीन को नाव में बैठाकर सुल्तान नासिरुद्दीन के पास लखनौती भेज देंगे और शाहजादा कैकाऊस को राज सिंहासन पर आरूढ़ कर देंगे।'

चूँकि ग़यासी वंश अन्त को पहुँच चुका था और बलबन के खानदान तथा शासन का अन्त हो चुका था, अतः मलिक नसीरुद्दीन रज़ैनी पायक तथा अन्य अमीर अपनी सेना और हाथियों सहित दरबार से हट गये। अवसर पाकर शायस्त खाँ ने अपने पुत्र हुसामुद्दीन को ५०० सवारों का संचालन सौंप कर राजभवन की ओर भेजा जो सुल्तान मुइज्जुद्दीन के पुत्र शाहजादा कैकाऊस को गोद में लेकर राज भवन के बाहर आया। शायस्त खाँ उसे मिज़ानी (सुभानी) चबूतरे पर ले गया और सिंहासन पर बैठाया। फिर उसने अपने चचेरे भाई मलिक हसीन को किलोखड़ी के राज भवन में सुल्तान पर निगरानी रखने के लिये नियुक्त किया। शायस्त खाँ फिर मलिक छज्जू की ओर मुड़ा और इस प्रकार बोला "यह शाहजादा तुम्हारे लिये पुत्र के तुल्य है। (५८) अब वह सुल्तान हो गया है। इसलिये तुम नायब मलिक हो जाओ। मुझे मुल्तान तथा तबरहिन्दा से दीपालपुर तक के बीच की अक्ता का प्रबन्ध कर लेने दो ताकि मैं इसी समय चला जाऊँ।" छज्जू ने उत्तर दिया 'विज़ारत और नियाबत तुम्हारे लिए अधिक उपयुक्त है मुझे तो कड़ा की अक्ता ले लेने दो ताकि मैं वहाँ जा सकूँ।"

फख़रुद्दीन कोतवाल शायस्त खाँ की ओर मुड़ा और कहा "न्यायी और महान ईश्वर ने प्रचुर धन दौलत के लिए तुम्हें बनाया है। जैसा कि मलिक छज्जू कहते हैं वही करो।" तत्पश्चात् शायस्त खाँ ने मलिक छज्जू को खिलअत प्रदान की और कड़े की ओर भेजा। ख़ान के आदेश से राज दरबार सीरी में स्थापित किया गया। शाहजादे को दरबार में बैठाया गया। शायस्त खाँ ने द्वार पर अपना स्थान ग्रहण किया और शाही सेना का भी वहीं पड़ाव कराया। दूसरे दिन सुल्तान मुइज्जुद्दीन को जो बारगाह शिविर में बैठा था, बन्दी बना लिया गया। भूख तथा प्यास से उसकी मृत्यु हो गई। मरते समय सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने उस अवसर पर निम्नलिखित अपने लिखे हुए पद्य पढ़े :

पद्य

मेरे वैभव का अश्व मैदान में खड़ा है।
मेरी दानशीलता का हाथ निहाई के नीचे है।
मेरी आँखें जिन्होंने मोती की सैकड़ों खानों से कम देखा है
आज आओ और देखो कितनी परेशान हैं वह।

यह घटना ६८९ हि० में मुहर्रम मास की १९ ता० को हुई (बुधवार पहली फर्वरी १२९० ई०।) सुल्तान मुइज्जुद्दीन का शासन ३ साल तथा कुछ मास रहा। (पृ० ५८-५९)

भाग ब

समकालीन इतिहासकार

फख़रे मुदब्बिर

(क) तारीखे फखरुद्दीन मुबारकशाह

(ख) आदाबुल हर्ब वश्शुजाअत

सद्रुद्दीन हसन निज़ामी

(ग) ताजुल मआसिर

अमीर ख़ुसरो

(घ) दीवाने वस्तुल हयात

(च) क़िरानुस्सादैन

फखरे मुदब्बिर

फखरुद्दीन मुहम्मद इब्ने मन्सूर ग्रलमर्वर रुज़ी ग्रसिद्दीकी मुबारकशाह फखरे मुबारक शाह तथा फखरे मुदीर एव फखरे मुदब्बिर के नाम से प्रसिद्ध था। उसकी माता का एक पूर्वज ग्रमीर बिन (पुत्र) कातिगीन था। उसने ग्रलपतिगीन के उपरान्त गज़नी में ३५६ हि० (९६६-७० ई०) से ३६२ हि० (९७२-७३ ई०) तक राज्य किया। वह मुल्तान महमूद का ससुर भी था। मुल्तान में एक घातक पाद से बचने का हाल लिखते हुये वह लिखता है कि यह घटना ग्रलाउद्दीन गोरी के द्वारा खुसरो खाँ को परास्त करने के १५ वर्ष पश्चात् घटी थी। वह उस समय बालक था। खुसरो की पराजय ५६० हि० (११६४-६५ ई०) में हुई।[1] यदि उस घटना के समय फखरे मुदीर की ग्रवस्था १५ वर्ष की समझ ली जाय तो यह कहा जा सकता है कि उसका जन्म ५६० हि० (११६४-६५ ई०) के लगभग हुग्रा होगा। उसने ग्रपनी एक पुस्तक सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश को समर्पित की। उस समय वह वृद्ध तथा निर्बल हो चुका था। सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु ६३३ हि० (१२३६ ई०) में हुई। इस प्रकार ५६० हि० से ६३३ हि० के बीच का समय उसका जीवन-काल निश्चित किया जा सकता है।

ग्रभी तक उसकी दो रचनाग्रो का पता चल सका है। एक वर्शो का ग्रन्थ है, जिसका ऐतिहासिक प्राक्कथन ई० डेनीसन रास ने तारीखे फखरुद्दीन मुबारकशाह के नाम से लन्दन से १९२७ ई० में प्रकाशित किया था। यह पुस्तक फखरे मुदीर ने १२०६ ई० में लाहौर में समाप्त की। वह क़ुतुबुद्दीन ऐबक के लाहौर में सिंहासनारोहण के समय उपस्थित था, ग्रतः उसने जो कुछ भी सुल्तान क़ुतुबुद्दीन के विषय में लिखा है वह बडा ही महत्त्वपूर्ण है।

इसके ग्रतिरिक्त उसने एक ग्रन्य पुस्तक भी लिखी जो ग्रादाबुलमुलूक[2] व क़िफायतुलममलूक ग्रथवा ग्रादाबुल हर्ब वश्शुजाग्रत[3] के नाम से प्रसिद्ध है। इसकी एक सुन्दर हस्तलिखित प्रति रिज़ा पुस्तकालय रामपुर में भी वर्त्तमान है। इस पुस्तक से उस समय के शासन प्रबन्ध तथा युद्ध-प्रणाली के विषय में बडी ग्रच्छी जानकारी प्राप्त होती है। यह पुस्तक सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश को समर्पित हुई। ब्रिटिश म्युज़ियम लन्दन की हस्तलिखित पोथी के रोटोग्राफ से ग्रागे के पृष्ठो में इस पुस्तक का सक्षिप्त ग्रनुवाद दिया गया है।

---

१. ब्रिटिश म्यूज़ियम की फारसी हस्तलिखित पुस्तकों की सूची, र.यू. द्वितीय भाग पृ० ४८८।

२ इण्डिया ग्रॉफिस लन्दन की फ़ारसी हस्तलिखित पुस्तकों की सूची, इथे द्वितीय भाग नं० २७६७।

३ र्यू द्वितीय भाग ४८७-४८८।

तारीखे फ़ख़रुद्दीन मुबारकशाह

(२९-३०) जब सुल्तान मुइज्जुद्दीन मुहम्मद बिन (पुत्र) साम के मृत्यु की सूचना देहली पहुँची तो कुतुबुद्दीन ऐबक देहली से किसी ओर गया था। वह देहली की ओर वापस हुआ। वह सुल्तान की मृत्यु से बड़ा दुखी था, किन्तु भगवान् ने हिन्दुस्तान के इस्लामी राज्य की तथा लाहौर की जोकि गजनी के तुल्य था, रक्षा उसके सिपुर्द की थी अतः वह एक शुभ नक्षत्र में लाहौर की ओर रवाना हुआ।

(३१-३२) इस समय ग्रीष्म ऋतु बड़े जोरों पर थी और इस्लामी सेना को कूच करने में विशेष कठिनाई का सामना करना पड़ा। मंगलवार ११ जीकाद ६०२ हि० (१९ जून १२०६ ई०) को शाही पताकायें लाहौर पहुँच गई। उस प्रदेश के सभी काजी, इमाम, सैयिद, अहले सुफ्फा[1], पदाधिकारी, आमिल,[2] सैनिक, साधारण तथा विशेष व्यक्ति, बलवान तथा बलहीन, धनी तथा निर्धन, स्वागतार्थ उपस्थित हुये और सब ने खुशियाँ मनाई तथा भगवान् से उसके लिये शुभ कामनायें की। भगवान् उस शहीद बादशाह के उत्तराधिकारी (कुतुबुद्दीन ऐबक) को सर्वदा राज सिंहासन पर आरूढ रक्खे। उसने समस्त राज्य को इस प्रकार सुव्यवस्थित कर दिया कि मानो वह सर्वदा राज्य ही करता रहा हो। तुर्क, गोरी, खुरासानी, खलजी, हिन्दुस्तानी सेना तथा अन्य लोग इस प्रकार सुशासित हो गये कि कोई किसी का साधारण से साधारण धन भी न छीन सकता था। उसने सर्व प्रथम यह आज्ञा दी कि मुसलमानों की इमलाक[3] उन्हीं के पास रहने दी जाय। इमलाक से शरा के विरुद्ध $\frac{1}{5}$, जो खराजी[4] भूमि के समान लिया जाता था, बन्द कर दिया गया। किसी स्थान पर उश्र तथा किसी स्थान पर आधा उश्र वसूल करने का आदेश दिया गया। इसके लिये आज्ञा-पत्र लिखा गया और सुल्तान ने अपने हस्ताक्षर कर दिये जिससे कोई उसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप न कर सके। पत्र भिन्न-भिन्न स्थानों पर तथा कस्बों में भेज दिये गये और मुसलमान इसके लिये उसके प्रति शुभ कामनायें करने लगे। उसने एक ऐसी बहुत बड़ी अनुचित प्रथा का जिसकी शरा द्वारा आज्ञा प्रदान न की गई थी, अन्त कर दिया।

---

१ सूफी, सन्त।

२ कर्मचारी।

३ वह भूमि जो मुसलमान विद्वानों को तथा निर्धन मुसलमानों को सहायतार्थ प्रदान की जाती थी।

४ इस्लामी राज्य में भूमि दो मुख्य भागों में विभाजित की जाती थी (१) उश्री (२) खराजी। उश्री भूमि निम्नांकित प्रकार की थी

(१) अरब की भूमि, (२) ऐसी भूमि जिनके स्वामी मुसलमान हो जाते थे, (३) वह भूमि जो विजय के उपरान्त मुसलमान सैनिकों को बाँट दी जाती थी, (४) ऊसर जिसे मुसलमान कृषि के योग्य बना लेते थे। मुसलमानों के अतिरिक्त अन्य लोगों की भूमि खराजी भूमि कहलाती थी। उश्री भूमि से पैदावार का $\frac{1}{10}$ भाग कर के रूप में लिया जाता था। खराजी भूमि का कर भिन्न भिन्न अवसरों पर घटता बढ़ता रहता था। फ़खरुद्दीन मुबारकशाह के इतिहास से पता चलता है कि खराजी भूमि का कर उस समय पैदावार का $\frac{1}{5}$ था। उश्री भूमि का कर किसी स्थान पर $\frac{1}{10}$ तथा किसी स्थान पर $\frac{1}{20}$ का आधा निश्चित किया गया।

इसके अतिरिक्त उसने यह आदेश दिया कि जो सहायता तथा धन आलिमों, फेक़ह वेत्ताओं, कुरान पढने वालों, ज़ाहिदों तथा धर्मनिष्ठ लोगों को प्रदान किया जाता था वह उसी प्रकार प्रदान किया जाय। उसने अपनी ओर से धन सम्पत्ति तथा अनाज दरिद्र लोगों को प्रदान किये। दरवेशों, विधवाओं, अनाथों तथा मुस्तहक[1] लोगों को धन सम्पत्ति प्रदान की गई। इस प्रकार उसने अपने राज्य को ऐसे उचित कार्य द्वारा प्रारम्भ किया।

---

१ जिन्हें सहायता की वास्तव में आवश्यकता हो।

आदाबुल हर्ब वश्शुजाअत

(८ ब, १० अ) बादशाहों तथा जहाँदारों को चाहिये कि वे न्याय करने में संलग्न रहे और अपने नाम को दुराचार तथा बुरी रीतियों के संचालन से कलंकित न करें जिससे वे अपनी मृत्यु के उपरान्त अच्छे नाम से याद किये जाया करें। संसार की सुव्यवस्था तथा उपद्रव दोनों ही उनसे सम्बन्धित हैं। शरा के आदेश उनके ऊपर निर्भर हैं। वे खलीफ़ाओं के नायब हैं। क़यामत में उन्हे अपनी प्रजा के विषय में उत्तरदायी होना पड़ेगा। जो बादशाह बुद्धिमत्ता, न्याय तथा दया से कार्य करता है उसका राज्य दृढ़ हो जाता है और वह क़यामत के दिन तक नेकनाम रहता है।

(९ अ) इस निर्बल, वृद्ध, *शरीफ़ मुहम्मद (पुत्र, मन्सूर, सैयिद अब्दुल फ़रह, खलील* अहमद अबूनस्र पुत्र मुहम्मद शोऐब, तलहा, अब्दुल्ला, अब्दुर्रहमान, अबूबक्र कुरैशी जिसकी पदवी मुबारकशाह और जो फखरे मुदब्बिर के नाम से प्रसिद्ध है, ने यह बात आवश्यक समझी कि वह·········अब्दुल मुज़फ्फर सुल्तान इल्तुतमिश को समर्पण करने के लिये यह पुस्तक जिसमें बहुत ही लाभप्रद बातें हैं, लिखे और उसका नाम आदाबुल हर्ब वश्शुजाअत रखे और इसे ३४ अध्याय में विभाजित करे[1]।

अध्याय १—बादशाह की कृपा तथा क्षमा प्रदान करने एवं सहनशीलता के विषय में

(१२ अ) गुस्सा पीना और अपराधियों तथा अपहरणकर्त्ताओं को क्षमा कर देना बहुत बड़ी नेकी तथा सदाचारिता है। ईश्वर सदाचारी लोगों को मित्र रखता है।

अध्याय २—बादशाहों के न्याय तथा उनकी नीअत के विषय में

(२७ ब) अल्लाह ने कहा है कि न्याय तथा नेकी करते रहो अपने निकटवर्तियों पर दया करो और पाप मत करो।

(२८ अ) अत्याचार से बचते रहो। पैगम्बर (मुहम्मद साहब) ने कहा है कि बादशाहों के एक क्षण का न्याय उस मनुष्य के ६० वर्ष की एबादत (उपासना) से कहीं अधिक है जो समस्त रात्रि नमाज़ पढ़ता रहता हो और दिन भर रोज़ा रखता रहा हो।

(३८ अ) *अध्याय ३*—बादशाहों की दया तथा दानशीलता

·················· ·· ········· ··

अध्याय ४—बादशाह को किस प्रकार जीवन व्यतीत करना चाहिये

(४६ ब) उसे अपनी प्रजा की दशा तथा प्रदेशों के विषय में जानकारी होनी चाहिये। इसमें उसे असावधानी न करनी चाहिये। मोबिदों[2] के सरदार ने कहा है कि सब से उत्कृष्ट बादशाह तथा अमीर वह है जिसमें यह उत्कृष्ट गुण, जिसका ऊपर उल्लेख हुआ है, एकत्रित हो। बादशाह को अपने धन का दान करते रहना चाहिये। क्रोध में उसे सच बोलना चाहिये। अपनी प्रजा से एक समान व्यवहार करना चाहिये। दुखी लोगों को सान्त्वना एवं धैर्य देते रहना चाहिये। समस्त पशुओं पर दया करनी चाहिये। सदाचारियों से नम्र व्यवहार करना

१ कुछ हस्तलिखित पोथियों में ४० अध्याय बना दिये गये हैं। कुछ बड़े बड़े अध्याय छोटे अध्यायों में विभाजित कर दिये गये हैं।

२ पारसी पुजारी।

चाहिये, दुराचारियो पर कठोरता करनी चाहिये। ईर्ष्या न करनी चाहिये। द्वेष न करना चाहिये। लडाई झगडे से बचना चाहिये। बादशाहों का न्याय तथा प्रजा का ध्यान इस बात पर निर्भर है कि वे सैनिको को कूच अथवा किसी अन्य समय प्रजा के घर में ठहरने न दें और प्रजा को कष्ट न पहुँचायें जिससे उनके परिवार अन्य लोगो के हाथों तथा आँखो से सुरक्षित रह सकें। जब तक कोई मुसलमानों की स्त्रियो पर इच्छा अथवा अनिच्छा से हाथ नही डालता उस समय तक उसकी सेना तथा राज्य पर कोई दुर्घटना नही आती।

(४७ अ) जिस सेना के साथ कोई स्त्री जाती है ईश्वर उस सेना को सहायता प्रदान नही करता और शत्रुओ को उनके ऊपर अधिकार प्रदान कर देता है। सेना को प्रजा पर किसी प्रकार का अत्याचार न करने देना चाहिये। क्रय करते समय कोई कम मूल्य या खोटे सिक्के न दे। प्रजा द्वारा भी कोई गुप्त अत्याचार अथवा ज़यादती सैनिको पर न होने दे। सैनिको के लिये जो चीजें आवश्यक होती हैं और जिनके बिना उनका रहना असम्भव होता है, वह सैनिको को अधिक मूल्य पर बेची जा सकती हैं और वे उन्ह खरीद सकते हैं। उदाहरणार्थ दस दिरम की चीज २० तथा ३० दिरम पर आवश्यकतानुसार खरीदनी पड जाती है। प्रत्येक सप्ताह शहर के रईस को आदेश दिया जाये कि वह इस बात की देख रेख किया करे ताकि कोई भी इस बहाने से अपने स्वार्थ की सिद्धि न करने पाये। सर्व प्रथम रईस को इस बात का नियत्रण करना चाहिये कि समस्त चाँदी (धन) सैनिको के हाथ से व्यवसायी (पेशावर) लोगों के हाथ में न पहुँच जाये, क्योंकि वे उसे भूमि में गाड देते हैं और लेनदेन में चाँदी की कमी हो जाती है, मुसलमानों को कष्ट होता है और (राज्य में) विघ्न पड जाता है। चाँदी की खोज तथा उसके विषय में पूछताछ करते रहना चाहिये। उसकी हानि के विषय में सर्वदा कान खुले रखना चाहिये जिससे चाँदी कम न हो जाये और लोगो की धन सम्पत्ति सर्राफो के हाथों में न पहुँच जाये। चांदी (सिक्को) की कमी तथा उसे खोटा न होना चाहिये। इसके कारण बडी ही हानि होती है।

(४७ ब) दूसरे यह कि मार्गों को सुरक्षित रखना चाहिये। शहनो तथा गुमाश्तो को इस बात का आदेश दे देना चाहिये कि वे इसके विषय में परिश्रम करते रहे। सरायें, जो कि दीनों तथा कारवाँ वालो के ठहरने का स्थान होती हैं, सर्वदा आबाद रहनी चाहिये जिससे मार्ग सुरक्षित रह और लोग उन पर चलते रहे। इस कारण उत्तम तथा विभिन्न वस्तुए जोकि दूर-दूर के नगरो से आती है और वे वस्तुयें जोकि ससार के देशो से लाई जाती हैं, मार्ग के सुरक्षित होने के कारण व्यापारियो के पास सुगमतापूर्वक आ जा सकेंगी और जिन लोगो को उन वस्तुओ की आवश्यकता है वे उन्हें प्राप्त कर सकेंगे।

आमिल और गुमाश्ते जब अपनी विलायत तथा अमल (शासन क्षेत्र) में जाने लगें तो उन्हे चेतावनी देदी जाया करे कि वे जो कुछ भी अनाज खराज तथा मराई[1] प्राप्त करें वह शरा की आज्ञानुसार तथा कानून के मुताबिक हो। क़ानून के बाहर वे कोई अत्याचार न करें और कोई नया (कर) न प्राप्त करें। इस प्रकार प्रजा को दरिद्र तथा दीन न बनादें कि विलायत (प्रदेशों) का खराज न प्राप्त हो सके और राज्य को क्षति पहुचे।

(४८ ब) राज्य बिना मनुष्यो के स्थापित नही रह सकता। मनुष्य तथा सेना धन के बिना कायम नही रह सकते। धन प्रजा के अतिरिक्त और किसी साधन से प्राप्त नही हो सकता। प्रजा की सुख शान्ति न्याय तथा दण्ड पर निर्भर है।

१ मराई का अर्थ चरागाह है। सम्भवतया यहाँ चरागाहों में घोड़े चराने अथवा चरागाह से अभिप्राय है।

(४६ अ) सैनिकों तथा अहले कलम (पढे लिखे लोग) के विषय में पूछ ताछ करते रहना चाहिये। जिस किसी के बाप दादा तथा पूर्वज सैनिक न रहे हो और बादशाहों की सेवा न की हो उसे सवार तथा सरखेल न बनाना चाहिये। जिस किसी ने अपने बाप दादा के समय से सेना का कार्य, युद्ध, सवारी तथा (लोगो को) युद्ध करते हुये न देखा हो और उसने स्वय ही कार्य प्रारम्भ किया हो तथा सैनिको एव योद्धाओं में सम्मिलित हुआ परन्तु कार्य न सीखा हो और न समझा हो, (ऐसे लोगों के) समूह को दो तीन योग्य तथा सीखे हुये सैनिको के बराबर समझना चाहिये[२]। ऐसा न करने से सैनिकों के हृदय टूट जाते हैं और वे भयभीत हो जाते हैं।

जिनके बाप दादा अहले कलम तथा दीवान न रहे हो और जिनके पूर्वजो ने बादशाहो तथा अमीरो की सेवा न की हो और दीवान में न रहे हो उन्हें कोई भी साहित्य गणित तथा सियाकत (रोकडी, बही खाता) की शिक्षा प्राप्त न करने देना चाहिये और उन्हें दीवान में शागिर्दी तथा मुहर्रिरी प्राप्त न करने देना चाहिये अन्यथा वे धीरे-धीरे नायब तथा अधिकारी बन जाते हैं और कन्जूसी, छल, बाजारीपन, कमीनापन, दुराचार तथा भीख-मगाई करते रहते हैं।

(४९ ब) किसी कमीने को इतना सम्मान न प्राप्त होना चाहिये, कि मुसलमान उसके सामने झुके। जब वे कार्य प्रारम्भ कर देते हैं तो शाही कार्यों में दोष आ जाता है। कुलीन तथा उत्कृष्ट वश वाले बेकार हो जाते हैं। ऐसे लोगो को उन (कमीनों) की सेवा करने के लिये विवश न करना चाहिये। वे अपनी अयोग्यता तथा कृपणता के कारण किसी चीज को सफल नही होने देते। बादशाहो को दान, उदारता करने, खैरात तथा इनाम देने से रोक देते हैं। अपने आप को परामर्शदाता के रूप में प्रस्तुत करते है, सभी कार्यों में देर करते रहते हैं और खराबी पैदा करते रहते हैं। कुलीनो, बडे लोगों, सैनिकों तथा विशेष व्यक्तियो को परेशान करते रहते हैं। इस प्रकार राज्य का पतन हो जाता है और देश में तथा प्रजा को परेशानी होने लगती है। यदि उन्हें थोडी सी भी चीज मिल जाती है तो वे अभिमानी बन जाते है और अत्यधिक लिप्सा करने लगते हैं। यदि उन्हे ऐसी वस्तुयें न प्राप्त हो तो वे कृतघ्नता प्रकट करने लगते हैं और राज्य के शत्रुओ से मिल जाते हैं। उनके पास समाचार भेजते रहते हैं, राज्य की गुप्त बातें तथा अन्य रहस्यमयी बातो की सूचना शत्रु को पहुँचा कर उसमे आक्रमण करने का आग्रह करते हैं। थोडे ही से कष्ट पर भारी बदले की योजनायें बनाने लगते हैं और कुलीनों तथा योग्य व्यक्तियो के रक्तपात तथा धन सम्पत्ति के अपहरण हेतु हाथ बढाने लगते हैं। इन सब बातो पर गर्व करते रहते हैं और उन्हे अपने दुराचार पर कोई लज्जा नही होती।

अध्याय ५—उच्च परामर्शदाता वजीर की नियुक्ति

(५१ ब) मुहम्मद साहब का प्रवचन है कि जिस किसी को ईश्वर बादशाही, अमीरी तथा प्रतिष्ठा प्रदान करे उसे सदाचारी तथा सच्चा वजीर भी दे ताकि यदि वह दान, नेकी तथा न्याय के विषय में कोई चीज भूल जाये तो वह उसको याद दिला दे।

(५२ अ) बुद्धिमानो ने कहा है कि यदि कोई बादशाह बडा ही अयोग्य एव आतककारी हो तो उसके वजीर को न्यायकारी तथा दयावान होना चाहिये। जिस प्रकार शरीर बिना जीव के जीवित नही रह सकता उसी प्रकार राज्य बिना वजीर के स्थापित नही रह सकता। बादशाहो का कार्य, सेना का सचालन, राज्यो की विजय, दान, युद्ध आदि होता है किन्तु

२ इस वाक्य का अर्थ स्पष्ट नहीं।

विलायत (प्रदेश) को आबाद करना, खजाने का एकत्र करना, सेना जमा करना, आमिलो को नियुक्त करना, हिसाब किताब रखना, कारखानो के सामान का निरीक्षण करना, घोडो, ऊँटो तथा अन्य पशुओ का प्रबन्ध करना, सैनिको तथा कर्मचारियों को वेतन प्रदान करना, प्रजा को आराम देना, अहले सलाह[1] को वृत्ति तथा सहायता देना एव उन पर कृपा करना, विधवाओं तथा अनाथो का पालन-पोषण, आलिमों का प्रबन्ध, दीवानों का इन्तजाम और देख रेख तथा अन्य सेवाओं से सम्बन्धित लोगो का नियत्रण वजीर के सिपुर्द होता है।

(५२ ब) यदि वजीर में उपरोक्त योग्यतायें नहीं होती तो बादशाह को उसके कारण हानि उठानी पडती है और लोग उसे ही मूर्ख समझते हैं। वजीर के शरीर में किसी प्रकार का कोई दोष न होना चाहिये और न उसे बहुत ही परिहासवेदी, कठोर, कजूस, जल्दबाज, जानी[2] तथा लूती[3] होना चाहिये। उसे फसादी, बेनमाजी, भगवान् का भय न रखने वाला तथा अत्याचारी न होना चाहिये। उसे निर्दयी, बदनाम, जल्द क्रोधित होने वाला, कठोर हृदय वाला, अज्ञानी, बेहुनर, झूठी शपथ खाने वाला, बनावटी और रिश्वत खाने वाला न होना चाहिये। उसे बादशाह तथा दरवेशों का शत्रु न होना चाहिये और मुसलमानों को कष्ट न पहुँचाना चाहिये। उसे वजीर के वश से होना चाहिये। जिसको यह सौभाग्य प्राप्त होता है वह बडा ही दानी, उत्कृष्ट, उत्तम व्यक्तित्व का मनुष्य, पाक व साफ हृदय तथा विश्वास वाला होता है। अन्य लोगो के प्रति उसका व्यवहार बडा ही अच्छा होता है और वह बडे बडे उत्तम आदेश निकालता है। वह अत्यधिक दान करता है।

(५३ अ) बातचीत में मीठा और प्रत्येक कार्य सुचारु रूप से करता है। वह बडे सोच विचार स योजनानुकूल तथा उत्तम कार्य करता है। उसमें पौरुष तथा वीरता भी अत्यधिक होती है। वह सब लोगों से भलीभाँति मिलता है और सभी कार्य उत्तम रूप से समझता है। उसमें ईर्ष्या नही होती और वह दयालु होता है। उसका हृदय विशाल तथा वह अपने मित्रों का ध्यान रखने वाला होता है। लोगों को अत्यधिक दान देता है और भगवान् का भय रखता है। वह अनुभवी तथा योग्य लोगों के साथ उठता-बैठता है तथा उनसे परामर्श करता है। नमाज पढता है और शरीयत की जानकारी रखता है। वह फकीह, इतिहास की जानकारी रखने वाला तथा योग्य लोगों का मित्र होता है। उसकी बातें बडी उत्कृष्ट होती हैं और उसका सुलेख तथा उसमें हिसाब किताब की शक्ति भी बहुत बडी होती है। वह बडा ही उत्तम दबीर (मुन्शी), तबीब (चिकित्सक), ज्योतिषी, कवि तथा कविताओ के गुण का ज्ञान रखने वाला होता है। वह बडा ही सहनशील होता है और प्रतिकार की भावना उसमें नहीं होती है। वह बडा ही वाक्पटु, उत्तम सैनिक तथा दार्शनिक होता है। उसे अरस्तु तथा बुजर्चमेहर की अनेक उत्कृष्ट बातें याद होती हैं। जिस वजीर में ऐसे उत्कृष्ट गुण होते हैं उसके राज्य में शत्रुओ की सख्या कम होती है और कोई विघ्न नही डालता। उसे चाहिये कि जब कभी वह बादशाह की सेवा में जावे तो सर्व प्रथम वह जो कार्य करे, वह मुसलमानों तथा ईश्वर के लिये करे। नेक लोगो के कार्य को सदा उन्नति देता रहे।

(५३ ब) ससार में अनेक स्त्रियो तथा बालकों को बादशाही प्राप्त हो जाती है और उन्हें कोई अनुभव नही होता। वजीर बडे अनुभवी तथा ज्ञान-सम्पन्न होते हैं। वे अपनी योग्यता तथा अनुभव से शत्रुओं को राज्य से दूर रखते हैं। जिस वजीर में यह सब गुण हों बादशाह को तीन चीजें उसे न देनी चाहिये और तीन चीजें उसे प्रदान करनी चाहिये।

---

१ धार्मिक लोग, सत
२ जिना करने वाला, व्यभिचारी
३ गुदा भोगी

जो चीजें न देनी चाहियें उनमें से प्रथम तो यह है कि उस पर क्रोध न करे और यदि करे तो शीघ्र ही उसे क्षमा करदे और उसमे बदला न ले। (२) यदि वह धनी हो जाय तो उसके लाभ हानि का लोभ न करे। (३) यदि वह किसी की सिफारिश करे तो उसे न टाले। तीन चीजें जो उसे प्रदान करे उनमें से प्रथम यह है कि जिस समय भी वह चाहे उसे (वजीर को) आने की आज्ञा हो। यदि ऐसा नही होता तो बडी ही हानि होती है। (२) शत्रुओ तथा दुश्चिन्तकों की बात उसके विषय में न सुने। (३) अपने कार्य तथा रहस्य उससे न छिपाये क्योंकि वजीर की बुद्धिमत्ता तथा समझ बूझ उसके समकालीनो से कही अधिक होती है।

वजीर का हृदय इतना विशाल होना चाहिये कि वह किसी भी शत्रु तथा किसी भी बात का भय न करे। यदि बादशाह उसके शत्रु को उसके पास भेजे तो वह निराश न हो और हँसी-खुशी उसके समक्ष कार्य करता रहे।

(५५ अ व ब) एक दार्शनिक ने कहा है कि राज्य के वजीर को प्राण के समान होना चाहिये। जिस शरीर में प्राण नही होना वह नष्ट हो जाता है और जिस प्राण के साथ शरीर नही होता वह व्यर्थ होता है। जिस राज्य मे परामर्श तथा राय देन एव ऊँच नीच समझाने के लिये वजीर नही होता वह नष्ट हो जाता है। वजीर बिना राज्य के तथा राज्य बिना वजीर के नही होता।

(५६ ब) आमिलो तथा गुमाश्तो को चेतावनी देते रहना चाहिये कि वे अत्याचार तथा ज्यादती न कर और बिना किसी विशेष बात के प्रजा का विनाश न करें। यदि किसी ने कोई अत्याचार किया हो तो उसको दण्ड दिया जावे। यदि प्रजा क्षीण हो जाती है तो धन प्राप्त नही होता। यदि धन प्राप्त नही होता तो सेना एकत्र नही हो सकती। बिना सेना के सुव्यवस्थित हुये राज्य शक्तिहीन हो जाता है और यदि शत्रु शक्तिशाली हो जाता है तो राज्य हाथ से निकल जाता है। सक्षप में यह समझना चाहिये कि विजारत से अधिक खतरनाक कोई अन्य काय नही। उसे बादशाह से लेकर दरबान तक की देख-रेख करनी हाती है। जितने ईर्ष्या करन वाले तथा शत्रु वजीर के होते हैं उतने किसी अन्य के नही होते। अहले कलम (विद्वानो) की अन्तिम श्रेणी विजारत है। उसे बादशाह को परामर्श देते रहना चाहिये और ईमानदारी तथा ईश्वर का भय करके प्रत्येक कार्य करना चाहिये। जिन बातो की आज्ञा शरा में न हो उन्हे न करना चाहिये। उसे कोई बुरी आकाक्षा न करनी चाहिये। मुसलमानो के प्राण तथा धन का विनाश न करना चाहिये। इस प्रकार कार्य करने मे कोई भी शत्रु उस पर अधिकार नही पा सकता और सुल्तान के क्रोध से उसे कोई भय नही हो सकता।

अध्याय ६—दूतो तथा उपहार भेजने के सम्बन्ध में

(५६ ब, ५७ अ) एक दरबार से दूसरे में दूत भेजते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि दूत कुलीन हो और धर्मनिष्ठ तथा आलिम (विद्वान्) भी हो। उसके पूर्वज भी राज्यो में उत्कृष्ट रह चुके हो। कुलीन सैयिदो को चुनना उचित है क्योकि वे बाल्यावस्था से ही राज सिंहासन के समक्ष बडे होते हैं और शिष्ट होते हैं। बादशाहो से सम्बन्धित शिष्टता की जानकारी रखते हे और समस्त विषयो में दक्ष होते हैं। उसका (दूत का) व्यक्तित्व उत्कृष्ट तथा उसे हाजिर जवाब होना चाहिये। कुरूप दूत न भेजने चाहिये। उसमें किसी प्रकार का दोष न होना चाहिये। उसे बडा ही सहनशील, वाक्पटु तथा दानी होना चाहिये। उसे अत्यधिक व्यय करना चाहिये जिससे वह किसी भी वस्तु को अधिक महत्त्व न दे। बडे-बडे इमाम तथा फाजिल (योग्य) उसकी सगति में बैठते हो।

(५७ ब) जिसको भी दूत बनाया जाये उसके साथ अत्यधिक धन भेजना चाहिये। यदि उसने राज्य के हित में धन व्यय किया हो किन्तु उसका कार्य सम्पन्न न भी हो पाया हो तो भी उससे पूछताछ न करनी चाहिये। राज्य और बादशाहों का कार्य नदी के जल के समान अथाह होता है। उसे जिस बादशाह की सेवा में भेजा गया हो उसके दरबार में सर्वदा उपस्थित रहना चाहिये जिससे वह प्रत्येक बात का उचित उत्तर दे सके। वह बकवास न करे और व्यर्थ हास्य में तल्लीन न हो। यदि किसी विज्ञान के ऊपर कोई वार्ता हो रही हो तो वह उचित शब्दों में उत्तर दे और यदि उसे कुछ ज्ञान न हो तो मौन रहे। वह इस बात को न दिखाये कि उसे किसी ज्ञान में दक्षता है क्योंकि हो सकता है कि परीक्षा के समय उसे सफलता न मिले।

उपहार

(५९ ब) अच्छे खत में (मुनेख में) लिखी हुई कुरान तथा तफसीर (कुरान के अर्थ से सम्बन्धित पुस्तक) तुर्क, रूमी, हबशी, हिन्दूदास तथा कनीजें, मुनहरे रूपहले वस्त्र, घोड़े व ऊँट, तथा उनसे सम्बन्धित सामान, बर्तन, तलवार, कटार, ढाल, तीर कमान, जिरह जौशन, खोद आदि युद्ध के सामान, चन्दन, ऊद, आबनूस की सामग्री, हाथी और मछली के दांत, लाल फीरोज़ा, अक़ीक़ (रत्न), उत्तम रंगीन कपड़े, मुश्क, काफूर, शेर बबर चीते आदि की खाल, शिकारी कुत्ते, बाज़, शाहीन, तथा इस प्रकार की अन्य चीजें।

(६० अ) यदि किसी से सन्धि करनी हो तो स्वीकृति-पत्र (इक़रारनामा) लिखा जाये और सौगन्द खाई जाये। पत्र लिखे जाने के उपरान्त दोनों पक्ष के लोग उसे पढ़ें। दोनों ओर के समस्त क़ाज़ी, इमाम, सैयिद, मशायख, सूफी, सेना तथा राज्य के अधिकारी, साक्षी रहें। दोनों ओर के लोग उस पत्र को अपने पास रखें। उसके विरुद्ध कोई कार्य न करें। यदि शत्रु उसका उल्लंघन करे तो बादशाहो, अमीरों, गण्यमान्य व्यक्तियों, काजियो, इमामो, सैयिदों तथा मशायख एवं सूफियों को इस घटना से परिचित कराना चाहिये। अपनी ओर से विरोध प्रकट न करना चाहिये। यदि दूसरी ओर से (युद्ध) आरम्भ होता हो तो उस समय सौम्य तथा साहस से कार्य करे और वचन तथा शपथ तोड़ने वाले को पराजित करे। जो कोई अपना वचन तथा अपनी शपथ नहीं तोड़ता वह अवश्य ही विजयी तथा सफल रहता है।

अध्याय ७—युद्ध के विषय से परामर्श

(६९ अ, ब) जहां तक सम्भव हो युद्ध न करना चाहिये क्योंकि युद्ध बड़ा कटु भोजन है। दार्शनिकों ने कहा है कि बादशाह को ईश्वर की आज्ञा का पालन करने के अतिरिक्त कोई कार्य न करना चाहिये। यथा सम्भव युद्ध की उपेक्षा करते रहना चाहिये क्योंकि कोई भी नहीं कह सकता कि विजय किस की होगी। चूँकि बादशाह न्याय करता है अतः उसे युद्ध की आवश्यकता नहीं होती अपितु सभी लोग उसके मित्र तथा आज्ञाकारी बने रहते हैं, ईश्वर उससे प्रसन्न रहता है और वह अपने कार्यों में सफल रहता है।

अध्याय ८—घोड़ों की विशेषता तथा उनसे लाभ

(७१ अ, ब) घोड़े की विशेषता तथा उसके रखने का एक आशीश यह है कि जिस घर में घोड़ा होता है उस घर में भूत नहीं आते। वहाँ किसी की अकस्मात् मृत्यु नहीं होती। उससे बड़े ही आशीश तथा लाभ प्राप्त होते रहते हैं। शैतान के निकट घोड़े की आवाज से अधिक कोई अन्य शत्रु नहीं होता।

अध्याय ९—घोड़ों के रंग तथा उनके गुण एवं दोष, सवारी तथा घोड़ों की कसरत

(७६ ब) यह जानना चाहिये कि बादशाह तथा समस्त लश्कर को जिस चीज़ की सब से

अधिक आवश्यकता होती है। राज्य का गौरव तथा उसकी सजावट- घोडो द्वारा ही होती है। बादशाह बिना घोडो के नही रह सकते।

(८१ अ) ऐसे योग्य लोग भी होने चाहिये जिन्हे इस बात की जानकारी हो कि घोडो की चिकित्सा की आवश्यकता है या उनसे मेहनत (कसरत) कराने की। यदि चिकित्सा के स्थान पर घोडे से मेहनत कराई जाती है और मेहनत के स्थान पर उसकी चिकित्सा कराई जाती है तो घोडा बेकार हो जाता है।

अध्याय १०—घोड़ों, उनके दाँत तथा अन्य चिह्नों की पहिचान और घोड़ों की चिकित्सा

(८७ अ) घोडो को दौडाना बडी ही अच्छी विद्या है। जो कोई घोडा न पहिचानता हो उसे मूर्ख समझना चाहिये। घोडे तथा उसके दांतों की पहिचान रखनी चाहिये। उसके दोषों के विषय में पूर्ण जानकारी होनी चाहिये।

(९६ ब) अध्याय ११—प्रत्येक अस्त्र शस्त्र के गुण तथा विशेषता और उनके प्रयोग से लाभ

(१०७ अ) हिन्दुस्तानी भाले से उत्तम कोई भाला नही।

अध्याय १२—सेना का निरीक्षण व भर्ती तथा उसकी रक्षा

(१०९ ब) बादशाह तथा लश्कर-कश जिस समय किसी लश्कर का अर्ज करें तो सर्व प्रथम मैसरे (बाई ओर) का, तत्पश्चात् कल्ब (मध्य भाग) और उसके उपरान्त मैमने (दाहिनी ओर) का। अर्ज करने वाले को ऊँचे स्थान पर बैठना चाहिये जिससे वह सवार तथा प्यादे दोनों को देख सके। नकीब को उसके सम्मुख खडा रहना चाहिये जिससे सवार, प्यादो, घोडो, अस्त्र-शस्त्र तथा अन्य सामानो का अर्ज हो सके। ईश्वर के नाम का सर्वदा जाप करते रहना चाहिये। सर्व प्रथम सवारे बरगुसत्वान[1] तथा उसके अस्त्र शस्त्र का अर्ज करना चाहिये और उसका नाम व हुलिया लिख लेना चाहिये। इसके पश्चात् वेतन पाने वाले प्यादो का अर्ज करना चाहिये और उनका नाम व हुलिया लिख लेना चाहिये।

(११० अ) तत्पश्चात् उन प्यादों का अर्ज करना चाहिये जो केवल सहायता के लिये आये हों। सब बातें लिखकर नकीब को दे देनी चाहिये जिससे कि युद्ध के दिन सब उसी क्रम से आ सकें। सर्व प्रथम बडे बडे अमीरो का अर्ज करना चाहिये। तत्पश्चात् ऐसे अमीरो का अर्ज करना चाहिये जिनके पास ढोल तथा झंडा[2] न हो। उसके उपरान्त वेतन पाने वाले प्रत्येक खेल (सवारों) का अर्ज करना चाहिये। प्यादो के गिरोह का भी अर्ज होना चाहिये और यह लिख लेना चाहिये कि वे किस सरहेंग[3] के अधीन हैं। युद्ध के पूर्व जो अर्ज हो रहा हो उसमें घोडे तथा अस्त्र शस्त्र के विषय में कदापि पूछताछ न करनी चाहिये, सभी पर कृपा करनी चाहिये और उन्हें इनाम का आश्वासन दिलाना चाहिये, जिससे सब लोग हृदय से कार्य कर सकें तथा प्राणो की बलि दे सकें। यदि किसी प्रकार की रोक टोक हो तो उनके दिल टूट जायेंगे, युद्ध में भाग खडे होंगे तथा अपने प्राणो को खतरे में न डालेंगे। इस प्रकार की रोक टोक से बहुत से सैनिक शत्रु से मिल जाते हैं और पश्चाताप करना पडता है। आरिज को सेना का माता पिता होना चाहिये। सेना की शक्ति आरिज पर निर्भर है। ऐसे समय रोक टोक करने पर उसके प्राणों का भय हो जाता है।

१ ऐसे सवार जो अपने घोडों को भी तनुत्राण धारण कराते हों।
२ साधारण अमीर।
३ सेना का सरदार, सेनापति।

(११० ब) जब समस्त सेना का अर्ज़ हो चुके तो बड़े बड़े अमीरों एवं सेना के बड़े बड़े सिपहसालारों को बादशाह तथा सेना के सरदार के सम्मुख ले जाना चाहिये। उनके घोड़ों तथा उनके आदमियों की प्रशंसा करनी चाहिये। यद्यपि बादशाह तथा लश्कर के सिपहसालार को सब कुछ ज्ञान ही क्यों न हो फिर भी सवारों तथा प्यादों की संख्या एक के स्थान पर २, २, व ३, ३ न बतानी चाहिये क्योंकि कदाचित् शत्रु के गुप्तचर उसकी बात सुन रहे हों और इस प्रकार अफ़वाह फैल सकती है। शत्रु को भी सेना की सच्चा ज्ञान हो सकती है। सेना के सरदारों को यह बता देना चाहिए कि जिस खेल का अर्ज़ हो चुका हो वह एक ओर चले जायें और सवार उनके पृथक् न होने पायें और ऐसा दिखाना चाहिए कि उन्हें वापस होना है।

(१११ अ) जहां तक हो सके अपनी संख्या का भय दिलाकर शत्रु के हृदय को तोड़ दें और उसे सन्धि करने पर विवश करें। युद्ध से सन्धि कहीं अच्छी होती है क्योंकि युद्ध के विषय में निश्चित रूप से किसी को कोई ज्ञान नहीं होता। इस प्रकार की सन्धि विनाश से कहीं अच्छी होती है कि किसी को कोई हानि भी न पहुँचे, सेना भी सुरक्षित रहे और व्यर्थ रक्तपात न हो, राज्य नष्ट न हो तथा प्रजा का विनाश न हो।

अध्याय १३—लश्कर का उतरना तथा सेना के शिविर

(११२ अ) इसके विभिन्न नियम हैं ईरानियों के, तुर्कों के, रूमियों के तथा हिन्दुओं के। किन्तु ईरानियों के नियम सब से उत्तम हैं। बादशाह तथा सेनानायक को चाहिए कि वह सेना को ऐसे मैदान में उतारे जहां जल तथा चारा हो, शत्रु सेना तक न पहुँच सकता हो। घात लगाने से सम्बन्धित स्थानों से भी असावधान न रहना चाहिए। यदि सेना अधिक न हो तो किसी नदी अथवा नहर या पर्वत के आंचल में ऐसे स्थान पर पड़ाव डाले जहां चारा, जल, जलाने की लकड़ी उपलब्ध हों। सेना के शिविर के सम्मुख रुकावटें होनी चाहिए जिससे रात्रि में शत्रु उन पर छापा न मार सके। इसी प्रकार युद्ध के दिन से शिविर में सेना का स्थान निश्चित होना चाहिये जिससे सब लोग वहीं पर उतर सकें और प्रत्येक को अपने स्थान का पता हो। सर्व प्रथम मुक़द्दमे (अग्रिम दल) को उतरना चाहिये, तत्पश्चात् दाहिने जनाह (पक्ष) को। उसके उपरान्त बायें जनाह (पक्ष) को, फिर मैमने[1] को और फिर मैसरे[2] को। इसके पश्चात् क़ल्ब (मध्य भाग) को। तत्पश्चात् स्त्रियों के डेरे, रसोई, राजकोष, जर्राद खाना (अस्त्रागार), रिकाब खाना[3] और फिर घायल एवं बन्दी लोग। सवारों की अधिक संख्या दाहिनी ओर होनी चाहिये। प्रत्येक को एक दूसरे से पृथक् रहना चाहिये। स्त्रियों के शिविर के पीछे घोड़े, पशु, ऊँट तथा प्यादे होने चाहिये। अधिक सवारों की संख्या बाईं ओर इस प्रकार होनी चाहिये कि दासों के शिविर सेना के मध्य में हों मानो वे क़िले में हों। यदि शत्रु उन तक पहुँचना चाहे तो न पहुँच सके।

(११२ ब) दासों के शिविर के समक्ष झंडे, बाजे आदि होना चाहिये। उनके आगे खासे[4] के बोझ ढोने वाले तथा सैनिक होने चाहिये, उनके आगे सेना का बाज़ार होना चाहिये। प्यादों की दो तीन पंक्तियां अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित आगे होनी चाहिये। दासों के शिविर के चारों ओर पर्याप्त स्थान होना चाहिये जिससे जो सवार पहरे पर हों वे दासों के शिविर के

---

१ दाहिना पक्ष।
२ बायाँ पक्ष।
३ भण्डार घर, मोदीखाना।
४ सुल्तान की व्यक्तिगत सेवा से सम्बन्धित।

पास खड़े हो सकें। मुख, सेना के शिविर की ओर तथा पीठ दासो के शिविर की ओर होनी चाहिये। सेना को चाहिये कि बादशाह को शत्रु की चालों तथा छल से सुरक्षित रखे।

(१३३ अ) ईश्वर ने बादशाह को ममार थाना व प्रबन्ध, दुनिया को आबाद करने, लोगों को आराम पहुंचाने, मार्गों की रक्षा तथा प्रजा की शांति के लिये पैदा किया है। उसे मुसलमानों, समस्त मनुष्यों तथा प्रजा की धन सम्पत्ति का निरीक्षक बनाया है। उन्हें सर्वदा प्रजा की चिन्ता करते रहना चाहिए और उनका प्रबन्ध करते रहना चाहिए।

अध्याय १४—तलाया[1]

(११५ अ) जासूसों तथा गुप्तचरों को भेजा जाना चाहिए क्योंकि तलाया सेना के रक्षक होते हैं। ४००० की संख्या (इस) सेना के लिए बहुत ही उचित है। १२००० सुसंगठित सवारों को पराजय प्राप्त होना कठिन है। १२००० सवार कम नहीं होते। तलाया के पास बाहर जाने के समय उत्तम प्रकार के घोड़े होने चाहिये। उन्हें स्वयं कभी युद्ध की इच्छा नहीं करनी चाहिये। उनके पास भारी बोझ न होना चाहिये। अस्त्र शस्त्र के साथ उनके भोजन तथा जल का भी प्रबन्ध होना चाहिये। तलाया चाहे अधिक हो या कम, उन्हें बड़ा ही सावधान, अनुभवी तथा योग्य होना चाहिये। मार्ग में चलते समय उन्हें पृथक् रहना चाहिये। कभी कभी उन्हें ऊँचाई पर चलना चाहिये कभी सवार होकर कभी पैदल।

(११५ ब) जब शत्रु दृष्टिगत हो तो एक दूसरे को सावधान कर दें और धीरे धीरे प्रस्थान करें। उनके चलते समय धूल न उड़नी चाहिये। एक दो बुद्धिमानों को आगे भेज देना चाहिये जिससे वे धीरे धीरे सिपहसालार एवं बादशाह के पास पहुँच कर उन्हें सावधान कर दें। उन्हें शोर बिल्कुल भी न करना चाहिये अपितु बादशाह तथा सेनानायक के अतिरिक्त किसी को भी किसी बात का पता न चलना चाहिये। यदि वे जल्दी करेंगे अथवा शोर करेंगे तो इससे सेना के प्रबन्ध में विघ्न पड़ जायेगा और सेना की पराजय हो जायेगी। यदि तलाया को शत्रु के निकट अचानक आ जाने के कारण युद्ध करना पड़े तो उन्हें एक साथ भाग न खड़े होना चाहिये अपितु धीरे धीरे युद्ध करके लौटना चाहिये। एक या दो आदमियों को सूचना देने के लिये शीघ्रातिशीघ्र भेज देना चाहिये।

गुप्तचरों का भी सेना में इस प्रकार आना जाना चाहिये कि बादशाह तथा सेनानायक के अतिरिक्त किसी को उनके विषय में सूचना न प्राप्त हो सके। यदि किसी को कुछ पता चल जाये तो उसके उत्साह का प्रयत्न करेगा। गुप्तचर को बुद्धिमान तथा सच्चा होना चाहिये। सेनानायक से कोई बात गुप्त न रखनी चाहिये और सभी अच्छी बुरी बात उसे बताते रहना चाहिये। सेना का हतोत्साहित होना बड़ा आसान होता है परन्तु उन्हें प्रोत्साहन देना बड़ा कठिन होता है। झूठ द्वारा सेना हतोत्साहित हो जाती है और युद्ध करने में शीघ्रता करती है तथा लोगों का विरोधी बना देती है।

तलाया को चाहिये कि सेना के शिविर के आगे पीछे तथा दाहिने बायें घूमता रहे। बहुत दूर अर्थात् दो तीन फरसंग से दूर न जाना चाहिये। एक फरसंग से अधिक न बढ़ना चाहिये। यदि उनकी संख्या कम हो तो भी उन्हें एक ही ओर न रहना चाहिये अपितु चारों ओर घूमते रहना चाहिये जिससे शत्रु के विषय में जानकारी प्राप्त हो सके। यदि उन्हें किसी से युद्ध करना पड़ जाये तो बढ़ा-चढ़ा कर झूठ बात नहीं करनी चाहिये कि इस प्रकार सवार आये थे और उन्हें इस प्रकार मार कर भगा दिया गया और उनके शिविर तक उनका पीछा किया गया। इससे दूसरे सवारों को अपने शिविर से दूर निकल जाने का लोभ हो जाता है और इस प्रकार उनका शत्रुओं के हाथ में पड़ जाना सम्भव हो जाता है।

---

[1] गुप्तचारी सेना।

(११६ ब) किसी भी दशा में नशा न करें और शत्रु को कम न जानें। अत्यधिक नशा करने से भी सेना शत्रु के हाथ पड़ जाती है। इस पुस्तक के लेखक को इसका अनुभव है। प्रत्येक दिन बारी-बारी सेना को तलाये के लिये भेजना चाहिये जिससे वे काहिल न हो जायें। जिस किसी को भी भेजें उसे खूब प्रोत्साहन दें और उसको प्रसन्न रखने का प्रयत्न करें। उनसे अच्छे अच्छे वादे करें। ४०० सवार इस कार्य हेतु बड़े ही उपयुक्त होते हैं। इन लोगों पर भी सरदार नियुक्त किये जायें जिससे वे उनकी आज्ञाओं का पालन करते रहें और सभी सगठित रहें और एक दूसरे पर कृपा करते रहें। जिस स्थान पर भी उतरें वह स्थान ऊँचा हो। कुछ सवारों को दाहिनी और बाईं ओर भेज दें। यदि रोटी खायें तो आधी अपने लिये और आधी मित्रों को दें। १००, १०० लोग मिल कर पहरा दें और सर्वदा ईश्वर की उपासना करते रहें।

(११७ अ) यदि किसी स्थान पर वे कोई भोजन सामग्री पायें तो जितनी आवश्यकता हो उतना ले लें और अधिक न लें जिससे उनका बोझ न बढ़े। जहाँ भी जायें सावधानी से जायें। यदि वे किसी बस्ती में जायें तो किसी को भी कष्ट न पहुँचायें। किसी से कोई चीज़ न लें। यदि किसी चीज़ की आवश्यकता हो तो धन देकर मोल लें और ऐसा व्यवहार करें जिससे यह ज्ञात हो कि वे भी उसी प्रदेश के निवासी हैं। जिस स्थान पर जाना हो वहाँ अच्छे ढंग से पहुँचें और यह प्रसिद्ध करें कि हम उसी स्थान से सम्बन्धित हैं अथवा हमें वहाँ अक्ता प्राप्त हुई है। दरवेशों के साथ अच्छा व्यवहार करें। सर्वदा ईश्वर पर निर्भर रहें। जब उस स्थान पर पहुँचें तो यदि वे कोई उत्कृष्ट कार्य कर सकते हैं तो करें अन्यथा अपने आपको खतरे में न डालें और सुरक्षित लौट जायें। यदि पर्वत निकट हो तो उसके आँचल में वापस हो जायें और धीरे-धीरे ऊपर बढ़ें।

अध्याय १५—रात में छापा मारने के लिये भेजना

(११८ अ ब) ज्ञात हो कि दो प्रकार के समूहों को रात में छापा मारना चाहिये, एक युद्ध में निपुण तथा अनुभवी लोगों को और दूसरे बुद्धिमानों, सावधान तथा आज्ञाकारी लोगों को। आधी रात्रि से तथा प्रातः काल तक छापा मारना चाहिये। उनके (शत्रु के) घोड़ों को खोल दें, डेरों तथा शिविरों पर टूट पड़ें, उनकी डोरियाँ काट दें जिससे शिविर तथा खेमे गिर पड़ें। इससे सेना में आतंक छा जायेगा। कुछ लोगों को चाकू लेकर भीतर भेज दें जिससे यदि कोई सामने आये तो उसे घायल किया जा सके। तबेलों पर अधिकार जमा लें। यदि बिना युद्ध किये तथा बिना रक्तपात के ही इस उद्देश्य की पूर्ति हो जाये तो एक कौम पर युद्ध आरम्भ करें और शिविरों तक कोई सामग्री न पहुँचने दें। उचित तो यह है कि रात के छापे के समय इस प्रकार चिल्लाते रहें कि अमुक को पकड़ लिया गया और अमुक की हत्या कर दी गई चाहे यह झूठ ही क्यों न हो क्योंकि इससे शत्रु ढीले पड़ जाते हैं और भयभीत हो जाते हैं। उनके हाथ पैरों में शक्ति नहीं रहती। छापा मारने के उपरान्त भाग जाना चाहिये और शिविर तथा असबाब छोड़ देना चाहिये। युद्धस्थल में शत्रु की पराजय के लिये झूठ बोलना उचित बताया गया है।

(११६ अ) यदि दूसरी ओर से रात्रि में छापा मारा जाये तो सेना के चार दल कर देने चाहिये। एक दल प्यादों का हो जिनमें धनुर्धारी, तलवार तथा भाला चलाने वाले एवं ढाल वाले हों जो मार्ग की रक्षा करते रहें। दाहिनी पंक्ति तथा मध्य के लोग अपने स्थान पर छिपे रहें और किसी को कुछ पता न लगाने दें। किसी ऐसे स्थान पर आग जलायें जहाँ कोई भी न हो। इससे शत्रु आक्रमण करने वाली सेना को न देख सकेगा किन्तु आक्रमण करने वाले शत्रु

को देख सकेंगे। उस अवसर पर शत्रु को घेर कर आक्रमणकारियों की उद्देश्यपूर्ति हो सकती है। तीसरा दल मैसरे या अपने स्थान पर पूर्ण रूपेण तैयार रहे। यदि उनके ऊपर आक्रमण किया जाये तो वे प्रतिकार कर सकें और आक्रमणकारियों को पराजित कर सकें। चौथा दल तफारीक[1] का सेना के सामने रहे। मैदानों तथा मार्गों की देख रेख रखें। एक दूसरे की सहायता के लिये शीघ्रातिशीघ्र पहुँचने के योग्य रहे। यदि कोई दिखाई दे तो उसका उत्तर दें। प्रतिआक्रमण करें और उसे पराजित कर दें। उचित तो यह है कि शिविर के चारों ओर जंजीर लगा दें अथवा खाई खोद दें।

अध्याय १६—किस प्रकार घात लगानी चाहिये

(१२० ब) युद्ध में सबसे बड़ा काम घात लगाना है क्योंकि युद्ध दो प्रकार का होता है, एक खुल्लम खुल्ला आमने सामने युद्ध करना और एक छिपकर, घात लगाकर। घात लगाने के लिये प्रसिद्ध तथा युद्ध में कुशलता रखने वाले सवार चुनने चाहिये। घात लगाने का स्थान लोगों से दूर होना चाहिये। यदि निकट में कोई नदी, नहर, जंगल आदि हो, तो अच्छा है। पशुओं को इस प्रकार रखें कि शत्रुओं को सूचना न मिल सके। जिस समय सवार घात लगायें तो किसी को ऊँचे स्थान अथवा वृक्ष पर भेज दें जिससे वह शत्रु के विषय में सूचना देता रहे।

(१२१ अ) समय की प्रतीक्षा करते रहें जिससे शत्रुओं पर अचानक टूट पड़ा जाये और युद्ध में सफलता प्राप्त की जाये। जब छिपने के स्थान से बाहर आयें तो सवारों को विभिन्न भागों में विभाजित कर दें जिससे उन लोगों की संख्या के विषय में किसी को कोई ज्ञान न हो सके और जब एक दल आक्रमण करे तो तीन दल चारों ओर से उन पर टूट पड़ें और उन्हें पराजित कर दें। यदि सेना के कई शिविर हों तो दो तीन स्थानों पर छिपना चाहिए जिससे पीछे से शत्रु पर आक्रमण किया जाए। छिप कर आक्रमण करने तथा रात में छापा मारने के लिये बसन्त ऋतु में सब से उत्कृष्ट समय प्रातःकाल होता है। उस समय पहरेदार सोते रहते हैं और चौकीदार (रक्षक टुकड़ी) टुकड़ी अपने स्थान को लौट जाती है। ग्रीष्म ऋतु में दोपहर के समय भोजन के उपरान्त जब लोग विश्राम करते हैं तो उस समय आक्रमण करना चाहिये। आक्रमणकारियों को संगठित रहना चाहिये। यदि सफलता प्राप्त न हो तो एक दूसरे को बुरा भला न कहना चाहिये क्योंकि इससे बुरी अन्य कोई आदत नहीं। यदि कोई छिप कर आक्रमण करे तो बड़ी वीरता से कार्य करना चाहिये। अपनी रक्षा करते रहना चाहिये और जागते हुये तथा सावधान रहना चाहिये। किसी कारण असावधान न रहना चाहिये।

अध्याय १७—युद्धस्थल का चुनाव

(१२३ ब, १२४ अ) जब कोई बादशाह अपने राज्य से आक्रमण करने के लिये निकले तो वह शत्रु के राज्य में दूर न जाये। पीछे की ओर कठिन भूमि, पर्वत तथा मरुभूमि एवं ऊजड़ स्थान हो। जिस स्थान पर शिविर लगें वहाँ चारा घास, भोजन सामग्री तथा जलाने की लकड़ी एकत्र की जाये जिससे मार्ग के कष्ट से आराम मिल सके। युद्धस्थल की समस्त भूमि में चट्टान न होनी चाहिये। इसमें घोड़ों को कष्ट होता है। ऐसा स्थान भी न हो जहाँ बहुत धूल हो क्योंकि इससे शत्रु दिखाई नहीं देता और न उसके विषय में कोई सूचना ही मिल पाती है। ऐसा स्थान भी न हो जहाँ अत्यधिक घास तथा कीचड़ हो परन्तु रेगिस्तान भी न हो। ऐसा स्थान हो जहाँ कंकरियाँ और रेत मिली हुई हो जिससे धूल न उड़े। आबादी भी बहुत ही निकट न हो।

१ सम्भवतया छोटी छोटी टुकड़ियों का भाग।

(१२४ ब) प्रातःकाल युद्ध न छेड़ना चाहिये क्योंकि दिन भर युद्ध नहीं किया जा सकता। यदि शत्रु की सेना अधिक होगी तो आधी सेना युद्ध करेगी और आधी सेना आराम करेगी। इससे शत्रु की अपेक्षा तुम्हारी सेना थक जायेगी। दिन के अन्तिम भाग में युद्ध करना चाहिये जब कि सब आराम कर चुके हों। इससे उधर के लोग भूखे प्यासे होंगे और इस कारण से सफलता प्राप्त करने में सुगमता होगी। किसी न किसी युक्ति, धैर्य तथा बहाने से युद्ध को दिन के अन्तिम समय तक टालते रहना चाहिये जिससे यदि युद्ध न हो सके और अँधेरा हो जाये तो शत्रु कोई हानि न पहुँचा सके। यदि हार हो रही हो तो भी रात्रि तो अपने अधिकार में ही होती है और उससे लाभ उठाना चाहिये। यदि प्रातःकाल से युद्ध आरम्भ हो जायेगा और दोपहर के निकट पराजय होने लगेगी तो भागना सम्भव न हो सकेगा, सभी मार डाले जायेंगे अथवा बन्दी बना लिये जायेंगे।

अध्याय १८—युद्ध की पंक्तियों का प्रबंध

(१२६ ब) जानना चाहिये कि सभी के अपने अपने नियम होते हैं जिनका वे पालन करते हैं, किन्तु वे सब प्रथायें कुफ्र तथा अज्ञानता की थीं। अब इस्लाम की प्रथाओं का पालन करना चाहिये। चाहे इसमें कुछ परिवर्तन करना पड़े किन्तु मूल को उसी प्रकार रहने देना चाहिये।

अध्याय १९—युद्ध की पंक्तियों की सुव्यवस्था तथा उनका क्रम

(१२९ अ) सर्व प्रथम प्यादों की पंक्तियाँ होनी चाहिये जिनके पास अस्त्र-शस्त्र हों और जो धनुर्धारी हों। दूसरी पंक्ति तलवार, ढाल और भाले वाले प्यादों की होनी चाहिये। तीसरी पंक्ति में ऐसे प्यादे हों जिनके पास तलवार, निषंग तथा लोहे की ढाल और बड़े-बड़े चाकू हों। चौथी पंक्ति में अधिकारियों को तलवार, ढाल और गदा लिये हुये प्यादों के साथ होना चाहिये। पंक्तियों के मध्य में पर्याप्त स्थान होना चाहिये जिससे सब कुछ दिखाई पड़े, सवार दौड़ सकें तथा योद्धा प्रत्येक स्थान से पहुँच सकें और युद्ध कर सकें। युद्ध करने वालों के चार दल होते हैं। उन वीर योद्धाओं को जो कि अपनी प्रसिद्धि चाहते हैं मैमने में रखना चाहिये। दूसरे, अधिकारी हैं। उन लोगों को युद्ध के समय साका[1] में रखना चाहिये। तीसरे धनुर्धारी हैं जिन्हें सहारे की आवश्यकता होती है और जो ढाल आगे रखते हैं, घुटनों के बल झुक कर बाण चलाते हैं। उन्हें मैसरे पर रखना चाहिये। चौथे सेना की सजावट है, उदाहरणार्थ झंडे वाले, बाजे वाले तथा गाने वाले आदि। कुछ ऐसे उत्साही वीर भी होने चाहियें जो सेना का उत्साह बढ़ाते रहें और भयभीत न हों।

(१२९ ब) सामान, खेमे, खजाना, सेना का बाजार तथा व्यवसायी लोगों को पीछे रखना चाहिये। उन्हें मध्य भाग तथा मैमने व मैसरे के निकट होना चाहिये। सब लोगों को अपने अपने उचित स्थान पर खड़ा होना चाहिये। हाजिबों तथा विशेष व्यक्तियों को बादशाह तथा सिपेहसालार के निकट होना चाहिये। मार्ग दर्शाने वालों को मध्य भाग के दाहिनी ओर होना चाहिये। धनुर्धारियों, हीलतगरों[2] निफ्त अन्दाज[3] को मध्य भाग के बाईं ओर होना चाहिये। मीरखदारों[4], कुदकों[5] तथा कमन्द फेंकने वालों और जिगरअन्दाजों[6] को

१ सेना का पिछला भाग।
२ यह शब्द स्पष्ट नहीं।
३ शीघ्र जलने वाली तरल पदार्थों को फेंकने वाले।
४ घोड़े की रक्षा करने वाले अधिकारी।
५ सम्भवतया ये भी घोड़े की रक्षा करने वाले अधिकारी होते थे।
६ यह शब्द स्पष्ट नहीं।

दाहिने हाथ की ग्रोर होना चाहिये। पशुग्रों, भेड बकरी गाय ग्रादि के गल्लों को बाहर रखना चाहिये। बोझ ढोने तथा सामानो का प्रबन्ध करने वाले भी वीर पुरुष हो ग्रौर उनके पास उत्तम ग्रस्त्र-शस्त्र हो। बड़े-बडे सिपेहसालार, सरहग, दबीर, बुद्धिमान, चिकित्सक, नदीम, ज्योतिषी, बादशाह तथा सेनापति के निकट रहे। सेवक तथा विशेष एव साधारण व्यक्ति दाहिनी ग्रोर वज़ीर के साथ रहे। दो योग्य तथा ग्रनुभवी ग्रमीर बादशाह के रक्षक तथा जानदार सेना के दाहिनी ग्रोर हो।

(१३० ग्र, ब) स्त्रियाँ, खज़ाना, शस्त्रागार सर्वदा मध्य भाग के निकट रहें ग्रौर शाही रसोई उनके साथ हो। यदि मैंसरे की ग्रोर सेना हो तो उसका भी प्रबन्ध इसी प्रकार करना चाहिये। मध्य भाग से सरहग, तथा सालार युद्ध के लिये व्यवस्थित पक्तियो का निरीक्षण करें। वे तलाया तथा सेना के चारो ग्रोर भी चक्कर लगायें। यदि सामने से भय हो तो मैसरे का ग्राधा भाग ग्रागे की पक्ति में भेज दिया जाये ग्रौर ग्राधा भाग पीछे की ग्रोर। सर्व प्रथम मैमने को युद्ध ग्रारम्भ करना चाहिये ग्रौर फिर ग्रन्य लोगो को। यदि मध्य भाग के पीछे से भय हो तो वही करना चाहिये जिसका ऊपर उल्लेख हुग्रा। यदि यह ज्ञात न हो कि किस ग्रोर से भय है तो चुप रहना चाहिये। तलाया को पता लगाने के लिये नियुक्त करना चाहिये।

युद्ध के दिन प्रत्येक सवार को चारा रोटी ग्रौर माम, भोजन सामग्री देना चाहिये। सवार को ग्रपने जीन लगाम तथा ग्रस्त्र-शस्त्र के विषय में सावधान रहना चाहिये। यदि बीच में कोई विघ्न पड जाय तो उसे ठीक करना चाहिये। किसी सवार को भी बिना सूये, सुई रस्सी ग्रादि के न होना चाहिये जिससे यदि कोई चीज खराब हो जाये तो वह शीघ्र ही उसे ठीक कर सके। यदि घोडे मे कोई खराबी ग्रा जाये तो सवार में उसे भी ठीक करने की योग्यता होनी चाहिये।

ग्रध्याय २०—युद्ध करना तथा योद्धाग्रों ग्रौर सरदारों का जागना

(१३१ ग्र, १३२ ग्र) युद्ध दो प्रकार से हो सकता है एक सवारों द्वारा ग्रौर दूसरा प्यादो द्वारा। सवारो के लिए उनका घोडा ग्रौर प्यादो के लिए खाई किले के समान होती है। युद्ध पाँच प्रकार के होते हैं। एक तो काफिरो से युद्ध। यह युद्ध बडा ही उत्कृष्ट होता है। यदि इसमें दूसरो की हत्या करें तो गाजी होते हैं, ग्रौर यदि स्वय मारे जाते हैं तो शहीद हो जाते हैं। दूसरा युद्ध ऐसी ग्रवस्था में होता है जब कि कोई मुसलमान किसी दूसरे मुसलमान से बढ जाने का प्रयत्न करता हो। ऐसी ग्रवस्था में जहाँ तक सम्भव हो युद्ध तथा रक्तपात न करना चाहिये ग्रौर परस्पर सन्धि कर लेनी चाहिये। तीसरा ख्वारजियो से युद्ध। चौथा उन लोगो से युद्ध जो सुल्तान को खराज देना बन्द कर देते हो। यह युद्ध उचित है। पाँचवाँ उन लोगो से जिन्होंने विजय प्राप्त कर ली हो तथा चोरो से युद्ध। यदि कोई किसी को मार कर धन सम्पत्ति ले जाना चाहता हो तो उससे युद्ध करना तथा उसकी हत्या करना उचित है।

(१३२ ब, १३३ ग्र) मुसलमानो तथा इस्लाम के लिये युद्ध करना नमाज़ ग्रौर रोज़े के समान ग्रनिवार्य है। युद्ध का एक ढग तो यह है कि तुर्कों की तरह दल बनाकर युद्ध किया जाय। ताजीकों के समान युद्ध मैमना, मैसरा, कल्ब, जनाह ग्रादि में विभाजित होकर, सासानियो के समान, जोकि ईरानी बादशाह थे, युद्ध इस प्रकार होता है कि मैमने की ग्रोर धनुर्धारी रहें ग्रौर मैसरे की ग्रोर भाले वाले, मध्य भाग में गदाधारी तथा तलवार ढाल से युद्ध करने वाले हों। मध्य भाग ऊँचाई पर हो जिसमे दोनों सेना वाले दिखाई दे सकें। दोनो जनाह पर विभाजित करने वाले मनुष्य प्रत्येक प्रकार के ग्रस्त्र शस्त्र लिये हो। सवारो का एक गरोह, जिसके पास समस्त ग्रस्त्र शस्त्र हो ग्रौर जो ग्रनुभवी भी हो तथा सग्राम में

प्रविष्ट होना एव बाहर निकलना जानते हो, इधर उधर प्रबन्ध करने के लिये रखना चाहिये और जो प्रत्येक स्थान से दिखाई पड सकें। इस बात का प्रयत्न करते रहना चाहिए कि मध्य भाग अपने स्थान पर टिका रहे और बादशाह तथा सेनानायक मध्य में रहें। ईरानियो की सेना के प्रबन्ध को चन्द्राकार कहा जा सकता है। रणक्षेत्र में नमाज के लिए भी स्थान होना चाहिए।

अध्याय २१—युद्ध का प्रारम्भ

(१३३ ब) सर्व प्रथम मैमने को युद्ध प्रारम्भ करना चाहिए फिर कल्ब को (मध्य भाग को), तत्पश्चात् मैसरे को। प्रत्येक (भाग) का सेनानायक अपने चिह्नों तथा अपने सैनिको के साथ अपने स्थान पर रहे जिससे बादशाह तथा मुख्य सेनानायक के पास से आज्ञायें प्राप्त हो सकें। यदि कोई सेना अत्यधिक हो तो ४००० सैनिक छाँट कर आक्रमण करने के लिए पृथक् कर लिए जायें जिससे वे पराजय के समय सहायता को पहुँच सकें।

(१३४ अ) यदि कोई रक्षा के लिए आये तो उसे रक्षा प्रदान कर दी जाये और सर्वदा उसकी देख भाल होती रहे। उसे सेना से मिलने जुलने न दिया जाये। उसके ऊपर रक्षक नियुक्त कर दिये जायें। उससे उसके चिह्न तथा अस्त्र शस्त्र पृथक् करा दिए जायें। बन्दियों के वध के विषय में जल्दी नही करनी चाहिए। यदि उनकी हत्या का आदेश हो गया हो तो उनके मुह बन्द करा दिए जायें, अर्थात् बोलने न दिया जाये, इस लिए कि जब वे निराश हो जाते हैं तो फिर ऐसी बातें करने लगते हैं जिससे उपद्रव का भय होता है।

अध्याय २२—युद्ध के लिये बाहर निकलना तथा नमाज पढ़ना

(१३८ ब) जब योद्धा मध्य भाग से बाहर निकल कर दाहिने भाग की ओर बढे और आक्रमण करे तो दोनों पंक्तियों के मध्य में पत्थर के समान चुपचाप खडा हो जाये जिससे लोगो को पता चल जाय कि वह बडा ही वीर है। यदि कोई उससे युद्ध करने के लिये आये तो सर्व प्रथम बाण चलाये और फिर यदि वह निकट आ जाये तो भाला। यदि उससे भी काम न चले तो तलवार। यदि गदा से काम लिया जा सके तो उत्तम है। अपने रिकाब में पैर जमाये रखें जिससे कि मृत्युकारी घाव लगाया जा सके।

(१३६ अ) जो कोई दाहिनी पंक्ति से युद्ध करने के लिये बाहर निकले तो उसे जनाह (बाजू) तथा मध्य भाग की ओर रुख करना चाहिये। जो कोई मध्य भाग से निकले वह मैसरे की ओर बढे। यदि कोई सेना में लौटे तो उसे अपने चिह्न स्पष्ट रखने चाहियें जिससे यह पता चल सके कि वह मित्रो में से है। जब तक कि किसी का घोडा बहुत ही अच्छा न हो वह मैसरे से बाहर न निकले। यदि कोई शत्रु के मैसरे से सामने निकल कर आये तो केवल बडे ही वीर, बुद्धिमान तथा उत्तम घोडे वाले को ही बाहर निकलना चाहिये। अपने मैसरे की रक्षा करते रहना चाहिये। झण्डे वालो को झण्डे की रक्षा के अतिरिक्त कोई अन्य कार्य न देना चाहिये। उनके साथ वीर तथा साहसी सैनिकों को रहना चाहिये जिससे उन्हें किसी प्रकार का भय न हो।

(१३६ ब) यदि कोई युद्ध से लौट रहा हो तो उसका पीछा न करना चाहिये अपितु उस मार्ग दे देना चाहिये जिसम वह अपने स्थान को लौट जाये। प्राय ऐसे अवसर बडे ही हानिकारक सिद्ध हुये हैं।

अध्याय २३—युद्ध के फरहँग[१] तथा लडाई से सम्बन्धित गूढ बातें

(१४० ब) प्रत्येक को अपने साथ कुछ न कुछ सिक्के (चाँदी) रखने चाहियें क्योकि यह नही कहा जा सकता कि किस समय क्या हो जाय।

१ शब्द कोष।

में मुसलमानो को विजय प्राप्त हो गई हो और उस धन सम्पत्ति पर पुन अधिकार जमा लिया गया हो तो बाँटने के पूर्व उसे पुन वापस लिया जा सकता है। यदि वह सम्पत्ति बाँटने के उपरान्त पहचानी जाये तो मूल्य देकर खरीदी जा सकती है। यदि कोई व्यापारी दारुलहर्ब में पहुँचे तो उससे कोई सामान न खरीदा जाये। यदि किसी मुसलमान का दास भाग कर दारुलहर्ब में चला जाय और वह पकड़ लिया जाय तो वह उसकी सम्पत्ति नही होता। यदि बादशाह के पास लूट का माल लाद कर ले जाने के लिये जानवर न हो तो उन्हे दारुल-इस्लाम में ले जाने के लिये सेना में बाँट दिया जाये।

(१५७ अ) लूट के माल से बाँटने के पूर्व किसी चीज को बेचने की आज्ञा नही है। यदि दारुलहर्ब में किसी की मृत्यु हो जाये तो उसका हिस्सा उसके उत्तराधिकारियो को दे दिया जाये। कोई चारा अथवा भोजन सामग्री लूट के माल में प्राप्त हो तो उसे दारुलहर्ब से बाहर लाने के पूर्व तथा बाँटने के पूर्व न तो स्वय खायें और न पशुग्रो को दें। बादशाह को चाहिये कि लूट का माल बाँटते समय पाँचवाँ भाग स्वय ले ले और शेष चार भाग लूट का माल लाने वालो में बाँट दे। दासो, स्त्रियो, बालको तथा जिम्मियो को लूट के माल में कोई हिस्सा नही मिलता। जो कोई मुर्दा भूमि (बन्जर भूमि) को जीवित करे (कृषि योग्य बनाये) तो वह उसकी ही हो जाती है। अबू यूसुफ ने कहा है कि 'खराजी भूमि के निकट की भूमि खराजी होती है और उश्री भूमि के निकट की भूमि उश्री होती है।" मुहम्मद साहब ने कहा है 'कि जो कोई बेकार भूमि को जिन्दा करे, वहाँ कुआ खोदे अथवा कोई चश्मा निकाले तो वह भूमि किसी के अधिकार में नही आती अपितु उस पर उश्र अनिवाय होता है। जिस भूमि के पास कोई नदी अथवा नहर हो उस जमीन पर खराज लगता है।"

(१५७ ब) जो कोई खराज देने वाला मुसलमान हो जाये तो उससे वही खराज लिया जाये जो उससे पूर्व लिया जाता था। यदि कोई मुसलमान किसी जिम्मी स खराज की भूमि खरीद ले तो उसे वही खराज अदा करना होता है जो जिम्मी से लिया जाता था। मुहम्मद साहब ने कहा है कि 'एक ही भूमि से उश्र तथा खराज दोनो ही नही लिये जा सकते। या तो उश्र अनिवार्य होता है या खराज।" जजिये दो प्रकार के होते हैं। एक यह है कि लोग सगठित होकर युद्ध तथा रक्तपात को त्याग दें और लोगो को शरण प्राप्त हो जाये। दूसरी किस्म यह है कि बादशाह काफिरो के किसी शहर पर अधिकार जमा ले और उनकी धन सम्पत्ति उन्ही के हवाले कर दे। ऐसी अवस्था मे धनी लोगो से एक वर्ष में ४८ दिरमनक चाँदी मध्यम श्रेणी वालो से २४ दिरमनक चाँदी और निम्न व्यवसायी लोगो से १२ दिरमनक चाँदी ली जाये। इससे अधिक उचित नही है। जजिया ईरानियो, यहूदियो, ईसाइयो, मूर्ति पूजको तथा अग्नि पूजको से लिया जाता है।

(१५८ अ) अरब के मूर्तिपूजको, मुरतदों, स्त्रियो, बालको, अन्धो तथा व्यवसाय न करने वालों तथा फकीरो से जजिया नही लिया जाता। जिस किसी से भी जजिया लिया जा रहा हो यदि वह इस्लाम स्वीकार करले तो फिर उससे जजिया नही लिया जा सकता। जिम्मियो को मुसलमानो के नगरो में घोडे की सवारी करने की आज्ञा न होनी चाहिये। उनके बैठने के ढग, वस्त्र तथा जीन मुसलमानो की प्रथा के विरुद्ध होने चाहियें। जो कोई इस्लाम छोड कर मुरतद हो जाये उसकी तीन दिन प्रतीक्षा करनी चाहिये। तत्पश्चात् उसे इस्लाम स्वीकार करने के लिये कहना चाहिये। यदि वह इस्लाम स्वीकार कर ले तो बडा अच्छा है अन्यथा उसकी हत्या कर दी जाये। यदि कोई स्त्री इस्लाम त्याग दे तो उसकी हत्या न की जाये अपितु बन्दी बना दिया जाये ताकि वह इस्लाम स्वीकार कर ले। यदि कोई मुरतद हो जाये तो उसकी धन सम्पत्ति उसके अधिकार में नही रह सकती। यदि वह पुन मुसलमान हो जाये तो

उसके अधिकार में आ जाती है। यदि कोई मुरतद मार डाला जाये अथवा मर जाये तो उसकी वह धन सम्पत्ति जो उसने उस समय प्राप्त की थी जबकि वह मुसलमान था, उसके मुसलमान उत्तराधिकारियो को दे दी जाये। जो कुछ उसने मुरतद होने के समय प्राप्त किया था, उसे बैतुलमाल में जमा कर दिया जाये। यदि कोई मुरतद किसी कुफ्र के स्थान पर चला जाये और काजी यह कह दे कि वह दारूलहर्ब में चला गया तो उसके दास अपितु दासों के माता पिता एव पुत्र भी स्वतत्र हो जाते हैं। यदि कोई मुरतद पुन दारूल-इस्लाम में आ जाये और इस्लाम स्वीकर कर ले तो अपना जो कुछ भी वह अपने उत्तराधिकारियो के पास पाये उसे पुन अपने अधिकार में कर ले। जो कोई दारूलहर्ब मे किसी बादशाह के पास उपहार भेजे अथवा जजिया अदा करे तो उसे मुसलमानों के लाभ के कार्यों में व्यय करना चाहिये। उससे पुल, भवन आदि बनवाने चाहियें।

(१५८ ब) यदि कोई गरोह विद्रोही हो जाये और मुसलमानो का मार्ग रोक दे तथा सुल्तान उन्हें अपने अधिकार में कर ले और वे उस समय तक किसी की हत्या न कर चुके हो अथवा धन सम्पत्ति पर अधिकार न जमाया हो तो उन्हे बन्दी बना लिया जाय जिससे वे तोबा कर सकें। यदि किसी मुसलमान अथवा जिम्मी का माल उन्होंने छीन लिया हो और वह धन अभी तक सुरक्षित हो तो उस धन को उसके स्वामियो में बाँट दिया जावे। लुटने वाले के हाथ पैर काट लिये जायें और यदि किसी ने किसी की हत्या करके धन लूट लिया हो तो उसकी हत्या कर दी जाये। जिसकी हत्या हो गई हो यदि उसके सम्बन्धी हत्यारे को क्षमा कर दें तो इस पर कोई ध्यान न दिया जाय और उसको मार डाला जाय। ऐसे व्यक्ति के लिये बादशाह को अधिकार होता है कि वह उसे चाहे तो मरवा डाले और चाहे तो सूली पर चढवा दे। हत्यारे के पेट में भाले से छेद कर देना चाहिये जिससे वह मर जाये। तीन दिन तक उसे लटकाये रखना चाहिये।

(१५९ अ) अध्याय २६—किले की विजय के लिये आक्रमण तथा उपाय

(१६३ ब) किले वालो का हृदय अपनी ओर करने का प्रयत्न करना चाहिये। किले के भीतर पत्र फिकवाये जायें और सन्देश भेजे जायें। उनमे बडे अच्छे ढग से बात चीत की जाय और जिस प्रकार हो सके प्रलोभन दिया जाय। विभिन्न प्रकार के समाचार फैलाये जायें, मन्जनीकें लगवाई जायें, खरक[1] काट कर दीवार के नीचे रख दिये जायें, मतर्स[2] तैयार करायें, दीवारो में छेद कर दें, खम्भे लगवायें और उनम आग लगादें जिसमे दीवार गिर पडे। किले में आग फेंक कर सब को जला देना चाहिये। यह प्रसिद्ध करते रहना चाहिये कि अमुक सेना कल आयेगी, अमुक सेना अमुक स्थान पर पहुच चुकी है। रात्रि में सेना के कुछ भाग बाहर चले जायें और प्रात काल झण्डा लिये हुये ढोल पीटते चले आयें। यह कहते रहें कि अमुक दिन युद्ध होगा। उन्हे किले के विषय में सूचना प्राप्त करते रहना चाहिये। किले वालो को चिल्ला-चिल्ला कर यह सुनाना चाहिये कि 'अपने ऊपर अत्याचार मत करो, जो कुछ भोज्य सामग्री, चारा तथा जल किले में है वह कुछ ही दिन में समाप्त हो जायेगा।'

(१६४ अ, ब) किले वालो में किसी न किसी प्रकार से फूट डलवानी चाहिए और उन्हे लोभ दिला कर अपनी ओर मिलाना चाहिये। किले पर विजय प्राप्त करने के लिए यह चीजें बहुत आवश्यक हैं सीढी, रस्सी की कमन्द और फन्दे, खरक, मतर्स, मन्जनीक,

१ खरक लकडी के तख्ते जिनमे किले पर आक्रमण करने में आसानी हो।
२ मतर्स खाई के पास की भीत, दीवार।

कष्ट न हो। यदि किसी से कोई अपराध हो जाये तो उसकी रोक टोक की जाये जिससे अन्य लोगो को सूचना मिलती रहे। यदि कोई उस स्थान से जो उसके लिये निश्चित हो दूरा हो बिना आज्ञा आगे अथवा पीछे हो जाये तो उसे दण्ड दिया जाये। यदि सेनापति किसी में कोई दोष पाये और उसकी रोक टोक न करे और उसे बन्दी-गृह में न भेजे तो बाद को सेनापति से पूछताछ करनी चाहिये और चेतावनी देनी चाहिये। युद्ध आरम्भ होने से पूर्व यदि कोई पहल करे तो उसे दड दिया जाये। निम्नांकित लोगो को दड देना चाहिये जो अपने आप को युद्ध के दिन बीमार डाल दें, बहाना करें और झूठ बोलें तथा अन्य लोगों से पृथक् उतरें, जो कोई तलाया के समय अथवा युद्ध को जाते समय या पहरे के समय सो जायें, जो कोई शत्रु को भागने का मार्ग दिखाये, जो अपनी ओर से कोई बात कहे अथवा झूठा सन्देशा भेजे; जो कोई शत्रु को अपनी सेना के विरुद्ध साहस दिलाये जो कोई शत्रु की सेना में बाण में पत्र बाँध कर फेंके, जो कोई भी शत्रु को अस्त्र शस्त्र भेजे, जो शत्रु को अपनी सेना के विषय में अथवा सख्या के विषय में सूचना दे, जो शत्रु पर अधिकार प्राप्त करके बादशाह अथवा सेनापति को सूचना देने से पूर्व छोड दे, जो कोई अपनी सेना की योजनाओं के विषय में शत्रु को सूचना दे, जो कोई शत्रु को कोई भोजन सामग्री भेजे, जो शत्रु को बन्दी बना कर छिपा दे, जो कोई अपने साथियो के साथ न रहे, जो कोई तलाया के समय अपने साथियो को अपरिचित मार्ग की ओर ले जाये, जो कोई भी अपने साथियों से उचित व्यवहार न करे, जो अपनी शक्ति के बाहर युद्ध करे, जो अपने वस्त्र को शत्रु के वस्त्र अथवा अपने चिह्नों को शत्रु के चिह्नों के समान बनाये।

अध्याय ३२—उस्तादों के बताये हुए लाभ

(१८० अ, ब) जानना चाहिए कि अनुभवी तथा योग्य उस्तादों ने जो कुछ अस्त्र शस्त्र तथा अन्य चीजों के विषय में जैसे गेंद खेलना, पत्थर उठाना, जोर करना, मल्लयुद्ध करना, मुक्के बाजी करना, गोफन से पत्थर फेंकना आदि निश्चय किया है उससे बडे लाभ हैं।

अध्याय ३३—युद्ध में मृत्यु से बचते रहने का प्रयत्न अधिकतर सम्भव नहीं।

(१८५ अ) समस्त बातों के लिए समय होता है और मृत्यु ईश्वर के अधिकार में है।

अध्याय ३४—बादशाह तथा सेनापति एवं प्रजा को क्या करते रहना चाहिये

(१८८ ब) बुद्धिमानो ने कहा है कि अपने भेदों की रक्षा करो, अपने बडो के आज्ञाकारी बने रहो ताकि तुम से छोटे तुम्हारे आज्ञाकारी बन रहें। जल्दबाजी मत करो। परामर्श करते रहना अच्छा है। सेना में धैर्य से कार्य लो जिससे पश्चाताप न हो। शत्रु चाहे छोटा हो किन्तु उसे बडा समझो। युद्ध में युक्ति से काम लेना युद्ध से उचित होता है। जहाँ तक हो सके युद्ध न करो और यथा-सम्भव स्वयं युद्ध मत करो। सेनापति की हानि अत्यधिक लोगो की हत्या से कहीं अधिक महत्वपूर्ण होती है। सेनापति तथा सेना का उदाहरण शरीर तथा सिर से दिया जा सकता है। यदि सिर सुरक्षित रहता है तो फिर कोई हानि नहीं होती। सेनापति तथा बादशाह को युद्ध के समय कोई चिंता न करनी चाहिए।

(१८६ अ, १९० ब) किसी सेना में दो अमीर तथा दो आदेश देने वाले न होने चाहिए, बादशाह तथा सेनापति को न्यायकारी होना चाहिए, जो कुछ ईश्वर ने प्रदान किया है उसके लिये सन्तुष्ट रहना चाहिए।

सद्रुद्दीन हसन निज़ामी

सद्रुद्दीन मुहम्मद बिन (पुत्र) हसन निज़ामी का जन्म नीशापूर में हुआ था। खुरासान में मुगलो के उत्पात के कारण उसे भी अपनी जन्म भूमि त्याग कर हिन्दुस्तान आना पडा। मार्ग में उसने बडी कठिनाइयो का सामना किया। देहली में पहुँचकर वह काजिये ममालिक शर्फुलमुल्क की सेवा में उपस्थित हुआ। कुछ समय उपरान्त उसके मित्रो ने उससे एक इतिहास लिखने की प्रार्थना की।

उसने ६०२ हि० (१२०५ ई०) में ताजुल मआसिर लिखना प्रारम्भ किया। साधारण-तया ताजुल मआसिर की जितनी भी हस्तलिखित प्रतियां वर्त्तमान हैं, उनमें ५८७ हि० (११९१ ई०) से लेकर ६१४ हि० (१२१७ ई०) तक का हाल वर्त्तमान है। इतना लिखने के उपरान्त हसन निज़ामी ने लिखा है कि, "यदि मैं जीवित रहा तो इसके आगे का हाल भी लिखूँगा," किन्तु यह हाल इस पुस्तक के अतिरिक्त जो इलियट ने नवाब जियाउद्दीन देहलवी से प्राप्त की थी, किसी अन्य पुस्तक में नही मिलता। नवाब जियाउद्दीन की पुस्तक में जो ७७९ हि० (१३७७ ७८ ई०) में नकल की गई थी, ६२६ हि० (१२२८-२९ ई०) तक का हाल मिलता है। इलियट ने इसी पुस्तक में ६२६ हि० तक का हाल अपने अङ्गरेज़ी अनुवाद में दिया है।

ताजुल मआसिर में लेखक ने बडी अलकारिक भाषा का प्रयोग किया है। साधारण ऐतिहासिक घटनाओ को ऐसी कठिन भाषा में लिखा है और बीच बीच में नाना प्रकार की इतनी बातें लिख दी हैं कि उसके इतिहास का समझना सरल नही। ऐसा ज्ञात होता है कि हसन निज़ामी अपने आप को अलकारिक भाषा लिखने में निपुण सिद्ध करना चाहता था। इस दोष के होते हुये भी उसके इतिहास का महत्त्व कम नही। उसने जितनी भी घटनायें लिखी हैं, वे उसके सामने घटी थी। उसके इतिहास द्वारा पता चलता है कि उस समय विद्वान् किस प्रकार की भाषा को महत्त्व देते थे। समारोहो तथा भिन्न-भिन्न वस्तुओ के उल्लेख में यद्यपि अलकारिक भाषा का प्रयोग किया गया है, किन्तु इस पर भी हमें उसके इतिहास द्वारा उस समय की सस्कृति की झाकी प्राप्त हो जाती है।

ताजुल मआसिर, प्रोफेसर मुहम्मद हबीब, अलीगढ विश्वविद्यालय, ने हैदराबाद के आसफिया पुस्तकालय से नक़ल कराई थी। इसमें भी वह भाग नही है जिसका अँगरेज़ी अनुवाद इलियट ने अपनी पुस्तक में दिया है। इस कारण वह भाग इलियट के इतिहास से लिया गया। शेष भाग प्रोफेसर मुहम्मद हबीब की पुस्तक से लिया गया है।

ताजुल मआसिर

कुतुबुद्दीन ऐबक का सिंहासनारोहण

भिन्न भिन्न प्रदेशों की प्रजा को शान्त करने के लिये चारों ओर शुभ आदेश भेजे गये और दरबार के अमीर तथा सहायक उपस्थित हुये और उन्होंने अपनी अधीनता-स्वीकृति अर्पण की। गजनी का राज्य ताजुद्दीन यलदुज को प्राप्त हुआ और हिन्दुस्तान का राज्य परशोर से समुद्र तट तक और दूसरी दिशा में सिविस्तान से चीन पर्वत की सीमा तक कुतुबुद्दीन ऐबक के अधीन हो गया। खुत्बा तथा सिक्का, दिरम तथा दीनार दोनों ही उसके नाम से सुशोभित हुये। विद्रोह और विरोध का अन्त हो गया। सभी उसके आज्ञाकारी बन गये। लाहौर, जहाँ बुद्धिमान तथा विद्वान् लोग एवं जाहिद और धर्मनिष्ठ लोग एकत्र हो गये थे, राजधानी बना। शरा की आज्ञाओं तथा हनफी धर्म को बड़ी उन्नति प्राप्त हुई।

सुल्तान की मृत्यु चौगान खेलते समय घोड़े से गिर कर हो गई और वह लाहौर में दफन हुआ।

शम्सुद्दीन का राज्य

६०७ हि० (१२१० ई०) में हिन्दुस्तान के राज सिंहासन को शम्सुद्दीन वद्दुनियाँ इल्तुतमिश द्वारा सम्मान प्राप्त हुआ। सरजानदार तुर्की ने, जोकि षड्यन्त्रकारियों का नेता था और जो खून के प्यासे तुर्कों द्वारा मुसलमानों का रक्त बहाने के लिये तैयार हो गया था, खुल्लमखुल्ला विद्रोह कर दिया। यद्यपि सुल्तान से विद्रोह के दमन के लिये प्रार्थना की गई किन्तु उसने कुछ दिन इस कार्य में हाथ न डाला। अन्त में वह इन लोगों से युद्ध करने के लिये एक बहुत बड़ी सेना लेकर निकला। इज्जुद्दीन बख्तियार, नासिरुद्दीन मर्दानशाह, हिज़ब्रुद्दीन अहमद सूर, इफ्तिखारुद्दीन, मुहम्मद उमर जैसे वीर सरदार उसके सहायक थे। यह सेना जो अग्नि की भाँति आक्रमण करने के लिये तथा वायु के समान तीव्रता से बढ़ने के लिये निकली थी, एक लोहे की पहाड़ी के समान जूद उद्यान के निकट युद्ध के लिये तैयार हो गई। अकसकर किस्ता और ताजुद्दीन, फर्रुखशाह युद्ध में मारे गये। सरजानदार तुर्की यमुना नदी में कूद पड़ा और लोमड़ी के समान सिंह के भय से भाग गया। उसके कुछ साथी मारे गये और कुछ छिन्न-भिन्न हो गये।

जालौर पर अधिकार

कुछ समय उपरान्त सुल्तान को सूचना मिली कि जालौर के किले के निवासी युद्ध की तैयारियाँ कर रहे हैं और दो एक बार बड़े अनुचित कार्य कर चुके हैं। शम्सुद्दीन ने एक बहुत बड़ी सेना एकत्र की। राज्य के कुछ स्तम्भों जैसे रुक्नुद्दीन हमजा, इज्जुद्दीन, बख्तियार नासिरुद्दीन मर्दानशाह, नासिरुद्दीन अली और बजरुद्दीन सोंकरतिगीन तथा अन्य वीर और योग्य धनुर्धर युद्ध के लिये चल पड़े। भोजन सामग्री तथा जल की कमी के कारण रेगिस्तान की यात्रा सरल न थी। उदीशाह ने जालौर के किले के द्वार बन्द कर दिये। जब शम्सुद्दीन ने उस स्थान को घेर लिया तो उदीशाह ने शाही सेना के कुछ सरदारों द्वारा क्षमा-याचना का प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया। जिस समय उससे किले पर से अपना अधिकार हटा लेने के लिये कहा गया उसी समय किले के दो तीन गरगज[1] गिरा दिये गये। उसने इसके

१ एक प्रकार का मचान जिसके द्वारा किले पर आक्रमण करने तथा प्रतिकार में सुविधा होती थी।

उपरान्त तुरन्त उपस्थित होकर सुल्तान के चरणो पर अपना सिर रख दिया। सुल्तान ने उसे क्षमा कर दिया और उसका किला लौटा दिया। राय ने सौ ऊँट तथा बीस घोडे सुल्तान की सेवा में उपस्थित किये। सुल्तान इसके उपरान्त देहली लौट गया। उसके पहुचने पर मन्दिरो का, जोकि अपना सिर उठाये हुये थे, नाम भी शेष न रहा और कुफ्र के अँधेरे से इस्लाम का प्रकाश चमक उठा।

गज़नी की सेना की पराजय, ताजुद्दीन यलदुज़ का पकड़ा जाना

ग्रीष्म ऋतु के उपरान्त सुल्तान काफिरो पर आक्रमण तथा हिन्दुस्तान के कुछ स्थानो पर अधिकार जमाने का आयोजन कर रहा था, किन्तु इसी बीच में सुल्तान को दूतों द्वारा सूचना मिली कि ताजुद्दीन ने अपने मस्तिष्क में विरोध की भावनायें पैदा करली हैं। शम्सुद्दीन ने उसकी आकाक्षाओ का अन्त करना निश्चय कर लिया। वह एक बहुत बडी सेना लेकर आगे बढा और सोमवार ३ शव्वाल ६१२ हि० (२५ जनवरी, १२१६ ई०) को समन्द नामक स्थान पर पहुँच गया। मलिक ताजुद्दीन की मुकद्दमे की सेना ने उससे युद्ध किया। युद्ध में शत्रु की सेना ने इस्लामी सेना के बायें बाजू पर आक्रमण करके हिन्द तथा सिन्ध पर अधिकार जमाने का प्रयत्न किया। ताजुद्दीन एक बाण द्वारा घायल हुआ और सुल्तान शम्सुद्दीन के सम्मुख पेश किया गया।

नासिरुद्दीन कुबाचा का भागना और लाहौर की विजय

कुछ समय उपरान्त मुईदुलमुल्क मुहम्मद जुनैदी, वज़ीर नियुक्त हुआ। सुल्तान के सम्मुख यह निवेदन किया गया कि मलिक नासिरुद्दीन ने अपने वचनो का पालन नही किया और उसने उचित रूप से कर अदा नही किया तथा उसने उन उत्तम परामर्शों का जो उसे दिये गये थे, उचित उपयोग नही किया। सुल्तान इस कारण एक शुभ नक्षत्र में जमादी उल-आखिर के प्रारम्भ में देहली से एक बहुत बडी सेना लेकर लाहौर की ओर रवाना हुआ। जब शत्रुओ को यह सूचना प्राप्त हुई तो वे उस मछली के समान व्याकुल हो गये जिसे भूमि पर फेंक दिया गया हो, और जल-पक्षियो की भाँति व्याह नदी के तट पर शरण के लिये पहुचे। उनकी सेना चीटियों और टिड्डियो से भी अधिक थी। १४ शव्वाल को विजयी पताकायें युद्ध के लिये पक्तियाँ जमा कर डट गई। जब नासिरुद्दीन ने यह देखा कि विजयी सेना बढते हुये समुद्र की भाँति है तो वह लाहौर की ओर भाग गया। शाही सेना ने उसका पीछा किया। उसकी पताकायें तथा समस्त साज व सामान इस्लामी सेना के हाथ आगये। वह उच्च की ओर भागा। शम्सुद्दीन लाहौर में पहुँच गया। यह नगर जोकि इस्लाम का केन्द्र था, शासको के कई बार बदलने के कारण नष्ट-भ्रष्ट हो गया था। अब उसे पुन सुव्यवस्थित किया गया। युद्ध में पकडे गये बन्दियो को क्षमा कर दिया गया। शम्सुद्दीन, विजय की सूचना भिन्न भिन्न दिशाओ में प्रेषित करने के उपरान्त वापस हो गया।

शाहज़ादा नासिरुद्दीन की लाहौर मे नियुक्ति

६१४ हि० (१२१७ ई०) के आरम्भ में सुल्तान ने लाहौर का राज्य शाहज़ादा नासिरुद्दीन महमूद को प्रदान कर दिया और उसे राज्य व्यवस्था सम्बन्धी सविस्तार आदेश दिये।

भक्खर पर अधिकार

इस भाग में लेखक ने सर्व प्रथम ईश्वर की वन्दना तथा बादशाह की प्रशंसा की है और लिखा है कि सुल्तान पर ईश्वर की असीम कृपा का सबसे बडा प्रमाण यह है कि

ग्वालियर, रणथम्भौर, मदावर, कन्नौज, बिहार तथा बारह का राज्य उसके अधीन हो गया और शक्तिशाली राजे उसके आज्ञाकारी बन गये। उच्च तथा मुल्तान के किले जोकि सिकन्दर की दीवार से भी अधिक दृढ थे इस प्रकार उसके अधीन हो गये कि ससार वाले स्तब्ध हो गये।

सुल्तान को यह सूचना मिली कि मलिक नासिरुद्दीन कुबाचा जोकि बडा ही अभिमानी था और जो मनुष्य के जीवन का कोई मूल्य न समझता था, भक्खर में गढ़बन्दी करने लगा है। उस किले पर अभी तक किसी का भी अधिकार स्थापित न हो सका था। यह समाचार मिलते ही शम्सुद्दीन ने अपने वज़ीर ख्वाजये जहाँ निज़ामुलमुल्क मुहम्मद जुनैदी को एक बहुत बडी सेना देकर ग्रीष्म ऋतु में भक्खर की ओर भेजा। सेना का कुछ भाग जगलों के बीच से स्थल मार्ग से और कुछ भाग जल मार्ग से रवाना हुआ। जब किला घेर लिया गया तो नासिरुद्दीन बडा व्याकुल हुआ। उसने अपने पुत्र अलाउद्दीन मुहम्मद को शम्सुद्दीन के पास १०० लाख देहलीवाल तथा कपडे के हज़ारों थान भेजे। सुल्तान उससे बडी नम्रतापूर्वक मिला। किन्तु उसे लौटने की आज्ञा प्रदान न की। इससे नासिरुद्दीन बडा भयभीत हुआ और वह शोक के कारण बीमार पड गया। नासिरुद्दीन की थोडे दिन में शोक के कारण मृत्यु हो गई और उसके जीवन की नौका मृत्यु के भँवर में डूब गई। उसकी मृत्यु के कारण ५० लाख से अधिक देहलीवाल, नाना प्रकार के बहुमूल्य सामान, जवाहिरात, मोती तथा वस्त्र सुल्तान शम्सुद्दीन के राज-कोष में पहुच गये। १२ प्रसिद्ध किले जिन पर इससे पूर्व अधिकार न जमाया जा सका था, प्राप्त हो गये। सिविस्तान तथा लक्की से लेकर समुद्र तट तक के स्थान सुल्तान के अधिकार में आ गये और उसके नाम का सिक्का और खुत्बा हिन्दुस्तान तथा कुसदर और मकरान प्रदेशो में चलने लगा। वह १४ रबी-उल-अव्वल ६२४ हि० (१४ मार्च १२२७ ई०) को देहली वापस हुआ।

अब्बासी खलीफ़ा द्वारा आज्ञा-पत्र तथा खिलअत प्राप्त होना

कुछ समय उपरान्त इमाममुस्तनसिर बिल्लाह ने देहली के सुल्तान के पास एक खिलअत तथा एक आज्ञा-पत्र भेजा जिसके द्वारा उसे हिन्दुस्तान का राज्य तथा सुल्ताने आजम की उपाधि प्रदान की गई। उसने आज्ञा-पत्र आदरपूर्वक प्राप्त किया और २३ रबी-उल-अव्वल ६२६ हि० (१९ फरवरी, १२२९ ई०) को दरबारे आम किया, जिसमें बादशाहो, शाहज़ादों, मलिको तथा अन्य लोगों के सम्मुख फरमान पढा गया। इस फरमान में यह लिखा था कि जो जल तथा स्थल के प्रदेश सुल्तान ने जीते थे, वे उसे स्थायी रूप से प्रदान किये जाते हैं। दूत तथा अमीरो, मलिको एव गण्यमान्य व्यक्तियों को खिलअतें प्रदान की गईं और विशेष समारोह का आयोजन हुआ।

अमीर खुसरो[1]

अमीर खुसरो का जन्म ६५१ हि० (१२५३ ई०) में पटियाली नामक स्थान में, जो उत्तर प्रदेश के एटा जिले में स्थित है, हुआ। उसका पिता सैफ़ शम्सी अथवा अमीर सैफ़ुद्दीन महमूद, सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश और उसके उत्तराधिकारियों के समय में उच्च पदों पर नियुक्त रहा। उसकी माता बल्बन के राज्य के एक उच्च पदाधिकारी एमादुलमुल्क की पुत्री थी। वह तुर्क वन्श से था। उसे कविता से विशेष रुचि थी। वह अपने विषय में लिखता है कि, "मेरा पिता मुझे मक्तब (पाठशाले) में पढ़ने के लिये भेजा करता था। मेरे गुरू सादुद्दीन मुहम्मद मुझे सुलेख सिखाने का विशेष प्रयत्न करते किन्तु मेरा जी कविता के अतिरिक्त अन्य वस्तु में न लगता था।"[2] उसने आठ वर्ष की अवस्था ही से कविता करनी आरम्भ कर दी थी। बारह वर्ष की अवस्था में वह बड़ी अच्छी कविता करने लगा था। उसने फारसी के सभी कवियों की रचनाओं का विशेष अध्ययन किया और प्रत्येक कवि की शैली का अनुसरण करना आरम्भ कर दिया। उसने फारसी, तुर्की और अरबी के अतिरिक्त हिन्दी का भी अध्ययन किया था। यह कहना बड़ा कठिन है कि उसे भिन्न भिन्न भाषाओं तथा उनके साहित्य के अतिरिक्त विज्ञान या दर्शन शास्त्र से भी रुचि थी अथवा नहीं।

बल्बन के राज्य-काल में अमीर खुसरो, अलाउद्दीन किशली खाँ के दरबार में नौकर हो गया। किशली खाँ बहुत बड़ा दानी तथा बल्बन का भतीजा और बार्बक था। इसके पश्चात् उसने बल्बन के लघु पुत्र नासिरुद्दीन बुग़रा खाँ की नौकरी कर ली। वह उस समय सामाने का मुक्ता था। वह बुग़रा खाँ के साथ लखनौती भी गया किन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि वह बल्बन के साथ लखनौती से लौट आया और सुल्तान बल्बन के ज्येष्ठ पुत्र नुसरतुद्दीन सुल्तान मुहम्मद का नदीम (मुसाहिब) हो गया। अमीर खुसरो शाहज़ादा मुहम्मद के साथ ५ वर्ष तक मुल्तान में रहा। जब ६८३ हि० (१२८४-८५ ई०) में मुहम्मद मारा गया तो अमीर खुसरो भी अन्य सैनिकों के साथ बन्दी बना लिया गया। मुहम्मद का दरबार साहित्य प्रमियों से भरा था। अमीर हसन सिजज़ी भी उस समय सुल्तान मुहम्मद का नदीम (मुसाहिब) था। शाहज़ादा मुहम्मद के प्रोत्साहन से अमीर खुसरो की कवितायें उन्नति के शिखर पर पहुँच गईं। अमीर खुसरो को मंगोलों की क़ैद में बड़ा कष्ट उठाना पड़ा किन्तु वह शीघ्र ही किसी प्रकार उनके हाथ से छूट कर मुल्तान पहुँचा। मुल्तान में अभी तक शोक मनाया जा रहा था। मुल्तान से अमीर खुसरो देहली पहुँचा, सुल्तान बल्बन के दरबार में उपस्थित हुआ, और वह मरसिया[3] जो उसने महमूद की मृत्यु के विषय में लिखा था सुल्तान के दरबार में पढ़ा। समस्त दरबार में कोलाहल मच गया।

मुइज़्ज़ुद्दीन कैकुबाद के राज्य में अमीर खुसरो मलिक अमीर अली सरजानदार के यहाँ नौकर हो गया। मलिक अमीर अली हातिम खाँ के नाम से प्रसिद्ध था। अमीर खुसरो को

१ अमीर खुसरो पर डाक्टर वहीद मिर्ज़ा की पुस्तक "अमीर खुसरो-उनकी जीवनी तथा रचनायें" (कलकत्ता १९३५ ई०) बड़ी ही उत्तम पुस्तक है। यह अँगरेज़ी भाषा में है।

२ दीबाचा, तुह़फ़तुस्सिग़र, वहीद मिर्ज़ा। पृ० २०

३ वह कविता जिसमें किसी की मृत्यु का शोक उसके गुणों का उल्लेख करके लिखा गया हो।

कैकुबाद ने अपने दरबार में भी बुलवाया। किन्तु वह हातिम खाँ को छोड़ कर न गया। जिस समय कैकुबाद ने अपने पिता बुगरा खाँ से युद्ध करने के लिये अवध की ओर प्रस्थान किया, तो हातिम खाँ भी सुल्तान के साथ था। इस प्रकार अमीर खुसरो भी बाप बेटे की भेंट के समय उपस्थित था। अवध से लौटते समय कैकुबाद ने हातिम खाँ को अवध का मुक्ता बना दिया। खुसरो भी हातिम खाँ के दरबार में उपस्थित रहने लगा, किन्तु अपनी माता की बीमारी के कारण वह ६८८ हि० (१२८६ ई०) के प्रारम्भ में देहली पहुँचा। कैकुबाद ने उससे अपने पिता की भेंट का हाल कविता में लिखने के लिये कहा। यह कविता उसने रमजान ६८८ हि० (सितम्बर-अक्तूबर १२८६ ई०) में पूरी की।

जलालुद्दीन फीरोजशाह खलजी (१२६०–६५ ई०) के समय में खुसरो, सुल्तान का मुसहफदार[1] नियुक्त हो गया। उसका वेतन १२०० तन्के निश्चित हुआ। उसकी पदवी सुल्तानी महफिलो में मलेकुलनुदमा (नदीमो का बादशाह) की थी। वह रोज सुल्तान की महफिल में नई नई गजलें लिखकर ले जाता था और उसे इन रचनाओं पर बड़ा प्रोत्साहन प्रदान किया जाता था।

अलाउद्दीन के राज्य में (१२६५–१३१५ ई०) वह उसके दरबार से सम्बन्धित रहा। अलाउद्दीन के राज्यकाल के विषय में कई कवितायें लिखी। उसका वेतन १००० तन्के वार्षिक था।

कुतुबुद्दीन मुबारकशाह (१३१६-१३२० ई०) के दरबार में भी उसे बड़ा सम्मान प्राप्त था। उसके राज्य-काल के विषय में भी उसने नुह सिपेहर नामक कविता लिखी है। गयासुद्दीन तुग़लक (१३२०-१३२५ ई०) के राज्य-काल में उसने 'तुग़लकनामे' नामक कविता की रचना की। वह ७२४ हि० (१३२४ ई०) में सुल्तान के साथ बंगाल की ओर गया, किन्तु इसी बीच में अमीर खुसरो के गुरु निज़ामुद्दीन औलिया की मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के शोक में खुसरो भी अधिक दिन जीवित न रहा और ७२५ हि० १३२५ ई० में परलोक-गामी हो गया और उसे निज़ामुद्दीन औलिया के समीप दफन किया गया।

अमीर खुसरो की रचनायें

अमीर खुसरो ने अनेक पुस्तकों की रचनायें गद्य एवं पद्य में की थी। तारीखे फरिश्ता में अमीर खुसरो की लिखी हुई पुस्तकों की संख्या ६२ बताई गई है।[2] इससे पता चलता है कि अमीर खुसरो की बहुत सी रचनायें नष्ट हो गई, किन्तु अब भी बहुत बड़ी संख्या में उसकी पुस्तकें विद्यमान हैं। खुसरो ने दो प्रकार के ग्रन्थों की रचना की है। प्रथम साहित्यिक, द्वितीय ऐतिहासिक।

साहित्यिक

१—पाँच दीवान

(अ) तोहफतुस्सिगार—इसमें अमीर खुसरो की वह कवितायें हैं, जिनकी रचना उसने १५ वर्ष की अवस्था से लेकर १६ वर्ष की अवस्था तक की।

(ब) वस्तुल हयात—इसमें १६ वर्ष की आयु से लेकर ३४ वर्ष तक की आयु की

---

१ मुसहफदार अथवा मुसहफ बरदार अथवा किताबदार सुल्तान के पुस्तकालय के अध्यक्ष होते थे।

२ जामी (जन्म १४१४ ई०, मृत्यु १४६२ ई०) ने नफहातुलउन्सा में लिखा है कि खुसरो की लिखी हुई पुस्तकों की संख्या ६६ थी। बरनी ने लिखा है कि खुसरो ने गद्य और पद्य में एक पूरा पुस्तकालय लिख डाला था।

कवितायें हैं। इसमें अधिकतर बल्बन के ज्येष्ठ पुत्र सुल्तान मुहम्मद तथा बल्बन के अन्य अमीरों के विषय में कवितायें हैं।

(स) ग़ुर्रतुल कमाल—इसमें वह कवितायें हैं जिनकी रचना उसने ३४ वर्ष की आयु से लेकर ६९३ हि० (१२९३-९४ ई०) के बीच में की। इसी में सुल्तान जलालुद्दीन की विजय सम्बन्धी कविता मिफ्ताहुलफुतूह भी है।

(द) बक़ीअए नक़ीया—इसकी कविताओं की रचना अमीर खुसरो ने ७१५ हि० (१३१५-१६ ई०) तक की।

(य) निहायतुल कमाल—इसमें अमीर खुसरो के अन्तिम जीवन की कवितायें हैं।

२—खमसा—इसकी रचना अमीर खुसरो ने निज़ामी[1] के खमसे के अनुसरण में की है। इसमें निम्नांकित पांच ग्रन्थ हैं :

(अ) मतलउल अनवार—इसकी रचना खुसरो ने ३९८ हि० (१२९८, १२९९ ई०) में दो सप्ताह में की। इसमें कुल बीस अध्याय हैं जिनमें भगवान् की भक्ति तथा उच्च चरित्र सम्बन्धी अनेक बातों का उल्लेख मिलता है।

(ब) शीरीं व खुसरो—इस कविता की रचना अमीर खुसरो ने रजब ६९८ हि० (अप्रैल १२९९ ई०) में की। इसमें खुसरो व शीरीं के क़िस्से का वर्णन किया गया है।

(स) मजनूं व लैला—इसकी रचना अमीर खुसरो ने ६९८ हि० (१२९९-१३०० ई०) में की। इसमें लैला मजनूं के क़िस्से का वर्णन है।

(द) आईनये सिकन्दरी—इसकी रचना अमीर खुसरो ने ६९९ हि० (१२९९-१३०० ई०) में की। इसमें सिकन्दर के क़िस्से का वर्णन है।

(य) हश्त बहिश्त—इसकी रचना अमीर खुसरो ने ७०१ हि० (१३०१-१३०२ ई०) में की। इसमें बहराम तथा दिलराम की प्रेम कथा का उल्लेख किया गया है।

३—रसायले एजाज़ अथवा एजाज़े खुसरवी—इसमें अमीर खुसरो ने अपनी गद्य की रचनायें संकलित की हैं। इसे अमीर खुसरो ने बड़ी अलंकारी भाषा में लिखा है। पूरा ग्रन्थ पांच पुस्तकों में विभाजित है। पहली चार पुस्तकों की रचना अमीर खुसरो ने ६८२ हि० (१२८३-८४ ई०) में समाप्त की। पांचवीं पुस्तक की रचना ७१९ हि० (१३१९-१३२० ई०) में की।

४—अफ़ज़लुलफ़वायद[2]—इसमें अमीर खुसरो ने अपने गुरु निज़ामुद्दीन औलिया के कथन संकलित किये हैं। यह गद्य में लिखा है। इसकी भाषा बड़ी ही सरल है। कहा जाता कि इसका एक भाग खुसरो ने अपने गुरु को ७१९ हि० (१३१९-१३२० ई०) में दिखा लिया था। दूसरे भाग को कदाचित खुसरो पूरा न कर सका।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त कुछ अन्य पुस्तकें भी अमीर खुसरो द्वारा लिखी हुई बताई जाती हैं, जैसे क़िस्सये चहार दरवेश (चार फ़क़ीरों की कहानियाँ), खालिक बारी जो फ़ारसी और हिन्दी का कोष है। यह भी कविता में है।

अमीर खुसरो की हिन्दी—अमीर खुसरो को अपने भारतीय होने पर बड़ा गर्व था। वह अपने आप को हिन्दुस्तानी तुर्क कहता था। उसने लिखा है कि वह हिन्दवी अरबी से कहीं

१ निज़ामी का जन्म ५३५ हि० (११४०-४१ ई०) तथा मृत्यु ५९९ हि० (१२०२-१२०३ ई०) में हुई। निज़ामी अपने समय के बहुत बड़े कवि समझे जाते थे। इनकी रचना खमसे का अनुसरण अनेक फ़ारसी कवियों ने किया है।

२ इस पुस्तक के विषय में सन्देह है कि यह खुसरो ही की लिखी है।

अच्छी बोल सकता है। वह अपने आप को तूतिये हिन्द (भारतीय तोता) कहता था। उसने हिन्दी शब्दों का अपनी कविताओं में अनेक स्थानों पर प्रयोग किया है।[1] उसने अपने तीसरे दीवान की भूमिका में यह लिखा है कि उसकी हिन्दी कवितायें भी बड़ी प्रसिद्ध हैं।

ऐतिहासिक रचनायें (कवितायें)

केरानुस्सादैन—इसकी रचना अमीर खुसरो ने रमजान ६८८ हि० (सितम्बर-अक्तूबर, १२८९ ई०) छ मास के परिश्रम के पश्चात् ३६ वर्ष की अवस्था में की। इसमें बुगरा खाँ तथा कैकुबाद की भेंट का हाल लिखा गया है। ६९२ हि०(१२९२-९३ ई०) में खुसरो ने इसमें कुछ और छन्द भूमिका-स्वरूप जोड़ कर उसे पूरा किया। यह उसकी पहली कविता थी जिसमें उसने एक ऐतिहासिक घटना का इतने विस्तार से उल्लेख किया है। एक साधारण घटना पर ३९४४ छन्द की कविता लिख दी। इस कविता द्वारा उस समय की सामाजिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक स्थिति पर विशेष प्रकाश पड़ता है। देहली नगर की दशा, मुख्य भवन, किलोखड़ी के राज भवन का निर्माण, दरबार का वैभव एवं ऐश्वर्य, अमीरों तथा उच्च पदाधिकारियों के पारस्परिक व्यवहार का उल्लेख बड़े विस्तार से किया गया है। सवारी के वैभव तथा ऐश्वर्य, मदिरा पान की गोष्ठियों, संगीत एवं नृत्य का विशेष वर्णन केरानुस्सादैन में वर्त्तमान है। बुगरा खाँ तथा कैकुबाद के चरित्र पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। इस प्रकार अमीर खुसरो ने एक साधारण घटना द्वारा एक उच्च कोटि की रचना के साथ-साथ उस समय की अनेक ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक बातों को स्पष्ट कर दिया है।

मिफ्ताहुलफुतूह[2]—इसकी रचना अमीर खुसरो ने २० जमादी उस्सानी ६९० हि० (२० जून, १२९१ ई०) में की। इसमें सुल्तान जलालुद्दीन फीरोज खलजी की उन विजयों का उल्लेख है जो उसे सिंहासनारोहण के प्रथम वर्ष में प्राप्त हुई। यह अधिक लम्बी

१ उसने एक रुबाई में लिखा है—

'रफ्तम बतमाशाये किनारे जूए दीदम ब लबे आब जने हिन्दूए।'

मैं नहर के किनारे सैर करने गया, वहाँ मैंने पानी के किनारे एक हिन्दू युवती देखी।

'गुफ्तम सनमा बहाए जुल्फत चे बुवद फरियाद बरआवुर्द कि "दुर दुर मूए"'

मैं ने उस युवती से कहा कि तेरे केश कितने सुन्दर हैं। उसने चिल्ला कर कहा कि 'दुर दुर मुए'

खुसरो ने केरानुस्सादैन में नाव की प्रशंसा में इस प्रकार लिखा है।

'माहे नव के असले वै अज "साल" ख़स्त
गश्त यके माह ब देह साल रास्त'
नया चाँद जो कि साल (लकड़ी) से तैयार हुआ।
एक चाँद दस वर्ष में तैयार हुआ।

ईरान के फारसी के प्रसिद्ध कवि मौलाना जामी (मृत्यु १४९२ ई०) ने जब यह छन्द पढ़ा तो उसे पहली पंक्ति में "साल" का अर्थ समझ में न आया और उसने इसकी टीका एक छोटी सी पुस्तक में की और अन्त में यह लिखा कि यह कोई ऐसी वस्तु है जो हिन्दुस्तान की भाषा में लिखी है। नफ़ायसुल मआसिर का लेखक अलाउद्दौला कज़वीनी लिखता है कि जब देहली का प्रसिद्ध सूफी शेख जमाली खुरासान पहुँचा और उसकी भेंट मौलाना जामी से हुई तो मौलाना जामी ने इस छन्द का अर्थ शेख जमाली से पूछा। शेख जमाली ने उत्तर दिया "साल एक लकड़ी का नाम है जिससे हिन्दुस्तान में नावें बनाई जाती हैं।" (नफ़ायसुल मआसिर, अलीगढ विश्वविद्यालय की हस्तलिखित पुस्तकों का संग्रह)।

२ खलजी कालीन भारत पृ० १५१-१५४।

कविता नही और अमीर खुसरो के तीसरे दीवान गुर्रतुल कमाल का एक भाग है। खुसरो ने यह कविता बडी ही साधारण शैली में लिखी है। इसमें कवि ने जो कुछ भी लिखा है वह बडी सावधानी से ऐतिहासिक दृष्टिकोण से लिखा है। इसमें मलिक छज्जू के विद्रोह के दमन तथा झायन की विजय का उल्लेख विशेष रूप से किया गया है।

दिवल रानी तथा खिज्र खाँ[1]—इसकी रचना अमीर खुसरो ने जीकाद ७१५ हि० (जनवरी १३१६ ई०) में की, इसमें कुछ छंद इसके बाद भी लिखे गये। इस कविता में अलाउद्दीन के ज्येष्ठ पुत्र खिज्र खाँ तथा गुजरात के राजा करण की पुत्री देवल देवी के प्रेम की कहानी का उल्लेख है। आरम्भ में खुसरो ने इसे देवल देवी तथा खिज्र खा के विवाह का उल्लेख करके समाप्त कर दिया था किन्तु मुबारकशाह द्वारा खिज्र खाँ के बध तथा अलाउद्दीन की बीमारी और मलिक काफूर के अत्याचार का वर्णन गयासुद्दीन तुगलक के राज्य-काल में लिखा गया।

खुसरो, खिज्र खाँ से बडा प्रभावित था। वह बडा ही वीर और रूपवान शाहजादा था। वह उसके पीर निजामुद्दीन औलिया की सन्त गोष्ठियो में आया जाया करता था। खिज्र खाँ ने स्वय अपने प्रेम की कथा लिख कर खुसरो को दी थी। खुसरो ने अभी तक इस प्रकार की कोई कथा न लिखी थी। इसके अतिरिक्त फारसी साहित्य में भी इस प्रकार की कोई कविता वर्त्तमान नही, जिसमें किसी समकालीन राजा अथवा राजकुमार के प्रेम का उल्लेख हो।

नुह सिपेहर[2]—इसकी रचना अमीर खुसरो ने ७१८ हि० (१३१८ ई०) में समाप्त की। इस समय खुसरो की अवस्था ६७ वर्ष की हो चुकी थी। इस कविता में ४५०९ छन्द हैं। कविता नौ भागों में विभाजित है।

पहला सिपेहर—इसमें मुबारकशाह की प्रशसा की गई है और मुबारकशाह के देवगिरि पर आक्रमण का हाल लिखा गया है।

दूसरा सिपेहर—इसमें उन भवनों का विशेष उल्लेख है जिन्हे मुबारकशाह ने निर्मित कराया।

तीसरा सिपेहर इसमें अमीर खुसरो ने भारतवर्ष की प्रशसा की है। भारतवर्ष की जलवायु, वनस्पति, फल, फूल, भारतवासियो के चरित्र तथा भारतवर्ष के रीति रिवाजो का उल्लेख बडे सुन्दर ढग से किया है।

चौथा सिपेहर—इसमें अमीर खुसरो ने एक ऐसी सुबह का वर्णन किया है, जबकि इकबाल (भाग्य) ने उसमे, अपने मित्र को कुछ नसीहते लिखने की प्रार्थना की। इसमें बादशाह, मलिको तथा लश्कर के लिये शिक्षा है।

पाँचवाँ सिपेहर—इसमें भारतवर्ष की शीत ऋतु का वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त एक आखेट का भी उल्लेख किया गया है।

छठा सिपेहर—इसमें मुबारकशाह के पुत्र शाहजादा मुहम्मद के जन्म का हाल लिखा है।

सातवाँ सिपेहर—इसमें नौरोज तथा बसन्त ऋतु (बहार) का उल्लेख किया गया है। शाहजादा मुहम्मद के जन्म के समारोहो का भी हाल इस कविता में मिलता है।

आठवाँ सिपेहर—इसमें चौगान (पोलो) के खेल का उल्लेख किया गया है।

नवाँ सिपेहर—इसमें अमीर खुसरो ने अपनी कविताओं के विषय में लिखा है।

---

१ खलजी कालीन भारत पृ० १७१-१७८।

२ खलजी कालीन भारत पृ० १७७-१८३।

इस कविता के लिखते समय अमीर खुसरो काफी वृद्ध हो चुका था। उसे लगभग साठ वर्ष से कविता करने का अनुभव प्राप्त हो रहा था। वह भारतवर्ष में ही इतना वृद्ध हुआ था। उसे भारतवर्ष की सभी चीजो से प्रेम था। उसने भारतवर्ष को बाबर बादशाह की आँखो से नही देखा, जिसके हृदय में अभी तक काबुल की याद वर्त्तमान थी। इस कविता के भारतीय पाठक अमीर खुसरो को कभी न भूल सकेंगे।

तुगलकनामा[1]—यह अमीर खुसरो की अन्तिम ऐतिहासिक कविता है। इसमें अमीर खुसरो ने गयासुद्दीन तुगलक की खुसरो खाँ पर विजय का उल्लेख किया है। यह विजय गयासुद्दीन तुगलक को ७२० हि० (१३२० ई०) में प्राप्त हुई। यह कविता भी लगभग उसी समय में लिखी गई।

गद्य

खजाइनुल फुतूह[2]—अमीर खुसरो की यह रचना तारीखे अलाई के नाम से भी प्रसिद्ध है और गद्य में लिखी गई है। अमीर खुसरो ने इस में अलाउद्दीन खलजी की विजयो का हाल लिखा है जो उसने ७११ हि० (१३११ ई०) में समाप्त की। खुसरो ने इस पुस्तक में बडी अलकारिक भाषा का प्रयोग किया है।

खुसरो का चरित्र

खुसरो इस्लाम के नियमो का पूर्णतया पालन करता था। वह अपने समय के सर्व प्रसिद्ध सूफी शेख निजामुद्दीन औलिया का बडा भक्त था। अमीरो तथा सुल्तानो के दरबार में उपस्थित रहने के पश्चात् उसका जो समय बचता उसे वह सूफिया तथा सन्तो की गोष्ठियों में व्यतीत करता था। उसे इस्लाम के अतिरिक्त दूसरे धम के अनुयायियो से भी प्रेम था। हिन्दू धर्म को समझने का उसने विशेष प्रयत्न किया था। हिन्दू धर्म की अनेक बात यहाँ तक कि सती तक को भी वह बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य समझता था। उसके तथा जियाउद्दीन बरनी के दृष्टिकोण म बडा अन्तर है, यद्यपि वे एक दूसरे के बडे मित्र थे। खसरो ने जियाउद्दीन बरनी की अपेक्षा हिन्दू धर्म, साहित्य तथा कलाकारो का बडे सुन्दर शब्दो म उल्लेख किया है। अत्याचारी हिन्दू आमिलो तथा कर्मचारियो की निन्दा लिखी है। विद्रोही हिन्दुओ की बुराई भी बडे बडे शब्दो में की है किन्तु किसी स्थान से यह पता नही चलता कि वह किसी से उसके धम के कारण घृणा करता था। उसे मानव जाति से प्रेम था। अपन देश से प्यार था। यही दोनो विशेपतायें उसके चरित्र तथा उसकी रचनाओ में विद्यमान हैं।

अमीर खुसरो से उसके सभी समकालीन बडे प्रभावित थे। प्रत्येक की महफिल में उसका आदर सम्मान किया जाता था। हर जगह वह बुलाया जाता था और हर एक उसकी बातों से आनन्द लेता था। जहाँ जाता कोई न कोई एसी बात कर देता, कोई न कोई ऐसा छन्द पढ देता तथा कोई न कोई ऐसा चुटकुला कह देता कि सभी हँसते हँसते लोट-पोट हो जाते। वह बहुत बडा दानी भी था, किसी भिखारी को अपने द्वार से लौटाना न चाहता था। उसमें वे सभी गुण विद्यमान थे जो मनुष्य के व्यक्तित्व को उन्नति के शिखर पर पहुँचा देते हैं।

खुसरो तथा कला

खुसरो की कविताओ तथा गद्य से स्पष्ट होता है कि उसे गद्य-पद्य दोनो ही के लिखने

---

१ खलजी कालीन भारत पृ० १८४—१९४।
२ ,, ,, ,, पृ० १५५—१७०।

में बड़ी कुशलता प्राप्त थी। शब्दों के चुनने और उनके प्रयोग में उसे बड़ी दक्षता प्राप्त थी। फारसी कविता के क्षेत्र में भारतवर्ष में फैज़ी के अतिरिक्त उसकी तुलना किसी अन्य कवि से नहीं की जा सकती। ईरान के कवि भी उसका लोहा मानते थे। जामी ने, जोकि ईरान का एक बहुत बड़ा कवि था, उसकी बड़ी प्रशंसा की है। उसकी ऐतिहासिक कविताओं द्वारा यह भली भाँति स्पष्ट हो जाता है कि उसमें घटनाओं के समझने तथा उनके उल्लेख की बड़ी योग्यता थी। उसकी निरीक्षण शक्ति बड़ी तीव्र थी, और इसी निरीक्षण शक्ति के कारण उसकी कविताओं को इतना मान प्राप्त हो सका। उसने छोटी छोटी बातों तथा साधारण घटनाओं का भी बड़ा ही मार्मिक विवरण दिया है[1]।

अमीर खुसरो को संगीत से भी बड़ा प्रेम था। उसने संगीत का विशेष अध्ययन किया था। सूफ़ियों की गोष्ठियों में संगीत की बड़ी आवश्यकता होती थी। उसके समकालीन बादशाहों और अमीरों को भी संगीत तथा नृत्य से बड़ा प्रेम था। कैकुबाद तथा जलालुद्दीन खलजी के दरबार के संगीत तथा नृत्य का वर्णन ज़ियाउद्दीन बरनी ने बड़े गर्व से किया है, अतः अमीर खुसरो ने जो दक्षता संगीत में प्राप्त कर ली थी, उस पर कोई आश्चर्य न होना चाहिये[2]। उसने ईरानी तथा हिन्दुस्तानी रागों को मिला कर नये राग ईजाद किये। कहा जाता है कि सितार की भी ईजाद अमीर खुसरो ही ने की। कुछ अन्य बाजों के विषय में भी कहा जाता है कि वे अमीर खुसरो के आविष्कार थे।

———

१ खलजी कालीन भारत "समीक्षा"

२ ज़ियाउद्दीन बरनी ने तारीखे फ़ीरोज़शाही में लिखा है, "वह संगीत तथा संगीत की रचना में बड़ा दक्ष था। अनेक कलाओं में, जिनमें मधुर तथा उत्तम स्वभाव की आवश्यकता होती है, भगवान् ने उसे दक्ष बनाया था। (तारीखे फ़ीरोज़शाही पृ० ३८६, खलजी कालीन भारत पृ० १११)

दीवाने वस्तुल हयात[1]

[इसमें भिन्न भिन्न प्रकार की अनेक कवितायें हैं जिनमें अधिकतर सुल्तान बल्बन के समय से शाहज़ादा मुहम्मद की मृत्यु तक की घटनाओं का उल्लेख किया गया है।]

तुगरिल पर विजय

इस कविता में २७५ छन्द हैं। छन्द ४६ से ८५ में बल्बन की तुगरिल पर विजय का वर्णन किया गया है। सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन की प्रशसा करते हुये वह लिखता है कि उसके चत्र तथा दूरबाश सूर्य एवम् आकाश के तुल्य हैं। वह नित्य विजय करता रहता है। उसके तुच्छ से तुच्छ कर्मचारी भी सैकडो बादशाहो से बढ कर हैं। जिस समय सुल्तान ने तुगरिल पर आक्रमण किया उसके पास असख्य सेना थी, किन्तु वर्षा की अधिकता तथा गगा में बाढ के कारण सेना तेज़ी से न जा सकती थी। तुगरिल इससे लाभ उठाकर लखनौती से बग के मार्ग से भाग गया। बल्बन ने बग के राय द्वारा समुद्री मार्ग बन्द कर दिया।

सुल्तान के सैनिको ने तुगरिल पर आक्रमण करके उसकी हत्या कर दी और उसके दूरबाश तथा चत्र एवम् पताकाय सुल्तान की सेवा में प्रस्तुत कर दिये गये। बुगरा खां को लखनौती का राज्य देकर सुल्तान देहली लौट आया।

मुहम्मद की पहाड़ी राजाओं पर विजय

छन्द ८६ से १४५ तक में खान मुहम्मद की मुल्तान में अन्य विजयो का हाल लिखा है। एक विजय उसने दमरीला के राजा पर प्राप्त की। राजा को जज़िया अदा करने का आदेश दिया गया, किन्तु उसने स्वीकार न किया। इस पर मुहम्मद की सेना ने उस पहाडी राजा पर पुन आक्रमण किया और उसके सभी किलो को तुड़वा डाला। सौंबह को विध्वस कर दिया। अन्त में पहाडी राजा ने अधीनता स्वीकार कर ली और जज़िया देने पर राज़ी हो गया।

इस विजय के पश्चात् मुहम्मद ने नगरकोट पर आक्रमण किया। इसके लिये मीर हाजिब तब्ली तथा अन्य वीरो को सेना देकर उसकी ओर भेजा। नगरकोट के राय ने जज़िया देना स्वीकार कर लिया।

मुगलो पर विजय

छन्द २४६ से २७५ तक शाहज़ादा खान मुहम्मद का मुगलो से युद्ध तथा मुगलो की पराजय का हाल बडे विस्तार से लिखा है। इस युद्ध में खिजलक मुगल तथा उसके अन्य साथी मारे गये। यह विजय ११ रमज़ान ६८२ हि० (३ दिसम्बर, ११८३ ई०) शुक्रवार के दिन प्राप्त हुई। जब खान विजय पाकर लौटा तो अमीर खुसरो ने उसकी प्रशसा में यह कविता लिखी। जो सेना मुगलो से युद्ध करने के लिये भेजी गई थी उसकी वीरता के विषय में अमीर खुसरो लिखता है कि उस सेना के कारण सिंह भी कांप उठते थे।

मुग़लों के रूप रंग की निन्दा

मुगलो के चरित्र तथा उनके रूप रग की खिल्ली अमीर खुसरो ने प्रत्येक स्थान पर उडाई है। इस मसनवी में वह लिखता है, कि उनके सिर घुटे हुए थे और वे उल्लू के परो की

१ यह अलीगढ़ कालेज द्वारा प्रकाशित हो चुका है।

टोपी पहिने हुए थे। दाढी बिल्कुल न थी, और चेहरा ढाल के समान चौडा था। आँखें माथे में घुसी हुई थी। नाक चपटी जिससे पानी बहता रहता था। उनके साँस लेते समय ऐसा ज्ञात होता था कि मानो पानी के किनारे मेंढक बोल रहा हो। वे बडे मैले कुचैले थे और उनके शरीर से दुर्गन्ध आती थी तथा जो कोई भी उन्हे देख लेता था कै कर देता था। जब दोनों सेनायें आमने सामने हुई तो मुहम्मद ने अपनी सेना को ललकार कर इस प्रकार आगे बढाया कि मुगल छिन्न-भिन्न हो गये और खिजलक भी गिर कर मर गया।

मुहम्मद की हत्या

इस मसनवी के अतिरिक्त अन्य मसनवियो में भी अमीर खुसरो ने सुल्तान मुहम्मद की प्रशसा तथा मुगलो की निन्दा की है। मसनवियो के अतिरिक्त वस्तुल हयात में तरजीबन्द[1] भी हैं। इनमें भी मुगलो के आक्रमण तथा उनकी पराजय और महमूद की हत्या का हाल लिखा है। यह युद्ध शुक्रवार के दिन जिलहिज्जा[2] मास के अन्तिम दिन अर्थात् ६८३ हि० के अन्तिम दिन (८ मार्च, १२८५ ई०) को हुआ। (पृ० १६६)

इस युद्ध में भी मुहम्मद ने बडी वीरता दिखाई। उसने मुलतान से सहाउर तक मुगलो का पीछा करने तथा उन्हें छिन्न-भिन्न करने का दृढ सकल्प कर लिया था किन्तु भाग्य के निर्णय के समक्ष विवश हो गया। दिन भर मुहम्मद की सेना ने बडी वीरता से मुगलो से युद्ध किया, किन्तु सायकाल को वह मुगलो के हाथ से मारा गया। इधर सूर्य अस्त हुआ और उधर राज्य का सूर्य अर्थात् मुहम्मद मारा गया। यह दुर्घटना ऐसी है कि मानो क़यामत आ गई। समस्त मुल्तान में हा हाकार मच गया[3]। (पृ० १६१-१६६)

अमीर खुसरो का बन्दी बनाया जाना

वस्तुल हयात में अनेक कसीदे भी हैं। इनमें भी मुहम्मद की प्रशसा, उसके युद्ध तथा उसकी मृत्यु का वर्णन है। क़िशली खा इख्तियारुद्दीन तथा कुछ अन्य अमीरो की भी प्रशसा की गई है। सुल्तान बलबन की प्रशसा में भी एक क़सीदा लिखा है। एक कसीदे में मुहम्मद की मृत्यु के पश्चात् अपने बन्दी बनाये जाने का भी हाल लिखा है। वह लिखता है कि जिस समय यह दुर्घटना हुई उस समय ६८४ हि० (मार्च, १२८५ ई०) का आरम्भ था। इस समय उसकी अवस्था ३३ वर्ष की हो चुकी थी और ३४ वाँ वर्ष आरम्भ हो रहा था। वह अपने बन्दी बनाये जाने का हाल इस प्रकार लिखता है

'मुझे मुगलो ने बन्दी बना लिया। इस भय से कि कहीं वे मेरी हत्या न कर दें, मेरे शरीर में रक्त की एक बूंद भी शेष न रह गई थी। जिस मुगल ने मुझे गिरफ्तार किया था वह स्वय घोडे पर इस प्रकार बैठा था, जैसे पहाडी पर चीता बैठा हो। उसका मुँह चौडा और गन्दा था। मैं बडा थका और प्यासा था। मुझे वह पैदल ही चलने पर विवश कर रहा था। मेरे पैरो में छाले पड गये थे, और छालों की खाल निकल चुकी थी, किन्तु वह किसी बात पर ध्यान न देता था।' अन्त में किसी प्रकार अमीर खुसरो मुगलो के हाथ से शीघ्र ही मुक्त हो गया, जिस पर उसने ईश्वर के प्रति बडी कृतज्ञता प्रकट की।

---

१ तरजीबन्द—एक प्रकार की कविता जिसमें एक बन्द को बार बार लाते हैं। वह इस प्रकार कि कुछ छन्द भिन्न भिन्न क़ाफ़ियों के एक ही बहर (वृत्त) में लिखते हैं और फिर एक छन्द को लाया करते हैं।

२ हिजरी कलेण्डर का अन्तिम महीना।

३ यह कविता अमीर खुसरो ने मुहम्मद के पिता सुल्तान बलबन को भी सुनाई थी।

क़ेरानुस्सादैन[1]

कैकुबाद के पूर्वज

केरानुस्सादैन के अलीगढ प्रकाशन में पृष्ठ १ से २१ तक अमीर खुसरो ने ईश्वर की वन्दना, मुहम्मद साहब की स्तुति का उल्लेख किया है। पृष्ठ २१ से उसने सुल्तान मुइज्जुद्दीन कैकुबाद की प्रशसा लिखी है। उसने लिखा है कि शम्सुद्दीन (इल्तुतमिश) कैकुबाद के बाप का नाना और नासिरुद्दीन महमूद बिन (पुत्र) इल्तुतमिश कैकुबाद का नाना और गयासुद्दीन (बल्बन) कैकुबाद का दादा था। (२२)

देहली

फारसी कवियो की प्रथा के अनुसार खुसरो ने मुइज्जुद्दीन कैकुबाद की प्रशसा करते हुये पृष्ठ २८ से देहली की प्रशसा आरम्भ कर दी है। देहली के उस समय तीन हेसार[2] थे, दो पुराने और एक नया। (२८) नगर म १३ द्वार थे, शहर कुब्बये इस्लाम कहा जाता था। वह बडे-बडे बादशाहो की राजधानी था। भीतरी हेसार में शहर का शाही किला था। (२६) जामे मस्जिद की प्रशसा करते हुए वह लिखता है कि उसके गुम्बद के नीचे सर्वदा तस्बीह[3] पढी जाती थी। गुम्बद की सख्या नौ थी। मस्जिद के समक्ष जो द्वार थे उन पर छत न थी। कुतुब मीनार पत्थर का बना था। इस मीनार के ऊपर सुनहला कलश था। उसकी ऊँचाई बहुत अधिक थी। ऐसा ज्ञात होता था कि सातवें आकाश पर पहुँचने के लिए भूमि से कोई सीढी लगाई गई है। उस पर से अजान देने वाला अजान देता था। (३० ३१) दो पहाड़ियो के बीच में, सिकन्दर जैसा गुण रखने वाले सुल्तान शम्सुद्दीन ने एक पत्थर का हौज[4] बनवाया था। वहाँ से शहर वालो को पीने के लिए अच्छा जल मिलता था। जल इतना स्वच्छ था कि बालू के कण भी गिने जा सकते थे। हौज का जल पथरीली भूमि के कारण भूमि के भीतर नही प्रविष्ट हो सकता था। यमुना नदी से उस हौज तक बहुत सी नहरे निकाली गई थी। बीच में एक चबूतरा बना हुआ था जिस पर एक भवन भी निर्मित था। (३२) वह इतना गहरा था कि मानो उसके नीचे भूमि ही नही थी। उसके चारों ओर लोग पहाडी के आचल में मनोविनोद के लिए शिविर लगा लिया करते थे। (३३) यद्यपि इस देश में गरम हवा चलती है किन्तु खुरासान की ठण्डक स क्या लज्जा। आकाश के इस देश मे प्रेम के कारण यहाँ की हवा गरम है। यहाँ की भूमि फूलो के कारण सुनहरी रुपहली बनी रहती है। यहाँ की हरियाली के सामने स्वर्ग भी मात है। यहाँ के जैसे मेवे खुरासान वालो ने खाये भी न होंगे। यहाँ के लोग फरिश्तो के समान हैं। सभी बडे कलाकार तथा विद्वान् हैं। यहाँ के सैनिक भी बडे वीर हैं। यहाँ के ५००० सैनिक अन्य स्थानो के एक लाख से बढ कर हैं। (३४)

कैकुबाद का सिंहासनारोहण

कैकुबाद ने, जो एक नवयुवक बादशाह था, ६८६ हि० (१२८७-८८ ई०) मे राजमुकुट

१ अलीगढ कालेज द्वारा १६१८ ई० मे प्रकाशित।
२ शहर पनाह की नगर दीवारी कोट
३ माला
४ हौजे शम्सी।

धारण किया[1]। उसने समार को इस प्रकार सुव्यवस्थित किया कि लोग जमशेद को भूल गये। सैनिक तथा शहरी सब उससे सन्तुष्ट थे। लखनौती से सिन्धु नदी तक के राय, जज़िया भेंटा करते थे। पूर्व के बादशाह और दिल्ली के राज सिंहासन के (वास्तविक) अधिकारी नासिरुद्दीन को जब यह ज्ञात हुआ कि जो सम्मान उसे मिलना चाहिये था वह उसके पुत्र को मिल गया है, तो उसने चत्र धारण कर लिया। एक बहुत बड़ी सेना लेकर बगाल से अवध की ओर प्रस्थान किया। (३५, ३६)

इसके पश्चात् अमीर खुसरो ने शीत-काल का वर्णन किया है और यह बताया है कि किस प्रकार लोग जाडे में बचने के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार के उपाय करते थे। कोई ऊनी वस्त्र धारण करता था, कोई रुई के मोटे वस्त्र पहिनता था। जिन्हें कुछ उपलब्ध न था वे रात्रि में अपने पेट में घुटने चिपका कर सोने का प्रयत्न किया करते थे। बादशाह ने भोग विलास मदिरापान से सर्दी भगा दी थी। (३७, ४६)

कैकुबाद के पिता बुगरा खाँ का राज्य प्राप्त करने का प्रयत्न

नासिरुद्दीन लखनौती से निकल कर अवध में ठहरा और समस्त इक़लीम अपने अधिकार में कर ली। वह रात दिन यही कहा करता था कि "अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् मैं ही राज्य का अधिकारी हूँ। मेरे अतिरिक्त राज्य के योग्य और कौन है? यद्यपि कैकुबाद मेरी आँखों की पुतली है और बादशाह हो गया है, किन्तु उसे कोई अनुभव नहीं, अब जब तक मैं अपने अधिकार को प्राप्त न कर लूँगा निश्चिन्त नहीं हो सकता।" (४६)

कैकुबाद का अपने पिता के विरुद्ध युद्ध के लिये तैयार होना

समार के बादशाह को भी इस घटना का पता चल गया। उसने अपने योद्धाओं को आदेश दिया कि वे तैयारी प्रारम्भ कर दें। कोषाध्यक्षों को आज्ञा दी कि वे सेना तैयार करते समय किसी अन्य बात पर ध्यान न दें। प्रत्येक विलायत[2] को पत्र भेजा गया प्रत्येक नगर तथा विलायत से सरदार बुलाये गये। प्रत्येक स्थान के अमीर, बादशाह, खान और मलिक एकत्र हुये। एक लाख सवार युद्ध के लिये तैयार हो गये। (४७)

देहली की सेना की तैयारी

ज़िलहिज्जा मास के अन्त में सोमवार के दिन प्रातःकाल बादशाह अपना लश्कर लेकर बाहर निकला। (४८) पताकाओं की चमक दमक चारों ओर छा गई। सेना के सामने दूरबाश का प्रकाश शत्रुओं को दहलाने के लिये काफी था। सुल्तान सीरी में उतरा। वहीं उसका शिविर लगा दिया गया। शिविर की डोरियाँ रेशम की थीं। बारगाह (शिविर) साधारणतया दो चार खम्भों पर स्थापित होते थे किन्तु बादशाह ने उसे चार सतूनों (खम्भों) पर स्थापित कराया। दाहिनी ओर की सेना तिलपत में और बाईं ओर की इन्द्रप्रस्थ में डाली गई। शाही हाथियों का पड़ाव भापुर में रखा गया। सीरी उस समय घास का मैदान था। शाही शिविर फूलों से सजा था और गोताई में लगाया गया था। उसके देखने से ऐसा ज्ञात होता था कि बादल घास के मैदान में उतर आया है। बादशाह ने एक रात वहाँ विश्राम किया और मदिरापान होता रहा। (४८, ५२)

प्रातःकाल उसने सेना के निरीक्षण के लिये घोड़ा मगवाया। एक स्थान से दूसरे स्थान तक सब देखा भाला। तत्पश्चात् शिकार खेलता हुआ किलोखड़ी के राज भवन में पहुँच गया। (५३, ५४)

---

[1] यह घटना १२८७ ई० के मध्य में घटी होगी।
[2] अधीन राज्यों के अधिकारी।

किलोखड़ी के राजभवन की प्रशंसा

वह राजभवन मानो स्वर्ग था। महल की ईंटों पर इस प्रकार चूना लगाया गया था, कि स्वर्ग उसमें अपनी छवि निहारता था। जो कुछ युवक दर्पण में देखते हैं वह वृद्ध ईंटों में देख लेते थे। यह महल सजी धजी दुलहिन था। यमुना का जल उसका दर्पण बना हुआ था। यमुना नदी के जल की तह से महल का प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ता था। महल के एक ओर नदी और दूसरी ओर उद्यान थे। नदी के कारण उद्यान में सर्वदा ठण्डक रहती थी। महल के निर्माण में संगमरमर का भी प्रयोग किया गया था।

बादशाह ने उस स्वर्ग में उतर कर मदिरापान और भोग-विलास की महफिलें आरम्भ कर दी। मदिरा का दौर चलने लगा। गायक संगीत में अपनी निपुणता दिखाने लगे और बजाने वाले चंग, बांसुरी आदि बजाने लगे। शीत-काल में भोग विलास के कारण गरमी पैदा हो गई थी। (५४, ५७)

मुगलों का आक्रमण

पतझड़ की ऋतु आई और मुगलों ने आक्रमण कर दिया। उन्होंने पतझड़ की हवा के समान देश को नष्ट-भ्रष्ट करने की सामग्री एकत्र कर दी। बादशाह इस ऋतु में भी भोग विलास में मस्त था। उसे सूचना मिली कि मुगल बढ़ते चले आ रहे हैं। उनकी सेना बालू के कण के समान है।

कैकुबाद का मुग़ल आक्रमण पर क्रोध

बादशाह को जब यह ज्ञात हुआ तो वह घृणा की हंसी हंसा और उसने कहा कि 'मेरे राज्य-काल में इस प्रकार का उपद्रव आरम्भ हो गया। लोग कहेंगे कि मेरी बादशाही में दूसरों को विजय प्राप्त हो रही है। भेड़िये और कुत्ते मृगों को भयभीत कर सकते हैं किन्तु सिंह से युद्ध नहीं कर सकते। मैं हिन्द के रायों से प्रत्येक वर्ष जजिया लेता हूं और हाथी, धन सम्पत्ति प्राप्त करता रहता हूं। धन सम्पत्ति के लिये, कभी गुजरात के तो कभी देवगिरि के राजा को फरमान भेजता हूं। कभी तिलंग से घोड़े प्राप्त करता हूँ। बंगाल से हाथी वसूल करता हूं। मालवा और जाजनगर से धन सम्पत्ति प्राप्त करता हूं।[१] इन दगला[२] पहिनने वालों के भय से मैं अपने कानों में रूई नहीं डाल सकता। मैं उनकी सेना को रूई के समान हवा में उड़ा दूंगा, परन्तु मैं यह नहीं चाहता कि स्वयं तलवार खींचूं, और उन कुत्तों के रक्त से अपनी तलवार गन्दी करूं।" (५८-६३)

खानजहाँ बार्बक को मुग़लों से युद्ध करने के लिये भेजना

यह कह कर उसने आरिज को बुलवाया और कहा कि 'तीस हजार योग्य सवार मुगलों से युद्ध करने के लिये नियुक्त हों। उस लश्कर का सरदार खाने जहाँ बार्बक को नियुक्त किया जाय।' योग्य आरिज ने शाह की आज्ञा से विरोधी की ओर सेना भेजी। मुगलों के आक्रमण द्वारा सामाना से लाहौर तक सभी भवनों का विनाश हो गया था। इस्लामी लश्कर के पहुंचने का समाचार सुन कर शत्रु का लश्कर भाग निकला। (६४)

तिमुर मुग़ल का भागना

यद्यपि तिमुर ने बड़ी तेजी दिखाई, किन्तु उससे कुछ न हो सका। सरसद तथा कोली,

---

१ अमीर खुसरो ने जिन प्रदेशों का नाम लिया है उनमें से देवगिरि, तिलंग, तथा बंगाल कैकुबाद के अधीन न थे। खुसरो ने केवल अलंकारिक भाषा का प्रयोग किया है।

२ रूई का वस्त्र पहिनने वाले।

दोनों एक ओर भाग गये। चचलक, बेद तथा बुदकर एक ओर भागे। चारो ओर मुग़ल ही मुगल दिखाई देते थे। बार्बक ने भागने वालो का पीछा किया। पर्वत मुग़लो के रक्त से लाल हो गया। बहुत से मारे गये और बहुत से बन्दी बना लिये गये। ससार को विजय करने वाला खान विजय पाकर वापस हुआ। (६५) बन्दी मुगल पंक्तियों में उसके साथ थे। सेना ने जीत की खुशी में खूब मदिरापान किया, और सिपाहियो को बहुत कुछ इनाम बाँटा गया। (६६-६७)

कैकुबाद का नौरोज़ मनाना

इतने में बहार (वसन्त) ऋतु आगई। केवडा, सेवती, गुलाब, लाला, मौलसिरी चारो ओर फूलने लगे। बुलबुल, तोते, फाख्ता बोलने लगे। चकोर और अन्य पक्षी पखेरू तथा पशु किलोले करने लगे। (६७) सुल्तान ने नौरोज का समारोह मनाने की तैयारियाँ आरम्भ कर दी। महल सजाया गया। पाँच प्रकार के चत्र सजाये गये एक चत्र काला बना था। उसका कालापन भी अति शोभायमान था। दूसरा चत्र सफेद रग का बना था। तीसरा चत्र लाल रग का था। चौथा चत्र हरे रग का था और पाचवाँ चत्र झाऊ का था। (६८-७७)

दूरबाश शाह के दोनों ओर रहते थे। उनके भय से कोई एक वाक्य भी मुँह से न निकाल सकता था। उनके उठाने वाले हाथों में डण्डे लिये रहते थे। उन लोगो के कारण मक्खी तक सुल्तान के निकट न पहुँचती थी। जानदारों के अस्त्र शस्त्र के भय से तथा दूरबाश के कारण शत्रुओं के हृदय दहले जाते थे। (७८-७९)

बादशाह की तलवार यद्यपि मियान में रहती थी तो भी विरोधियो को उसके कारण नींद न आती थी। उसका लोहा सोने से भी बहुमूल्य था।

उसके धनुष के झुकाव का सामना आकाश भी न कर सकता था। उसके बाणों की बड़ाई भी सम्भव नही क्योंकि उनकी वर्षा से शत्रु क्षीण हो जाते थे। उसके भाले और ढाल की भी प्रशसा नहीं हो सकती। (७९-८२)

उसके दोनो ओर लाल और काले झण्डे थे। उनका साया आकाश से पाताल तक पहुँचता था। इस प्रकार जश्न सजाया गया। बादशाह सुनहरे राज सिंहासन पर विराजमान हुआ। ऐसा बहुमूल्य राज मुकुट सिर पर रखा जिसकी कीमत विश्व भर के कर से भी न दी जा सकती थी। सहमुल हश्मान सितारो को भी भयभीत कर रहे थे। शहनये ने पंक्तियो को ठीक किया और तलवारें चलाने वाले दाहिनी तथा बाईं ओर अपनी पंक्तियाँ जमाये उपस्थित थे। हाजिबे फस्ल उपहार भेंट करने वालों के उपहार पेश कराते थे। (८३-८५) जश्न के उपरान्त बादशाह एकान्त में गया। साकी लाल मदिरा का प्याला पेश करने लगे। मदिरापान को देख कर भूमि को भी प्यास लग आई। इस समय सुल्तान ने बहुत कुछ दान किया। (८६)

बुग़रा खाँ से युद्ध करने के लिये कैकुबाद का स्वयं प्रस्थान करना

बहार का अन्त हुआ। गेहू की बालियाँ दानों से भर गईं। खलिहान लग गये। हरियाली में पीलापन आने लगा। फूल झडने लगे। पूर्व के सुल्तान से युद्ध करने के लिये सुल्तान स्वय प्रस्थान करना न चाहता था, परन्तु परामर्श-दाताओं ने सलाह दी कि बादशाह का चलना अत्यन्त आवश्यक है। उन्होंने निवेदन किया कि बादशाह अकेला जो कर सकता है वह इतनी बडी सेना नहीं कर सकती। यद्यपि बादशाह की सेना विजय प्राप्त कर लेगी, किन्तु विजय का द्वार खोलने के लिये शाह का उपस्थित रहना आवश्यक है।' अन्त में बादशाह को भी चलने के लिये तैयार होना पड़ा। (८७-८८)

मुग़ल कैदियों का पेश होना

रबी-उल-अव्वल मास के मध्य में लश्कर ने कूच किया। बादशाह भी शहरे नव से लश्कर लेकर चला। पहला पड़ाव तिलपट और अफगानपुर की हद में हुआ। भोग-विलास की सामग्री वहाँ भी एकत्र हो गई। शराब का दौर चलने लगा। यहीं मुग़लों से युद्ध करके बार्बक सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ। मुग़लों के गले बँधे हुए थे। बादशाह यह समाचार सुनकर बड़ा ही प्रसन्न हुआ। मदिरा मँगाई और जश्न होने लगा। प्रातः से सायंकाल तक शराब का दौर चलता रहा। (८८-९०)

दूसरे दिन बड़े समारोह से दरबार हुआ। बार्बक ढोल बजाता हुआ दरबार में प्रविष्ट हुआ। बादशाह ने उसे बहुमूल्य खिलअत दी। उसके अधीन सरदारों को भी खिलअत और इनाम प्रदान किये गये। सबने सिजदा किया और बादशाह ने उन्हें दस्तबोस का सम्मान प्रदान किया। सरदारों ने भी अपने उपहार प्रस्तुत किये। हाजिबे फ़स्ल ने सबका सविस्तार परिचय दिया। (९०-९२)

मुग़लों के रूप तथा उनकी वेष भूषा का वर्णन

तत्पश्चात् युद्ध के बन्दी, जिनके कारण सुल्तानी सेना को कूच करना पड़ा था पेश हुये। उन तातारी काफ़िरों की संख्या हजार से भी अधिक थी। वे लोग बड़े कठोर, परिश्रमी तथा युद्ध में अत्याचार करते थे। सबका शरीर फौलाद के समान था। उनका चेहरा आग के समान था। वे सिर पर बाल और ऊन की टोपी पहिने हुये थे। उनके रोयें से आग की चिंगारी निकल रही थी। उनके सिर के बाल कटे हुए थे। (९३) उनकी छोटी-छोटी आँखों से ताँबे के तश्त में छेद हो जाता था और उनकी दृष्टि से पत्थर में छिद्र हो जाते थे। उनके शरीर से दुर्गन्ध आती थी। उनका चेहरा उनकी पीठ में धँसा हुआ था। उनका चेहरा मश्क की तरह था और इधर उधर से टेढ़ा मेढ़ा था। उनकी चपटी नाक उनके चेहरे पर फैली हुई थी। नथुने टूटी हुई कब्र के समान थे। होठों पर लम्बी-लम्बी मूँछें थीं। ठुड्डी पर उनके दाढ़ी न थी क्योंकि बर्फ पर घास जम ही नहीं सकती। उनका भोजन कुत्ते और सुअर का मांस था। कहा जाता है कि यदि इनमें से कोई एक कै करता था, तो दूसरा उसे खा लेता था। उनका मूल वंश कुत्ते से था। वे बाँसुरी बजाते और तातारी भाषा में नारे लगाते थे। उनके भाले उनके सिरों से भी ऊँचे थे। उनके घोड़े तातारी नस्ल के थे। (९४-९५)

मुग़लों को दण्ड

उनके बाणों पर कष्ट का पानी चढ़ा था। उनकी तातारी कमानें बड़ी सख्त थीं। बादशाह ने उनके घोड़े और अस्त्र-शस्त्र शाही भंडार में भिजवा दिये। तत्पश्चात् हाथी मँगवाये। उनके कारण भूमि काँपने लगी और पर्वत हिलने लगे। हिन्दुस्तानी ढोल, करना, ताशे और तुरही बजने लगे। हाथियों ने भी चिंघाड़ना आरम्भ कर दिया। शाह ने आदेश दिया कि एक बहुत बड़े बैल तथा भैंसे को बाँध कर हाथियों के सामने फेंका जाय। हाथियों ने दोनों को अपने दाँतों से फाड़ डाला। बादशाह ने जब यह देखा कि हाथी युद्ध के लिए तैयार हैं तो उसने आज्ञा दी कि दस दस मुग़लों के पेट एक में कस कर बाँधे जायें और उन्हें हाथियों के सामने डाल दिया जाय। इस प्रकार अमीराने सदा[१] के अनेक सरदार मार डाले गये। जो शेष रहे उनके लिए आदेश हुआ कि वे नगर में घुमाये जायें। इस प्रकार दिन इस कार्य में समाप्त हुआ। रात में फिर मदिरापान होने लगा। (९६-९९)

१ सौ सवारों के अफसर।

देहली की सेना का यमुना तट पर पहुँचना[1]

दूसरे दिन जब सुबह हुई तो सेना ने कूच किया और दो पड़ाव करने के पश्चात् लश्कर यमुना तट पर पहुँच गया। सेना की अधिकता के कारण इतनी धूल उड़ी कि यमुना नदी टापू बन गई और यदि सेना दो तीन दिन रुक जाती तो उसकी धूल से पुल बन जाता।

बार्बक की सेना का अवध की ओर प्रस्थान

नदी पार करके सेना जेवर[2] के स्थान पर रुकी। वहाँ से बार्बक को आज्ञा दी गई कि वह शीघ्रातिशीघ्र कूच करता हुआ आगे बढ़े। इस प्रकार बार्बक की सेना कूच करती हुई गंगा को पार करती हुई सरयू की ओर बढ़ी। मार्ग में कड़े का खान छज्जू कई हजार सवार लेकर मिला। शाह की आज्ञा से अवज (अवध) का खान भी एक बहुत बड़ी सेना लेकर बार्बक से मिला। इस प्रकार सभी सेनायें एकत्र होकर सरयू नदी के दो कोस निकट पहुँच गईं। पूर्व के बादशाह को सूचना मिल गई कि युद्ध के लिए सेना पहुँच गई। वह बड़ा क्रोधित हुआ। (१००-१०१)

सुल्तान नासिरुद्दीन बुग़रा खाँ का बार्बक को संदेश भेजना

पूर्व के बादशाह ने अपने विश्वासपात्रों में पर्याप्त खोज करने के पश्चात् शम्स दबीर को उसका सन्देश बार्बक के पास ले जाने के लिए नियुक्त किया और उसे आदेश दिया कि वह उससे कहे कि 'वह प्रदेश (देहली) मेरे अधीन है। तूने मेरा नमक खाया है, अतः तू नमक-हरामी क्यों करता है ? तू जानता है कि इस राज्य का अधिकारी कौन है ? यदि कोई अन्य मेरा स्थान लेता तो मैं अपनी तलवार से इसका मज़ा चखा देता किन्तु क्या करूँ जब कि मेरा ही पुत्र जोकि मेरी आँख के समान है, मेरी आँख का प्रकाश छीन रहा है। कोई किस प्रकार अपने हाथ से अपनी आँख फोड़ सकता है। वह जिस किसी को भी मुझ से युद्ध करने के लिए भेजेगा, वह मेरा दास होगा। यदि दास स्वामी से युद्ध करेगा तो उसे लोग क्या कहेंगे।' मुझे तेरे ऊपर क्रोध नहीं आता अपितु उस पर क्रोध आता है जिसने तुझे मेरी ओर भेजा है। मेरे जी में तो यह आता है कि तलवार खींच कर रक्त की नदी बहादूँ परन्तु इसमें मुझे ही हानि होगी। यदि मेरी सेना तुझे कोई हानि पहुँचाये तो इससे मेरे पुत्र को हानि होगी। यदि तेरे कारण मेरी सेना को हानि पहुँचे तो तू ही मेरे सामने लज्जित रहेगा। (१०२-१०३) तू इतनी देर प्रतीक्षा कर कि वह नम्रता रखने वाला आ जाय। उसे स्वयं ज्ञात हो जायगा कि मुझे उससे कितना प्रेम है।"

बार्बक का उत्तर

संदेश-वाहक ने आकर सेना नायक बार्बक को यह समाचार सुनाये। उसने उत्तर दिया कि, "मेरी ओर से मेरी दासता का सिज्दा बादशाह तक पहुँचा दे और कह दे कि 'यद्यपि तेरा पुत्र तेरा राजमुकुट धारण किये हुए है, किन्तु मैं तो अपने स्वामी की आज्ञा से यहाँ आया हूँ। यदि कोई सिंह मुझ से युद्ध करेगा तो मैं उसका मज़ा चखा दूँगा किन्तु यदि अन्नदाता मुझ से युद्ध करने के लिये आयेंगे तो मैं युद्ध न करूँगा, और सामने से हट जाऊँगा, किसी से भय के कारण नहीं अपितु अन्नदाता के सम्मान का ध्यान रखते हुए।" बादशाह के सन्देश-वाहक ने लौट कर बार्बक का सन्देश पहुँचा दिया। उसने जब उसको विरोध करते हुए

१ सेना का प्रस्थान लगभग रबी उल-अव्वल ६८७ हि० के मध्य (अप्रैल १२८८ ई० के मध्य) में हुआ होगा।

२ बुलन्दशहर ज़िले में।

न पाया तो चुप हो गया और फिर मदिरापान तथा भोग विलास में तल्लीन हो गया। (१०४-१०५)

ख़रबूज़े की बहार

उधर देहली के बादशाह का लश्कर प्रस्थान कर रहा था। ग्रीष्म ऋतु आ चुकी थी। गरम हवा के झोंके चल रहे थे। घास फूस आदि सूख चुके थे। वृक्षों की पत्तियाँ भी शुष्क हो गई थी, किन्तु खरबूज़े की बहार ज़ोर पर थी। वह सब फलों का बादशाह बना हुआ था। उसे खाकर लोग गरमी को भूलते जा रहे थे। बादशाह घोडे पर सवार और सिर पर छत्र लगाये निरंतर कूच कर रहा था। गरमी का उस पर कोई प्रभाव न था, यहाँ तक कि बादशाही पताकायें अवध तक पहुँच गई।

कैक़ुबाद का अवध पहुँचना[1]

शहर के निकट घाघरा तट पर डेरे, खेमे लगा दिये गये। एक ओर घाघरा नदी थी तो दूसरी ओर सरयू। दूसरे दिन बादशाह सैर के लिये निकला। उसके पीछे एक हज़ार सवार थे। पिता को जब पुत्र के आने का समाचार मिला तो वह भी नदी तट पर आ खडा हुआ। दोनों ओर दो सूर्य चमकने लगे। पिता की दृष्टि पुत्र पर पडी। आँख से आँसू टपकने लगे। तुरन्त अपने हाजिब को नौका पर बैठा कर पुत्र की ओर भेजा और उससे मिलने की इच्छा प्रकट की। जब नौका सरयू नदी के बीच में पहुंची तो मुइज्जुद्दीन की दृष्टि उस पर पडी। यद्यपि उस पर भी पिता के प्रेम का प्रभाव था तथापि शत्रुता दिखाते हुए अपने निषंग से बाण निकाला। धनुष पर चिल्ला चढ़ाया और बाण नौका की ओर छोड दिया। नौका में छेद हो गया और वह डूब गई। हाजिब बडी कठिनाई से जान बचा कर भागा।

बुग़रा ख़ाँ का असमंजस

बादशाह (नासिरुद्दीन) को यह दृश्य देखकर बडा क्रोध आया। वह बडे असमंजस में पड गया। उसे भय हुआ कि पुत्र कहीं युद्ध प्रारम्भ न कर दे। "यदि पुत्र को अपनी युवावस्था पर गर्व है तो क्या हुआ, मैं तो अनुभवी हूं। यदि मेरी तलवार से उसे कोई हानि पहुचेगी तो फिर उसका दुःख मुझको ही होगा और यदि उसके द्वारा मुझे कोई हानि पहुँचेगी तो उसे इसका दुःख होगा।" इसी सोच में दिन भर वह पडा रहा। रात में इस दुविधा के कारण उसे नींद न आई। यहाँ तक कि सुबह हो गई और वह यही सोचता रह गया कि किस प्रकार पुत्र से सन्धि की जाय। (१०६-११४)

बुग़रा ख़ाँ तथा कैक़ुबाद में पत्र व्यवहार

जब दिन निकला तो उसने एक विश्वासपात्र द्वारा पुत्र के पास सन्देश भेजा कि वह पिता की ओर से सलाम व दुआ कह कर यह समझाये कि वह विरोध न करे। "राज्य मेरे पिता से मुझे और मुझ से तुझ को मिलना चाहिये। तुझे जो लोग मार्ग-भ्रष्ट करना चाहते हैं, उनकी बात न सुन। यह सच है कि युवक बुद्धिमान होते हैं, किन्तु तेरी यह युवावस्था नहीं अपितु पागलपन है। तू बालकों की भाँति युवावस्था व्यतीत कर और वृद्धों के लिये स्थान छोड दे।" (११५-११७)

बादशाह ने हाजिब को उत्तर दिया कि "राज्य किसी को वंशागत नहीं प्राप्त होता, अपितु तलवार द्वारा प्राप्त होता है। यदि तू अपने पिता की सम्पत्ति माँगता है तो यह राज्य

१ सेना लगभग दो मास में जमादी-उल अव्वल ६८७ हि० के मध्य (जून १२८८ ई०) में पहुँची होगी।

मुझे तीन बादशाहों की ओर से मिला हुआ है। तू मुझे राज्य प्रदान कर। यदि तू यह राज्य प्राप्त ही करना चाहता है तो मैं तो न दूँगा, तू जिस प्रकार बने ले ले।" (११७-११६)

बादशाह नासिरुद्दीन ने इसका यह उत्तर दिया कि "तू युद्ध न कर, अन्यथा स्वय कष्ट भोगेगा। मेरे पास ऐसे हाथी हैं कि तेरे सहस्रों घोडे उन से युद्ध नहीं कर सकते। तेरे लिये यह उचित है कि तू मेरा स्थान लेले, और मैं अपने पिता का।" (१२०-१२२)

पुत्र ने यह उत्तर सुन कर पिता के पास सन्देश भेजा कि "आपको अपने हाथियो पर गर्व न होना चाहिये और मुझ से युद्ध न करना चाहिये, क्योकि मेरे घोडे आपके हाथियो का सफाया कर देंगे। यदि आप सन्धि करलें तो मैं आप की प्रत्येक इच्छा पूरी कर सकता हू। यदि आप मुझ से राजमुकुट ही माँगना चाहते हैं, तो मेरे निकट आयें, मैं उसे आपके चरणों में अर्पित कर दूँगा।" (१२३-१२५)

पिता ने इसका यह उत्तर दिया कि "तू मेरी आँख है। तू मेरी ओर से अपने हृदय में कोई मैल न रख। तेरे नाम से मेरा नाम है और यदि मैं तुझ से राजमुकुट ले भी लू तो फिर अपनी मृत्यु के पश्चात् तेरे अतिरिक्त किसे दे सकता हू। मैं तो केवल तेरे दर्शन का प्यासा हूँ, अत इसमें विलम्ब न कर।" (१२६-१२८)

पुत्र ने पिता को यह उत्तर भेजा कि 'आपके पूरब में और मेरे पच्छिम में होने का यह अर्थ है कि हमारा मुकाबिला कोई नही कर सकता। मुझ में यह साहस नही कि अपने आप को आपसे दूर रख सकूँ।" पिता यह समाचार सुन कर बडा प्रसन्न हुआ, और इस खुशी में जश्न किया। लोगों को इनाम बाँटे। (१२६-१३०)

इसके पश्चात् उसने अपने लघु पुत्र कैकाऊस को बुलवाया, और उसके साथ बडे समारोह से उपहार, अस्त्र शस्त्र, तथा हाथी पुत्र की ओर भेजे, और कहला भेजा कि 'मुझमें अब दूर रहने की शक्ति नही है और तुझ से मिलन की प्रतीक्षा कर रहा हू।" (१३१-१३४)

पुत्र ने कैकाउस के आने का समाचार सुन कर दरबार सजाया। कई मील तक आदमियो, घोडो और हाथियो की पत्तियाँ स्वागतार्थ खडी की गईं। शाही चौखट पर पहुँच कर शाहजादा घोडे से उतर पडा। जो उपहार लाया था पेश किया। जो बातें पिता ने कही थीं वह उसे समझा दी। कैकुबाद भाई से मिल कर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसकी खातिर मदारात (आओभगत) मेंजश्न किया गया और शराब के दौर चले। (१३४-१३६)

दूसरे दिन बादशाह ने अपने पुत्र क्यूमुर्स को बुलाकर उसके दादा की ओर भेजा। उसके हाथ बहुमूल्य उपहार, घोडे, ऊँट, तथा साज-व-सामान भेजा। क्योंकि वह बालक था इसलिये एक बुद्धिमान आरिज़ को उसके साथ किया और उसके द्वारा पिता को सन्देश भेजा कि *"मैं भी भेंट करने के लिये व्याकुल हूँ"। मैं स्वय बादशाह के द्वार* तक उसी प्रकार दौडता जाता जिस प्रकार पिता के पास पुत्र जाते हैं, किन्तु सुल्तान की प्रतिष्ठा का प्रश्न है" क्यूमुर्स आरिज़ के साथ दादा के पास गया। दादा ने बडे प्रेम से उसका स्वागत किया और बडी देर तक उसे प्यार करता रहा। किसी दूसरी ओर दृष्टि उठा कर भी न देखा। थोडी देर पश्चात् आरिज़ पर उसकी दृष्टि पडी। आरिज़ ने वह सब उपहार भेंट किये और बादशाह का सन्देश सुनाया। सुल्तान ने उत्तर दिया कि, "मैं कल अवश्य भेंट करूँगा।" तत्पश्चात् पोते और आरिज को बहुत कुछ उपहार देकर विदा किया। (१३७-१४२)

बुग़रा खाँ तथा कैकुबाद की भेंट

शाह ने आज्ञा दी कि स्वागत की तैयारिया की जायें। उपहार, के मोती जवाहिरात एकत्र किये जायें। कर्मचारियों को आदेश देकर स्वय मदिरापान में तल्लीन हो गया।

जिस स्थान पर शाही शिविर लगे थे उस स्थान पर पर्याप्त मैदान न था। उसे छोड़ कर शहर से नीचे की ओर शिविर लगाया गया, जहाँ मैदान भी काफी था और नदी का घाट भी कम था। इस कारण नौका के आने जाने में बड़ी सुगमता थी। (१४२-१४४)

नासिरुद्दीन ने दिन ढलने के पश्चात्, जब कि गरमी की तेजी कुछ कम हो गई, नदी पार करने के लिये नौका मँगवाई। नौका शिशुचन्द्र के समान थी। वह दस वर्ष में बन कर तैयार हुई थी और साल की लकड़ी से तैयार हुई थी। उसके तख्ते और अन्य सामग्री बड़ी सुन्दरता से जड़ी हुई थी। बादशाह उस लकड़ी के गृह में बैठ गया। नौका चल दी। मल्लाहों के नारों से लहरों में कंपकंपी पैदा हो जाती थी। मल्लाहों ने नौका को तेजी से खे कर दूसरे घाट पर पहुंचा दिया। (१४५-१४८)

बादशाह उतर कर पुत्र के दरबार में पहुँचा। पुत्र दौड़ कर पिता से लिपट गया। दोनों की आँखों से आँसू बहने लगे। जब कुछ होश आया तो दोनों एक दूसरे से राज सिंहासन पर बैठने का आग्रह करने लगे। कोई भी राज सिंहासन पर बैठने के लिये उद्यत न होता था। (१४६)

जब पिता ने देखा कि पुत्र उसके आदर सम्मान के कारण राज सिंहासन पर नहीं बैठता तो उसने कहा कि, 'मेरे हृदय में एक इच्छा बहुत दिनों से है। मैं तुझे अपने हाथ से राज सिंहासन पर बैठाना चाहता हूं, क्योंकि जब तू ने राज मुकुट धारण किया था, उस समय मैं न था जो तेरी सहायता करता।" यह कह कर पुत्र का हाथ पकड़ा और उसे राज सिंहासन पर बैठा दिया। स्वयं हाथ बाँध कर खड़ा हो गया। इस प्रकार यह सिद्ध कर दिया कि राज सिंहासन के सम्मान के कारण पिता को भी अपने पुत्र के सामने खड़े होने में सकोच न करना चाहिये। पिता की आज्ञा का पालन करने के पश्चात् कैकुबाद तुरन्त राज सिंहासन से उतर आया। दरबार के अमीरों ने दोनों बादशाहों पर सोना, चाँदी, मोती, जवाहिरात लुटाये। तत्पश्चात् पिता नौका में बैठ कर अपने शिविर की ओर चला गया। (१५०-१५१)

दूसरे दिन पुत्र ने पिता की सेवा में बड़े सुन्दर और बहुमूल्य घोड़े भेजे। वे सब के सब ताज़ी नस्ल के थे। उनका रूप रंग, चाल ढाल, सजावट, सब देखने के योग्य थी। (१५१-१५८)

रात में पुत्र ने बड़े समारोह से प्रीति भोज किया। एक ओर मोम बत्तियाँ अपनी छटा दिखा रही थी तो दूसरी ओर दीपकों के प्रकाश से प्रत्येक वस्तु जगमग जगमग कर रही थी। विशेष प्रकार की मदिरा का प्रबन्ध किया गया था। वह बड़ी सुन्दर सुराहियों में भरी हुई थी। मदिरा के भरे प्याले को देख कर ही लोग मूर्च्छित हो जाते थे। साकी की सुन्दरता तथा चपलता ने सभी को मूर्च्छित कर दिया था। महफिल में जो चग और रबाब बजाने के लिये लाये गये थे, वे भी विशेष कर बड़ी होशियारी से तैयार कराये गये थे। गायकों की मधुर तानें तथा नर्तकियों के नृत्य से समारोह की शोभा और भी बढ़ गई थी। भोजन के लिये नाना प्रकार की वस्तुएँ पकवाई गई थी। भिन्न-भिन्न प्रकार की रोटियाँ, समोसे, पुलाव, दुम्बे का मास, जिसमें चिकनाई भरी हुई थी, बटेर, तेहू, दुर्राज के मास तथा भिन्न-भिन्न प्रकार के हलवे तैयार कराये गये थे। पान के बीड़े की तो प्रशंसा ही असम्भव है। पिता ने पुत्र को लखनौती का बहुमूल्य सिंहासन और जड़ाऊ राज मुकुट दिया था, जोकि उसके सिर पर बड़ी ही शोभा दे रहा था। पिता ने पुत्र को हाथी और अनेक उपहार भी दिये। इस प्रकार यह समारोह रात भर बड़ी शान से होता रहा[१]। (१५६-१६३)

१ यह भेंट जमादी उल अव्वल ६८७ हि० के अन्त (जून १२८८ ई० के अन्त) के लगभग हुई होगी।

उपहार भेंट करने के उपरान्त नासिरुद्दीन ने पुत्र से प्रार्थना की कि "मेरी इच्छा है कि तेरे पास मेरे पिता की यादगार के तौर पर जो दो चीजें हैं उन्हें तू मुझे दे डाल। एक तो सफ़ेद चत्र दूसरे काली टोपी। पहले इन्हें तू अपने सिर पर रख फिर मुझे प्रदान कर दे।" कैकुबाद ने दूसरे दिन पिता की यह इच्छा भी पूरी करदी। जो व्यक्ति इन वस्तुओं को लाया था, सुल्तान ने उसे बड़े बहुमूल्य उपहार दिये। दूसरी रात में फिर पिता और पुत्र की भेंट हुई। पुत्र ने बड़े समारोह से जश्न का प्रबन्ध किया था। संगीत, नृत्य, मदिरा, सभी का प्रबन्ध था। दोनों ने थोड़ी-थोड़ी मदिरा पी। तत्पश्चात् कुछ वार्त्तालाप के उपरान्त पिता ने पुत्र को परामर्श दिया कि "हे पुत्र! युवावस्था पर गर्व न करना चाहिये। निर्बलों को कभी न सताना चाहिये। यदि कोई क्षमा याचना करे तो उसे प्रदान कर देना चाहिये। (१९३-२०६) अपने मित्रों पर दया दृष्टि रखनी चाहिये। अपने दोस्त दुश्मन को पहचानना चाहिये। सर्वदा न्याय करते रहना चाहिये। लोगों पर नेकी करना आवश्यक है। इतना मदिरापान न करना चाहिये जिससे होश हवास शेष न रहे।" (२०३-२१०)

कैकुबाद तथा बुगरा खाँ की विदा

इन समारोहों के पश्चात् विदा का समय आ पहुँचा। जाने से पूर्व पिता और पुत्र दोनों फिर मिले। उस समय एकान्त था। राज्य व्यवस्था के विषय में भी कुछ गूढ़ बातें हुई। पिता ने पुत्र को समझाया कि "अमुक व्यक्ति तेरे राज्य के उपवन में विष भरा काँटा है, उसको शीघ्रातिशीघ्र दूर कर दे। अमुक व्यक्ति को परामर्श के लिए नियुक्त कर।" पुत्र ने पिता की नसीहत कान खोल कर सुनी। अन्त में दोनों गले मिल कर आँसू बहाते हुये विदा हुए। उधर पिता की नौका चली इधर पुत्र चिल्ला चिल्ला कर रोने लगा। जब नौका आँखों से ओझल हो गई तो घोड़े पर सवार होकर अपने शिविर में आया। खेमे के परदे गिरवा दिये। लोगों का आना जाना बन्द करा दिया और पिता को याद करके रोता रहा। (२११-२१६)

अब वर्षा भी आरम्भ हो गई थी। आकाश पर घटा छाई रहती थी। जंगल हरा भरा हो रहा था। धान के खेत लहलहाने लगे थे। बागों में आमों की बहुतायत थी। नदी नाले चढ़ते जा रहे थे। मार्ग में पानी भर चुका था। लश्कर के ऊँट, घोड़ों को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा था। यद्यपि घास तो बहुत मिल जाती थी किन्तु दाना बड़ी कठिनाई से प्राप्त होता था। लश्कर गंगा तट पर पहुच गया। गंगा को पार करके कूच करता हुआ देहली पहुँचा। बादशाह के वापस लौटने की खुशी में बड़े समारोह से जश्न हुये। (२१६-२२१)

बादशाह ने खानजहाँ को, जोकि हातिम से बढ़ कर था, कन्तपुर के स्थान पर अवध की अक्ता प्रदान की। अमीर खुसरो जो इससे पूर्व उसका सेवक था, उसकी दानशीलता से प्रभावित होकर उसके साथ रुक गया, और दो वर्ष तक उसके साथ रहा। उसकी माता दिल्ली में ही थी और उसे बार बार बुलाती थी। अन्त में अपने स्वामी से आज्ञा लेकर वह जीलाद में देहली पहुँचा। उसकी माता उसे देख कर बड़ी प्रसन्न हुई[1]। (२२१ २२२)

दो ही दिन बाद बादशाह को जब अमीर खुसरो के आने की सूचना मिली तो उसने हाजिब भेज कर उसे बुलवाया। बादशाह ने उसे बहुत ही सम्मानित किया, और प्रसन्न होकर उससे कहा कि, वह उसके पिता की भेंट के विषय में एक कविता लिखे, जिसमें उसे पिता के विलाप के दुःख से कुछ शान्ति प्राप्त हो। तत्पश्चात् बहुत कुछ इनाम इकराम दिया। कविता लिखने के लिये उसने सबसे मिलना जुलना छोड़ दिया। तीन महीने के भीतर कविता को रूप

१ जीक़ाद ६८७ हि० (दिसम्बर १२८८ ई०)।

रेखा तैयार हो गई। तीन महीने उसको लिखवाने और बादशाह के पढने योग्य बनाने में लग गये। छ महीने में रमजान ६८८ हि० (सितम्बर अक्तूबर, १२८६ ई०) में कविता बिल्कुल तैयार हो गई[1]। उस समय उनकी अवस्था ३६ वर्ष की थी। (२२१-२२५)

अन्त में खुसरो ने लिखा है कि इस कविता में उसने ३९४४ छन्द लिखे हैं। "मैंने प्रारम्भ मे इन्हे गिना न था, इस कारण इसमें कमी करली गई और मेरी सम्पत्ति में कमी कर ली गई।" इनके लिखने में मैंने बड़ा परिश्रम किया है। मुझे बादशाह ने बहुत इनाम देने का वचन दिया था, किन्तु मैंने यह कविता धन सम्पत्ति के लोभ से नही लिखी है। मैंने इसमें जो बाते लिखी हैं, वे सब की सब मेरी देखी हुई हैं। मैं जानता हूँ कि लोग मेरी नकल कर लेते हैं, और मुझ ही से चाहते हैं कि मैं उनकी प्रशसा करूँ। जो लोग मेरी कविता में त्रुटि निकालते हैं, वे भी मेरी योग्यता का लोहा मानते है। बहुत से ईर्ष्या रखने वाले मुझ से जलते रहते हैं। मैंने जो कुछ इस कविता मे लिखा है, वह शायरी नही, अपितु सभी बातें सच सच लिख दी हैं। मुझे किसी का भय नही है। मैंने अपने समकालीनो मे भी किसी बात की इच्छा न रखी। वे सब के सब तुच्छ तथा अधम है किन्तु मेरी कविता सर्वदा जीवित रहेगी।"

छन्द

कविता की इति हुई, ईश्वर ने इसे ऐसा बनाया है कि सभी इसे स्वीकार करते हैं।
ईश्वर करे कि यह कयामत तक शेष रहे और इसका अन्त न हो। (२२५-२२६)

---

१ इस प्रकार इस कविता का लिखना मई १२८६ ई० में प्रारम्भ किया गया होगा।

भाग स

बाद के कुछ मुख्य इतिहासकार

एसामी

(क) फुतूहुस्सलातीन

इब्ने बतूता

(ख) यात्रा का वर्णन

एसामी

फ़ुतूहुस्सलातीन का लेखक, एसामी के नाम से प्रसिद्ध है। उसके पूरे नाम का पता न चल सका है। उसके पूर्वजों में से सर्व प्रथम जो देहली में आया उसका नाम फखरुलमुल्क एसामी था। वह अब्बासी खलीफ़ाओं का वजीर रह चुका था। खलीफा से किसी बात पर रुष्ट होकर उसने अपने सम्बन्धियों तथा मित्रों को लेकर मुल्तान की ओर प्रस्थान कर दिया। इनमें से कुछ मुल्तान में रह गये, और कुछ देहली पहुँचे। सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश ने उसका बडा सम्मान किया और उसे अपना मन्त्री नियुक्त कर दिया[1]। उसका एक पुत्र सद्रुलकिराम एसामी सुल्तान नासिरुद्दीन के राज्य-काल में जहीरुल ममालिक तथा वकीलदर नियुक्त हो गया था।[2] सद्रुलकिराम एसामी का पुत्र सिपहसालार इज्जुद्दीन एसामी सुल्तान बल्बन के राज्य-काल में खास हाजिब तथा बहुत बडा विश्वासपात्र होगा।[3] बाद में वह बल्बन ही के राज्य-काल अथवा खलजी शासन काल में सिपेहसालार नियुक्त हुआ होगा। लेखक का जन्म ७११ हि० (१३११-१२ ई०) के लगभग हुआ था। उसने अपनी बाल्यावस्था के सोलह वर्ष अपने दादा इज्जुद्दीन की संरक्षता में व्यतीत किये। जब सुल्तान मुहम्मदशाह बिन तुगलक शाह ने दौलताबाद को बसाना प्रारम्भ किया, तो एसामी भी अपने दादा के साथ अन्य अमीरो की भाँति दौलताबाद गया किन्तु पहली ही मंजिल में उसके दादा की, जो ६० वर्ष का हो चुका था, मृत्यु हो गई।[4] ऐसा मालूम होता है कि उस समय से ७५१ हि० (१३५०-५१ ई०) तक एसामी दौलताबाद ही में रहा। ७५१ हि० में उसने फ़ुतूहुस्सलातीन की रचना समाप्त की। इस समय उसकी अवस्था ४० वर्ष की थी।[5]

एसामी ने फ़ुतूहुस्सलातीन को फिरदौसी के शाहनामे की भाँति कविता में लिखा है। शाहनामे में आदम से लेकर महमूद गजनवी तक का हाल लिखा गया है। एसामी ने महमूद गजनवी से ७५१ हि० तक का इतिहास लिखा है। एसामी की यह पुस्तक बडी ही महत्त्वपूर्ण है। ऐसा ज्ञात होता है कि बहुत सी पुस्तकें, जो फुतूहुस्सलातीन लिखते समय एसामी के पास थीं, अब अप्राप्य हैं। उसने जिन घटनाओं का वर्णन किया है, उनके विषय में उसे अपने दादा से भी बडी सहायता मिली होगी। मुहम्मद तुगलुक के राज्य-काल के विषय में उसने जो कुछ लिखा है, वह उसकी अपनी जानकारी पर अवलम्बित है। देहली से दौलताबाद तक की यात्रा में वह स्वयं सम्मिलित था। मुहम्मद तुगलक के विरुद्ध दक्षिण के विद्रोह के समय वह दौलताबाद ही में होगा। इस प्रकार उसे दक्षिण की समस्त बातो का पूर्ण ज्ञान था। इसके अतिरिक्त उसने देहली के सुल्तानो के विषय में जो लिखा है, वह भी बडा महत्त्वपूर्ण है क्योकि उसने अनेक ऐसी घटनाओ का उल्लेख किया है जिनके विषय में हमें किसी स्थान से कोई जानकारी प्राप्त नही होती। फुतूहुस्सलातीन सर्व प्रथम डा० महदी हुसेन ने आगरे से प्रकाशित कराई थी। किन्तु अब ए० एस० उशा० ने मद्रास विश्वविद्यालय से १९४८ ई० में इस पुस्तक का एक बडा अच्छा संस्करण प्रकाशित करा दिया है। अनुवाद इसी संस्करण से किया गया है।

१ फ़ुतूहुस्सलातीन (मद्रास यूनिवर्सिटी १९४८ ई०) पृ० १२७-१२८

२ वही पृ० १२७, १२८

३ बरनी पृ० ३२

४ फ़ुतूहुस्सलातीन पृ० ४४६ ४५०

५ वही ६१६-६१८

फ़ुतूहुस्सलातीन

कुतुबुद्दीन ऐबक के सिंहासन पर विराजमान होने के ३-४ वर्ष उपरान्त ऐबक तथा यलदुज में युद्ध हुआ। यलदुज गजनी से और ऐबक लाहौर से चला और पंजाब के दूसरे अन्त पर युद्ध हुआ। किन्तु यलदुज किर्मान की ओर भाग गया। ऐबक ने गजनी पहुंच कर वहाँ के राज सिंहासन पर अपना अधिकार जमा लिया किन्तु यलदुज ने किर्मान से पहुँच कर उसे परास्त कर दिया। ऐबक को गजनी से भागना पड़ा। (१०४) वह भाग कर लाहौर पहुंचा, किन्तु थोड़े ही दिन पश्चात् चौगान खेलते समय घोड़े से गिर कर उसकी मृत्यु हो गई। (१०५)

उसके उपरान्त उसका पुत्र आरामशाह लाहौर का बादशाह हो गया किन्तु कुछ ही दिन बाद वह संसार से चल बसा और राज सिंहासन रिक्त हो गया। यलदुज को जब यह समाचार मिला तो उसने एक सेना भेज कर लाहौर पर अधिकार जमा लिया। उसने इल्तुतमिश के पास एक चत्र भेजा जिसमें मोती जड़े थे और उसे लिख दिया कि 'लाहौर तक मेरे राज्य की सीमा रहेगी। तू हिन्दुस्तान से समुद्र तक आक्रमण कर सकता है।' शम्सुद्दीन ने यह बात स्वीकार करनी निश्चय करली थी, किन्तु उसी समय ख्वारज़्म की सेना ने गजनी पर आक्रमण कर दिया और यलदुज को गजनी से लाहौर आना पड़ा। (१०५-१०७)

शम्सुद्दीन इल्तुतमिश का राज्य

कुतुबुद्दीन ऐबक की मृत्यु के उपरान्त उसने एक सप्ताह पश्चात् बदायूँ से देहली पर आक्रमण करके उसे अपने अधिकार में कर लिया। उस समय देहली केवल एक परगना था। वहाँ का क़िला तथा वहाँ की सुन्दरता देख कर उसने वही स्थान अपनी राजधानी बना लिया। यह घटना ६०७ हि० में घटी। (१०८) राज्य प्राप्त करने के उपरान्त उसे सूचना मिली कि यलदुज उस पर आक्रमण करने के लिये बढ़ रहा है। उसने तुरन्त सेना एकत्र करके लाहौर की ओर प्रस्थान कर दिया और तरायन की सीमा पर पहुँच गया। (१०९) यलदुज ने अपने दूत इल्तुतमिश के पास भेजे और कहलवाया कि 'मैं ईरान के बादशाह के पुत्र के स्थान पर हूं। तू बादशाह के दासों का दास है। तुझे मुझसे युद्ध नहीं करना चाहिये।' शम्सुद्दीन ने उत्तर भेजा कि 'राज्य वंशागत नहीं प्राप्त होता। वह तग़ल्लुब[१] के अनुसार मिलता है। (११०) तूने ही मुझ से जो निश्चय किया था उसके विरुद्ध आचरण करना प्रारम्भ कर दिया है। अब भी संधि करके तू लाहौर चला जा और मैं हिन्दुस्तान। दोनो एक दूसरे को उपहार भेजते रहें।' (१११) यलदुज ने स्वीकार न किया और युद्ध करने के लिये बढ़ा किन्तु हाँसी के स्थान पर उसकी पराजय हुई और वह बन्दी बना लिया गया तथा सुल्तान की सेवा में उपस्थित कर दिया गया।

यलदुज को बदायूँ के क़िले में बन्दी बना दिया गया और उसने स्वयं कुबाचा पर आक्रमण करने के लिये तरायन से मुल्तान की ओर प्रस्थान किया। जब वह रावी के निकट पहुँच गया तो कुबाचा को भी युद्ध के लिये तैयार होना पड़ा। (११२) कुबाचा नदी पार करते हुये डूब कर मर गया हिन्दुस्तान के बादशाह को यह सूचना तुरन्त भेज दी गई। इस प्रकार मुल्तान तथा लाहौर दोनों ही सुल्तान को प्राप्त हो गये। (११३)

१ शक्ति।

सुल्तान शम्सुद्दीन के देहली में सिंहासनारूढ़ होने के उपरान्त अनेक आबिद (उपासक) सैयिद, धर्म निष्ठ तथा कलाकार देहली पहुँचे। (११४) उसने शहर देहली में एक जामा मस्जिद बनवाई। उसके बाहर "हौज़े शम्सी" नामक एक हौज़ बनवाया। उस मस्जिद की मीनारें स्वर्ग में तूबा[1] के समान थी। उसने उसके निकट एक किला भी बनवाया। (११५)

कहा जाता है कि उसके राज्य-काल में नागौर के हमीदुद्दीन[2] नामक सूफी दिल्ली आये। वे रात-दिन समा[3] सुना करते थे और इसी में मस्त रहते थे। जब उन्हें होश आता तो वे बादशाह की सेवा में उपस्थित होते। बादशाह उनका बड़ा आदर सम्मान करता था। इस पर साद तथा एमाद नामक दो मुफ्तियों[4] ने उनकी आलोचना करते हुये सुल्तान से निवेदन किया कि यह कार्य शरा के विरुद्ध है और उन्होंने सुल्तान को परामर्श दिया कि काज़ी को बुलवाया जाय, जिससे वाद विवाद करके शरा के विरुद्ध जो कार्य हो रहा है उसे रोक दिया जाय। बादशाह ने वाद विवाद के लिये काज़ी हमीदुद्दीन को बुलवाया। काज़ी हमीदुद्दीन ने कहा कि अहलेकाल (आलिमों) के लिये समा हराम[5] है किन्तु अहलेहाल[6] के लिये हलाल[7] है। काज़ी ने इसके उपरान्त कहा कि "हे बादशाह! एक रात्रि में बग़दाद में एक खानकाह में ४० फकीर समा कर रहे थे। उस महफिल में मैं भी था और हे शाह! तू भी था। मै अन्य सूफियों के साथ समा सुन रहा था तथा नृत्य कर रहा था, किन्तु तू केवल बालक होने के कारण बिना किसी के कहे मोमबत्ती का गुल काटता था। उसी रात्रि में सूफियों की सेवा के फलस्वरूप तुझे हिन्दुस्तान का राज्य प्राप्त हुआ।" बादशाह को वह रात्रि याद आ गई और वह काज़ी के पैरों पर गिर पड़ा, किन्तु साद तथा एमाद ने परीक्षा के लिये आग्रह किया। काज़ी हमीदुद्दीन ने महमूद नामक अपने कव्वाल को बुलवा कर गज़लें गाने का आदेश दिया। काज़ी मूर्च्छित होकर नृत्य करने लगे। उन लोगो ने काज़ी के पैर के नीचे काँटे तथा अँगारे डाल दिये किन्तु काज़ी को पता भी न चला। जब कव्वाल चुप हो गया तो साद तथा एमाद ने काज़ी का बड़ा आदर सम्मान किया। (११८-११६)

क़ाज़ी ने अपनी खानकाह में रात्रि में फिर समा करवाया। समा के प्रभाव से सब लोग रात भर नृत्य करते और इतने मूर्च्छित हो गये कि किसी को होश न रहा। जब प्रातःकाल की नमाज के लिये अज़ान हुई तब कहीं जाकर सब लोग होश में आये।

सुल्तान ने ग्वालियर पर आक्रमण करके उसे अपने अधिकार में कर लिया। उसके एक दो महीने उपरान्त रणथम्भोर पर अधिकार जमाया। वहाँ रावते अर्ज़ को छोड़ दिया।

---

१ स्वर्ग का एक वृक्ष

२ काज़ी हमीदुद्दीन नागौरी का पूरा नाम शेख मुहम्मद इब्ने अता था। वे मुइज़्ज़ुद्दीन मुहम्मद बिन (पुत्र) साम के राज्य काल में बुखारा से देहली पहुँचे और नागौर के काज़ी बना दिये गये। उनकी मृत्यु १२४६ ई० में हुई।

३ वह संगीत जिसे सूफी ईश्वर की याद में मस्त रहने के लिये सुना करते हैं। चिश्ती सिलसिले के सूफी विशेषकर समा सुनते हैं। कट्टर आलिम इसे शरा के विरुद्ध बताते रहे हैं और उनका सूफियों से इस विषय पर सर्वदा वाद-विवाद हुआ करता था। सूफी समा को आत्मा की शुद्धि के लिये भी परमावश्यक समझते हैं। समा सुनते सुनते वे भगवान् की याद में मूर्च्छित होकर नाचने लगते हैं और उन्हें किसी बात की सुध-बुध नहीं रहती।

४ न्याय विभाग के अधिकारी जो क़ाज़ियों को शरा के आदेश बताते थे।

५ वह बात जिसकी शरा से आज्ञा न मिली हो।

६ सूफी मत।

७ स्वीकृति।

मुल्तान शम्सुद्दीन के राज्य-काल में कुछ मुलहिदों ने जुमा मस्जिद में प्रविष्ट होकर मुल्तान की हत्या कर देने तथा शहर पर अधिकार जमा लेने का प्रयत्न किया किन्तु उन्हें सफलता न हुई और चारो ओर से लोगों ने एकत्र होकर विद्रोह शान्त कर दिया।

एक दिन चीन के व्यापारियों ने अनेक बहुमूल्य वस्तुओं के साथ चालीस तुर्क दास भी प्रस्तुत किये। इनमें से सुल्तान ने एक को स्वीकार न किया। उसका नाम बल्बन खुर्द (छोटा) था। उसे उसकी योग्यता से भय था। उसे बाद में कमाल जुनैदी वजीर ने जो बडा बुद्धिमान था, मोल ले लिया। जब वह शाह के समक्ष प्रस्तुत हुआ तो वह उसके भाग्य को देख कर चकित रह गया। उसने उसे पायगाह की सेवा सौंप दी और वह घोडो की सेवा करने लगा। कुछ दिन उपरान्त तुर्कों ने सुल्तान से कहा कि 'एक तुर्क को इस प्रकार का निम्न कार्य देना उचित नहीं।' वहाँ से हटा कर सुल्तान ने उसे शिकरो की देखभाल सौंप दी। एक दिन वह बाजार में जा रहा था। वहाँ एक वृद्ध खूसट बैठा था। वह आवाज लगा रहा था कि "कौन एक दुकानी में (पैसे में) हिन्दुस्तान का राज्य मोल लेना चाहता है ?" बल्बन के पास उस समय कोई दाँग (पैसा) न था। (१२३) घर पहुंचकर उसने दाँग का प्रबन्ध किया और उस वृद्ध को लाकर दे दिया। उसने कहा "हिन्दुस्तान के राज्य की कुंजी ले लो।" कुछ ही समय उपरान्त सुल्तान ने शिकरो की सेवा का कार्य उससे लेकर अमीर शिकार नियुक्त कर दिया। कुछ समय पश्चात् वह सुल्तान का बहुत बडा विश्वासपात्र हो गया। (१२०-१२३)

सुल्तान के ज्येष्ठ पुत्र की ६२६ हि० (१२२८-२९ ई०) में मृत्यु हो गई। इसके डेढ वर्ष पूर्व उसे लखनौती का शासक बना दिया गया था। (१२४-१२५) ६३१ हि० (१२३३-३४ ई०) में सुल्तान शम्सुद्दीन ने भिलसा पर आक्रमण किया। उस पर अधिकार जमा कर उसने उज्जैन पर आक्रमण करके वहाँ के मन्दिरो को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया और हिन्दुओ की हत्या करदी। (१२६-१२८) ६३३ हि० (१२३५-३६ ई०) में सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु हो गई। उसके स्थान पर उसका पुत्र सुल्तान रुक्नुद्दीन फीरोजशाह राज सिंहासन पर आरूढ हुआ। वह ३-४ मास पश्चात् ही से दुराचार में पड गया और राज कोष का धन व्यर्थ में नष्ट करने लगा। अत तुर्क अमीरो ने ६३५ हि० (१२३७-३८ ई०) में सुल्तान की सुपुत्री रजिया को बादशाह बना दिया। तीन वर्ष राज्य करने के उपरान्त उसने परदा त्याग दिया। वह हाथी तथा घोडे पर सवार होने लगी। ६ मास इसी प्रकार व्यतीत हो गये। एक हब्शी गुलाम उसके हाथ पकड कर घोडे पर उसे सवार कराता था। उसका नाम याकूब था। वह अमीर आखुर था। अन्य अमीर इस बात से असन्तुष्ट हो गये। जमादी-उल-आखिर ६३७ हि० (दिसम्बर जनवरी १२३९-४० ई०) में उसे राज सिंहासन से पृथक् करके तबरहिन्दा में बन्दी बना दिया गया और मुइज्जुद्दीन बहरामशाह को राज सिंहासन पर बैठा दिया गया। (१२९-१३६) अल्तूनिया ने १½ वर्ष पश्चात् रजिया को कैद से निकाल कर उससे विवाह कर लिया। दोनो ने पुन देहली पर चढाई की। सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने बल्बन खुर्द को सेनापति बना कर उन से युद्ध करने को भेजा। रजिया हार कर तबरहिन्दा की ओर भाग गई। बल्बन राजधानी को लौट आया। ३-४ मास उपरान्त रजिया ने पुन आक्रमण किया और बल्बन युद्ध करने के लिए भेजा गया। इस बार भी वे सफल न हो सके। ६३८ हि० (१२४०-४१ ई०) में दोनो की कैथल में हिन्दुस्तान के एक दल ने हत्या कर दी। (१३४-१४२)

तुर्क अमीरो ने ६३९ हि० (१२४१-४२ ई०) में मुइज्जुद्दीन को भी राज सिंहासन से हटा दिया और अलाउद्दीन मसऊदशाह को राज सिंहासन पर बैठा दिया। मुइज्जुद्दीन बहरामशाह की कैद में हत्या कर दी गई। उसने चार वर्ष तक राज्य किया। ६४४ हि०

(१२४६-४७ ई०) में सुल्तान नासिरुद्दीन को बहराइच से लाकर राज सिंहासन पर बैठाया गया। ६५६ हि० (१२५८ ई०) में मुग़लों ने उच्च तथा मुलतान पर आक्रमण किया। सुल्तान ने बल्बन युर्द को, जिसने अपनी पुत्री का विवाह सुल्तान से कर दिया था और सुल्तान ने जिसे उलुग़ ख़ाँ की पदवी दे दी थी, लश्कर का सरदार बना कर उनसे युद्ध करने के लिए भेजा। शाही सेना सिन्धु नदी के तट पर पहुँच गई और एक सप्ताह तक मुग़लों की प्रतीक्षा देखती रही। मुग़ल जब वहाँ पहुँचे तो वे पराजित हो गये। सुल्तान ने मुलतान के चारों ओर सेनायें भेज कर समस्त विरोधियों को कठोर दण्ड दिये। ६५७ हि० (१२५८-५९ ई०) में सुल्तान के एक पुत्र का जन्म हुआ। इसी समय उच्च तथा मुलतान से एक दूत ने आकर सुल्तान में बल्बन उर के विद्रोह करने की सूचना दी। सुल्तान ने उलुग़ ख़ाँ को विद्रोह के दमन हेतु मुलतान की ओर भेजा। बल्बन उर मुल्तान से भाग गया। कुछ समय उपरान्त उलुग़ ख़ाँ भी देहली पहुँच गया। (१२५-१५५)

मुलतान से देहली लौटने के कुछ समय उपरान्त उलुग़ ख़ाँ ने बीमारी का बहाना कर दिया। उसकी यह आकांक्षा हुई कि सुल्तान उसे सफ़ेद रंग का छत्र प्रदान कर दे। दो तीन दिन तक वह दरबार में न गया। सुल्तान ने अपने हाजिब को उसके पास भेजा। उलुग़ ख़ाँ ने हाजिब से कहा कि 'मेरी महत्वाकांक्षा यह है कि सुल्तान मुझे एक सफ़ेद छत्र प्रदान कर दे।" जब सुल्तान को यह ज्ञात हुआ तो उसने उलुग़ ख़ाँ के पास यह सूचना भेजी कि, "तू तुरन्त मेरे पास चला आ। मैं तुझे अपना छत्र प्रदान कर सकता हूँ।' दूसरे दिन उलुग़ ख़ाँ छत्र प्राप्त करके सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ। (१५६-१५८)

कहा जाता है कि मलिक क़ुतुबुद्दीन हसन ग़ोरी ने, जो कि उस समय दरबार में उपस्थित था, उलुग़ ख़ाँ की खिल्ली उड़ाने के लिये एक ऐसी बात कही जिससे उलुग़ ख़ाँ उससे रुष्ट हो गया और रात-दिन उससे बदला लेने के उपाय सोचने लगा। एक दिन बादशाह ने दरबार किया। उलुग़ ख़ाँ ने अपने कुछ लोगों को महल के द्वारों पर खड़ा कर दिया और उन्हें आदेश दे दिया कि जब क़ुतुबुद्दीन हसन दो द्वारों के बीच में आये तो आगे पीछे से उस पर आक्रमण करके उसका सिर काट लिया जाय। जब क़ुतुबुद्दीन हसन दरबार की ओर चला और दो द्वारों के बीच में पहुँचा तो उलुग़ ख़ाँ के आदमियों ने उसका सिर काट डाला। (१६०) जब बादशाह ने उलुग़ ख़ाँ से पूछा कि 'यह शोर कहाँ हो रहा है।' तो उसने उत्तर दिया कि "राज्य के उद्यान में जो काँटा था वह पृथक् हो गया।" जब सुल्तान को क़ुतुबुद्दीन हसन की हत्या की सूचना मिली तो वह बड़ा दुःखी हुआ।

कहा जाता है कि नासिरुद्दीनशाह के दो पुत्र थे। वे दोनों अवस्था में उलुग़ ख़ाँ के पुत्रों के बराबर थे। चारों एक साथ खेला करते थे। जब वे बालिग़ हो गये तो भी इसी प्रकार साथ रहते थे। एक दिन चारों प्रातःकाल एक उद्यान में कुछ मदिरा तथा भोजन सामग्री लेकर पहुँच गये। दो-तीन प्याला मदिरा पीने के पश्चात् उलुग़ ख़ाँ के पुत्रों ने कहा कि "हमारे पिता के समान कोई भी बुद्धिमान नहीं है।" शाहज़ादों ने उत्तर दिया कि "उलुग़ ख़ाँ बड़ा ही अनुभवी है किन्तु हम लोग युक्ति से उसे घोड़े से उतार सकते हैं।" ख़ान के पुत्रों ने कहा "यदि ख़ान घोड़े से उतर जायेगा तो हम ८० सोने के दीनार दे देंगे, नहीं तो तुम्हें देने पड़ेंगे।" दूसरे दिन जब ख़ान शाहज़ादों के साथ घोड़ा दौड़ाते हुये मैदान में पहुँचा तो शाहज़ादों ने दो तीन बार उसके साथ घोड़ा दौड़ाया और उसके उपरान्त अपना कोड़ा घोड़े से नीचे फेंक दिया। ख़ान ने घोड़े से उतर कर कोड़ा उठा कर शाहज़ादों को दे दिया। शाहज़ादों ने लौट कर ख़ान के पुत्रों से ८० सोने के दीनार माँगे। ख़ान के पुत्रों ने अपने पिता के पास उपस्थित

होकर सब हाल कहा और उससे दीनार माँगे। खान ने जब यह हाल सुना तो वह बडा दुखी हुआ और अपने हृदय में सोचने लगा कि इसी प्रकार शाहज़ादे किसी न किसी दिन उसे बन्दी बना कर उसकी हत्या कर देंगे। उस समय तो उसने अपने पुत्रों को ८० सोने के दीनार दिलवा दिये किन्तु रात-दिन शाहजादों की हत्या कर देने के विषय में सोचने लगा। ६६५ हि० (१२६६-६७ ई०) में उसने बादशाह को फुक्का[1] में विष दिला दिया। (१६१-१६३)

गयासुद्दीन बल्बन

मैंने हिन्दुस्तान के वृद्ध लोगों से सुना है कि नासिरुद्दीन के पश्चात् उलुग खान ६६५ हि० (१२६६-६७ ई०) में गयासुद्दीन के नाम से बादशाह हुआ। सिंहासनारोहण के दूसरे वर्ष उसने चित्तौड पर आक्रमण किया। छठे वर्ष लाहौर पर आक्रमण किया। देहली के आस पास के जंगल कटवा डाले। गोपालगिरि का किला और अन्य किले निर्मित कराये। आठवें वर्ष एक बहुत बडी दुर्घटना हुई। (१६४)

लखनौती की अक्ता के स्वामी तुगरिल ने, जो एक तुर्क दास था, विद्रोह कर दिया। बल्बन ने तुरमती को उससे युद्ध करने के लिए भेजा। तुगरिल के राज्य की सीमा पर तुरमती तथा तुगरिल का युद्ध हुआ, तुरमती अवध की ओर भाग निकला। (१६५) जब बल्बन को देहली में यह समाचार मिला तो उसने तुरमती को अवध के द्वार पर वध करा दिया। तत्पश्चात् बहादुर को लखनौती की ओर भेजा। जब वह निहुत पार करके लखनौती की सीमा पर पहुंचा तो तुगरिल भी युद्ध के लिए आया। (१६६)

बहादुर ने बडी वीरता से मुकाबिला किया, किन्तु तुगरिल ने उसे भी परास्त कर दिया। उसकी पराजय का समाचार पाकर ६७० हि० (१२७१-७२ ई०) में सुल्तान बल्बन अवध होता हुआ लखनौती की ओर रवाना हुआ। (१६७-१६८) तुगरिल सुल्तान के पहुँचते ही भाग निकला। वह एक नहर के किनारे अपना शिविर लगाये था, कि बल्बन के भेजे हुये अली नामक एक वीर ने कटार मार कर तुगरिल की हत्या करदी। तुगरिल का शिविर लाल रंग का था। कहा जाता है कि बल्बन ने अली को तुगरिलकुश की उपाधि प्रदान कर दी। दो तीन मास लखनौती की राज्य व्यवस्था ठीक करने के पश्चात् वह अपने पुत्र बुगरा खाँ को लखनौती प्रदान करके देहली वापस चला आया। (१६९-१७०)

कहा जाता है कि सुल्तान ने अपने ज्येष्ठ पुत्र को आरम्भ ही में कआन मलिक की पदवी प्रदान करके मुल्तान की ओर भेज दिया था। उसके कारण मुगल, जोकि अभी तक हिन्दुस्तानी सेना पर विजय प्राप्त कर लिया करते थे, पराजित होने लगे। जिस वर्ष उसकी मृत्यु हुई, उससे पूर्व सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन कुछ बीमार हो गया था और उसने मुहम्मद को मुल्तान से बुलवाया। वह जाने की तैयारी कर ही रहा था कि सुमराह लोगों ने विद्रोह कर दिया। मुहम्मद ने जालराल पहुँच कर उन्हें छिन्न-भिन्न कर दिया। (१७४-१७५) इतने में उसे सूचना मिली कि ३० हज़ार मुगल सैनिकों ने धावा कर दिया। लोगों ने उसे परामर्श दिया कि वह स्वयं युद्ध न करे, किन्तु वह न माना। मुहम्मद ने बडी वीरता से मुगलों से युद्ध किया किन्तु वे बहुत बडी संख्या में होने के कारण विजयी हुए और मुहम्मद युद्ध करता हुआ मारा गया। सुल्तान बल्बन को इस समाचार से अत्यन्त दुःख हुआ और उसका रोग बढ़ने लगा। (१७६-१८१)

कहा जाता है कि बल्बन के राज्य-काल में कुछ लोग बन्दी होकर आये। उनमें एक निर्दोष युवक भी था। सबके साथ उसकी भी हत्या करादी गई। उसकी वृद्ध माता राज भवन के चारों ओर चिल्लाती घूमती थी और किसी के प्रयत्न करने पर भी वहाँ से न जाती थी

१ एक प्रकार की जौ की मदिरा।

जब खान शहीद की मृत्यु हो गई तो वह ईश्वर की ओर कृतज्ञता प्रकट करती हुई वहाँ से चली गई और फिर कभी न दिखाई दी। (१८२-१८३)

कैकुबाद

सुल्तान की इस शोक से मृत्यु हो गई। मरने से पूर्व उसने कखुसरो को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था। अमीरो ने सोचा कि 'यदि वह बादशाह बना दिया जाता है तो बुग़रा खा राज सिंहासन पर अधिकार जमाने के लिए देहली पर आक्रमण करेगा और बडा रक्तपात होगा अत उसके पुत्र को बादशाह बनाया जाय।' इस प्रकार अमीरों ने ६८६ हि० (१२८७-८८ ई०)में मुइज्जुद्दीन कैकुबाद को बादशाह बना दिया। (१८४-१८५) सुल्तान ने निज़ामुद्दीन अमीरदाद के कहने से नव मुसलिमों की हत्या करादी। (१८६) बुगरा खाँ को जब सुल्तान ग़यासुद्दीन बल्बन की मृत्यु तथा मुइज्जुद्दीन के सिंहासनारोहण के समाचार मिले तो वह बड़ा रुष्ट हुआ और नासिरुद्दीन की उपाधि धारण करके स्वतन्त्र बादशाह बन गया। तत्पश्चात् उसने एक सेना लेकर अवध की ओर प्रस्थान किया। सुल्तान मुइज्जुद्दीन भी अपनी सेना लेकर सरयू तट पर पहुँच गया किन्तु अन्त में बाप बेटे में सन्धि हो गई और दोनों बादशाह अपनी अपनी राजधानी को लौट गये। (१८८-१९५)

कैखुसरो मुल्तान पहुँच कर वहाँ का शासन प्रबन्ध करने लगा किन्तु दिल ही दिल में कुढता रहता था कि 'मेरे साथ किस प्रकार विश्वासघात हुआ।' कुछ समय पश्चात् कुछ सवारों को लेकर वह मुगलों के राज्य की ओर इस आशय से गया कि उन्हें वह हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने के लिए लाए। (१९६) मुगलो में उस समय परस्पर कोई युद्ध छिडा था। वे दो तीन मास तक टालमटोल करते रहे और इस बीच में जो कुछ उसके पास था, उसे प्राप्त कर लिया और वह किसी न किसी युक्ति से बडी कठिनाई से वहाँ से निकल सका, और हिन्दुस्तान की ओर रवाना हुआ। हिंदौली पहुच कर उसने कुछ सरदार अपने आगे रवाना कर दिये। निज़ामुद्दीन मीर दाद ने यह बात बहुत बढा चढ़ा कर सुल्तान से कही और हिंदौली में कुछ आदमी भेज कर उसकी हत्या करादी। (१९७) किन्तु शीघ्र ही उसे अपने आदेश पर पश्चाताप होने लगा। निजामुद्दीन को जब यह सूचना मिली तो उसने सुल्तान की सेवा में मदिरा में विष मिला कर प्रस्तुत किया किन्तु सुल्तान ने बडी चतुराई से वह मदिरा उसी को पिला दी। (१९७-२००)

फीरोज खलजी का प्रभुत्व

फीरोज खलजी को, जो बादशाह का बहुत बडा भक्त था, कुछ समय उपरान्त पायल की अक्ता प्रदान करके उस ओर भेज दिया। उसके भाई शिहाबुद्दीन को भी उसके साथ भेज दिया। वहाँ पहुँच कर उसने उसे बड़ी अच्छी तरह सुव्यवस्थित किया। कुछ लोगों के बहकाने पर सुल्तान ने आदेश दिया कि उसे बन्दी बना कर लाया जाय। जब वे सुल्तान के समक्ष बन्दी बना कर लाये गये तो सुल्तान ने उन्हें मुक्त कर दिया। (२०१-२०२) सुल्तान ने उसकी पदवी एमादे ममालिक कर दी। उसके सभी सम्बन्धी बडी सलग्नता से उसकी सहायता करने लगे। कोई भी कार्य उसके परामर्श के बिना न होता था। (२०३)

एतिमुर कच्छन अमीर हाजिब और एतिमुर सुर्खा ने फीरोज खलजी के विनाश के लिए एक षड्यन्त्र रचा। अहमद चप खास हाजिब को इसका हाल ज्ञात हो गया कि किस प्रकार उनके विनाश के लिये एक सूची तैयार की गई है। फीरोज खलजी ने भूकल पहाडी पर सेना का अर्ज आरम्भ कर दिया। इतने में हाजिब बार बादशाह का सन्देश लेकर आया। चूँकि फीरोज खलजी को षड्यन्त्र का हाल ज्ञात था अत उसने जाने में देर की। उन्होंने दूसरा

हाजिब भेजा किन्तु वह फिर भी न गया। यह देख कर एतिमुर कच्छन स्वयं फीरोज के पास आया। फीरोज ने अपने जामाता अली द्वारा उसकी हत्या करा दी। इसके पश्चात् फीरोज खलजी ने सुल्तान मुइज्जुद्दीन के पुत्र शम्सुद्दीन क्यूमुर्स[1] को उसके पिता के जीवन ही में बादशाह बना दिया। उसने अपनी पदवी शास्तो खाँ निश्चित की और शिशु सुल्तान क्यूमुर्स का नायब नियुक्त हो गया। (२०४-२०५) उधर कैकुबाद, जो राज सिंहासन से वंचित हो चुका था, अपने महल में बीमार पड़ा था। किसी ने उसे तीन दिन तक भोजन तथा जल भी न दिया। एक तुर्क, जिसके पिता को मुइज्जुद्दीन कैकुबाद ने हत्या करा दी थी, उसका बहुत बड़ा शत्रु था। उसन उसे जामखाने (एक कपड़े) में लपेट कर लात मार मार कर, उसकी हत्या कर दी। (२०३-२०६)

एतिमुर सुर्खा फीरोज से बड़ा द्वेष रखता था। एक दिन फीरोज का पुत्र महमूद भूकल पहाड़ी से सवार होकर किलोखड़ी की ओर गया और क्यूमुर्स को लेकर अपने शिविर की ओर चल खड़ा हुआ। एतिमुर सुर्खा उस समय अपना सिर धो रहा था। उसे जब यह सूचना मिली तो तुरन्त घोड़े पर सवार होकर वह महमूद का पीछा करने के लिये चल खड़ा हुआ और भूकल पहाड़ी पर जा पहुँचा। वहाँ देखा कि शास्ती खाँ का शिविर लगा हुआ है। उसने निश्चय किया कि शास्ती खाँ के शिविर पर धावा बोल दे। जैसे ही वह घोड़ा भगाता हुआ शिविर के द्वार पर पहुँचा, उसके घोड़े का पैर शिविर की डोरी में उलझ गया। वह और उसका घोड़ा दोनों ही गिर पड़े। प्रत्येक दिशा से 'पकड़ो' 'पकड़ो' के नारे लगने लगे। एक हिन्दू ने एतिमुर का सिर काट कर फीरोज की सेवा में भेज दिया। उसी दिन से उस पहाड़ी का नाम फीरोजकोह हो गया। (२०७-२०८)

---

१ इस बादशाह का हाल ज़ियाउद्दीन बरनी ने तारीखे फीरोजशाही म नहीं लिखा। तारीखे मुबारक शाही में इस घटना का उल्लेख इस प्रकार दिया गया है

सुल्तान शम्सुद्दीन कैकाऊस सुल्तान मुइज्जुद्दीन कैकुबाद का पुत्र था। जब सुल्तान मुइज्जुद्दीन किलोखड़ी के राज प्रासाद में शहीद हुआ तो उसका पुत्र सुल्तान शम्सुद्दीन ६८९ हि० (१२९० ई०) में सिजानी (सुभानी) चबूतरे पर सिंहासनारूढ किया गया। शायस्त खाँ उसका नायब बनाया गया। उसकी नायबी के काल में ३ मास के भीतर देश की दशा स्थिर हो गई। तीन मास बीतने के पश्चात् मलिक एतिमुर सुर्खा और अन्य गयासी दासों ने सुल्तान शम्सुद्दीन को शायस्त खाँ के नियन्त्रण से मुक्त कराने एवं शायस्त खाँ की हत्या करने का प्रयत्न किया। इसी उद्देश्य को दृष्टि म रख कर उन्होंने एक घोषणापत्र नायब अमीरे हाजिब मलिक बकतत के पास भेजा। बकतत ने छलयुक्त आशायें प्रदर्शित की और उनसे अपने तैयार होने तक की प्रतीक्षा करने को कहा। मध्याह्न में वह घोड़े पर चढ़ा और शायस्त खाँ के निकट पहुँच कर विश्वासघातक षडयन्त्रों की उसे सूचना दी। शायस्त खाँ ने तुरन्त ही अपने पुत्र हुसामुद्दीन को शीघ्रता में कुछ घोड़ों के साथ सुल्तान के दरबार में उसे उठा ले जाने के उद्देश्य से भेजा। जब सुल्तान शायस्त खाँ क पास लाया गया, एतिमुर सुर्खा एव दूसरे सेवक इस बात का आभास पाकर अपने अस्त्र शस्त्र छिपा कर सुल्तान का पीछा करने के लिये रवाना हुए। शायस्त खाँ के निकट पहुँचते ही उन्होंने अपने हथियार खोल लिय और युद्ध करने लगे। उन्होंने शायस्त खाँ एवं खलजियों को घोड़ों पर भाग जाने की आज्ञा न दी। शायस्त खाँ का सबसे बड़ा पुत्र इख्तियारुद्दीन अपने घोड़े से गिरा और मलिक एतिमुर सुर्खा ने तलवार के दो तीन वार किये किन्तु प्रत्येक ही निष्फल गया। मलिक इख्तियारुद्दीन ने अपनी कमान खींच ली और मृत्युकारी तीर एतिमुर की ओर चलाया। मृतक का सिर एक भाले पर रखा गया।

जब एतिमुर सुर्खा मारा गया तो पदाधिकारियों एव सरदारों में विच्छेद प्रकट हुआ। इसी बीच में शायस्त खाँ ने सुल्तान शम्सुद्दीन को घोड़े पर बैठा कर किलोखड़ी के राज भवन में बन्दी कर दिया। वह तब राज सिंहासन पर आरूढ हुआ। सुल्तान शम्सुद्दीन बन्दी अवस्था में ही मर गया। (६०-६१)

इब्ने बतूता

शैख[1] अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद इब्न (पुत्र) अब्दुल्लाह इब्न (पुत्र) मुहम्मद इब्न (पुत्र) इब्राहीम जो इब्न बतूता के नाम से प्रसिद्ध है तानजीर निवासी था। वह चौदहवीं शताब्दी (ईसवी) का बड़ा ही महत्त्वपूर्ण यात्री था। उसने २ रजब २५ हि० (१४ जून, १३२५ ई०) को मक्के के लिये प्रस्थान किया। मार्ग में सिकन्दरिया, काहेरा, दमिश्क तथा मदीने होता हुआ मक्का पहुचा। वहाँ से वह बसरे, इस्फहान, शीराज, गाज़रून, कूफा, हिल्ला, कर्बला, बगदाद, तबरेज़, सामर्रा, तेकरित, मूसल तथा मारिदीन की यात्रा करके बगदाद तथा कूफे होता हुआ मक्के हज करने के लिये १० ज़िलहिज्जा ७२७ हि० (२७ अक्तूबर, १३२७ ई०) को पहुच गया। १२ ज़िलहिज्जा ७३० हि० (२६ सितम्बर, १३३० ई०) को मक्के से चलकर उसन पूर्वी अफरीका के कुछ भागों तथा फारस की खाडी के कुछ बन्दरगाहों की यात्रा की और ७३१ हि० के हज के समय (१५ अगस्त, १३३१ ई०) को मक्के पहुँच गया।

वहाँ से चल कर वह जद्दे, मिस्र, शाम, त्रिपोली, एशिया माइनर, अनातोलिया, कोनिया, साइनोप, क्रिरीमिया, बुलगार, बालगा कुस्तुनतुनिया, समरकन्द, त्रिमिज़, खुरासान, बलख, हेरात, जाम, मशहद, नीशापूर, बिस्ताम होता हुआ १ मुहर्रम ७३४ हि० (१२ सितम्बर, १३३३ ई०) को सिन्ध पहुचा। वहा से चलकर वह १३ रजब ७३४ हि० (२० मार्च, १३३४ ई०) को देहली पहुचा। सुल्तान मुहम्मद बिन तुग़लक ने उसे बहुत सम्मान प्रदान किया और उसने भारतीय समाज के प्रत्येक वर्ग से भेंट की और जहाँ तक सम्भव हो सका, उसने यहाँ के सामाजिक ढाँचे, रीति रिवाज तथा दरबार को समझने का प्रयत्न किया। पिछले सुल्तानों के विषय में भी उसने विश्वस्त सूत्रों से ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न किया। कहीं कहीं उसने कुछ भूल भी की है किन्तु फिर भी जो कुछ उसने लिखा है वह बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है।

१७ सफर ७४३ हि० (२२ जुलाई, १३४२ ई०) को सुल्तान मुहम्मद बिन तुग़लक ने उसे अपनी ओर से दूत नियुक्त करके चीन भेज दिया। मार्ग म उसे बड़े कष्ट भोगने पड़े। उसका जहाज नष्ट हो गया। २३ शाबान ७५० हि० (६ नवम्बर, १३४९ ई०) को वह फेज पहुंचा और वहाँ से तानजीर गया। वहा से उसने फिर स्पेन की यात्रा की। मराको के सुल्तान अबू इनान मरीनी ने उसे विशेष प्रोत्साहन प्रदान किया और जिन-जिन देशों को उसने देखा था, उनका हाल लिखवाने का उसे आदेश दिया। तदनुसार उसने अपनी विचित्र तथा आश्चर्यजनक यात्रा का हाल लिखवाया। इसके उपरान्त सुल्तान ने मुहम्मद इब्ने (पुत्र) मुहम्मद इब्ने (पुत्र) जुज़य्ये[2] अल कलबी को मूल पुस्तक को पूर्णतया ध्यान में रखते हुये सुंदर रूप में संकलित करने का आदेश दिया। उसने सुल्तान के आदेशानुसार शैख अबू अब्दुल्लाह के विचारों को साफ़ तथा प्रभावशाली भाषा में लिखा। कहीं-कहीं उसने शैख के

१ उसका सविस्तार वृत्तान्त तुग़लक कालीन भारत (भाग १) में दिया गया है।

२ उसका जन्म शव्वाल ७२१ हि० (अक्तूबर, १३२१ ई०) में ग्रनाडे में हुआ था। उसकी मृत्यु शव्वाल ७५७ हि० (अक्तूबर, १३५६ ई०) में फेज में हुई। वह बहुत बड़ा विद्वान्, कवि, इतिहासकार, फ़क़ीह, मुहद्दिस तथा शब्दशास्त्रज्ञ था। मराको के सुल्तान अबू इनान मरीनी का वह बहुत बड़ा कृपापात्र था।

शब्दो तथा वाक्यो को बिना किसी परिवर्तन के उसी प्रकार रहने दिया। इसका संकलन ७५६ हि० (१३५५-५६ ई०) में समाप्त हुआ। एक हस्तलिखित पोथी के अनुसार इस यात्रा का नाम "तुहफतुन्नुज्जार फी गराइबिल अमसार व अजाइबुल असफार" रखा गया।

इब्ने बतूता को प्रारम्भिक तुर्क सुल्तानों का कुछ हाल कमालुद्दीन मुहम्मद बिन बुर्हान गजनवी से ज्ञात हुआ था जिन की उपाधि सद्रे जहाँ थी और जो हिन्दुस्तान के काजीउल कुज्जात थे। सुल्तान इल्तुतमिश के न्याय व्यवस्था के सम्बन्ध में जो कुछ उसने लिखा है वह कही नही मिलता। सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन द्वारा सुल्तान नासिरद्दीन की हत्या की पुष्टि एसामी की फुतूहुस्सलातीन से भी होती है। सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन के निधन के उपरान्त कैखुसरो के विरुद्ध मलेकुल-उमरा के षड्यन्त्र का हाल बडा ही स्पष्ट है। इस प्रकार इब्ने बतूता ने प्रारम्भिक तुर्क सुल्तानो के विषय में जो कुछ लिखा है, वह, यद्यपि दूसरों से सुनकर लिखा है किन्तु बडा ही महत्त्वपूर्ण है।

इब्ने बतूता की यात्रा

देहली का इतिहास

देहली विजय

(१६१) हिन्द तथा सिंध के क़ाज़ीउल कुज़्ज़ात कमालुद्दीन मुहम्मद बिन (पुत्र) बुर्हान गजनवी ने जिनकी पदवी सद्रे जहाँ थी, और जो बड़े योग्य, विद्वान, सन्त तथा इमाम थे, मुझे बताया कि देहली पर काफिरों के विरुद्ध ५८४ हि० (११८८ ई०) में विजय प्राप्त हुई।[1]

जामा मस्जिद की मेहराब में भी यही तारीख खुदी थी जिसे मैंने स्वयं पढ़ा है।

(१६२) मुझ से सद्रे जहाँ ने बताया कि देहली पर कुतुबुद्दीन ऐबक ने विजय प्राप्त की। वह उस समय सिपहसालार (सेनापति) था। वह सुल्तानुल मुअज्ज़म शिहाबुद्दीन मुहम्मद बिन (पुत्र) साम गोरी का दास था। (मुहम्मद बिन साम) गज़नी तथा खुरासान का सुल्तान था और उसने इब्राहीम बिन (पुत्र) सुल्तान ग़ाज़ी महमूद बिन (पुत्र) सबुक्तिगीन के राज्य पर जो हिन्दुस्तान का प्रथम विजेता था अधिकार जमा लिया था।

सुल्तान शिहाबुद्दीन ने अमीर कुतुबुद्दीन को एक बहुत बड़ी सेना देकर भेजा। उसने ईश्वर की कृपा से सर्व प्रथम लाहौर पर विजय प्राप्त की और वहीं निवास करना प्रारम्भ कर दिया। वह बहुत बड़ा बादशाह हो गया। सुल्तान के मित्रों ने एक बार उसकी यह चुग़ली खाई कि वह हिन्दुस्तान में पृथक् राज्य स्थापित करके विद्रोह करना चाहता है। यह समाचार क़ुतुबुद्दीन को भी प्राप्त हो गये। वह अकेला गज़नी की ओर चल खड़ा हुआ और रात्रि में गज़नी पहुँच गया। वह उसी समय सुल्तान की सेवा में उपस्थित हुआ और उसकी निन्दा करने वालों को उसके विषय में कुछ ज्ञात न हो सका।

(१६३) दूसरे दिन जब सुल्तान राज सिंहासन पर विराजमान हुआ तो ऐबक राज सिंहासन के नीचे बैठ गया। जिस समय सब लोग बैठ गये तो सुल्तान ने कुतुबुद्दीन ऐबक के विषय में पूछा। जिन नदीमों तथा विश्वासपात्रों ने उसकी चुग़ली खाई थी, वे बोल उठे कि "हमें प्रमाणित रूप से ज्ञात हो चुका है कि वह स्वतन्त्र बादशाह बन बैठा है।" सुल्तान ने राज सिंहासन पर पैर मारा और ताली बजाकर कहा 'ऐबक'। कुतुबुद्दीन ने उत्तर दिया "उपस्थित" और बाहर निकल आया और दरबार में सब के समक्ष खड़ा हो गया। चुग़ली खाने वाले बड़े लज्जित हुये और भयभीत होकर धरती चुम्बन करने लगे। बादशाह ने कहा "इस बार मैं तुम्हारा अपराध क्षमा करता हूं। फिर कभी ऐबक के विरुद्ध मुझसे कुछ न कहना।" कुतुबुद्दीन को आदेश दिया कि वह हिन्दुस्तान चला जाय। उसने वापस होकर देहली तथा अन्य स्थानों पर विजय प्राप्त की। इस्लाम उस समय से अभी तक वहाँ वर्त्तमान है। कुतुबुद्दीन अपनी मृत्यु के समय तक उस स्थान पर रहा।

सुल्तान शम्सुद्दीन ललमिश (इल्तुतमिश)

वह देहली का प्रथम स्थायी सुल्तान था। वह पहले कुतुबुद्दीन का ममलूक (दास) तथा साहिबुल अमकर (सेनापति) तथा नायब था। जब क़ुतुबुद्दीन की मृत्यु हो गई तो वह राज सिंहासन पर आरूढ हो गया और लोगों से अपनी बैअत करा ली। समस्त फ़क़ीह, क़ाज़ीउल

१ इसे ५८७ हि० (११९१ ई०) अथवा ५८६ हि० (११९३ ई०) होना चाहिये।

कुज्जात वजीहुद्दीन काशानी के साथ उसकी सेवा में उपस्थित हुये और उसके सम्मुख बैठ गये। काज़ीउल कुज्ज़ात पूर्व की भाँति उसके बराबर बैठा। सुल्तान समझ गया कि वे उससे क्या कहना चाहते हैं। उसने अपने फर्श का एक कोना उठा कर एक कागज निकाला और काज़ीउल-कुज्जात को दे दिया। उससे ज्ञात हुआ कि कुतुबुद्दीन ने उसको स्वतन्त्र कर दिया था। काजी तथा फकीहो ने उसे पढा और सबने उसकी बैअत कर ली। इस प्रकार वह पूर्णरूप से सुल्तान हो गया और २० वर्ष तक राज्य करता रहा।[1] वह बडा ही न्यायी, योग्य तथा चरित्र वान था।

(१६५) उसने सब से बडा महत्त्वपूर्ण कार्य यह किया कि उसने न्याय की विशेष रूप से व्यवस्था की। उसने यह आदेश दे दिया था कि जिस किसी पर अत्याचार हो वह रगे हुये वस्त्र धारण करे क्योकि हिन्दुस्तान में साधारणतया सभी निवासी श्वेत वस्त्र धारण करते हैं। जब सुल्तान दरबार करता या उसकी सवारी किसी स्थान को जाती तो जैसे ही उसकी दृष्टि रगे वस्त्र पहने हुये मनुष्य पर पडती, वह तुरन्त उसके विषय में पूछताछ करता और उसके साथ न्याय करता।

उसने यह सोचा कि सम्भव है कि किसी पर रात्रि में अन्याय हो और वह तुरन्त न्याय चाहे अत उसने अपने महल के द्वार के बुर्जों पर सगमरमर के बने हुये दो शेर रखवा दिये थे। उन दोनों के गलो में जजीरें डलवा दी, जिनमें बडी बडी घटियाँ लगी थी। जिस पर अत्याचार होता वह रात्रि में घटियाँ बजा देता और सुल्तान घटियाँ सुन कर तुरन्त उसके विषय में पूछताछ करके न्याय कर देता था।

(१६६) सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के समय उसके ३ पुत्र थे अर्थात् रुक्नुद्दीन जो उसका उत्तराधिकारी था, मुइज्जुद्दीन तथा नासिरुद्दीन और एक पुत्री रज़िया। वह तथा मुइज्जुद्दीन एक ही माता की पुत्री तथा पुत्र थे। सुल्तान शम्सुद्दीन की मृत्यु के उपरान्त जैसा कि उल्लेख हो चुका है रुक्नुद्दीन सुल्तान हुआ।

सुल्तान रुक्नुद्दीन बिन (पुत्र) सुल्तान शम्सुद्दीन

जब वह अपने पिता की मृत्यु के उपरान्त राज सिंहासन पर आरूढ हुआ तो उसने सर्व प्रथम अपने भाई मुइज्जुद्दीन की हत्या करादी। रज़िया इस पर बडी खिन्न हुई। बादशाह ने चाहा कि उसकी भी हत्या करा दे। एक शुक्रवार को जब रुक्नुद्दीन जामा मस्जिद में गया हुआ था तो रज़िया उन लोगो के वस्त्र धारण करके जिन पर अत्याचार किया गया हो, प्राचीन शाही महल अर्थात् दौलतखाने की छत पर जो जामा मस्जिद के निकट था, खडी हो गई और अपने आप को लोगो के सामने उपस्थित करके कहा कि "मेरे भाई ने अपने भाई की हत्या करदी है और वह अब मेरी भी हत्या करना चाहता है।" यह कह कर उसने लोगो को अपने पिता के उत्कृष्ट कार्य तथा गुण याद दिलाये।

(१६७) इस पर लोग बडे क्रोधित हुये और मस्जिद में सुल्तान रुक्नुद्दीन के ऊपर टूट पडे। उसे बन्दी बना कर रज़िया के पास ले गये। उसने हत्यारे के बध का आदेश दे दिया। उसका भाई नासिरुद्दीन अभी बालक था अत सैनिको ने रज़िया को उसका बादशाह बनाना निश्चय कर लिया।

सुल्तान रज़िया

रुक्नुद्दीन की हत्या के उपरान्त सैनिको ने एकत्र होकर रज़िया को बादशाह नियुक्त किया। उसने ४ वर्ष तक स्वतन्त्र रूप से राज्य किया। वह पुरुषो के समान घोडे पर सवार

१ उसने वास्तव में १२१० १२३६ ई० तक २६ वर्ष राज्य किया।

होती और तीर कमान लगाती थी। वह अपना मुँह न ढाँकती थी। फिर उस पर यह आरोप लगाया गया कि उसका एक हब्शी दास से सम्बन्ध है। सेना ने उसे राज सिंहासन से उतार दिया और इसके उपरान्त उसके एक सम्बन्धी से उसका विवाह हो गया। उसका भाई नासिरुद्दीन सुल्तान हो गया।

सुल्तान नासिरुद्दीन बिन (पुत्र) सुल्तान शम्सुद्दीन

(१६८) जब रजिया राज सिंहासन से उतार दी गई तो उसका छोटा भाई नासिरुद्दीन बादशाह बना दिया गया। उसने बहुत समय तक राज्य किया। कुछ समय उपरान्त रजिया तथा उसके पति ने विद्रोह कर दिया। वह अपने दास तथा सहायकों को लेकर चल खड़े हुये। नासिरुद्दीन तथा उसके नायब ने, जोकि गयासुद्दीन बल्बन के नाम से बादशाह हुआ, रजिया से युद्ध किया। रजिया की सेना परास्त हुई और वह भाग गई। जब वह थक गई और भूख तथा प्यास से विवश हो गई तो उसने एक किसान को हल चलाते हुये देखा। उसने उससे कुछ खाने को माँगा। किसान ने उसे एक रोटी का टुकड़ा दिया, वह खाकर सो गई। उस समय वह मर्दाने वस्त्र धारण किये थी। किसान की दृष्टि उसकी केबा पर पड़ी, उसमें जवाहिरात जड़े थे। वह समझ गया कि वह स्त्री है। उसको सोते हुये मार डाला और उसके वस्त्र तथा अन्य सामान को ले लिया और उसके घोड़े को भगा दिया। उसका मृतक शरीर खेत में गाड़ कर उसका एक कपड़ा बेचने बाजार में गया किन्तु बाजार वालों को उस पर सन्देह हुआ।

(१६९) वे उसे शहना अर्थात् हाकिम के पास ले गये। उसे बुरी तरह पिटवाया गया। उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और उसके मृतक शरीर का भी पता बतला दिया। उसका मृतक शरीर वहाँ से निकाला गया और नहला कर तथा कफ़न देकर उसी स्थान पर दफ़न कर दिया गया। उसकी कब्र पर एक गुम्बद बना दिया गया। अब उसकी क़ब्र के सभी दर्शन करते हैं। वह यमुना नदी के तट पर शहर से १ फरसंग की दूरी पर स्थित है।[१]

रजिया की मृत्यु के उपरान्त नासिरुद्दीन स्थायी रूप से बादशाह हो गया। उसने २० वर्ष तक राज्य किया। यह बादशाह बड़ा ही चरित्रवान बादशाह था। वह स्वयं क़ुरान की नकल किया करता था। उसे बाजार में बेच कर वह जीविकोपार्जन करता था। क़ाज़ी कमालुद्दीन ने उसके हाथ का लिखा हुआ कुरान मुझको दिखाया। वह बड़े ही सुन्दर ढंग से लिखा गया था।

(१७०) उसका नायब गयासुद्दीन बल्बन उसकी हत्या करके राज सिंहासन पर आरूढ हो गया[२]। बल्बन के विषय में एक रोचक कहानी प्रसिद्ध है जिसका उल्लेख मैं अभी करूँगा।

सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन

बल्बन अपने स्वामी सुल्तान नासिरुद्दीन की हत्या के उपरान्त स्वयं बादशाह हो गया। उसने २० वर्ष तक राज्य किया। राज सिंहासन पर आरूढ होने के पूर्व वह बीस वर्ष तक सुल्तान का नायब रह चुका था। वह समस्त सुल्तानों से बढ़ कर था। वह बड़ा ही न्यायकारी, चरित्रवान तथा विद्वान था। उसने सबसे अच्छा कार्य यह किया कि दारुल-अमन (शान्ति का स्थान) नामक एक घर बनवाया। जो ऋणी उसमें प्रविष्ट हो जाता उसका ऋण सुल्तान की ओर से अदा कर दिया जाता था। जो किसी की हत्या करके अथवा कोई अन्य अपराध करके उसमें प्रविष्ट हो जाता था तो जिसका वध होता था उसके उत्तराधिकारियों को सन्तुष्ट कर दिया जाता था। इस बादशाह की क़ब्र भी उसी घर में बनाई गई थी। मैंने उसकी क़ब्र देखी है।

१ यमुना से तीन मील दूर बुलबुलीख़ाना गली में सीताराम बाज़ार के अन्त पर।
२ इसामी का भी यही मत है।

(१७१) इस बादशाह के विषय में एक विचित्र कहानी प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि बुखारा के बाजार में उसे एक फकीर मिला। बल्बन छोटे डील डौल का मनुष्य था। वह बड़ा कुरूप था। फकीर ने उसे घृणा से पुकारते हुए "तुर्कक"[१] कहा। उसने उत्तर दिया कि 'हे ग्राखुन्द (मेरे स्वामी)! मैं उपस्थित हूं।' फकीर प्रसन्न हो गया और उसने कहा "मुझे यह अनार मोल ले दे।" उसने कहा "बहुत अच्छा" और अपनी जेब से कुछ पैसे निकाले जो उसके पास मौजूद थे। उनके अतिरिक्त उसके पास कुछ न था। उसने अनार मोल लेकर फकीर को दे दिया। फकीर ने अनार लेकर कहा कि "हमने तुझे हिन्दुस्तान का राज्य प्रदान किया।" बल्बन ने अपने हाथ चूम कर कहा कि "मुझे स्वीकार है और मैं इससे सन्तुष्ट हूं।" यह बात उसके हृदय में बैठ गई।

एक बार सुल्तान शम्सुद्दीन ललमिश (इल्तुतमिश) ने एक व्यापारी समरकन्द बुखारा तथा त्रिमिज से अपने लिए दास मोल लेने के लिये भेजा। व्यापारी ने १०० दास खरीदे, उनमें बल्बन भी था। जब बादशाह के सामने दास उपस्थित किये गये तो उसने बल्बन के अतिरिक्त सबको पसद कर लिया, क्योंकि जैसा उल्लेख हो चुका है वह बड़ा ही कुरूप था।

(१७२) सुल्तान ने कहा कि "मैं इसको नहीं लेता।" बल्बन ने निवेदन किया कि "हे आखुन्दे आलम (ससार के स्वामी)! यह दास अन्नदाता ने किस कारण मोल लिए हैं।" सुल्तान ने हस कर कहा कि "अपने लिए।" बल्बन ने निवेदन किया कि ६६ दास तो आपने अपने लिये खरीदे हैं, एक दास आप ईश्वर के लिए मोल ले लें। सुल्तान ने हस कर उसको भी खरीद लिया। उसके कुरूप होने के कारण लोग उससे घृणा करते थे। उसे जल लाने का कार्य सौंपा गया। ज्योतिषियों ने सुल्तान को सूचना दी कि "तेरा एक दास तेरी सन्तान से राज्य छीन कर उस पर अधिकार जमा लेगा। ज्योतिषी सर्वदा यही कहा करते थे किन्तु सुल्तान अपनी नेकी तथा न्याय के कारण उनकी बातों पर ध्यान न देता था। अन्त में उन्होंने मुख्य मलेका से इस विषय में निवेदन किया। जब मलेका ने बादशाह से कहा तो बादशाह को भी कुछ चिन्ता हुई। उसने ज्योतिषियो को बुला कर पूछा कि 'क्या तुम उसे पहचान सकते हो ?' उन्होंने उत्तर दिया कि 'उसके कुछ ऐसे चिह्न हैं जिन्हें देख कर हम उसे पहचान सकते हैं।'

(१७३) सुल्तान ने आदेश दिया कि "उसके दास अर्ज़ (निरीक्षण) के लिये पेश किये जायें।" बादशाह बैठ गया। प्रत्येक श्रेणी के दास एक एक करके उसके सामने अर्ज़ (निरीक्षण) के लिये पेश हुये। ज्योतिषियो ने सबको देख कर कहा कि 'इनमें वह व्यक्ति नहीं है।" जब दोपहर बीत चुका तो जल लाने वालो ने आपस में कहा कि 'हम भूखे मर गये हैं, अत कुछ एकत्र करके किसी को भोजन लाने को भेज दिया जाय।' उन्होंने कुछ एकत्र करके बल्बन को दिया क्योंकि उन लोगों में उससे निम्न कोई न था। उस बाजार में बल्बन को कोई भोजन-सामग्री न मिली। अत वह दूसरे बाजार को चला गया और इस प्रकार उसे देर हो गई। इसी बीच में अर्ज़ के लिये जल लाने वालो की भी बारी आ गई किन्तु बल्बन उस समय तक उपस्थित न हुआ था। उन्होंने एक बालक को कुछ देकर बल्बन की मश्क तथा उसका असबाब उसके कन्धे पर रख दिया और उसे बल्बन के स्थान पर पेश किया। जब बल्बन का नाम पुकारा गया तो वही उसके स्थान पर पेश कर दिया गया।

(१७४) जब अर्ज़ हो चुका तो ज्योतिषियों को वह व्यक्ति, जिसकी उन्हें खोज थी, न मिला और बल्बन अर्ज़ समाप्त हो जाने के पश्चात् आया, क्योंकि भाग्य का लिखा पूरा होना ही था।

---

१ हे छोटे लड़के।

बल्बन अपनी योग्यतानुसार उन्नति करता रहा और वह जल लाने वालो का नेता बना दिया गया। इसके उपरान्त वह सेना में भर्ती हो गया और धीरे-धीरे अमीर (सेना नायक) बन गया। सुल्तान नासिरुद्दीन के बादशाह होने से पूर्व बल्बन की पुत्री का विवाह उससे हो गया था। जब नासिरुद्दीन बादशाह हुआ तो उसने बल्बन को अपना नायब बना लिया। वह ० वर्ष तक नायब रहा। इसके उपरान्त उसने सुल्तान नासिरुद्दीन का बध कर दिया और राज्य पर अधिकार जमा कर स्वय सुल्तान बन बैठा।

बल्बन के दो पुत्र थे। उसका ज्येष्ठ पुत्र खान शहीद के नाम से प्रसिद्ध था। वह उसका उत्तराधिकारी था। उसके पिता ने उसे सिन्ध का वाली बना दिया था। वह मुल्तान में निवास करता था किन्तु वह तातारो से युद्ध करता हुआ मारा गया। उसके दो पुत्र थे। एक का नाम कैक़ुबाद[1] तथा दूसरे का कैखुसरो था। सुल्तान बल्बन के दूसरे पुत्र का नाम नासिरुद्दीन था। अपने पिता की ओर से वह लखनौती तथा बगाल का वाली था।

(१७५) खान शहीद की हत्या के उपरान्त बल्बन ने कैखुसरो को अपना उत्तराधिकारी बना दिया और अपने पुत्र को न बनाया। नासिरुद्दीन के पुत्र का नाम मुइज्जुद्दीन था। वह अपने दादा के साथ राजधानी देहली में रहता था। वही अपने दादा की मृत्यु के उपरान्त देहली का स्वामी बना। यह एक बडी विचित्र घटना थी क्योंकि उसका पिता जीवित था। इसका उल्लेख बाद में होगा।

सुल्तान मुइज्जुद्दीन बिन (पुत्र) नासिरुद्दीन बिन (पुत्र) सुल्तान ग़यासुद्दीन बल्बन

जब सुल्तान गयासुद्दीन बल्बन की रात्रि में मृत्यु हुई तो उसका पुत्र नासिरुद्दीन लखनौती में था। अत उसने अपने पोते कैखुसरो को अपना उत्तराधिकारी बनाया। वह उसके शहीद पुत्र का पुत्र था किन्तु सुल्तान ग़यासुद्दीन बल्बन का नायब मलेकुल-उमरा उससे द्वेष रखता था। उसने एक चाल चली जो सफल हो गई। उसने एक जाली पत्र समस्त अमीरों के हस्ताक्षर का तैयार कराया। उसमें यह लिखा था कि वे सुल्तान बल्बन के पोते मुइज्जुद्दीन की बैअत करेंगे। उसने कैखुसरो को परामर्श देते हुये कहा कि बडे-बडे अमीरो ने उसके भाई से बैअत कर ली है अत उसके प्राण खतरे में हैं। जब कैखुसरो ने उससे यह पूछा कि 'मुझे क्या करना चाहिये' तो नायब ने परामर्श दिया कि "आप इसी समय सिन्ध चले जायें।"

(१७६) कैखुसरो ने कहा कि 'मै इस समय कैसे भाग सकता हू, शहर के समस्त द्वार बन्द हैं" मलेकुल-उमरा ने उत्तर दिया कि "कुजियाँ मेरे पास हैं। मैं द्वार आपके लिये खोल दूँगा।" उसने मलेकुल-उमरा के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुये उसके हाथ चूमे। इसके उपरान्त वह मलेकुल-उमरा के परामर्श से घोडे पर सवार हुआ और अपने कुछ विश्वासपात्र अधिकारियों तथा दासों को लेकर चल खडा हुआ। मलेकुल-उमरा ने उसके लिये द्वार खोल दिये और उन लोगों के चले जाने के उपरान्त द्वार बन्द करा दिये।

इसके उपरान्त वह मुइज्जुद्दीन की सेवा में उपस्थित हुआ और उसकी बैअत करने को कहा। मुइज्जुद्दीन ने उत्तर दिया कि "मैं किस प्रकार राज्य का अधिकारी हो सकता हूँ क्योंकि मेरे चाचा का पुत्र उत्तराधिकारी बनाया जा चुका है।" मलेकुल-उमरा ने उसे बताया कि किस प्रकार उसने एक युक्ति से कैखुसरो को भगा दिया है। इस पर मुइज्जुद्दीन उसे धन्यवाद देकर शाही महल में ले गया और अमीरों तथा बडे-बडे पदाधिकारियों को बुलवाया। सबने रात्रि ही में उसकी बैअत करली।

१ वह बुगरा खाँ का पुत्र था।

(१७७) दूसरे दिन प्रात काल समस्त प्रजा ने उसकी बैग्रत करली ग्रौर वह पूर्णरूप से बादशाह हो गया। इसके उपरान्त उसके पिता को, जो जीवित था, यह समाचार मिला। उसने कहा कि "मै राज्य का उत्तराधिकारी हू। मेरा पुत्र किस प्रकार राज्य पा सकता है ग्रौर पूर्णरूप से स्वतन्त्र शासक बन सकता है, क्योकि मै तो जीवित ही हू।" उसने ग्रपनी सेना तैयार की ग्रौर सेना लेकर देहली की ग्रोर चल पडा। उस ग्रोर से नायब ने बादशाह को साथ लिया। गगा-तट पर कडे के ग्रामने-सामने दोनो सेनाग्रों के शिविर लग गये। नासिरुद्दीन ने नदी तट पर, उस स्थान पर शिविर लगाये जहाँ कडा स्थित था ग्रौर जहाँ हिन्दू यात्रा करने जाते हैं। उसके पुत्र सुल्तान मुइज्जुद्दीन ने नदी के दूसरे तट पर ग्रपने शिविर लगाये। दोनों के बीच में नदी थी। दोनो ने युद्ध करना निश्चय कर लिया था किन्तु इसी बीच में ईश्वर की कृपा से सुल्तान नासिरुद्दीन के हृदय मे यह बात ग्राई कि "यदि मेरा पुत्र बादशाह है तो इससे मुझ ही को सम्मान प्राप्त है ग्रौर मुझ ही को उसके विषय में यह इच्छा करनी चाहिये।"

(१७८) इस प्रकार उसके हृदय में ग्रपने पुत्र की ग्रोर से प्रेम उत्पन्न हो गया ग्रौर ईश्वर ने मुसलमानो को मारे जाने से बचा लिया। उसने सुल्तान मुइज्जुद्दीन के हृदय में भी ग्रपने पिता के प्रति प्रेम उत्पन्न कर दिया। दोनो ग्रपनी-ग्रपनी नावो पर सवार हुये ग्रौर नदी के बीच में मिले। सुल्तान ने ग्रपने पिता के पैर चूमे ग्रौर उससे क्षमा माँगी। उसके पिता ने उससे कहा कि "मैं ग्रपना राज्य तुझे प्रदान करता हूँ ग्रौर तुझको उसका स्वामी बनाता हूँ।" उसने उसकी बैग्रत की। इसके उपरान्त वह ग्रपने प्रदेश को लौट जाना चाहता था किन्तु उसके पुत्र ने उससे ग्रपने राज्य में चलने का ग्राग्रह किया। वह उसे ग्रपने साथ देहली ले गया। जब वे राज-भवन में प्रविष्ट हुये तो उसके पिता ने उससे राज सिंहासन पर विराजमान होने के लिये कहा ग्रौर उसके सामने ग्रादरपूर्वक खडा हो गया। नदी पर इन दोनो की भेंट लिकाउस्सादैन[1] के नाम से प्रसिद्ध है क्योकि इसके द्वारा बडा रक्तपात बच गया ग्रौर एक दूसरे को राज्य प्रदान किया गया तथा दोनो ही ने युद्ध न किया। कवियों ने इस घटना पर कविताग्रों की रचना की।

(१७९) नासिरुद्दीन इसके उपरान्त ग्रपने प्रदेश को लौट गया। कुछ समय पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई। उसके उत्तराधिकारियो में गयासुद्दीन बहादुर था जिसे सुल्तान तुगलक ने बन्दी बना लिया था किन्तु तुगलक की मृत्यु के उपरान्त उसके पुत्र मुहम्मद ने उसे मुक्त कर दिया। मुइज्जुद्दीन ने ४ वर्ष तक राज्य किया[2]। उसका राज्य एक बहुत बडा समारोह कहा जा सकता है। मेरी भेंट उन लोगो से हो चुकी है जिन्हे उस समय की स्मृति थी। वे उस समय में प्रत्येक वस्तु के बाहुल्य, चीजों का मूल्य सस्ता होने तथा मुइज्जुद्दीन के दान-पुण्य की चर्चा किया करते थे। उसने देहली की जामा मस्जिद के उत्तरी प्रागण में एक मीनार[3] बनवाया। इसके समान कोई ग्रन्य मीनार ससार में नहीं। हिन्दुस्तान के एक निवासी ने मुझे बताया कि सुल्तान मुइज्जुद्दीन को भोग विलास तथा मदिरा-पान के कारण एक ऐसा रोग हो गया था जिसकी चिकित्सा तबीब (चिकित्सक) न कर सके। उसके शरीर का एक भाग सूख गया। तत्पश्चात् उसके एक नायब जलालुद्दीन फीरोजशाह खलजी ने विद्रोह कर दिया।

———

१ क़ेरानुस्सादैन।

२ १२८७ ई० से १२९० ई० तक।

३ यह सूचना उसे भली भाँति याद न रही।

मुख्य सहायक ग्रन्थों की सूची

फ़ारसी

अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी	अखबारुल अखियार (मुजतबाई प्रेस, देहली १३३२ हि०)
अमीर खुर्द, मुबारक अलवी	सियरुल औलिया (देहली १३०२ हि०/१८८५ ई०)
अमीर खुसरो	वस्तुल हयात (अलीगढ़)
	क़ेरानुस्सादैन (अलीगढ़ १९१८)
	मिफताहुलफुतूह (अलीगढ़)
	खजाइनुलफुतूह (अलीगढ़ १९२७)
	दिवलरानी खिज़्र खाँ (अलीगढ़ १९१७)
	नुह सिपेहर (इस्लामिक रिसर्च एसोसियेशन १९५० ई०)
	तुग़लकनामा (हैदराबाद १९३३)
एसामी	फुतूहुस्सलातीन (मद्रास १९४८ ई०)
क़ज़वीनी, मीर अलाउद्दौला	नफायसुल मआसिर (हस्तलिखित, अलीगढ़ विश्वविद्यालय)
निज़ामुद्दीन अहमद	तबक़ाते अकबरी (बिबलियोथिका इण्डिका १९१३-३१)
फ़ख़्रे मुदब्बिर	तारीखे फखरुद्दीन मुबारकशाह
	आदाबुल हर्ब वश्शुजाअत (म्यू, ब्रिटिश म्यूजियम)
फ़रिश्ता, मुहम्मद क़ासिम हिन्दूशाह	गुलशने इबराहीमी या तारीखे फरिश्ता (नवल किशोर प्रेस)
बदायूनी, अब्दुल क़ादिर	मुन्तखबुत्तवारीख (बिबलियोथिका इण्डिका १८६४-६९)
बरनी, ज़ियाउद्दीन	तारीखे फीरोजशाही (बिबलियोथिका इण्डिका १८६०-६२)
	अखबारे बरामेका (बम्बई)
	सहीफ़ै नाते मुहम्मदी (हस्तलिखित, रामपुर रिज़ा-पुस्तकालय)
	फतावाये जहाँदारी (इण्डिया आफिस, लन्दन)
मिनहाज सिराज	तबकाते नासिरी (बिबलियोथिका इण्डिका १८७३-८१ ई०)
यहया बिन अहमद सरहिन्दी	तारीखे मुबारकशाही (बिबलियोथिका इण्डिका १९३१ ई०)
सद्रुद्दीन हसन निज़ामी	ताजुल मआसिर (प्रोफेसर मुहम्मद हबीब की हस्तलिखित पोथी)

अरबी

इब्ने बतूता	यात्रा का वर्णन (पेरिस १९४९ ई०)

उर्दू

सर सैयिद अहमद ख़ाँ	आसारुस्सनादीद (कानपुर १९०४)

हिन्दी

रिज़वी, एस० ए० ए०	खलजी कालीन भारत (अलीगढ़ १९५५)

ENGLISH

Ahmad M A	Early Turkish Empire of Delhi (Lahore 1949)
Elliot and Dowson	History of India as told by its own Historians 8 Vols (London 1887)
Ethe H E	Catalogue of the Persian Manuscripts in the Library of the India Office
Habibullah A B M	The Foundation of Muslim Rule in India (Lahore 1945)
Hodivala S H	Studies in Indo Muslim History (Bombay 1939)
Mahdi Husain	The Rehla of Ibn Battuta (Baroda 1953)
Mirza M W	The Life and Works of Amir Khusrau (Calcutta 1935)
Qureshi I H	The Administration of the Sultanate of Delhi (Lahore 1944)
Raverty H G	Translation of Tabaqat i Nasiri (London 1873)
Rieu C R	Catalogue of the Persian Manuscripts in the British Museum, London 1879 95
Storey C A	Persian Literature A Bio Bibliographical Survey
Thomas E	Chronicles of the Pathan Kings of Delhi (London 1871)

नामानुक्रमणिका

(अ)

(ई)

(उ)

(ऊ)

(ए)

(ऐ)

(औ)

(क)

(ख)

(ग)

(घ)

(च)

(छ)

(ज)

(थ)

(द)

(न)

(प)

(फ)

(ब)

(भ)

(म)

(य)

(र)

(ल)

(व)

(श)

(स)

(ह)

(त्र)

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७	२	निकलता ता	निकलता तो
	३०	अपना नेता	अपना नेता होने
१६	१५	भेजन	भोजन
	३१	इमाम जादी	इमाम जादा
२०	१८	दाम्सुद्दीन	शम्सुद्दीन
२२	२१	अल्तमश	इल्तुतमिश
२३	२३	भद्रों	सद्रो
३१	२	बादशाह् शाहजादा	शाहजादा
३२	३७	मुनारिफे मूमालिक	मुशरिफ़े ममालिक
३६	१	विद्वान नूर तुर्क	नाम मात्र के विद्वान नूर तुर्क
३७	१८	मुगीसुल खल्क	मुगीसुल खल्क
४१	३०	कजा	कजा
४५	१५	तुकतिरमू	तुकतिमुर
५१	१४	नज्मुद्दीन	नज्मुद्दीन
५७	३५	मलिक बूजी	मलिक बूची
५६	४	कजल खाँ	कजलक खाँ
६१, ६५	२५, १०	कर्राखिता	करा खिता
६७	३६	वह कविता	वह कविता
८४	३०	माग	मार्ग
६६	२०	हजार मर्जी	हजार सवार सजी
६८	१४	पढने हेतु	पत्र पढने हेतु
१०४	२०	जनाज	जनाज
१०८	१७	इखबारे बरामेका	अखबारे बरामेका
	१०	अब्दुल कासिम	अबुल क़ासिम
१०६	२३	पुत्र के नाम	पुत्रो के नाम
११५	३०	दवेशो	दरवेशो
१२५	३६	रूस	रूम
१२७	१७	मग्रहीत	सगृहीत
१२८	३५	माविया	माविया
१३२, १३६	१६, १०	मालवी	सालबी
१३३	१९	गुलान	गुलात
	३५	मौलाना नूरुद्दीन	मौलाना सद्रुद्दीन

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३६	२०	चरणो	चारणों
१४३	१८	़काता	भुकाता
१४८	२७	तमन्नी	तुमन्नी
१५६	२८	अब्बावीन	अब्बावीन
	२९	अबराद	अबराद
१६०	६	निश्चय	निश्चिन्त
१६२	१६	वे समय एव हजार	के समय के एक हजार
१६५	१-२	और और	और
	१९-२०	वा वा बध	वा बध
१७०	३८	अबुल मज्द मज्दूद	अबुल मज्द मज्दूद,
१७१	२८	अफज़लुद्दीन	अफज़लुद्दीन
१७७	१३	भगवान् मे डरने वाले	भगवान् से न डरने वाले
१८१	१	७० तथा ८० हजार	१७ तथा १८ हजार
१८७	१६	शेर अन्दाज	शेर अन्दाज़
१८९	३५	पत्र विभाग के व्यवहार	पत्र व्यवहार के विभाग
१९२	३२	बुद्धिमानी	बुद्धिमानों
१९५	२७	मुवक्किदा	मुवक्किदा
१९८	२०, २५	जलालुरूस	जलाल उरूस
२००	१३	निश्चित	निश्चिन्त
२०१	३२	मराजी	मराजी
२०२	३	शेखुरशुयूखुल	शेखुश्शुयूखुल
	३२	चौगाने जर	चौगाने जर
२०३	१६	बल्बन के	बल्बन का
	२४	यादगाह	यादगार
२०४	५	जब कि करन	जब कि दो करन
२०९	२८	और लोगो के उनके	और उसके लोगो पर
२१७	५	खेल खानादारो	खेल खानादारों
	२१	खेल-खानों	खेल खानो
२१८	३०	खेल खाने	खेल खाने
२२४	५, ७	हौजक	हौजक
२२७	२३	तथा-रूप	यथा रूप
२३०	१८	व्वस्था	व्यवस्था
२३१	७	दुनिया न	दुनिया से
२३८	२०	कुब्बतुत तारीख	कुब्बतुत तारीख
२३९	१२	बहराम गोर	बहराम गोर
२४१	१७	सर मरोह	सर गरोह

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२४३	८	दरबर उसका	दरबार में उसका
	२४	गेंदों	मेंढों
२४४	१३	कम्मत	कम्मल
२४५	११	ख्वाजा दास	ख्वाजा सरा
२५२	१२	अब्दुल मुजफ्फर	अबुल मुजफ्फर
२६६	२१	गजब	ग़ज़ब
२७१	२२-२३	शरीयत के के	शरीयत के
२७५	२३	मट	तट
२७८	४	ककुबाद	कैकुबाद
	३६	नफहातुलउन्सा	नफहातुल उन्स
२८५	१०	महमूद	मुहम्मद
२८६	१५	क़लम	कलस
२८२	२५	शहनये	शहनये बार
२९१	१४	पूव	पूर्व
२९५	३७	विलाप	वियोग
३०२	२७	याकूब	याकूत
३०५	४	कखुसरो	कैखुसरो
३०७	२९	कतबी	कलबी
३१२	२८	जल जाने वाले	जल लाने वाले
३१३	५	० वर्ष	२० वर्ष
३१४	२१	लिकाउस्मादैन	लिक़ाउस्सादैन
३१६	२०	१८३६	१९३९

नोट—छपाई की बहुत ही साधारण अशुद्धियों का उल्लेख नहीं किया गया है। आरम्भ के कुछ पृष्ठों में 'पूर्णतया' के स्थान पर 'पूर्णतयः' तथा 'सैयिद' के स्थान पर 'सैयद' छप गया है।

—